उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड

1

संचार

इकाई 1
संचार – अवधारणा एवं विशेषताएँ 4

इकाई 2
संचार – चरण एवं पद्धति 20

इकाई 3
संचार की सीमायें 36

इकाई 4
संचार के प्रारूप 54

इकाई 5
संचार के सिद्धान्त 74

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे : कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह : अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह : अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 रूपेश सिंह	:	डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ
डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा : समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल : कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित **2024**.

मुद्रक : चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा. लि. 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज।

खण्ड परिचय

प्रथम खण्ड – संचार

इस विषय का प्रथम खण्ड संचार से सम्बन्धित है इस सम्पूर्ण खण्ड को पाँच इकाईयों में विभाजित किया गया है। प्रथम इकाई संचार की अवधारणा का विशेषताओं से सम्बन्धित है इसमें संचार की अवधारण, अर्थ एवं मुख्य विशेषताओं पर चर्चा की गयी है। इस खण्ड की दूसरी इकाई चरण एवं पद्धति है इस इकाई में संचार के विभिन्न चरणों एवं पद्धतियों पर चर्चा की गयी है। तृतीय इकाई संचार की सीमाओं से सम्बन्धित है जिसमे संचार की बाध्यताओं पर चर्चा की गयी है। इस खण्ड की चौथी इकाई संचार के प्रारूप पर आधारित है। पाँचवी इकाई में संचार के विभिन्न सिद्धान्तों पर चर्चा की गयी है।

खण्ड–प्रथम– संचार

इकाई –1, संचार : अवधारणा एवं विशेषतायें

1.0 इकाई का उद्देश्य

1.1 परिचय

1.2 संचार की अवधारणा एवं अर्थ

1.3 संचार की परिभाषा

1.4 संचार की प्रकृति

1.5 संचार की विशेषतायें

1.6 सार–संक्षेप

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

1.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई में संचार की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताओं के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही संचार की प्रकृति के बारे में चर्चा की गई है। वास्तव में, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को संचार के अर्थ व विशेषताओं से परिचय करवाना है। **संचार** के अभाव में जीवन की गति अवरूद्ध हो जाएगी, यह बात सर्वथा सत्य है। यह **संचार** अनेक रूपों में होता है। हम भाषा के द्वारा सर्वाधिक सशक्त रूप में अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त कर सकते है, तो अपने हाव–भाव, अंग संचालन, दृष्टि निक्षेप, बातचीत, शारीरिक भंगिमाओं द्वारा भी अपनी हृदयगत भावना को दूसरों तक पहुँचा सकते है। जब से समाज ने रूपाकार लेना आरम्भ किया है, तब से ही उसने **संचार** के विभिन्न माध्यमों की तलाश करनी

आरम्भ कर दी थी। आज तो **संचार** की मौखिक परम्परा से लेकर सोशल नेटवर्किंग तक संचार के विभिन्न साधनों ने सारे साइबरस्पेस को एकसूत्र में बाँध दिया है। यहाँ हम इस इकाई के माध्यम से इन्हीं विषयों पर जानकारी एकत्र करना चाहते है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– संचार की अवधारणा को जान सकेगें।

2– संचार के अर्थ को स्पष्ट कर सकेगें।

3– संचार को परिभाषित कर सकेगें।

4– संचार की प्रकृति के बारे में लिख सकेगें।

5– संचार की विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेगें।

1.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों,प्रस्तुत इकाई में संचार पर प्रकाश डाला गया है। हम जानते हैं कि, संचार माध्यम की अपनी एक विशेष भूमिका है। कोई भी व्यक्ति संचार की विभिन्न प्रक्रियाओं में भाग लेता है वह विभिन्न प्रकार की जानकारी अलग–अलग माध्यमों से ज्ञात करता है। इस जानकारी देने के लिए अपने नेटवर्क का सहारा लेता है, आदि–आदि। यह सारा कार्य संचार के माध्यम से ही सम्पादित कर पाता है। संचार के अभाव में वह आप की दुनिया में लगभग कोई कार्य सुचारू रूप से सम्पादित नहीं कर पाता है। अंग्रेजी के 'कम्यूनिकेशन' शब्द के पर्याय के रूप में 'संचार' शब्द प्रचलित है, जिसका अर्थ है, संचरण, (यानी एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाना), सम्प्रेषण, आदान–प्रदान, अभिव्यक्ति कौशल आदि। अंग्रेजी का 'कम्यूनिकेशन' शब्द के 'कम्यूनिकेयर' से निर्मित है, जिसका अर्थ है उभयनिष्टता, आदान–प्रदान, आपसी बातचीत से लगाया जाता है। यह अंग्रेजी के कम्यूनिटस से जुड़ता है, जिसका अर्थ है–समुदाय और मनुष्य का एक दूसरे के साथ व्यवहार, भाईचारा,

मैत्रीभाव, साझेदारी, सहभागिता, न्यायपरायणता यानी मनुष्यों का परस्पर व्यवहार, सम्पर्क आदान–प्रदान, आपसी बरताव, किसी वस्तु या विषय के लिए साझेदारी। **चैम्बर्स शब्दकोश** में कम्यूनिकेशन का अर्थ है–बॉटना, सूचित करना, उद्‌घाटित करना, अर्पित करना, एक दूसरे को संदेश प्रेषित करना। अतः सामान्यतः सम्प्रेषण या संचार का अर्थ है किसी जानकारी, भाव या विचार को दूसरे तक पहुँचाना और दूसरे के भाव, विचार या जानकारी पाना। इसके लिए एक और शब्द का प्रयोग किया जा सकता है –परस्पर बातचीत, या विमर्श।

1.2 संचार की अवधारणा एवं अर्थ

संचार शब्द अंग्रेजी के 'communicare' शब्द से बना है, जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द से हुई है, जिसका शब्दिक अर्थ है 'एक समान'। संचार वह साधन है, जिसमें संगठित क्रिया द्वारा तथ्यों, सूचनाओं, विचारों, विकल्पों एवं निर्णयों का दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य अथवा व्यावसायिक उपक्रमों के मध्य आदान–प्रदान होता है। सन्देशों का आदान–प्रदान लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक हो सकता है। माध्यम बातचीत, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचारपत्र, ई–मेल, पत्राचार आदि कुछ भी हो सकता है। संचार को सन्देशवाहन, सम्प्रेषण अथवा संवहन आदि समानार्थी शब्दों से पुकारा जाता है। मानव अन्तःक्रिया का एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया संचार है। सामाजिक अन्तःक्रिया का एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया संचार है। सामाजिक अन्तःक्रिया के है। मानव अन्तःक्रिया के जटिल प्रक्रियाओं का यह एक मौलिक अंश है। संचार का अंग्रेजी रूपान्तर Communication है, जो लैटिन शब्द Communis से उत्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ सामान्य (Common) होता है। संचार में एक जीवित प्राणी दूसरे जीवित प्राणी से एक सामान्य बोध स्थापित करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि संचार में दो या दो से अधिक प्राणी या व्यक्ति सूचनाओं एवं अनुभूतियों का आपस में विनिमय करते हे। पशु में भी संचार क्षमता होती है। वे अपने विशेष

भाव–भंगिमा या बोली के माध्यम से अपनी अनुभूतियों को अपने प्रजाति के अन्य सदस्यों तक पहुँचाते है। मानव संचार, पशु संचार से इस अर्थ में भिन्न होता है। कि मानव में संचार के दौरान कुछ सामान्य प्रतिक्रिया संकेतों जैसे शब्द आदि का उपयोग करने की क्षमता होती है। इस तरह मानव में लिखित या वाचिक (Oral) भाषा का उपयोग करने की क्षमता होती है। संचार में इनका उपयोग करके व्यक्ति अपने विचारों, चिन्तनों आदि को दूसरे तक पहुँचाता है। तथा दूसरों के चिन्तनों, विचारों आदि से अवगत होता है। यदि हम संचार को पारिभाषित करना चाहे तो इस प्रकार पारिभाषित कर सकते हैं– भाषा, संकेत या चिन्ह आदि के माध्यम से अपने चिन्तन एवं विचार को दूसरों तक पहुँचाने की प्रक्रिया को संचार कहा जाता है। इस प्रक्रिया में व्यक्ति दूसरों को चिन्तन एवं विचार से अवगत भी होता है। (Communication is the process of imparting one's thoughts and ideas to other by speech, symbols or sings. In this process the individual also becomes aware of other's thinking and ideas)।

जहां तक मानव संचार का प्रश्न है, इसका सम्बन्ध विभिन्न तरह की परिस्थितियों से होता है। ऐसी परिस्थिति का स्वरूप व्यक्तिगत हो सकता है या अव्यक्तिगत हो सकता है, औपचारिक (Formal) हो सकता है या अनौपचारिक (Informal) हो सकता है, प्रत्यक्ष हो सकता है या अप्रत्यक्ष हो सकता है। समाज मनोवैज्ञानिकों ने इस तरह की परिस्थिति को पाँच मुख्य भागों में बांटा है जो निम्नलिखित है –

(i) द्विवैयक्तिक संचार (Two-way Communication)– इस तरह की परिस्थिति में मात्र दो व्यक्ति होते हैं, जो अपने में विचारों का आदान–प्रदान करते है। पति–पत्नी के बीच का संचार, दो दोस्त के बीच का संचार, माँ–बेटी के बीच का संचार, इस तरह के संचार का उदाहरण हैं। इस तरह के संचार का स्वरूप अनौपचारिक (Informal) अधिक होता है।

(ii) लघु समूह संचार (Small group Communication) – इस तरह की परिस्थिति में जो संचार होता है उसमें दो से अधिक व्यक्ति सम्मिलित होते है। यहॉ संचार का स्परूप प्रत्यक्ष भी हो सकता है या अप्रत्यक्ष भी। जब अप्रत्यक्ष होगा तो वह समूह के अन्य सदस्यों के माध्यम से होगा। परिवार, पास–पड़ोस तथा अपने सहकर्मियों के बीच किया गया संचार इस तरह के संचार का उदाहरण है। इस तरह के संचार का स्वरूप अनौपचारिक अधिक होता है।

(iii) लोक संचार (Public Communication) – इस तरह का संचार सार्वजनिक स्थानों, जैसे–स्कूल, कालेज, दफ्तर, मंदिर–मस्जिद, खेल के मैदान आदि में होता है। इस तरह के संचार का स्वरूप औपचारिक ज्यादा तथा अनौपचारिक कम होता है।

(iv) संगठनात्मक संचार (Organizational Communication) – इस तरह के संचार की परिस्थिति कोई न कोई संगठन या संस्थान, जेसे–अस्पताल, उद्योग, सरकारी संस्थान, शैक्षिक संस्थान आदि होता है। इस तरह का संचार औपचारिक, संरचित (Structured) तथा विशिष्ट उद्देश्य के साथ किया जाता है। इस तरह के संचार में कई तरह के माध्यमों का उपयोग किया जाता है।

(अ) जन संचार (Mass Communicatoin) – इस तरह के संचार में बहुत सारे लोग सम्मिलित होते हैं तथा इसमें जन संपर्क के माध्यमों, जैसे–रेडियों, दूरदर्शन, समाचार–पत्र तथा सिनेमा आदि का उपयोग किया जाता है। इस तरह का संचार अन्य संचारों की तुलना में अधिक औपचारिक तथा संरचित होता है। इस तरह का संचार एक–मार्गी (One-way) होता है।

स्पष्ट हुआ कि संचार का स्वरूप कुछ जटिल ही होता है। इसके स्वरूप की जटिलता का अंदाज इसके विभिन्न रूपों से आसानी से हो जाता है।

1.4 संचार की परिभाषा

संचार एक ऐसी साधारण प्रक्रिया है जिसके द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयास किया जाता है। इससे व्यक्तियों, समूहों एवं विभागों के बीच सूचनाओं का आदान–प्रदान होता है। संचार द्वारा समंकों एवं सूचनाओं का संचार मुख्य विभाग से उप–विभागों में तथा उप–विभागों से व्यक्तियों या समूहों को किया जाता है। संचार में वर्तमान एवं भूतकाल की दोनों सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है। उच्चाधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य मधुर सम्बन्धों का सृजन केवल प्रभावी एवं अर्थवान संचार द्वारा ही किया जा सकता है। संचार की प्रकृति सन्देशों एवं अर्न्तसम्बन्धों के आदान–प्रदान करने की होती है। संचार लिखित, मौखिक, अभिनय एवं तस्वीरों, आदि के द्वारा किया जा सकता है।

प्रबन्ध विज्ञान के विद्वानों ने सम्प्रेषण को विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया है। कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नवत हैः

लुईस ए.ऐलन (Louis A.Allen) के अनुसार, ''सन्देशवाहन उन सब क्रियाओं का योग है, जिसमें एक व्यक्ति, अपनी विचाराधारा को दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में पहुंचाने के लिए अथवा उसे समझाने के लिए अपनाता है। इसके अन्तर्गत कहने, सुनने तथा समझाने की व्यवस्थित एवं निरन्तर क्रियाओं का समावेश होता है।''

डॉ.एस.एन. घोशाल (Dr. S. N. Ghosal) के अनुसार, 'सन्देशवाहन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने विचारों एवं भावनाओं से दूसरे व्यक्ति को अवगत कराना है। यह प्रारम्भिक साधन है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे को प्रभावित करता है।''

चार्ल्स ई. रेडफील्ड (Charles E. Redfield) के अनुसार, ''सन्देशवाहन से आशय उस व्यापक क्षेत्र से है, जिसके माध्यम से मानव तथ्यों एवं सम्पतियों का आदान–प्रदान करता है।''

अमरीकी मैनेजमेण्ट ऐसोसियेशन (American Management Association) के अनुसार, ''सम्प्रेषण ऐसा कोई भी आचरण है, जिसका परिणाम किसी अर्थ का आदान–प्रदान है।''

डेल एस.ब्रैच (Dale S. Breach) का कथन है कि, ''सम्प्रेषण एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के किसी सूचना या विश्वास का हस्तान्तरण है।''

कीथ डेविस (Keith Davis) के अनुसार, ''सम्प्रेषण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को कोई सूचना या भाव पहुंचाने की प्रकिया है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि, सम्प्रेषण सूचनाओं के आदान–प्रदान की एक सतत् प्रक्रिया है, जिसमें तथ्यों,विचारों एवं भावनाओं को विभिन्न माध्यमों से दूसरे को पहुंचाना होता है, जिससे व्यावसायिक उद्देश्यों एवं व्यवहार में सामंजस्य स्थापित होता है।

संचार का मुख्य उद्देश्य केवल यही होता है कि सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश को मूलरूप से तथा उसी दृष्टिकोण के अनुसार समझे, जैसा कि संचारक ने संचारित किया है। संचार तभी प्रभावी होता है। जब प्राप्तकर्ता द्वारा पूर्णतया समझ लिया जाता है। यदि प्राप्तकर्ता द्वारा इसे न समझा जाए तो ऐसी संचार प्रक्रिया पूर्ण नहीं मानी जाती है।

1. **संचार विज्ञान एवं कला दोनों है** –संचार प्रक्रिया में विज्ञान एवं कला दोनों के तत्व पाए जाते हैं। इसलिए संचार को विज्ञान एवं कला दोनों कहा जाता है–

अ) संचार विज्ञान है– किसी विषय विशेष से सम्बन्धित व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ज्ञान, जो कि सिद्धान्तों पर आधारित हो, उसे विज्ञान कहते हैं। ज्ञान वैज्ञानिक विधियों पर आधारित होना चाहिए। विज्ञान सम्पूर्ण विचाराधारा की व्याख्या करता है, क्योंकि इसके द्वारा कारण और प्रभाव के मध्य सम्बन्ध स्थापित किया जाता है तथा उसके

सिद्धान्त सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य होते हैं तथा इसकी परिकल्पनाओं को सत्यता की कसौटी पर परखा जाता है।

ब) संचार कला है– कला एक ऐसा कौशल है जिसे सीखने की तुलना में अभ्यास द्वारा प्रभावी ढंग से विकसित किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, कला किसी कार्य को सर्वोत्तम ढंग से करने की विधि को कहते हैं। यह उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए दिशा–निर्देश प्रदान करती है।

संचार प्रक्रिया को सम्पूर्ण एवं प्रभावी बनाने के लिए केवल क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है बल्कि प्रस्तुत करने की अभिव्यक्ति भी आवश्यक है। कला एवं विज्ञान दोनों के उचित मिश्रण से ही संचार को प्रभावी बनाया जा सकता है। इसलिए संचार को पुरानी कला तथा नया विज्ञान कहा जाता है। संचार कला एवं विज्ञान दोनों है।

2. **संचार एक जन्मजात गुण**– संचार एक जन्मजात, स्वाभाविक या प्राकृतिक गुण होता है। संचार, जन्म, मृत्यु, सांस लेना, आदि की एक कला है अथवा स्वयं जीवित है। केवल शाब्दिक संचार ही मनुष्यों को संसार के अन्य प्राणियों से भिन्न तथा महत्वपूर्ण अथवा सर्वोपरि बनाता है। संचार एक जन्मजात गुण है, लेकिन बिना वैज्ञानिक आधार के यह पूर्ण नहीं हो सकता है। प्रभावशाली संचार के लिए बोलने, सुनने, लिखने या पढ़ने की चतुरता का होना अनिवार्य है। यही ऐसे तथ्य हैं जो इस बात को सिद्ध करते हैं कि प्रभावी संचार बनाए जाते हैं, आधुनिक युग में संचार की विभिन्न विधियां चलन में हैं, इनके अन्तर्गत संचार को प्रभावी बनाने के लिए सम्बन्धित ज्ञान अभिव्यक्ति के कौशल का होना अनिवार्य है।

3. **संचार एक समाजिक प्रक्रिया** – संचार केवल व्यावसायिक संस्थाओं में ही नहीं होता बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा यह प्रक्रिया अपनाई जाती है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति की अनिवार्य

आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की पूर्ति के लिए संचार एक यन्त्र के रूप में कार्य करता है। इसलिए संचार सम्पूर्ण समाज को प्रभावित तथा लाभान्वित करता है। इसलिए इसे एक सामाजिक प्रक्रिया भी कहा जाता है।

4. संचार एक मानवीय प्रक्रिया है– वास्तव में संचार एक मानवीय प्रक्रिया है, क्योंकि संचार के दोनों पक्ष– प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता, सामाजिक प्राणी होते हैं और संचार की सम्पूर्ण प्रक्रिया व्यक्ति या व्यक्तियों के समूहों के मध्य ही समपन्न होती है। इसलिए संचार को एक मानवीय प्रक्रिया भी कहा जाता है। प्रबन्ध के दृष्टिकोणानुसार भी संचार, व्यक्तियों के मध्य होने वाली वार्तालाप एवं सूचनाओं व सन्देशों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया है।

5. संचार एक सार्वभौमिक प्रक्रिया– संचार के सिद्धान्त सार्वभौमिक प्रकृति के होते हैं। संचार की सार्वभौमिकता या सर्वव्यापकता का सिद्धान्त संचार की एक विशेषता है। वास्तव में प्रभावी संचार की समस्या हर जगह व्याप्त है; जैसे व्यक्तिगत, सामूहिक, संस्थावार, पारिवारिक, राज्यीय, ट्रेड यूनियनों आदि की। इसलिए संचार को प्रभावी बनाने की विधियां एवं तकनीकें केवल व्यावसायिक संस्थाओं में ही नहीं बल्कि सर्वव्यापक रूप में अपनाई जानी चाहिए, क्योंकि संचार केवल व्यावसायिक संस्थाओं के लिए ही नहीं है, बल्कि यह एक सर्वव्यापक प्रक्रिया है। इसलिए संचार को समाज के प्रत्येक हिस्सें में प्रभावी बनाना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी :

क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयाग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संचार की अवधारणा एवं अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. संचार की परिभाषा लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.5 संचार की विशेषताएं

संचार के परम्परागत स्वरूप में पांच तत्व :

1–सन्देशवाहक वक्ता अथवा लेखक।

2–विचार जो सन्देश, आदेश या अन्य रूप में है ।

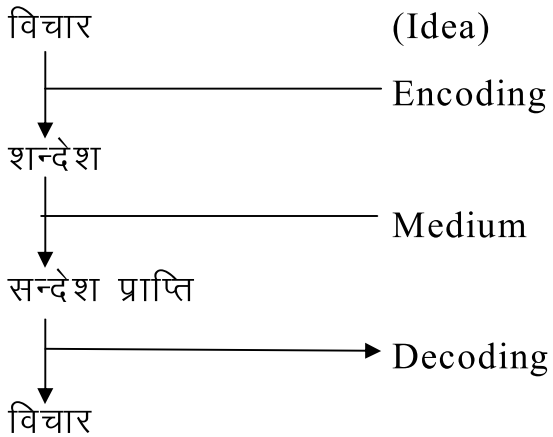
3–संवाहन कहने, लिखने अथवा जारी करने के रूप में।

4–सन्देश प्राप्त करने वाला,

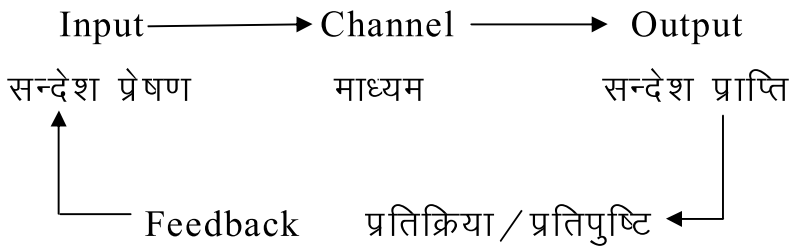
5–सन्देश प्राप्तकर्ता की प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया आदि तत्व होते हैं। लेकिन संचार के आधुनिक स्वरूप का विश्लेषण किया जाए तो संचार के निम्नलिखित तत्व प्रकाश में आते हैं।

(1) संचार एक सतत् प्रक्रिया– संचार निरन्तर (सतत्) चलने वाली प्रक्रिया है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति ग्राहकों, कर्मचारियों, सरकार आदि वाह्य एवं आन्तरिक पक्षों के मध्य सन्देशों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया व्यवसाय में निरन्तर बनी रहती हैं। संचार में सूचना आदेश, निर्देश, सुझाव, सलाह, क्रियान्वयन, शिक्षा, चेतावनी, अभिप्रेरणा, ऊंचा मनोबल उठाने वाले संदेशों का आदान–प्रदान निर्बाध रूप से सतत् प्रक्रिया में चलता रहता है।

(2)संचार अर्थ संचारित करने का माध्यम– संचार का आशय सूचनाओं एवं सन्देशों को एक व्यक्ति (समूह) से दूसरे व्यक्ति (समूह) को भेजना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके लिए यह भी आवश्यक है कि सूचना अथवा सन्देश प्राप्तकर्ता उसे उसी भाव (अर्थ) में समझे जिस भाव से उसे सूचना दी गई है। इसलिए संचार प्रक्रिया मे सूचना प्रेषण करने वाले को Encoder तथा सूचना प्राप्त करने वाले को Decoder कहा जाता है। इस प्रक्रिया को निम्न ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है।



(3)संचार एक द्विमार्गी प्रक्रिया– संचार दोतरफा प्रक्रिया है। संचार में व्यक्तियों अथवा समूहों के मध्य सन्देश का आदान–प्रदान होता है। संचार प्रक्रिया में सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश भेजने वाले के सही अर्थ भाव को समझता है एवं अपनी प्रतिपुष्टि अथवा प्रतिक्रिया सन्देश प्रेषक को प्रदान करता है। इस तरह संचार मूलतः द्विमार्गी प्रक्रिया है। सन्देश प्राप्त करने पर ही संचार प्रक्रिया तब तक पूर्ण नहीं होती, जब तक प्राप्त करने वाला सम्बन्धित वांछित प्रतिपूष्टि का संवाहन न करे। द्विमार्गी प्रक्रिया को निम्न प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं:



(4) **संचार एक प्रबन्धकीय कार्य** – संचार एक महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय प्रक्रिया एवं संस्था के कार्यों के निष्पादन की आधारशिला है, संस्था के संगठित समूह के व्यक्तियों, सहकर्मचारियों के मध्य समन्वय, नेतृत्व, अभिप्रेरणा एवं निर्देशन का कार्य संचार द्वारा किया जाता है। नियन्त्रण प्रक्रिया का मूलाधार संचार ही है जिसके द्वारा कर्मचारियों एवं कार्य पर नियन्त्रण प्राप्त किया जाता है। कर्मचारियों के मध्य सौहार्दपूर्ण वातावरण प्रभावी संचार के द्वारा बनाया जा सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि, संचार एक प्रबन्धकीय कार्य एवं अन्य प्रबन्धकीय कार्यों के सम्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण (तन्त्र) है।

(5)संचार माध्यम के विभिन्न प्रकार– आधुनिक युग में अनेक संचार माध्यम प्रयोग में लाए जाते हैं। सूचना क्रान्ति के वर्तमान युग में संचार के लिए परम्परागत माध्यम जैसे, पत्राचार, टेलीफोन के साथ–साथ तीव्र गति वाले आधुनिक संचार माध्यम जैसे–Telefax, E-Mail, Video conferencing आदि माध्यम प्रयोग में लाए जाते हैं।

अतः संचार लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक होने के साथ–साथ एकमीर्गीय, द्विमार्गीय एवं त्रिस्तरीय भी हो सकता है।

1.6 सार–संक्षेप

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई में संचार की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताओं के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है, इसके साथ ही संचार की प्रकृति के बारे में चर्चा की गई है। **संचार** अनेक रूपों में होता है। हम भाषा के द्वारा सर्वाधिक सशक्त रूप में अपनी संवेदनाओं को अभिव्यक्त कर सकते हैं, तो अपने हाव–भाव, अंग संचालन, दृष्टि निक्षेप, बातचीत, शारीरिक भंगिमाओं द्वारा भी अपनी हृदयगत भावना को दूसरों तक पहुँचा सकते हैं। वास्तविकता तो यह है कि आज वर्तमान युग में संचार के बिना सभी कार्य अधूरे हैं। **चैम्बर्स शब्दकोश** में कम्यूनिकेशन का अर्थ है–यानी बाँटना, सूचित करना, उद्घाटित करना, अर्पित करना, एक दूसरे को संदेश प्रेषित करना। संचार प्रक्रिया में विज्ञान एवं कला दोनों के तत्व पाए जाते हैं तथा संचार एक जन्मजात गुण, संचार एक समाजिक प्रक्रिया, संचार का मानवीय प्रक्रिया एवं संचार एक सार्वभौमिक प्रक्रिया। इस इकाई के अन्त में संचार की विशेषताओं के बारे में भी प्रकाश डाला गया है जिसमें– संचार एक सतत् प्रक्रिया, संचार अर्थ संचारित करने का माध्यम, संचार एक द्विमार्गी प्रक्रिया, संचार एक प्रबन्धकीय कार्य एवं संचार माध्यम के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में वृद्धि करायेगी।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

संचार–सम्प्रेषण जो एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के किसी सूचना या विश्वास का हस्तान्तरण है।''

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1. संचार की अवधारणा पर प्रकाश डालिये।
2. संचार के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
3. संचार को परिभाषित कीजिए।
4. संचार की प्रकृति के बारे में लिखिए।
5. संचार की विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत

1. संचार की अवधारणा पर प्रकाश डालते हुए इसकी प्रकृति के बारे में लिखिए।
2. संचार को परिभाषित कीजिए तथा इसकी विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

1.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा, वर्ष 2013, पेज–54–55

2– मिश्र, डॉ० विनोद एवं शुक्ल, डॉ० नरेन्द्र, व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.वी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस, आगरा, वर्ष– 2014–15, पेज–1–3

3– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005, पेज–655–656

टिप्पणी

टिप्पणी

खण्ड–प्रथम– संचार

इकाई –2, संचार : चरण एवं पद्धति

2.0 इकाई का उद्देश्य

2.1 परिचय

2.2 संचार के चरण

2.3 संचार के चरण के तत्व

2.4 संचार की पद्धति

2.5 संचार का क्षेत्र

2.6 सार–संक्षेप

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

2.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

2.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई में संचार के चरण एवं पद्धति के बारे में प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर पायेंगे–

1– संचार के चरणों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें

2– संचार के चरण के तत्वों पर प्रकाश डाल सकेगें।

3– संचार की पद्धति से अवगत हो सकेंगे।

4– संचार के क्षेत्रों के बारे में जान सकेगें।

5– संचार की विशेषताओं पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेगें।

2.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई 'संचारः चरण एवं पद्धति' आपके सम्मुख प्रस्तुत है। वास्तव में संचार के अर्थ एवं विशेषताओं को जान लेने के बाद आपके मन में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि, संचार अपने किन–किन चरणों एवं पद्धति के माध्यम से अपनी प्रक्रिया पूरी करता है।

अतः इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह इकाई आपके सामने प्रस्तुत की जा रही है। वास्तव में, संचार की प्रक्रिया प्रत्येक संगठन में होती रहती है। वास्तव में, संचार की प्रक्रिया प्रत्येक संगठन तथा समाज में प्रवाहित होती है, जिसमें यह कई विभिन्न चरणों एवं प्रविधियों के माध्यम से सम्पन्न होती है। संचार के चरण में सर्वप्रथम प्राप्तकर्ता के पास पहुँचता है और जब संदेश प्राप्तकर्ता प्रेषक को इसकी प्रतिपुष्टि देता है कि संचार द्वारा प्रेषित संदेश उसको प्राप्त हो गया है तो संचार का चरण पूर्ण हो जाता है। संचार के चरण के बारे में **डेविड के0** बर्लो ने इसे एक ऐसा चरण को बताया जिसमें संदेश को प्रेषक के माध्यम से जो संकेतभाव हो सकते हैं, को उचित माध्यम के द्वारा प्राप्तकर्ता को भेजे जाते हैं तथा प्राप्तकर्ता, प्रेषक द्वारा भेजे गये संदेश के निहित अर्थ को समझकर प्रेषक को अपनी प्रतिपुष्टि प्रदान करता है।

अतः इस इकाई की संरचना में संचार के चरण व पद्धति के बारे में चर्चा की गयी है, जो आपके लिए इसलिए मूल्यवान है, क्योंकि उचित संचार, उन्नति के कई महत्वपूर्ण अवसर आप लोगों के लिए खोल सकता है। इस इकाई को पढ़कर आप संचार के चरण व पद्धतियों के बारे जानकारी कर सकेगे।

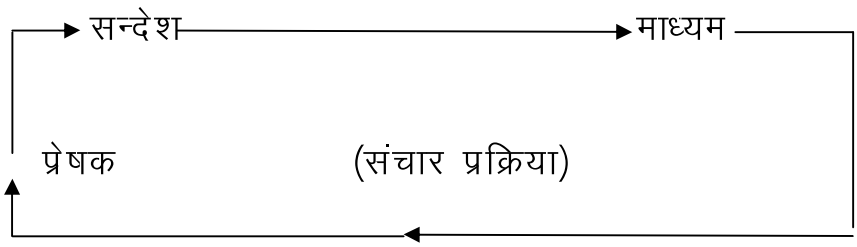
2.2 संचार के चरण

क्रियाओं के व्यस्थित क्रम एवं स्वरूप को लागू करने के ढंग को प्रक्रिया या चरण कहते हैं। संचार के अन्तर्गत एक विभाग दूसरे विभाग को विचारों, सूचनाओं एवं भावनाओं के आदान–प्रदान को संचार प्रक्रिया का नाम दिया जा सकता है।

संचार प्रक्रिया या चरण संगठन के प्रत्येक स्तर एवं व्यक्तियों तक प्रवाहित होती है। संगठन का प्रत्येक अधिकारी एवं अधीनस्थ संचार प्रक्रिया से प्रभावित अथवा संलग्न होता है। संगठन के सामूहिक निर्णयों का आधार तथा संगठन का सफल संचालन, संचार प्रक्रिया पर निर्भर करता है।

संचार संगठन के व्यक्तियों एवं समूहों का वाहक एवं विचार अभिव्यक्ति का माध्यम है। संचार प्रक्रिया में सम्प्रेषक संदेश के प्रवाह के माध्यम का प्रयोग करता है। माध्यम लिखित, मौखिक, दृश्य अथवा दृश्य एवं श्रव्य होता है। माध्यम का चयन संचार के उद्देश्य, गति एवं प्राप्तकर्ता का परिस्थितियों के अनुरूप किया जाता है। संचार माध्यम का चयन करते समय संचारक ध्यान रखता है कि कब तथा क्या संचारित करना है। प्रापक संदेश को प्राप्त करता है, विवेचना करता है तथा अपने दृष्टिकोण से ग्रहण तथा वांछित प्रतिउत्तर प्रदान करता है।

संचार एक नैत्यक एवं सतत् प्रक्रिया है एवं कभी न समाप्त होने वाला संचार चक्र संस्था में लगातार विद्यमान रहता है। संचार प्रक्रिया को निम्न चित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है:



2.3 संचार के चरण के तत्व–

प्रचलित एवं एकरूप संचार प्रक्रिया के निम्न महत्वपूर्ण संघटक, तत्व, पग अथवा घटक हैं :

संदेश ⟶ प्रेषक ⟶ संकेतभाव ⟶ माध्यम ⟶ प्रापक ⟶ निहित अर्थ समझना ⟶ प्रतिपुष्टि

जबकि **डेविड के. बार्लो** ने संचार प्रकिया में निम्न घटक बताए हैं–

विचार ⟶ संकेत भाव ⟶ पारेषण ⟶ प्राप्ति ⟶ प्रापक ⟶ संकेत भाव ⟶ कियान्वयन

संदेश – संचार प्रक्रिया की विषय वस्तु संदेश है। संदेश में सूचना, विचार, संकेत, दृष्टिकोण, निर्देश, आदेश परिवेदना, सुझाव, सलाह आदि शामिल हैं। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक अथवा सांकेतिक होता है।

प्रेषक– प्रेषक को संचारकर्ता, पारेषणकर्ता, संदेश देने वाला व्यक्ति कहा जाता है जो कि संदेश प्रदान करता है, उपकरणों के माध्यम से यदि संदेश का प्रेषण किया जाता है तो संदेश देने वाले को संचारक तथा उपकरण के प्रयोगकर्ता को सहायक कहते हैं अथवा संचारक को संदेश द्वारा प्रापक के व्यवहार को गति प्रदान करने वाली शक्ति।

संकेत भाव–संदेश अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त भाषा संकेत को संकेत भाव कहते हैं। संचार की विषय वस्तु अथवा संदेश सदैव भाव वाचक एवं अमूर्त होती है। भाव अभिव्यक्ति के लिए सदैव शब्द संकेत, ध्वनि, दृश्य आदि का सहारा लिया जाता है संचारक अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए उपर्युक्त संकेतों अथवा शब्दों के समूह का प्रयोग करता है। यह संचारक के कौशल पर निर्भर करता है कि, वह शब्द, संकेत दैहिक भाषा, ध्वनि, दृश्य, श्रव्य आदि किस माध्यम का चयन करता है तथा प्रभावी अभिव्यक्ति किस प्रकार देता है।

माध्यम–संचार में माध्यम बहुतवचन अर्थों में प्रयोग हुआ है। संचार माध्यम का आशय वह साधन है, जिसके द्वारा संदेश का संचार किया जाता है। संचार माध्यम के अन्तर्गत सम्प्रेषक को भाषा, संकेत भाषा, दैहिक–भाषा, संकेत–भाषा आदि में किसी एक का चयन करना होता है, जिसमें वह अपने विचार या संदेश की अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहता है। इसमें यह भी चयन किया जाता है कि संदेश लिखित अथवा मौखिक संचारित किया जाए, तदुपरान्त संचार माध्यम को मार्ग एवं दिशा के रूप में प्रयोग किया जाता है कि, संचार की दिशा एवं श्रृंखला कौन–सी होगी, औपचारिक अथवा अनौपाचारिक। मौखिक संचार के

अन्तर्गत आमने–सामने टेलीफोन–सेमिनार, विचार गोष्ठी आदि शामिल करते हैं, जबकि लिखित संचार के लिए पत्र–व्यवहार, इन्टरनेट, ई–मेल को प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार संकेत भाषा श्रव्य अथवा दृश्य के लिए टेलीविजन, रेडियो, विज्ञापन पटल बोर्ड, चार्ट आदि का प्रयोग करते हैं।

प्राप्तकर्ता– प्रत्येक संचार में संदेश प्रापक दूसरा महत्वपूर्ण पक्षकार होता है, जो कि संदेश ग्रहण करता है। बिना प्रापक के संदेश प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती। संचार में प्रापक का अस्तित्व महत्वपूर्ण संघटक है जो कि न केवल संदेश को प्राप्तकर्ता है, बल्कि संदेश की विवेचना व निहित अर्थ को समझता है, तद्नुसार प्रतिपुष्टि, प्रतिक्रिया या क्रियान्वयन करता है।

निहित भाव को समझना–संदेश के निहित भाव को समझने की क्रिया को Decoding कहते हैं। वस्तुतः यह अनुवाद अथवा संकेतों का अर्थ जानने की क्रिया है। प्रेषक द्वारा भाषा, चिन्ह, संकेत द्वारा प्रेषित सन्देश का अनुवाद अथवा अर्थ लगाकर प्रेषक द्वारा भेजे गए अन्तर्भाव को निश्चित अर्थ समझता है।

क्रियान्वयन– प्रापक संदेश के अर्थ ग्रहण कर सन्देशानुसार अपनी भूमिका का निर्वाहन करता है अथवा वांछित क्रियाओं को सम्पादित करता है।

संचार चरण : संचार का एक मौलिक मॉडल

(Commmunication Process : A basic Model of Communication)

समस्त मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि संचार की प्रक्रियाओं में कुछ तत्व सम्मिलित होते हैं। ऐसे तत्वों की संख्या निम्नांकित है।

1. स्त्रोत या संप्रेषक (Source or Communicator)
2. सूचना (Message)
3. कूटसंकेतन (Encoding)
4. माध्यम (Channel)

5 प्राप्तिकर्ता (Receiver)

6. अर्थ परिवर्तन (Decoding)

7. पुनर्निवेशन (Feedback)

8. आवाज (Noise)

1. स्त्रोत या संग्रेशक (*Source or Communcatior*) – संचार प्रक्रिया की शुरूआत एक विशेष स्त्रोत से होता है। जहां से सूचनार्थ कुछ बातें कही जाती है। स्त्रोत से सूचना की उत्पत्ति होती है और स्त्रोत एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह भी हो सकता है। इसी को संप्रेषक (Communicator) कहा जाता है।

2. सूचना (*Message*)–संचार प्रक्रिया का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व सूचना (Message) है। सूचना से तात्पर्य उस उद्दीपन से होता हैं जिसे स्त्रोत या संप्रेषक दूसरे व्यक्ति अर्थात सूचना प्राप्तिकर्ता (Receiver) को देता है। प्रायः सूचना लिखित (Written) या मौखिक शब्दों के माध्यम से अंतरित होता है। परन्तु अन्य सूचनायें कुछ अशाब्दिक संकेत (Non-verbal cues) जैसे हाव–भाव, शारीरिक मुद्रा, शारीरिक भाषा (Body language) आदि के माध्यम से भी दिया जाता है।

3. कूटसंकेतन (*Encoding*)– कूटसंकेतन संचार प्रक्रिया की तीसरा महत्वपूर्ण तथ्य हैं जिसमें दी गयी सूचनाओं का समझने योग्य संकेत में बदला जाता है। कूटसंकेतन की प्रक्रिया सरल भी हो सकती है, तथा जटिल भी। धर में नौकर को चाय बनाने की आज्ञा देना एक सरल कूट संकेतन का उदाहरण है, लेकिन मूली खाकर उसके स्वाद के बारे में बतलाना एक कठिन कूटसंकेतन का उदाहरण है। क्योंकि इस परिस्थिति मे सम्भव है कि व्यक्ति (स्त्रोत) अपने भाव को उपयुक्त शब्द में बदलने में असमर्थ पाता है।

4. माध्यम (*Channel*)– माध्यम संचार प्रक्रिय का चौथा तत्व हैं। माध्यम से तात्पर्य उन साधनों से होता हैं जिसके द्वारा सूचनायें स्त्रोत से निकलकर प्राप्तिकर्ता (Receiver) तक पहुँचती हैं आमने–सामने का विनिमय (Face to face exchange)–संचार प्रक्रिया का सबसे प्राथमिक माध्यम

(Primary channel) होता है। परन्तु इसके अलावा भी संचार प्रक्रिया के अन्य माध्यम जिसे जन–माध्यम (Mass media) कहा जाता है, भी है। इनमें दूरदर्शन, रेडियो, फिल्म, समाचारपत्र, मैगजीन, आदि प्रमुख है।

5. प्राप्तिकर्ता (*Receiver*)– प्राप्तिकर्ता से तात्पर्य उस व्यक्ति से होता है जो सूचना को प्राप्त करता है। दूसरें शब्दों में स्त्रोत से निकलने वाली सूचना को जो व्यक्ति ग्रहण करता है, उसे प्राप्तिकर्ता (Receiver) कहा जाता हैं प्राप्तिकर्ता की यह जिम्मेदारी होती हैं कि वह इन सूचना को सही–सही अर्थ ज्ञात करके उसके अनुरूप कार्य करे।

6. अर्थ परिवर्तन (*Decoding*)– अर्थ परिवर्तन संचार प्रक्रिया का छठा महत्वपूर्ण पहलू है। अर्थ परिवर्तन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सूचना में व्यवहत संकेतो (Symbols) के अर्थ की व्याख्या प्राप्तिकर्ता द्वारा की जाती है। अधिकतर परिस्थिति में संकेतो का साधारण ढंग से व्याख्या करके प्राप्तिकर्ता अर्थ परिवर्तन कर लेता है। परन्तु कुछ परिस्थिति में जहाँ संकेत का सीधे–सीधे अर्थ लगाना कठिन है, अर्थ, पविर्तन एक जटिल एवं कठिन कार्य होता है।

7. पुनर्निर्वेशन (*Feedback*)–पुनर्निर्वेशन संचार का सांतवा तत्व है। पुनर्निर्वेशन एक तरह की सूचना होती हैं जो प्राप्तिकर्ता (Receiver) की ओर से स्त्रोत या संप्रेषक को प्राप्त होता है। जब स्त्रोत का प्राप्तिकर्ता से पुनर्निर्वेशन या परिणाम ज्ञान (Knowledge result) की प्राप्ति होती है, तो वह अपने द्वारा संचारित सूचना के महत्व या प्रभावशीलता का समझ पाता है। पुनर्निवेशन के ही आधार पर स्त्रोत यह भी निर्णय कर पाता है कि क्या उसके द्वारा दी गयी सूचना में किसी प्रकार का परिमार्जन (Modification) की जरूरत है। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि केवल द्विमार्गी संचार (Two-way communication) में पुनर्निर्वेशन तत्व पाया जाता है। अगर संचार का स्वरूप एक मार्गी (One-way) है, जो पुनर्निवेशन का तत्व उसमें नही पाया जाता है।

8. आवाज (*Noise*)–संचार प्रक्रिया मं आवाज भी एक तत्व है। यहां आवाज से तात्पर्य उन सभी बाधाओं से होता है, जिसके कारण स्त्रोत द्वारा दी गयी सूचना को प्राप्तिकर्ता ठीक ढंग से ग्रहण नही कर पाता हैं या प्राप्तिकर्ता

द्वारा प्रदत्त पुनर्निवेशन सूचना को भी स्त्रोत ठीक ढंग से ग्रहण नही कर पाता है। अक्सर देखा गया है कि स्त्रोत द्वारा दी गई सूचना को व्यक्ति या प्राप्तिकर्ता अनावश्यक शोरगुल या अन्य समान कारणों से ठीक ढंग से ग्रहण नही कर पाता हैं इससे संचार का मौलिक उद्देश्य की पराजय होती है और संचार की प्रभावशीलता कम हो जाता है।

संचार की प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले कारक

(Factors influencing the effectiveness of communication)

प्रत्येक संचार का उद्देश्य उस व्यक्ति को प्रभावित करना होता है जो उसे ग्रहण करता हैं। दूसरे शब्दों में स्त्रोत या संप्रेषक संचार के माध्यम से प्राप्तिकर्ता (Receiver) को प्रभावित करने की कोशिश करता है। परन्तु संचार हमेशा प्राप्तिकर्ता पर वांछित प्रभाव डालने में असमर्थ होता है। इसका कारण यह है कि बहुत सारे ऐसे कारक है जिनमे संचार की प्रभावशीलता (Effectiveness) प्रभावित होती है। समाज मनोवैज्ञानिकों ने ऐसे चार प्रमुख कारकों की पहचान की है, जो निम्नाकिंत है –

1. **स्त्रोत या संप्रेशक की विशेषतायें** (Characteristics of source or communicator)
2. **सूचना की विषयवस्तु** (Content of Mesaage)
3. **संचार का माध्यम** (Channel of Communication)
4. **ग्रहणकर्ता या प्राप्तिकर्ता की विशेषताएं** (Characteristics of receiver)

इन चारों कारकों का संचार की प्रभावशीलता पर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन निम्नांकित है।

1. स्त्रोत या संप्रेषक की विशेषताएं

(Characteristics of Socurce or Communicator)

जो व्यक्ति सूचना देता हैं उसे स्त्रोत (Source) या संप्रेषक (Communicator) कहा जाता है। समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों के आधार पर यह स्पष्ट हआ है कि स्त्रोत की कुछ विशेषताएं

(Characteristics) होती है जिनसे संचार की गुणवत्ता प्रभावित होती है। ऐसी विशेषताओं में निम्नांकित प्रमुख हैं –

1. **विश्वसनीयता** (*Credibility*)– यदि स्त्रोत या संप्रेषक अधिक विश्वसनीय होता है तो उसके द्वारा किया गया संचार की प्रभावशीलता उस स्त्रोत या संप्रेषक द्वारा किये गये संचार से अधिक होता हैं जो तुल नात्मक रूप से कम विश्वसनीय होता हैं । एक विश्वसनीय स्त्रोत (Credible source) को भरोसे का (Trustworthy) तथा विशेषज्ञ (Expert) दोनो ही समझा जाता है। यही कारण हैं कि यदि कोई जाने माने अर्थशास्त्री किसी विशेष कर प्रणाली के पक्ष में या विपक्ष में बोलते हैं तो उसका प्रभाव देश के अधिकतर लोगों पर पडता हैं और उनके तर्क के अनुरूप व्यक्ति सोचने के लिए बाध्य हो जाता है। उसी तरह से यदि कोई डाक्टर किसी विशेष दवा की अनुशंसा करते हैं तो व्यक्ति उसे ऑख मूंदकर स्वीकार कर लेता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि जब स्त्रोत या संप्रेषक विश्वसनीय होता हैं तो उसके द्वारा किये गये संचार से लोग अधिक प्रभावित होते है। होवलैंड तथा विस (Howland & Weiss, 1952) ने एक प्रयोग किया जिसमें उन्होंने स्त्रोत के विश्वसनीयता का संचार की ग्रहणशीलता पर पडने वाले प्रभावों का अध्ययन किया। प्रयोज्यों को कई विषयों से संबंधित कुछ संदेश दिये गए। कुछ प्रयोज्यों को यह यह बतलाया गया कि संदेश देनेवाला व्यक्ति काफी विश्वसनीय है। और कुछ प्रयोज्यों को यह बतलाया गया कि संदेश देने वाले में अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता है। परिणाम में देखा गया कि उच्च विश्वसनीय स्त्रोत (High credible source) के होने पर लोगों ने उनके संचार को अधिक महत्व दिया तथा उसे स्वीकार किया। परन्तु निम्न विश्वसनीय स्त्रोत के होने पर उनके द्वारा दिये गए संदेश या संचार को लोगों ने कम मात्रा में स्वीकार किया ।

2. **आकर्षकता** (*Attractiveness*)– यदि स्त्रोत या संप्रेषक आकर्षक (Attractive) होता है तो उसके द्वारा किये गये संचार की प्रभावशीलता एक अनाकर्षक व्यक्ति द्वारा उसी तरह के किये गये संचार की प्रभावशीलता से अधिक होता है। शयद यही कारण हैं कि जब एक फिल्मी अभिनेत्री या अभिनेता

किसी तरह के साबुन से स्नान करने का संदेश देते हैं, तो उसका प्रभाव आम लोगों पर अधिक से अधिक होता है। परन्तु वही साबुन का उपयोग यदि एक साधारण व्यक्ति करने की सिफारिश करता है तो इसका प्रभाव आम लोगों पर कम से कम पड़ता है। इसका मुख्य कारण यह है कि फिल्मी अभिनेता या अभिनेत्री में शारीरिक आकर्षकता तुलनात्मक रूप से अधिक होता है। चाइकिन (Chaikin, 1979) तथा डियोन एवं स्टीन (Dion & Stein, 1978) ने अपने–अपने अध्ययनों के आधार पर इस तथ्य की संपुष्टि करते हुए कहा है कि, आकर्षक स्त्रोत द्वारा किया जाने वाला संचार स्त्रोत अनाकर्षक द्वारा किये गए संचार से अधिक प्रभावी (Effective) होता है।

3. समानता (*Similarity*)– स्त्रोत या संप्रेषक की समानता भी एक कारक है, जिससे उसका संचार प्रभावित होता है। जब स्त्रोत या संप्रेषक की समानता सूचना प्राप्तिकर्ता (Receiver) से अधिक होती है तो प्राप्तिकर्ता स्त्रोत से काफी अधिक प्रभावित होता है और उसके संचार को ग्रहण करने की उन्मुखता उसमें अधिक होती है। सचमुच में स्त्रोत तथा प्राप्तिकर्ता में समानता अधिक होने से आकर्षकता में वषद्वि हो जाती है। फलस्वरूप स्त्रोत द्वारा किया गया संचार में प्रभावशीलता बढ जाती है। डेम्ब्रोस्की तथा उनके सहयोगियों (Dembroski et.al., 1978) ने एक प्रयोग करके इस तथ्य की संपुष्टि किया है। इस प्रयोग में कुछ श्याम छात्रों को कुछ दंत चिकित्सकों से दांत के देख–रेख के बारे में कुछ उत्तम सुझाव दिये गये। सुबह होकर जब इन छात्रों के दांतों की जांच की गयी तो पाया गया कि श्याम दंत चिकित्सकों द्वारा दिये गये सुझाव को गोरे दंत चिकित्सकों द्वारा किये गये सुझाव की अपेक्षा इन छात्रों द्वारा अधिक पालन किया गया। इस प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्रोत या संप्रेषक की समानता एक महत्वपूर्ण कारक है जिससे संचार की गुणवत्ता प्रभावित होता है।

स्पष्ट हुआ की स्त्रोत की कई विशेषताओं के कारण संचार की प्रभावशीलता कम या अधिक होती है।

2.4 संचार की पद्धति–

संचार की पद्धति से तात्पर्य यह होता हैं कि सूचना किस तरह से स्त्रोत (Source) द्वारा व्यक्ति या सूचना प्राप्तिकर्ता को दिया जाता है। सूचना आमने सामने उपस्थित होकर दी जा सकती है, लिखकर दी जा सकती हैं, फिल्म दिखाकर दी जा सकती हैं, तथा अन्य माध्यम से भी दी जा सकती है। इन माध्यमों से सूचना की प्रभावशीलता प्रभावित होती है। ऐसे माध्यमों से सबंधित कारक जिनका प्रयोगात्मक अध्ययन किया गया है। निम्नांकित हैं–

1. सक्रिय अनुभूति बनाम निष्क्रिय अभिग्रहण (*Active experience versus Passive reception*)– मनोवैज्ञानिकों ने इन दोनों तरह के माध्यमों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। जब स्त्रोत द्वारा सूचना ग्रहणकर्ता के सामने उपस्थिति होकर सूचना दी जाती हैं तो यह सक्रिय अनुभूति का उदारहण बनता है। परनतु जब सूचनाग्रहणकर्ता दिवाल पर लिखें वाक्यों दिवाल पर सटे पोस्टरों तथा स्त्रोंत द्वारा लिखकर भिजवाये गए पत्रों के माध्यम से सूचना प्राप्त करता हैं तो यह निष्क्रिय अभिग्रहण (Passive reception) का उदाहरण बनता है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययनों से यह स्पष्ट हुआ है कि निष्क्रिय अभिग्रहण (Passive reception) द्वारा संचारित सूचनाएं कम प्रभावशील होती हैं परनतु सक्रिय अनुभूति द्वारा संचारित सूचनाएं अधिक प्रभावशील होती है। क्योंकि ऐसी सूचनाओं पर व्यक्ति ध्यान कम देता हैं ।

2. व्यक्तिगत सर्म्पक बनाम जनप्रभाव (*Personal contact versus Media influence*) –व्यक्तिगत सर्म्पक में स्त्रोत द्वारा सूचना प्राप्तिकर्ता को सूचना व्यक्तिगत रूप से उससे बातचीत करके तथा उससे एक सम्पर्क कायम करके दिया जाता है। जन प्रभाव में सूचना का माध्यम रेडियों दूरदर्शन समाचारपत्र आदि होता हैं मैकोबी (Maccoby, 1980) एवं मैकोबी तथा एलेकजेण्डर (Maccoby & Alexander, 1980) ने एक अध्ययन किया जिसमें सूचना के इन दोनों माध्यमों की प्रभावशीलता का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन में एक स्वास्थ्य संबंधी सूचना कुछ लोगों को जनसम्पर्क के माध्यम से जैसे रेडियों ,दूरदर्शन आदि से दी गयी तथा कुछ लोगों को वही

सूचना संचारक या संप्रेषक द्वारा घर घर घूम करके बातचीत द्वारा एक विशेष सम्पर्क स्थापित करने के बाद दिया गया। कुछ दिनों के बाद दी गई सूचना की प्रभावशीलता की जांच करने पर पाया गया कि जन संपर्क से सूचना प्राप्त करने वाले व्यक्तियों में से बहुत कम लोग उस स्वास्थ्य संबंधी सूचना से प्रभावित हुए जबकि व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने के बाद प्राप्त सूचना से बहुत सारे व्यक्ति प्रभावित हुए और सूचना द्वारा दिये गये सुझाव को व्यवहार में लाया। इस अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि जन सम्पर्क के माध्यम की तुलना में व्यक्तिगत सम्पर्क का माध्यम अधिक प्रभावशील (Effective) होता है।

स्पष्ट हुआ है, कि संचार के माध्यम (Medium) से भी सूचना की प्रभावशीलता पर असर पडता है।

4. ग्रहणकर्ता या प्राप्तिकर्ता की विशेषताएं (*Characteristics of Receiver*)– सूचना चाहे जिस माध्यम से क्यों न दिया जाए इसकी प्रभावशीलता बहुत हद तक सूचना प्राप्तिकर्ता या ग्रहणकर्ता (Receiver) पर भी निर्भर करता है। सूचना प्राप्तिकर्ता की कुछ ऐसी विशेषताएं होती है। जिनसे प्राप्त सूचना की ग्रहणशीलता प्रभावित होती है। ऐसी ही कुछ विशेषताओं में निम्नांकित प्रमुख है।

1. प्रत्ययकारिता (*Persuability*)– प्रत्ययकारिता एक ऐसा व्यक्तिगत शीलगुंण है जिसमें व्यक्ति को आसानी से किसी दी गई सूचना में विश्वास उत्पन्न करने के लिए राजी किया जा सकता है। लेजारसफेल्ड (Lazarsfeld, 1984) ने अपने अध्ययन में पाया है कि जिन व्यक्तियों में प्रत्ययकारिता का शीलगुण होता हैं उन्हें आसानी से दी गई सूचना को स्वीकार करा लिया जाता है । इसका मतलब यह हुआ कि सूचना प्राप्तिकर्ता में इस तरह के शीलगुण होने से सूचना की प्रभावशीलता अधिक होने की संभावना होती है।

2. आत्म सम्मान (*Self-esteem*)– जिन व्यक्तियों में आत्म सम्मान का गुण अधिक होता हैं उनमें आत्म विश्वास भी अधिक होता हैं ऐसे लोगों में आलोचनात्मक क्षमता (Critical ability) अधिक होती है। इन्हें जब भी कोई सूचना दी जाती है तो वे उसका पहले अपने स्तर से मूल्यांकन करते हैं और

तब उसे ग्रहण करते है। अत': जिन व्यक्तियों में आत्म सम्मान अधिक होता हैं वे लोग दी गयी सूचना को तुरंत स्वीकार नहीं कर लेते है। मैकग्यूरी (McGurie, 1967) ने अपने अध्ययन के आधार पर इस तथ्य की संपुष्टि किया हैं इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि जिन लोगों में आत्म सम्मान अधिक होता है, उनमें सफलता का अपना बुलन्द इतिहास होता हैं। ऐसे लोग किसी सूचना को तुरंत स्वीकार नहीं कर लेते है। यदि सूचना प्राप्तिकर्ता में अधिकतर लोग ऐसे ही है। तो सूचना की प्रभावशीलता कम होती है।

3. आक्रामकता (*Aggressiveness*)– मनोवैज्ञानिकों द्वारा किये गए अध्ययनों से यह भी स्पष्ट हुआ है कि जिन व्यक्तियां में आक्रामकता का शीलगुण अधिक होता हैं वे किसी भी तरह की सूचना को जल्दी स्वीकार नहीं करते है। ऐसे लोग अपने दावे की वैधता में जरूरत से ज्यादा विश्वास रखते हैं फलस्वरूप वे लोग दी गई सूचना की वैघता को अधिक महत्व नहीं देते हैं परिणामस्वरूप आक्रामकता का शीलगुण होने से सूचना की ग्राहवाशीलता या उसकी प्रभावशीलता में कमी आ जाती है।

स्पष्ट हुआ कि सूचना प्राप्तिकर्ता की कुछ विशेषताएं होती हैं जिनसे संचार की प्रभावशीलता प्रभावित होती है।

2.5 संचार का क्षेत्र–

संचार का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। यह एक अन्तर्विषयिक प्रक्रिया है, इसमें अनेक कारणों का मिश्रण होता है। यह एक द्विमार्गी प्रक्रिया है जिसमें संचारक एवं सन्देश प्रापक दोनों ही संलग्न रहते हैं। संचार विचारों, भावनाओं, नजरियों, दृष्टिकोणों, समंकों, तथ्यों एवं अन्तर्सम्बन्धों आदि के आदान–प्रदान की एक लगातार प्रक्रिया है। संचार प्रक्रिया में संकेतों, अभिनय, तस्वीरों एवं शाब्दिक संकेतों आदि का प्रयोग किया जाता है। आज तो आधुनिक युग में संचार प्रक्रिया में लिखित एवं मौखिक दोनों में अनेक नई तकनीकों का आविष्कार हुआ है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संचार की प्रकिया से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. संचार के चरण के तत्वों के बारे में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार के चरण एवं पद्धति पर प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया कि संचार की प्रक्रिया या चरण संगठन के प्रत्येक

स्तर एवं व्यक्तियों तक प्रवाहित होती है। संगठन का प्रत्येक अधिकारी एवं अधिनस्थ संचार प्रक्रिया से प्रभावित अथवा जुड़ा हुआ होता है। संगठन के सामूहिक निर्णयों का आधार तथा संगठन का सफल संचालन संचार प्रक्रिया पर निर्भर करता है। वास्तव में देखा जाये तो संचार प्रक्रिया में सम्प्रेषक सन्देश के प्रवाह के माध्यम का प्रयोग करता है या माध्यम लिखित, मौखिक, दृश्य या श्रव्य हो सकता है। वास्तविक रूप में संचार का चरण एवं प्रक्रिया विभिन्न स्तरों से होकर गुजरती है। प्रस्तुत इकाई में संचार के चरण के तत्त्वों की विवेचना की गई है जिसमें बर्लो द्वारा प्रतिपादित संचार की प्रक्रिया के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें सन्देश, प्रेषक, संकेत भाव, माध्यम, प्राप्तकर्ता, निहित भाव को समझना एवं क्रियान्वयन आदि प्रमुख हैं। इसी इकाई में संचार की पद्धति के बारे में वृहद् चर्चा की गयी है।

इकाई के अन्त में संचार के क्षेत्र पर भी प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि संचार एक अन्तविर्षायक प्रक्रिया है, जिसमें अनेक कारकों का मिश्रण होता है। यह एक द्विमार्गीय प्रक्रिया है जिसमें संचार एवं सन्देश प्रापक दोनों ही संलग्नकता में रहते हैं।

प्रिय विद्यार्थियों आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों को संचार के चरण एवं पद्धति के बारे में विस्तृत ज्ञान प्रदान करेगी।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

संचार के चरण – क्रियाओं के व्यवस्थित क्रम एवं स्वरूप को लागू करने के ढंग को चरण कहते हैं। संचार के अन्तर्गत एक विभाग दूसरे विभाग को विचारों, सूचनाओं एवं भावनाओं के आदान–प्रदान को संचार प्रक्रिया का नाम दिया जाता है।

संचार चरण के तत्त्व – संचार चरण के तत्त्व का तात्पर्य उन महत्वपूर्ण संघटकों, तत्त्वों या घटकों से है जिनके द्वारा संचार की प्रक्रिया शुरू होकर अपना गन्तव्य निश्चित करती है।

सन्देश – संचार प्रक्रिया की विषय वस्तु सन्देश है। यह लिखित, मौखिक, शाब्दिक या सांकेतिक होती है।

प्रेषक – प्रेषक को संचारकर्ता, पारेषणकर्ता, सन्देश देने वाला व्यक्ति कहा जाता है जो कि सन्देश प्रदान करता है।

संकेत भाव – सन्देश अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त भाषा संकेत को संकेत भाव कहते हैं।

माध्यम – संचार में माध्यम वह साधन है जिसके द्वारा सन्देश का संचार किया जाता है।

प्राप्तकर्ता – प्रत्येक संचार में सन्देश प्रापक दूसरा महत्वपूर्ण पक्षकार होता है जो कि सन्देश ग्रहण करता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1–संचार के चरण से आप क्या समझते हैं?

2–संचार चरण के तत्त्वों के बारे में लिखिए।

3–संचार की पद्धति से आप क्या समझते हैं?

4–संचार के क्षेत्र पर टिप्पणी लिखिए।

विस्तृत

1– संचार के चरण एवं पद्धति पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

2– 'सन्देश जब तक प्रतिपुष्ट की अवस्था पूर्ण न कर ले तब तक संचार पूर्ण नहीं माना जाता।' इस कथन की विवेचना कीजिए।

2.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा, वर्ष 2013, पेज–56

2– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005, पेज–664–665

खण्ड–प्रथम– संचार

इकाई –3, संचार की सीमायें

3.0 इकाई का उद्देश्य

3.1 परिचय

3.2 संचार की सीमायें

3.2.1 संचार की भाषागत सीमायें

3.2.2 संचार की दृष्टिकोणात्मक सीमायें।

3.2.3 संचार की संगठनात्मक सीमायें।

3.2.4 संचार की व्यक्तिगत सीमायें।

3.3 सार–संक्षेप

3.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

3.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

3.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई संचार की सीमाओं से संबन्धित है। वास्तव में प्रस्तुत इकाई में संचार की सीमाओं का वर्णन किया गया है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रिलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– संचार की सीमाओं के बारे में जान सकेंगे।

2– संचार के विभिन्न स्तरों पर होने वाली कठिनाई या बाधा के बारे में जान सकेंगे।

3– संचार की भाषागत सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– संचार की दृष्टिकोणात्मक सीमाओं के बारे में जान सकेंगे

5– संचार की संगठनात्माक सीमाओं पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

6– संचार की व्यक्तिगत सीमाओं को जान सकेंगे।

3.1 परिचय

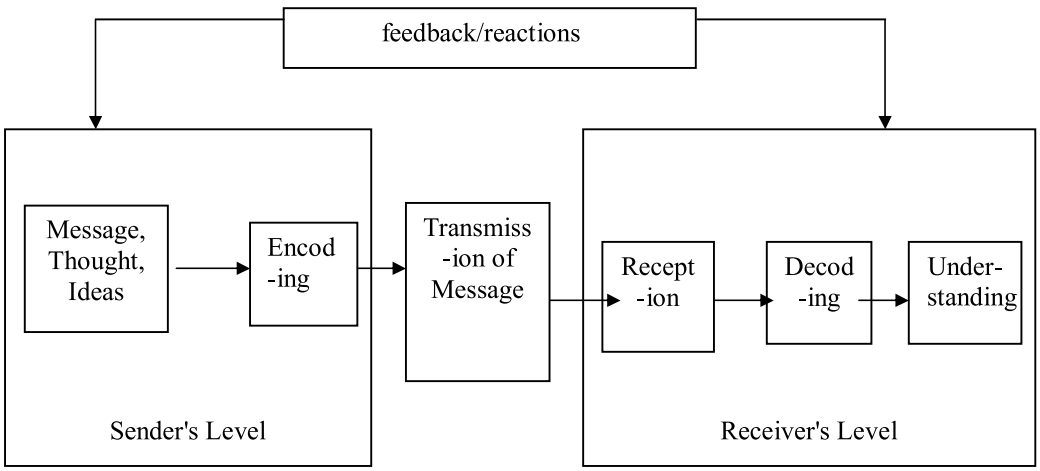
प्रिय विधार्थियों, प्रस्तुत इकाई में संचार की विभिन्न सीमाओं या अवरोधों पर प्रकाश डाला गया है। वास्तव में सीमायें वे बाधायें या अवरोध होती हैं जो संचार को गन्तव्य स्थान तक पहुँचने में कठिनाई उत्पन्न करती हैं। वास्तव में संचार प्रक्रिया में तीन स्तरों पर संचार की बाधायें या सीमायें उत्पन्न होती हैं। प्रथम प्रेषक के स्तर पर, द्वितीय प्राप्तकर्ता के स्तर पर तथा तीसरा प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया के स्तर पर।

प्रस्तुत इकाई में संचार के विभिन्न सीमाओं के बारे में ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में ये अवरोध या सीमायें भिन्न स्तरों पर होती हैं, जिनमें भाषागत सीमायें, दृष्टिकोणात्मक सीमायें, संगठनात्मक सीमायें, तथा व्यक्तिगत अवरोध प्रमुख हैं। इन सीमाओं की वास्तविक व्याख्या भी इस इकाई में प्रस्तुत की गई है जिसमें बताया गया है कि, भाषागत सीमाओं में अस्पष्टित पूर्वधारणा, विभेदात्मक मान्यतायें, गलत शब्दों में अभिव्यक्त संदेश, दोषपूर्ण अनुवाद तथा शब्दों एवं संकेतों के विविध अर्थ प्रमुख हैं। वहीं पर, दृष्टिकोणात्मक सीमाओं में, ध्यान न देना, अपरिपक्व मूल्यांकन, संचार पर अविश्वास, संचार का विरोध, चयनित बोध, संचार न करना तथा अनावश्यक मिश्रण एवं छानना प्रमुख है। संगठनात्मक सीमाओं के अन्तर्गत, शोर, समय व दूरी, संगठनात्मक नीतियां, नियम एवं नियमावाली, भय, मार्गस्थ हानि, घटिया एवं रख–रखाब, अपर्याप्त सन्तुलन काल तथा लक्ष्यों का विवाद सम्मिलित हैं। व्यक्तिगत सीमाओं में उच्चाधिकारियों की बाधायें तथा अधीनस्थों की बाधायें प्रमुख होती हैं।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग उपरोक्त के बारे में अत्यधिक जानकारी प्राप्त कर संचार की बाधाओं या सीमाओं से बच सकते हैं।

संचार की सफलता के लिए आवश्यक है कि संचार प्रक्रिया का सही अर्थों में क्रियान्वयन किया जाए।

मूलतः संचार एक प्रक्रिया है जिसमें सन्देशों के प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के बीच एक लेन–देन होता है। लेन–देन के तत्वों में चयनित सन्देश माध्यम एवं श्रृंखला शामिल है। यह सूचनाओं तथा अर्थों को विषय विशेष पर दो या अधिक लोगों के बीच सामान्य सूझ–बूझ तथा अर्थ पाने की प्रक्रिया होती है। संक्षेप में, संचार प्रक्रिया को निम्न चित्र द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।



विभिन्न स्तरों पर बाधाएं–

संचार प्रक्रिया पर यदि गहन दृष्टिपात किया जाए तो निम्न स्तरों पर संचार बाधाएं, रुकावटें या समस्याएं उत्पन्न होती हैं:–

1– प्रेषक के स्तर पर– संचार का प्रथम स्तर प्रेषक का स्तर है। प्रेषक के स्तर पर निम्न बाधाएं या समास्याएं उत्पन्न हो सकती हैं:–

अ) सन्देश की रचना एवं विचार के गठन में।

ब) सन्देश के अर्थ को संकेत प्रदान करने में।

2– प्राप्तकर्ता के स्तर पर– संचार प्रक्रिया में दूसरा महत्वपूर्ण स्तर प्राप्तकर्ता का स्तर है। प्राप्तकर्ता के स्तर पर निम्न बाधाएं या समस्याएं आ सकती हैं:–

अ) सन्देश की प्राप्ति।

ब) सन्देश संकेत को समझने योग्य भाषा मे परिवर्तन करने पर।

3– प्रसारण स्तर पर – सन्देश जहां सम्प्रेषित किया जा रहा है।

4– प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रया स्तर– सन्देश प्रक्रिया का अन्तिम स्तर वह है, जहां पर सन्देश की प्रतिक्रिया सम्बन्धी वान्छित जानकारी सन्देश प्रेषक को वापस की जाती है।

संचार के प्रमुख अवरोध–

संचार प्रक्रिया में अनेक कारण सन्देश प्रेषक एवं सन्देश प्राप्तकर्ता के बीच अवरोध पैदा करते हैं। इन बाधाओं, रुकावटें अथवा अवरोधों के कारण अपूर्ण संचार, कुसंचार, गलत संचार, कुरचित सम्प्रेषण एवं संचारहीनता की स्थितियां उत्पन्न करती हैं जो संगठन के अनेक व्यावसायिक एवं प्रबन्धकीय समस्याओं एवं जटिलताओं को जन्म देती हैं। संचार की प्रमुख बाधाओं को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

अ) भाषागत अवरोध

1. अस्पष्टित पूर्वधरणायें
2. विभेदात्मक मान्यतायें
3. गलत शब्दों में अभिव्यक्त सन्देश
4. दोषपूर्ण अनुवाद
5. शब्दों एवं संकेततों के विविध अर्थ।

संचार अवरोध

ब) दृष्टिकोणात्मक अवरोध

1. ध्यान न देना
2. अपरिपक्क मूल्यांकन
3. संचार पर अविश्वास
4. संचार का विरोध
5. चयनित बोध

6. संचार न करना

7. अनावश्यक मिश्रण एवं छानना

स) संगठनात्मक अवरोध

1. शोर
2. समय एवं दूरी
3. संगठनात्मक नीतियां, नियम एवं नियमावली
4. भय
5. मार्गस्थ हानि
6. घटिया रख–रखाव
7. अपर्याप्त सन्तुलन काल
8. तथ्यों का विवाद

द) व्यक्तिगत अवरोध

1. उच्चाधिकारियों की बाधाएं
2. अधीनस्थों की बाधाएं

अ– भाषागत अवरोध

संचार के लिए भाषा अनिवार्य माध्यम है। शाब्दिक अथवा अशाब्दिक दोनों ही प्रकार की भाषाओं का संचार में प्रयोग किया जाता है। अधूरी, अस्पष्ठता, असामायिक विविध अर्थों वाले शब्दों या संकेतों का चयन संचार में प्रमुख अवरोध है। भाषागत विधाओं को निम्न शीर्षकों में स्पष्ट किया जा सकता है।

1– अस्पष्टित पूर्वधारणा– अस्पष्टित पूर्वधारणाएं, जो प्रायः प्रत्येक सन्देश में मौजूद होती हैं, संचार में काफी अधिक रुकावटें पैदा करती हैं। भेजने वाला सन्देश में प्रत्येक बात का विस्तृत ब्यौरा नहीं देता, कुछ चीजों के बारे में वह सोच लेता है, सन्देश पाने वाला व्यक्ति खुद ही समझ जाएगा। दूसरी ओर सन्देश पाने वाला व्यक्ति सन्देश के

एक–एक शब्द को ज्यों का त्यों लेता है तथा उन शब्दों के अतिरिक्त अपनी ओर से कुछ नहीं सोचता या कुछ और ही सोचता है।

उदाहरण– आपका एक मित्र आपको पत्र लिखता है कि अमुक गाड़ी से दिल्ली पहुंच रहा है। यह लिखने पर वह सोच लेता है कि आप उसे स्टेशन पर लेने आएंगे और अपने घर पर ठहराएंगे तथा आप सोचते हैं कि वह अपने किसी रिश्तेदार से मिलने आ रहा है तथा रिश्तेदार के पास ही ठहरेगा। यहां अलग–अलग पूर्णधारणाओं के कारण संचार में रुकावट आई है।

2– विभेदात्मक मान्यताएं– संचार में सन्निहित सूचनाओं को सामान्यतः अनेक मान्यताओं द्वार समर्थित किया जाता है। प्रेषक को इन मान्यताओं के बारे में पूर्णतः स्पष्ट होना पड़ता है, लेकिन जब तक उनको प्राप्तकर्ता के साथ बांटा नहीं जाता इस बात की बड़ी सम्भावना रहती है कि संचार अपूर्ण रहेगा जिसके अलग–अलग अर्थ निकाले जाएंगे। अतः संचारक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि अपने सन्देश में अन्तर्निहित मान्यताओं को स्पष्ट करे।

3– गलत शब्दों में अभिव्यक्त सन्देश– दुर्बल चयनित एवं अर्थहीन शब्दों एवं वाक्यांशों, असावधानी के कारण मूल तारतम्यता का अभाव, विचारों का दुर्बल संगठन, अशुद्ध वाक्य रचना, अपर्याप्त शब्द ज्ञान, अन्धाधुन्ध पुनरावृत्तियां, ढीली अभिव्यक्तियां, अविवेकपूर्ण व्याख्यान तथा परिणामों के स्पष्टीकरण की असफलता जैसी गलतियां सामान्य बात है। स्पष्टता एवं संक्षिप्तता का यह अभाव, कीमती भूलों और महंगे सुधार की उत्पत्ति का स्त्रोत है तथा प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न करता है।

4– दोषपूर्ण अनुवाद– प्रबन्धकगण उपक्रम के संचार केन्द्रों में बैठे होते हैं तथा सन्देशों के संवाहक एवं प्राप्तकर्ता का कार्य करते हैं। वे अधिकारियों, समान स्तर के व्यक्तियों एवं अधीनस्थों से विभिन्न प्रकार के सन्देश पाते हैं तथा इसी क्रम में उन सभी प्रकार के व्यक्तियों के हितार्थ उनके लिए उपयुक्त भाषा में अनुवाद करते हैं। बहुधा यह

पर्याप्त नहीं होता कि सन्देश को केवल शब्दों की तरह ही ज्यों का त्यों आगे बढ़ा दें। प्राप्तकर्ता द्वारा सन्देश को सरलता से समझने के लिए उपयुक्त शब्दों द्वारा उस ढांचे मे ंढाला जाए जिसमें प्राप्तकर्ता संचालन करता है अथवा उसको उसके निर्वचन के साथ संलग्न किया जाना चाहिए। यह प्रक्रिया चातुर्य की मांग करती है जो बहुधा विद्यमान नहीं होता है।

5– शब्दों एवं संकेतों के विविध अर्थ– संचार के अनेक समस्याएं शब्द एवं संकेतों के अर्थ समझने में विभिन्नता होने के कारण उत्पन्न होती हैं। शब्द एवं संकेतों के विविध अर्थ प्रयोग एवं स्थिति के अनुसार होते हैं। जबकि सन्देश प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता सम्बन्धित अर्थ ही प्रयोग करता हैं। जटिल ऊलूलजूलल एवं द्विअर्थी संकेतों एवं शब्दों से संचार अर्थहीन हो जाता है।

ब– दृष्टिकोणात्मक अवरोध–

दृष्टिकोण, बोध अथवा नजरिया व्यक्ति के व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण भाग है जो स्वयं ही अनेक घटकों एवं चरों का एक समूह होता है। समय एवं परस्थितियों पर निर्भर व्यक्ति की व्यापक सोच, रुझान, भावना तथा मनोविज्ञान के द्वारा दृष्टिकोण का सृजन होता है या दृष्टिकोण या नजरिया की कमियां स्वयं संचार में व्यवधान उत्पन्न करती हैं, जो सम्पूर्ण संचार तन्त्र को बिगाड़ देती हैं। ये प्रभावी संचार की भौतिक बाधाएं हैं। प्रमुख दृष्टिकोणात्मक अवरोध निम्न हैं:–

1– ध्यान न देना – कई बार सन्देश पाने वाले व्यक्ति की सन्देश में कोई रुचि नहीं होती। लोग आमतौर पर लम्बी–लम्बी रिपोर्टों, सर्कुलर पत्रों, नोटिसों, बुलेटिनों को पढ़ते ही नहीं। मौखिक संचार में श्रोता शारीरिक रूप से उपस्थित तथा मानसिक रूप से अनुपस्थित हो जाता है। किसी की बात को न सुनना इन्सान का परम्परागत गुण है। हमारी आदत है कि हम वही बात सुनते हैं जिसमें हमारा स्वार्थ होता है। संचार की सबसे बड़ी रुकावट मनुष्यों की यह मनोवृत्ति है कि वे

प्रत्येक मामले को अपने व्यक्तिगत नजरिये से देखते हैं तथा बहुत –सी चीजों को अनदेखा व अनसुना कर देते हैं।

2– अपरिपक्त मूल्यांकन– कुछ लोग सूचनाओं के संचार में इतने तेज होते हैं कि प्रेषक से पूरी सूचनाओं की प्रतीक्षा किए बिना ही उसको प्राप्त हुआ समझ बैठते हैं। यह प्रेषक को मत भ्रम की ओर धकेल सकता है तथा एक व्यर्थ की गतिविधि बन जाती है। फिर प्रेषक ऐसी जल्दी करने वाले मूल्यपरक सूचनाओं के प्रेषण में शंकातीत हो सकता है।

3– संचार पर अविश्वास– कुछ उच्चाधिकारी बिना सोचे–विचारे, अविवेकपूर्ण, बेढंगे निर्णयों, दुर्बल चयनित शब्दावली, गलत निर्णयों के संचार के लिए प्रसिद्ध होते हैं। इनके सन्देशों के साथ बार–बार होने वाले अनुभव अधीनस्थों की धीरे–धीरे कार्य करने में देरी तथा निरुत्साहित होकर काम करने की दशाएं उत्पन्न करते हैं, क्योंकि ऐसे व्यक्तियों से मिले सन्देशों के विषय में सदैव पूर्वानुमान लगा लिया जाता है कि उस निर्णय में परिवर्तन के आदेश पुनः आते ही होंगे। अधीनस्थ ऐसे संचारों को गम्भिरता से नहीं लेते तथा संचारक का अविश्वास संचार की प्रभावपूर्णता को अवरुद्ध करता है।

4– संचार का विरोध– संचार का विरोध सम्प्रेषण की एक व्यापक बाधा होती है। कुछ लोग गलत सोचने की ओर उद्यत होते हैं कि सूचनाओं को सम्प्रेषित करना नहीं चाहिए। इसकी कोई आवश्यकता नहीं है तथा लोग इसके बारे में पहले ही जानते हैं। संचार में असफलता इस भावना से भी उत्पन्न होती है कि प्राप्तकर्ता को नीचा दिखाया जाए या उच्च भावना/निम्न भावना की मनोदशाओं से अथवा स्तर में अन्तरों के कारण।

5– चयनित बोध– संचार प्रक्रिया में अन्तर्निहित एक मान्यता है कि प्राप्तकर्ता और प्रेषक दोनों खुले दिमाग वाले होते हैं जो अबाध तरीकों से सूचनाओं के प्रक्रियाकरण हेतु उनको समर्थ बनाते हैं। यदि लोग

अपने निजी संकीर्ण उद्देश्यों तथा विचारों के प्रति अपनी 'कार्यसूची' को सीमित करते हैं, तो कोई भी प्रभावी संचार सम्भव नहीं हो पाएगा, क्योंकि बन्द दिमाग वाले सभी सूचनाओं को अनावश्यक अधिकार मानकर लेते हैं तथा निश्चित नजरिया मानते हैं।

6– संचार न करना– कई बार सूचना रखने वाला व्यक्ति सुस्ती के कारण सूचना भेजता ही नहीं है या यह सोच लेता है कि यह बात तो सबको पता है, इसे क्या संचारित करना।

7– अनावश्यक मिश्रण एवं छानना– प्रत्येक व्यक्ति अपने निहित दृष्टिकोण से सन्देश का अवलोकन एवं मूल्यांकन करता है। स्वभाविक रूप में कोई भी व्यक्ति अपनी कमजोरी दूसरों को नहीं बताता है। वह सूचना की जांच–पड़ताल करके वही सन्देश आगे भेजता है जो उसके हित में है तथा वह मौखिक सन्देश में निहित कारणों से अनावश्यक मिश्रण भी कर देता है। इसमें सन्देश का विरूपण हो जाता है और प्राप्तकर्ता को सन्देश तोड. मोड़कर प्रस्तुत करता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संचार की भाषागत सीमायें क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. संचार की दृष्टिकोणात्मक सीमाओं का वर्णन कीजिए।

स– संगठनात्मक अवरोध–

व्यवसाय में पूर्व–निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संगठनात्मक ढांचे का निर्माण आवश्यक है, ताकि प्रत्येक अपनी सम्पूर्ण क्षमता से समान उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अग्रसर हो सके। इस संरचना के सफल संचालन के लिए औपचारिक सम्बन्धों का सृजन, नीतियों, कार्यक्रमों, आचार–संहिता, नियमावली तथा मार्गदर्शक सिद्धान्तों की रचना की जाती है। संगठन के कार्यों एवं संरचना को एक सूत्र में पिरोने के लिए संचार व्यवस्था अपरिहार्य होती है। संचार तन्त्र श्रृंखला एवं प्रक्रिया में अनेक बाधाओं का समावेश हो जाता है। संचार की प्रमुख संगठनात्मक अवरोध निम्नलिखित हैः–

1. **शोर**– मौखिक संचार में शोर एक प्रमुख भौतिक बाधा है। कारखानों में मशीनों एंव कलपुर्जों की आवाज में मौखिक संचार दब जाते हैं एवं कोई प्रभाव नहीं छोड़ते। इसी प्रकार विभिन्न यन्त्रों में दोष होने से उत्पन्न शोर के द्वारा संचार अप्रभावी होता है। टेलीफोन के ढीले कनेक्शन अथवा तारों की खराबी के कारण टी.वी. प्रसारण अथवा ध्वनि तरंगों की अन्य कमियों के कारण दोषपूर्ण संचार होता है। कार्यालय में भी जहां शोर रहता है, जैसे आगन्तुक स्थल, टंकण मशनी या शोर पैदा करने वाले उपकरण के समीप स्थानों पर संचार में रुकावट एवं बाधा उत्पन्न होती है।

2. **समय एवं दूरी**– समय एवं दूरी भी संचार के स्वाभाविक प्रवाह में महत्वपूर्ण बाधा हैं। यद्यपि सूचना तकनीक के नवीन यन्त्रों कम्प्यूटर, ईमेल, वीडियो कान्फ्रेंसिंग, इन्टरनेट आदि ने दूरी एवं समय की बाधा को काफी कम किया है लेकिन यदि यान्त्रिक खराबी के कारण उक्त यन्त्रों मे रुकावटें आती हैं, तो यह सुविधाएं अर्थहीन हो जाती हैं। संचारक तथा संचार प्राप्तकर्ता के मध्य की दूरी एवं समय विभिन्नता अनेक संचार समस्याओं को जन्म देती है। इसी प्रकार यदि कार्यालयों में बैठने की दोषपूर्ण व्यवस्था है तो संचार में बाधा उत्पन्न होती है ।

3. संगठनात्मक नीतियां, नियम एवं नियमावली– संगठन की नीतियां, नियम एवं नियमावली भी संचार प्रवाह को प्रभावित करते हैं। संगठनात्मक नीति संचार माध्यम की दिशाओं एवं मार्ग को प्रभावित करती है। इसी प्रकार संगठन के नियम एवं नियमावली भी संचार श्रृंखला एवं स्तरों एवं जाल का निर्माण करते हैं। नियम कठोर एवं ढांचा विषम हो जिससे स्तर हो तो संचार प्रक्रिया में बाधाएं होने की अधिक सम्भावना रहती है। संचार में विलम्ब, संचार के उचित फैलाव का अभाव, संचार के कुछ अंश के छूट जाने का भय, अफवाहों का जन्म आदि प्रमुख समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

4. भय–नीचे से ऊपर की ओर आने वाले संचार की दशा में अधीनस्थ कर्मचारी अपने अफसरों को अप्रिय सूचनाएं भेजते हुए डरते हैं। बुरी या अप्रिय से उत्पन्न होने वाले परिणामों के डर से वे जानबूझ कर अपने अफसरों से ऐसी सूचनाएं छिपाकर उन्हें गुमराह करते हैं। बहुत–से कर्मचारी डरते हैं कि सस्था के सम्बन्ध में अपनी सही भावनाओं को अफसरों को बताना खतरनाक हो सकता है। यह भी धारणा रहती है कि जब उन्हें अच्छे सुझाव देने से कोई फायदा ही नहीं होगा तो कोई सुझाव दिया ही क्यों जाए।

5. मार्गस्य हानि– प्रत्येक स्तर पर मौखिक संचार में एक ही सन्देश क्रमिक घटते हुए दर से होता है। यदि संरचना में कई स्तर हैं तो मौखिक सन्देश प्रत्येक स्तर पर घटता जाता है या कुछ परिवतर्तित हो जाता है। एक अधिकृत अनुमान के अनुसार मौखिक संचार में प्रत्येक स्तर पर लगभग 30 प्रतिशत सुचनाएं खो जाती हैं। अतः यह कठिन हो जाता है कि विभिन्न स्तरों से गुजरकर प्राप्त सन्देश पर विश्वास किया जाए।

6. घटिया रख–रखाव– लिखित सन्देशों का उचित विधि से रख–रखाव न होना भी एक गम्भीर समस्या है। विभिन्न अध्ययनों से यह पता चलता है कि कर्मचारी केवल 50 प्रतिशत संचार योग्य सूचनाओं

तथा अधीक्षकगण 60 प्रतिशत सूचनाओं का रख–रखाब करते हैं। ऐसी स्थिति में संचार पुनरावृत्ति की आवश्यकता प्रतीत होती है।

7. अपर्याप्त सन्तुलन काल– कभी–कभी संचार समय, स्थल एवं किस्म तथा कार्य के क्रम में तथा सामूहिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन के रूप में, जिसका कर्मचारियों पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है, परिवर्तनों की घोषणा करता है। कुछ सन्देश अतिरिक्त प्रशिक्षण, व्यावसायिक समायोजन या पदस्थिति व्यवस्थाओं के परिवर्तन की ओर संकेत करते हैं। परिवर्तन अधीनस्थों को अनेक रूपों में प्रभावित करता है तथा सन्देश के पूर्ण अर्थ के बारे मे ंसोचने में समय लग सकता है। संचार को तभी प्रभावी बनाया जा सकता है, जबकि अधीनस्थों को पर्याप्त समय दिया जाए।

8. लक्ष्यों का विवाद–संगठनात्मक संरचना में विभिन्न एवं उप–विभागों के अपने आन्तरिक लक्ष्य होते हैं। विभागीय लक्ष्यों के कारण उद्देश्य विवादों का जन्म होता है। यद्यपि संचार विवादों को कम करने वाला प्रमुख प्रबन्धकीय तन्त्र है लेकिन विवाद संचार में कमी लाते हैं। यदि दो पक्षों में विवाद है तो संचार न्यूनतम होता है। इसी प्रकार शिकायतें, सन्देश, परिवेदनाएं, अनावयक सूचनाएं संचारित करने लगते हैं तो संचार में अनेक बाधाएं उपस्थित हो जाती हैं।

द – व्यक्तिगत अवरोध–

संचार अन्तः– वयैक्तिक सम्बन्धों की भी प्रक्रिया है। सन्देश प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के मध्य अन्तः– वैयक्तिक सम्बन्ध विभिन्न मात्राओं में विभिन्न स्तरों में विद्यमान होता है। स्थिति एवं पद, विवाद, अधिकार सम्बन्ध में असंगतता परस्पर विरोधी व्यक्तिगत मूल्य तथा हित एवं व्यक्तित्व टकराव संचार श्रृंखलाओं में व्यवधान करते हैं। संगठनात्मक संरचना में उपरिमुखी एवं अधोमुखी संचार का विश्लेषण करें तो निम्न दो प्रकार के व्यक्तिगत अवरोध दृष्टिगोचर होते हैंः–

1. **उच्चाधिकारियों की बाधाएं**– वरिष्ठ एवं उच्चाधिकारियों की संचार में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, क्योंकि संगठन संरचना में शीर्ष पर अधिकार सम्पन्न होने के कारण संचार को प्रभावित करने की स्थितियों में होते हैं। इस वर्ग की प्रमुख बाधाएं निम्न हैं:–

अ) **समय का अभाव**–उच्चाधिकारी यह महसूस करते हैं कि उन पर कार्य का अधिक बोझ है। समयाभाव के कारण वह कम सन्देशों का आदान–प्रदान करते हैं।

ब) **संचार से बचाव**– कभी–कभी उच्चाधिकारी अपने महत्व को प्रदर्शित करने के लिए जान–बूझकर संचार से बचते हैं। पद के गौरव के कारण वे अधीनस्थों से खुले हृदय से बात नहीं कर पाते या आक्रमक शैली में संचार करते हैं।

स) **उचिम माध्यम से संचार**–उच्चाधिकारियों में यह स्वाभाविक मनोवृत्ति होती है कि सन्देशों को उचित माध्यम से ही स्वीकार करते हैं। वे संचार कड़ियों को अनदेखा करना पसन्द हीं करते हैं जिससे कभी संचार में अनावश्यक विलम्ब भी होता है। अपनी झूठी शान के कारण अपने अधीनस्थों की बात नहीं सुनते।

द) **अधीनस्थों पर विश्वास की कमी**– उच्चाधिकारियों में साधारण धारणा होती है कि अधीनस्थ कम कौशल एवं क्षमता वाले होते हैं। वे उच्चाधिकारियों को रचनात्मक सुझाव या वांछित जानकारी का संचार नहीं कर सकते हैं।

2. **अधीनस्थों की बाधाए**–संचार प्रक्रिया तभी प्रभावी हो सकती है जब अधीनस्थ भी संचार में सक्रिय सहभागिता करें। अनौपचारिक संचार में अनधीनस्थों की अधिक प्रभावी भूमिका है। संचार प्रक्रिया में अधीनस्थों की बाधाएं निम्न है:–

अ) **संचार में अरुचि**–अधीनस्थों में संचार के प्रति जागरूकता का अभाव होता है। वे अनजाने भय एवं लापरवाही के कारण भी संचार नहीं करते हैं। उच्चाधिकारियों के नाराज होने की आशंका में सूचनाओं को प्रेषित करने से बचते हैं। अधीनस्थ हीन बोध के कारण निर्भीक भाव से अपने विचारों को उच्चाधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर पाते हैं।

ब) **उचित प्रेरणा का अभाव**–प्रेरणा का अभाव भी अधीनस्थों को संचार के प्रति उदासीन बनाता है । संस्था की पुरस्कार एवं दण्ड नीति भी इसके लिए उत्तरदायी होती है। वे महसूस करते हैं कि उनके सुझाव, शिकायत आदि परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं करेगी।

स) **सरुक्षात्मक संचार**– अधीनस्थ अधिकांशतः सुरक्षात्मक शैली में संचार करते हैं। वे सदैव बचाव वाली मुद्रा में अपना संचार करते हैं।

3.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार की सीमाओं के बारे में प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि संचार की प्रक्रिया में प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता के बीच एक लेन–देन होता है। संचार प्रक्रिया के अनेक कारण सन्देश प्रेषक एवं सन्देश प्राप्तकर्ता के बीच अवरोध पैदा करते हैं। इन बाधाओं, रूकावटों अथवा अवरोधों के कारण अपूर्ण संचार, कुसंचार, गलत संचार, कुरचित सम्प्रेषण एवं संचारहीनता की स्थितियां उत्पन्न करती है जो संगठन में अनेक वास्तविक एवं प्रबन्धकीय समस्याओं एवं जटिलताओं को जन्म देती है। वस्तुतः देखा जाये तो संचार की सीमाएं वे बाधाएं हैं जो संचार को प्रभावित करती हैं। इस इकाई में संचार की बाधाओं को चार भागों में बांटकर प्रस्तुत किया गया है जिसमें भाषागत अवरोध

प्रमुख है जिसके अन्तर्गत अस्पष्टित पूर्णधारणा, विवेधात्मक मान्यताएं, गलत शब्दों में अभिव्यक्ति सन्देश, दोषपूर्ण अनुवाद तथा शब्दों एवं संकेतों के विविध अर्थ आते हैं। द्वितीयक प्रमुख अवरोध दृष्टिकोणात्मक अवरोध है जिसमें ध्यान न देना, अपरिपक्व को मूल्यांकन, संचार पर अविश्वास, संचार का विरोध, चयनित बोध, संचार न करना एवं अनावश्यक मिश्रण एवं छानना समाहित हैं। तृतीय अवरोध में संगठनात्मक अवरोध आता है जिसमें शोर, समय एवं दूरी, संगठनात्मक नितियां एवं नियम, भय, मार्गस्थ हानि, घटिया रख रखाव, अपर्याप्त सन्तुलन काल तथा तथ्यों का विवाद प्रमुख रूप से समाहित हैं। चतुर्थ एवं अंतिम संचार अवरोध व्यक्तिगत अवरोध होता है जिसमें उच्चाधिकारियों की बाधाएं एवं अधिनस्थों की बाधाएं प्रमुख रूप से सम्मिलित होती हैं।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोगों को संचार की सीमाओं अथवा बाधाओं के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त होगी।

3.4 पारिभाषिक शब्दावली

संचार की सीमाएं – संचार प्रक्रिया में अनेक कारण सन्देश प्रेषक एवं सन्देश प्राप्तकर्ता के बीच अवरोध पैदा करते हैं। इन बाधाओं या सीमाओं के कारण संचार में संचारहीनता की स्थिति उत्पन्न होने लगती है जिसे ही संचार की सीमा कहा जाता है।

भाषागत अवरोध – भाषागत अवरोध से तात्पर्य अधूरी, अस्पष्टता, असामयिक विविध अर्थों वाले शब्दों या संकेतों के चयन से है।

दृष्टिकोणात्मक अवरोध – समय एवं परिस्थितियों पर निर्भर व्यक्ति की व्यापक सोच, रूझान, भावना तथा मनोविज्ञान के द्वारा दृष्टिकोण का सृजन होता है या दृष्टिकोण की कमियां स्वयं संचार में व्यवधान उत्पन्न करती हैं जो सम्पूर्ण संचार तन्त्र को बिगाड़ देती हैं। इसे ही दृष्टिकोणात्मक अवरोध कहते हैं।

संगठनात्मक अवरोध – संगठन में संचार का होना एक महत्वपूर्ण आयाम है। वस्तुतः किसी भी संगठन में वे सभी प्रकार के तन्त्र श्रृंखला जिससे संचार प्रक्रिया बाधित होती है संगठनात्मक अवरोध कहलाती है।

व्यक्तिगत अवरोध – किसी भी व्यक्ति के स्थिति एवं पद, विवाद, अधिकार सम्बन्ध की असंगतता परस्पर विरोधी व्यक्तिगत मूल्य तथा हित एवं व्यक्तिगत टकराव संचार श्रृंखलाओं में व्यवधान उत्पन्न करते हैं जिसे व्यक्तिगत अवरोध कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– संचार की सीमाओं से आप क्या समझते हैं?

2– भाषागत अवरोध के किन्हीं तीन अवरोधों का वर्णन कीजिए।

3– दृष्टिकोणात्मक अवरोध से आप क्या समझते हैं?

4– संगठनात्मक अवरोधों के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

5– व्यवक्तिगत अवरोध पर प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1– संचार की सीमाओं से आप क्या समझते हैं? दृष्टिकोणात्मक सीमाओं या अवरोधों के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

2– संचार के भाषागत अवरोध एवं संगठनात्मक अवरोधों पर एक निबन्ध लिखिए।

3.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा, वर्ष 2013, पेज–65–68

2– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005, पेज–667–669

टिप्पणी

खण्ड–प्रथम– संचार

इकाई –4, संचार के प्रारूप

4.0 इकाई का उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 संचार के प्रारूप

- 4.2.1 अरस्तू प्रारूप
- 4.2.2 लासवैल प्रारूप
- 4.2.3 शनन व वीवर प्रारूप
- 4.2.4 न्यूकाम्ब प्रारूप
- 4.2.5 आसगुड व स्क्रेम प्रारूप
- 4.2.6 गार्बनर का प्रारूप
- 4.2.7 बेस्टले और मेक्लीन प्रारूप
- 4.2.8 बेर्लो प्रारूप
- 4.2.9 लीगेन का वृत्ताकार प्रारूप
- 4.3.0 डेन्स प्रारूप
- 4.3.1 विलवर श्रम का प्रारूप
- 4.3.2 जन सम्प्रेषण प्रारूप
- 4.3.3 जोसॅफ प्रारूप
- 4.3.4 मरफी प्रारूप
- 4.3.5 थिल एवं बोवी प्रारूप
- 4.3.6 दहामा प्रारूप
- 4.3.7 एस0एम0सी0आर0ई0 प्रारूप
- 4.3.8 रणजीत सिंह प्रारूप
- 4.3.9 रोड डाक्टर व आस्पी डॉक्टर प्रारूप
- 4.4.0 ट्रान्सफर प्रारूप

4.3 सार–संक्षेप

4.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

4.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

4.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई संचार के प्रारूपों के बारे में व्याख्या प्रस्तुत करती है। इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को संचार के प्रारूपों से अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रिलिखित के बारे में ज्ञान प्राप्त सकेगें–

1– संचार के प्रारूपों के बारे में लिख सकेगें।

2– अरस्तू के संचार के प्रारूप के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

3– संचार के लासवेल प्रारूप पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– संचार के शनन व वीवर प्रारूप पर प्रकाश डाल सकेगें।

5– संचार के न्यूकाम्ब प्रारूप के बारे में जानकारी कर सकेगें।

6– संचार के आसगुड व स्क्रेम प्रारूप के बारे में लिख सकेगें।

7– संचार के गार्वनर के प्रारूप पर टिप्पणी कर सकेगें।

8– संचार के वेस्टले और11 मेक्लीन प्रारूप के बारे लिख सकेगें।

9– संचार के बेर्लो प्रारूप की जानकारी कर सकेगें।

10– संचार के लीगेन के वृत्तकार प्रारूप पर प्रकाश डाल सकेगें।

11– संचार के डेन्स प्रारूप की व्याख्या कर सकेगें।

12– संचार के विलबर श्रम के प्रारूप पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

13– संचार के जन सम्प्रेषण प्रारूप पर प्रकाश डाल सकेगें।

14– संचार के जोसॅफ प्रारूप के बारे लिख सकेगें।

15– संचार के मरफी प्रारूप की जानकारी कर सकगें।

16– थिल एवं बोवी के संचार प्रारूप की व्याख्या कर सकेगें।

17– संचार के दहामा प्रारूप को जान सकेगें।

18– संचार के बारे में रणजीत सिंह द्वारा प्रदत्त प्रारूप की जानकारी कर सकेगें।

19 संचार के रोडा डॉक्टर व आस्पी डॉक्टर द्वारा प्रदत्त प्रारूप पर प्रकाश डाल सकेगें।

20– संचार के ट्रान्सपर प्रारूप पर लेख लिख सकेगें।

4.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई संचार के प्रारूपों के बारे में प्रकाश डालती है जिसमें संचार के विभिन्न प्रारूपों का वर्णन किया गया है। वास्तव में प्रारूप सम्प्रेषण प्रक्रिया में प्रत्येक स्तर पर होते हैं। संचार के लिए किसी नियम की स्थापना जटिल है। विशेष परिस्थितियों में विश्व के विभिन्न विशेषज्ञों ने कुछ प्रारूप प्रस्तुत किये हैं जिनकों कि इस इकाई में प्रस्तुत किया गया है जबकि वे सर्वमान्य नहीं हैं।

जब कोई सन्देश किसी माध्यम द्वारा कहीं प्रेषित करना होता है तो सम्प्रेषक को स्वयं संचार के माध्यम से उसके प्रभाव व प्रमाणिकता की जानकारी प्राप्त होती है उसके बाद सम्प्रेषक अन्य सन्देश के लिए भी वही मार्ग का चयन करता है। यदि इस कार्य में उसे सफलता प्राप्त होती है वह उसी मार्ग का कार्य अन्य सन्देशों को प्रेषित करने हेतु करता है जिससे प्रारूप का जन्म होता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस इकाई में विभिन्न प्रकार के प्रारूपों का वर्णन किया गया है जिसमें अरस्तू, लासवैल, शनन व वीवर, न्यूकाम्ब, आसगुड व स्क्रेम, गार्बनर, बेर्लो, डेन्स, मरफी, रणजीत सिंह तथा ट्रान्सफर प्रमुख हैं।

4.2 संचार के प्रारूप

संचार प्रक्रिया में प्रत्येक स्तर पर परिवर्तन होते हैं। इसलिए संचार के लिए किसी नियम की स्थापना जटिल है। विशेष परिस्थितियों में विश्व के विभिन्न देशों के विशेषज्ञों ने कुछ आदर्श प्रस्तुत किये,

परन्तु वे सर्वमान्य नहीं है। अतः संचार के सम्बन्ध में प्रत्येक स्थिति में कोई दिशा–निर्देश या पूर्व में स्थापित कोई आदर्श क्रियाशील हो, यह अनिवार्य नहीं है।

जब कोई सन्देश किसी भी माध्यम द्वारा कहीं प्रेषित करना होता है तो सम्प्रेषक को स्वयं संचार के रास्ते, भाग, खतरे, सुविधाएँ, प्रभाव व प्रामाणिकता की जानकारी प्राप्त हो जाती है, तत्पश्चात् सम्प्रेषक अन्य सन्देश के लिए भी वही मार्ग चयनित करता है। यदि इस कार्य में उसे सफलता प्राप्त होती है तो वह उसी मार्ग का चयन अन्य सन्देशों को प्रेषित करने हेतु करता है। यही स्थिति किसी मॉडल या प्रारूप को जन्म देती है।

विश्व के अनेक संचार विशेषज्ञों ने अपने–अपने प्रारूप दिये हैं जो निम्नलिखित हैं–

4.2.1 अरस्तू प्रारूप

संचार का यह प्रारूप सबसे प्राचीन है, क्योंकि इसका प्रतिपादन स्वयं अरस्तू ने किया था, अतः इसे उन्हीं के नाम से जाना जाता है। यह संचार का प्रारम्भिक, सरल और साधारण प्रारूप है। इस प्रारूप के अनुसार संचार प्रक्रिया में मुख्य रूप से तीन तत्व महत्वपूर्ण होते हैं–

अ) **सम्प्रेषक**– वह व्यक्ति जो संचार करता है।

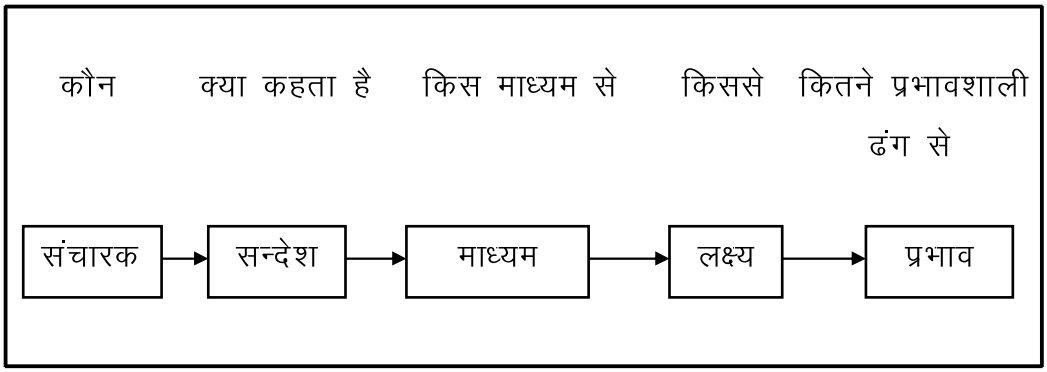
ब) **सन्देश**–सन्देश जो व्यक्ति के द्वारा उत्पादित किया जाता है।

स) **श्रोता** – व्यक्तियों का समूह या व्यक्ति जो सुनते हैं।

संचार ⟶ सन्देश ⟶ श्रोता

4.2.2 लासवैल प्रारूप

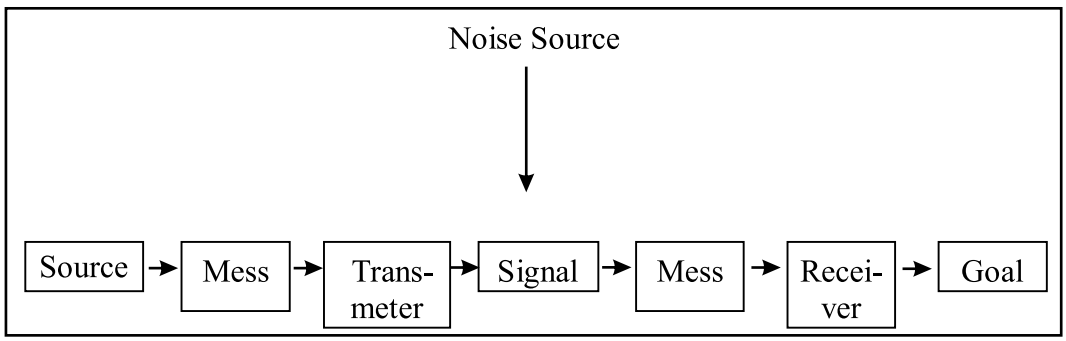
इसे लॉसवैल का मौखिक प्रारूप भी कहा जाता है। इसे वर्ष 1948 में अमेरिकी वैज्ञानिक हेराल्ड डी, लॉसवैल ने प्रस्तुत किया। इस प्रारूप के प्रमुख तत्व निम्न हैं–



इस प्रारूप में कहने वाला संचारक है तथा सन्देश है, माध्यम है लक्ष्य है व प्रभाव है। यह अत्यन्त ही सरल व स्पष्ट प्रारूप है । प्रत्येक तत्व की सपष्टता के कारण यह आसानी से समझ में आता है। इसमें प्रभाव के प्रति प्रतिपुष्टि की कल्पना भी है। इस प्रारूप में सम्प्रेषक का प्रमुख उद्देश्य लक्षित समूह को प्रभावित करना है। यद्यपि संचार का प्रभाव स्वयं परिलक्षित होता है। इस प्रारूप में सम्प्रेषक की स्वयं की प्रभावी शैली का महत्व है, जबकि संचार में यह असम्भव है। व्यक्ति–व्यक्ति में अन्तर होता है इसलिए दोनों के प्रभाव में भी अन्तर होगा। अतः यह प्रभाव पर आधारित प्रारूप है, व्यावहारिक नहीं।

4.2.3 शनन व वीवर प्रारूप

वर्ष 1949 में क्लोडी शनन व मारेन वीवर ने गणित पर आधारित एक प्रारूप प्रस्तुत किया। उन्होंने इस प्रारूप का प्रतिपादन इलैक्ट्रोनिक प्रौद्योगिकी एवं उसकी तकनीकी अवधारणाओं को परिभाषित करने के लिए किया था। यह प्रारूप यह स्पष्ट करता है कि उपकरणों के द्वारा किस प्रकार तकनीकी आधारित गणितीय रूपरेखा के अन्तर्गत सूचनाओं का प्रवाह होता है। यह वैज्ञानिक प्रारूप है। इसमें निम्न तत्व है।

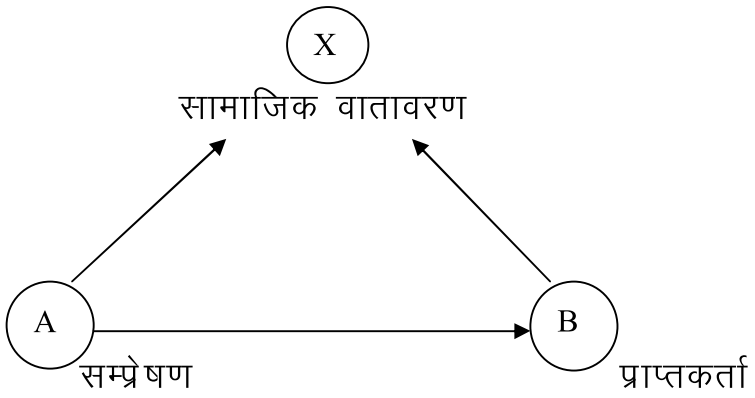


इसमें सन्देश से पहले स्त्रोत महत्वपूर्ण है। यदि सन्देश का स्त्रोत प्रमाणिक व ज्ञात है, तभी इसे आगे बढ़ाया जाता है। सन्देश को ट्रांसमीटर में पहुँचाया जाता है। यहाँ से सिग्नल के माध्यम से चिन्हों में परिवर्तित कर सन्देश के रूप में प्राप्तकर्ता तक पहुँचाया जाता है।

यह प्रारूप वैज्ञानिक है तथा सन्देश के चिन्हों मे ंपरिवतर्तित होने से गोपनीय बनी रहती है और यह एक प्रणाली के अधीन क्रियाशील रहता है, परन्तु इसमें आन्तरिक व वाह्य दोनो ंप्रकार से सिग्नल प्रभावित होते हैं, जैसे, मौसम, बिजली, मशीन आदि से यह स्वतंत्र नहीं है। इसमें अवरोंध की सम्भावना बनी रहती है, अतः प्रारम्भिक क्षेत्र में इसका अनुप्रयोग सम्भव नहीं है।

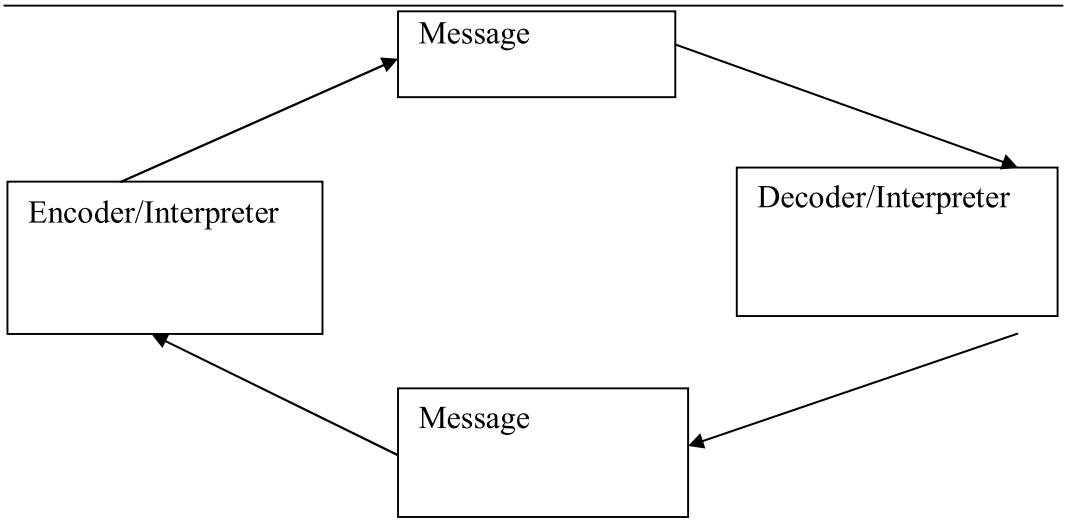
4.2.4 न्यूकाम्ब प्रारूप

न्यूकाम्ब प्रारूप एक त्रिभुजाकार आकार ग्रहण करता है। इस प्रारूप की एक मुख्य विशेषता यह है कि यह एक समाज में संचार की भूमिका या सामाजिक सम्बन्धों की व्याख्या करने का प्रयास करता है। यहाँ A सम्प्रेषक व B प्राप्तकर्ता है व X सामाजिक वातावरण का एक हिस्सा है। अतः ABX एक तन्त्र/पद्धति है। यह आन्तरिक निर्भरता/आन्तरिक सम्बन्धों को स्पष्ट करता है। यदि A में परिवर्तन आता है तो B एवं X, उसी के अनुरूप परिवर्तित हो जाते हैं। यदि A, X के साथ अपने सम्बन्ध को परिवर्तित करता है तो B भी X के साथ या A के साथ उसी के अनुरूप अपने सम्बन्ध को परिवर्तित कर लेता है।



A-B-X तन्त्र, साम्य अवस्था में तभी होगा जब A एवं B,X के साथ समान आचरण/व्यवहार रखेंगे।

4.2.5 आसगुड व स्क्रेम प्रारूप



4.2.6 गार्बनर का प्रारूप

सन् 1956 में अमेरिकी विद्वान जॉर्ज गार्बनर ने एक संचार प्रारूप प्रस्तुत किया। यह प्रारूप उसने वाले अपने लेख 'दुआग्स व जनरल मॉडल ऑफ कम्यूनिकेशन' जो ऑडियो–विजुअल कम्यूनिकेशन रिव्यू के खण्ड–4 के 1956 के अंक में प्रकाशित है।

उनके अनुसार मानव के संचार की कुछ विशेषताएं है। अतः संचार करते समय हमें मानव संचार पर बल देना चाहिए। इन्होंने सन्देश की आत्मा पर अधिक जोर दिया है। अर्थात् हम जो सन्देश एक समूह तक पहुंचाना चाहते हैं, उसकी विषय–वस्तु क्या है, क्योंकि प्रत्येक चिन्तन किसी घटना से प्रारम्भ होता है। अतः सन्देश व प्राप्त करने वाले की ग्राह्यता भी किसी न किसी रूप में इस घटना के बारे में ही होगी।

इनके अनुसार, 'किसी को कुछ सूझता है, किसी घटना के सम्बन्ध में, किसी परिस्थिति में, कब प्रतिक्रिया करता है, किस साधन से करता है, पदार्थ उपलब्ध कराने के लिए किसी रूप में, किसी सन्दर्भ में, विषय को बताते हुए और कुछ परिणामों को भॉपते हुए।'

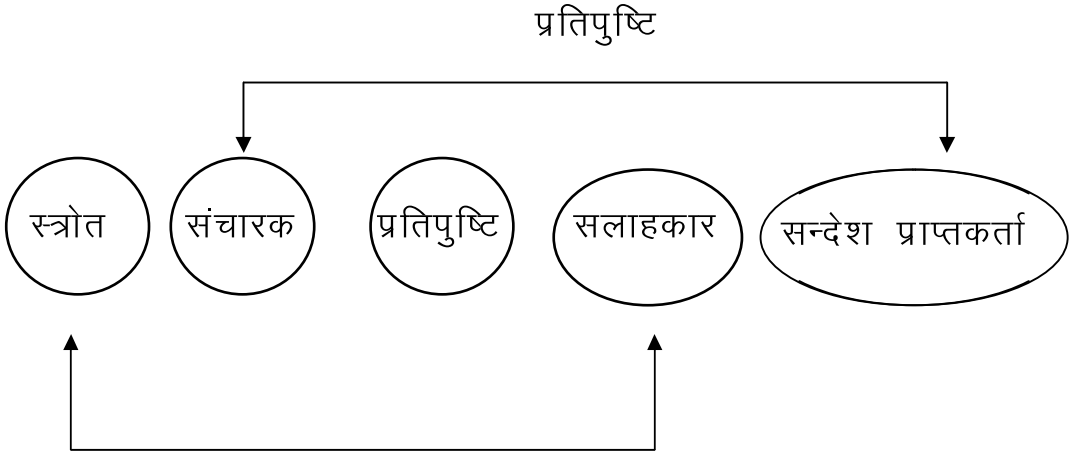
यह अत्यन्त ही महत्वपूर्ण मॉडल है। इसमें प्रमुख तत्व–सन्देश की कल्पना, ग्राह्यता तथा उसकी किसी घटना से प्रत्यक्ष सम्बन्धता का होना है। इसमें मशीन व व्यक्ति दोनों बराबरी से क्रियाशील रहते हैं।

यद्यपि यह आम व्यक्ति की समझ के बाहर की बात है। विषय–वस्तु के साथ ही साथ कुछ अन्य शर्ते भी जोड़ दी गयी हैं। शर्तों के बदलने पर सन्देश की विषय–वस्तु में तत्काल परिवर्तन नहीं हो पाता। अतः इसका विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।

परन्तु प्रतिपुष्टि व परिवेश के कारण सन्देश में बहुत अधिक परिवर्तन व वास्तविक स्वरूप के बदलने की आशंका रहती है।

4.2.7 वेस्टले और मेक्लीन प्रारूप

यह प्रारूप बिलबर श्रम व टी.न्यूकोम्ब के सिद्धान्तों पर आधारित है। इसमें अत्यधिक बल न्यूकोम्ब के व्यक्तिगत संचार पर दिया गया है। वेस्टले व मैक्लीन ने 1957 में इस मॉडल को प्रतिपादित किया था। इसमें प्रत्येक तत्व किसी न किसी वातावरण में रहता है। जब किसी सन्देश को सम्प्रेषित करना होता है तो सम्प्रेषक इसकी वकालत करता है और तत्पश्चात् सन्देश माध्यम में जाता है। यह माध्यम सन्देश व सम्प्रेषक के लिए अत्यन्त उपयोगी होता है, इसमें प्रतिपुष्टि सम्प्रेषण का अभिन्न अंग हैं। प्रतिपुष्टि निरन्तर और क्रमशः संचार का अंग रहे, यह इस प्रतिदर्श का मुख्य उद्देश्य है।



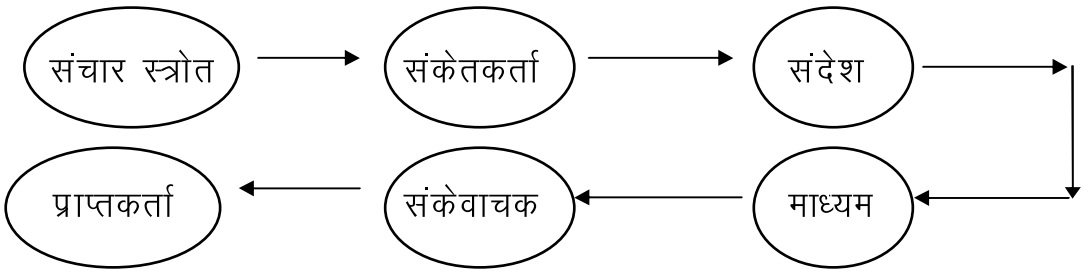
इस प्रतिदर्श में प्रत्येक दशा में कुछ नया करने की आशा है। सामाजिक परिवेश में व्यक्तिगत संचार इसका मुख्य तत्व हैं। इसमें विभिन्न प्रकार से भिन्न–भिन्न प्रकार की प्रतिपुष्टि सम्भव है।

4.2.8 बेलौं प्रारूप

बेलों ने अपने प्रारूप में संचार की प्रवणता को सम्मिलित किया। इसे S-M-C-R प्रारूप भी कहा जाता है। इनके मॉडल में निम्न सात प्रमुख तत्व हैं–

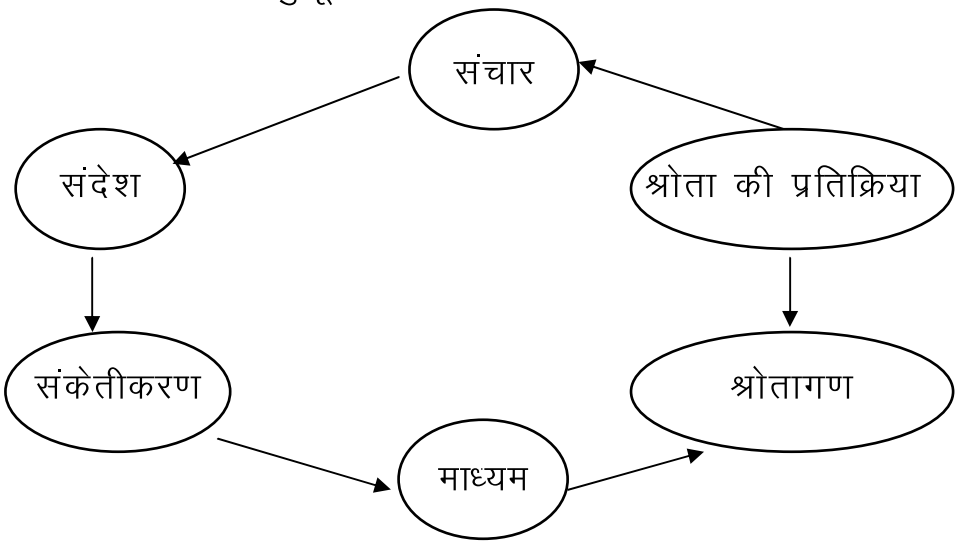
1) संचार स्त्रोत 2) सन्देश 3) माध्यम 4) कूटन
5) अवकूटन 6) प्राप्तकर्ता 7) प्रतिक्रिया

सरल रेखाचित्र–1



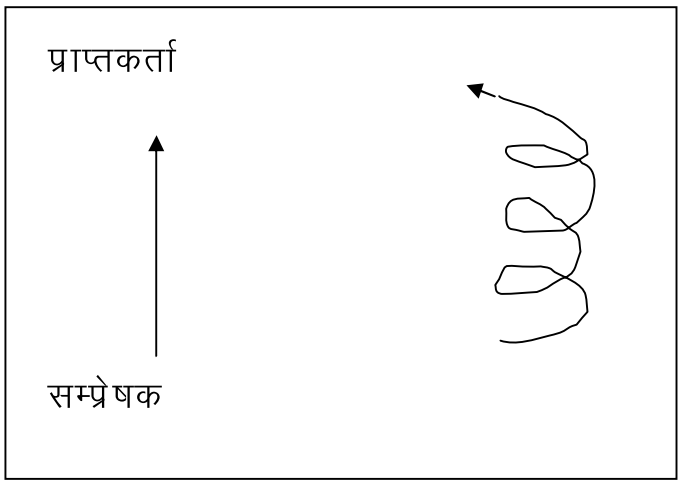
4.2.9 लीगेन का वृत्ताकार प्रारूप

इस प्रारूप में संचार प्रक्रिया में श्रोताओं की प्रतिक्रया का महत्वपूर्ण स्थान है। इसे प्रतिपुष्टि कहा जाता है। अतः प्रेषक संचारक के लिए श्रोताओं की प्रतिक्रिया को जानना लाभदायक है, क्योंकि प्रतिक्रिया के द्वारा ही वह प्रेषित सन्देश का मूल्यांकन करने में सक्षम होता है और उसके अनुकूल चेष्टाएं कर पाने में समर्थ हो सकता है।



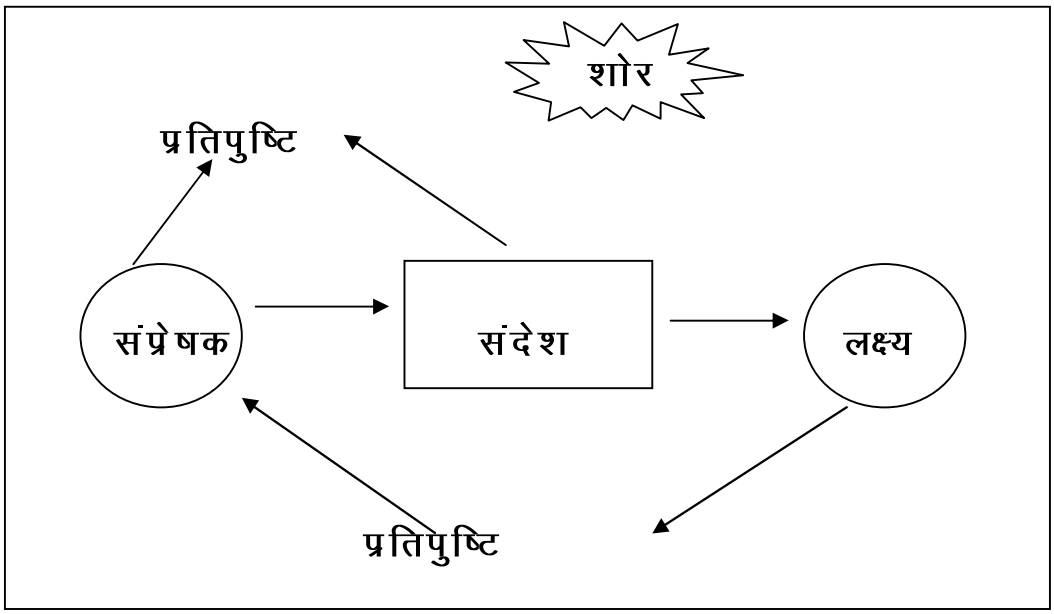
4.3.0 डेन्स प्रारूप

इस प्रारूप का प्रतिपादन फ्रेन्क ई. डेन्स ने 1967 में किया। डेन्स के इस प्रतिरूप में सम्प्रेषण एक चक्र के रूप में होता है जिसका न कोई प्रारम्भ बिन्दु होता है और न कोई अन्तिम बिन्दु होता है। यह प्रकृति से शिखाकार होता है। उनका विचार था कि सम्प्रेषण प्रक्रिया एक चक्र के रूप में घुमती रहती है।



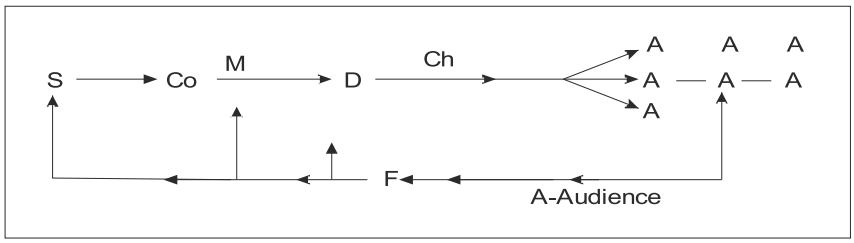
4.3.1 विलवर श्रम का प्रारूप

यह प्रारूप मुख्य रूप से चार्ल्स ऑसगुड के कार्यों पर आधारित है। इनके अनुसार जब तक किसी सन्देश की कोडिंग व डिकोडिंग नहीं की जाती है, तब तक सन्देश निरर्थक है। इस धारणा के आधार पर इन्होंने सम्प्रेषण के आधारभूत तत्वों की व्याख्या की। इनके अनुसार सम्प्रेषण का अभिप्राय उस समतुल्य व रचानात्मक संचार से है जिसमें एक तरफ व्यक्ति व दूसरी तरफ उस व्यक्ति के चारों ओर स्थापित वातावरण है। जिसमें वह सन्देश को स्वीकारता है। इस प्रतिमान को वेस्टले व मैक्लीन ने पूर्णता प्रदान की।



4.3.2 जन सम्प्रेषण प्रारूप

जनसंचार प्रतिमान का निर्माण 1980 में कुछ विद्वानों ने मिलकर किया। इसमें स्त्रोत, श्रेता, सम्प्रेषक, माध्यक, प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया, सन्देश एवं विरूपण शामिल हैं।



S — Source

A — Audience

Co — Communicator

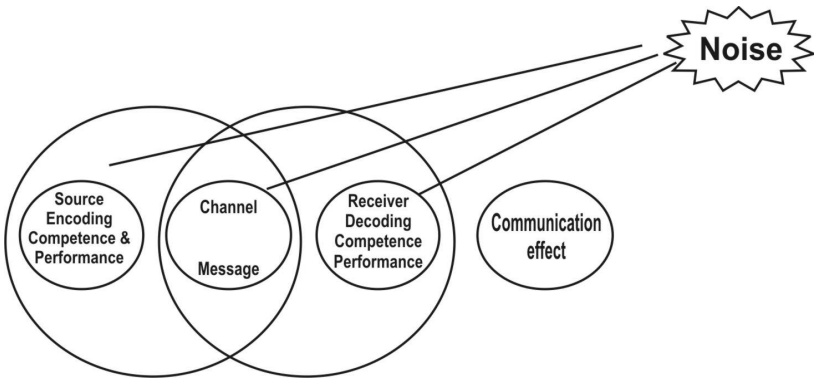
Ch — Channel

F — Feedback

M — Message

D — Distortion

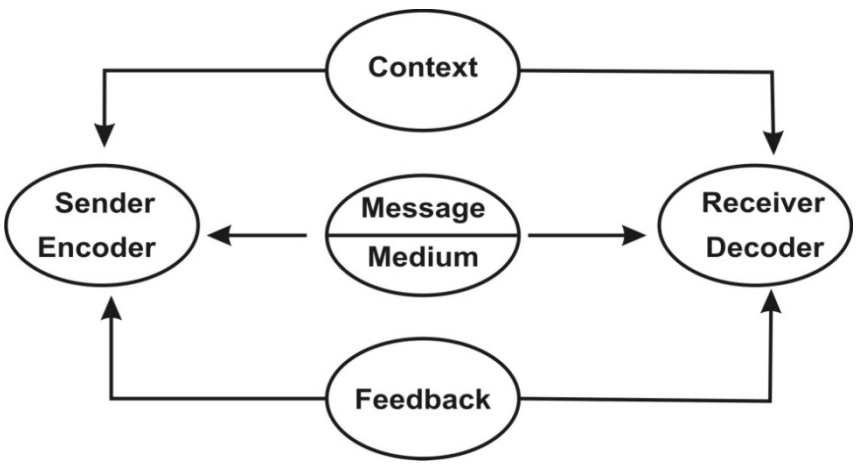
4.33 जोसॅफ प्रारूप



4.3.4 मरफी प्रारूप

इस प्रारूप के मुख्य छः अंग है।

1) सन्दर्भ
2) (प्रेषक) संचारक–संकेतक
3) सन्देश
4) माध्यम
5) प्राप्तकर्ता–संकेत वाचक
6) प्रतिपुष्टि



इस प्रारूप में एक सन्दर्भ के अनुसार संचारक एवं सन्देश का चयन कर इसे प्रेषित करता है। सन्देश के संचारण के लिए यह एक उपर्युक्त माध्यम का चुनाव करता है। प्राप्तकर्ता, सन्देश से प्राप्त कर, अपनी प्रतिक्रिया/प्रतिपुष्टि करता है।

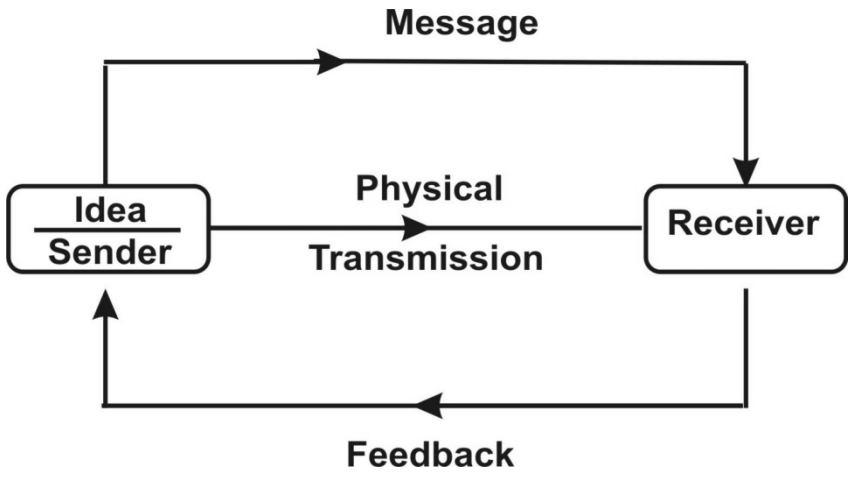
4.3.5 थिल एवं बोवी प्रारूप

इनके अनुसार–'व्यवसायिक संचार घटनाओं की एक श्रृंखला है जिसकी पाँच अवस्थाएँ हैं जारे सम्प्रेषक व संचारग्राही को जोड़ती हैं।'

थिल एवं बोवी के अनुसार, सम्प्रेषण की निम्न पाँच अवस्थाएँ हैं–

1) युक्ति/विचार,
2) युक्ति/विचार का सन्देश में परिवर्तन
3) सन्देश का संचारण या प्रेषण
4) प्राप्तकर्ता
5) प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया

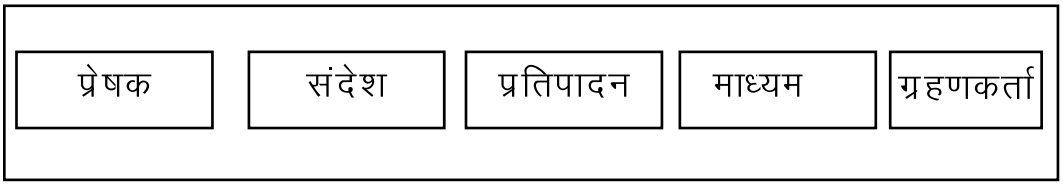
इस प्रकार प्रेषक के पास एक विचार/युक्ति है जिसे वह संकेत में परिवर्तित कर सन्देश के स्वरूप में प्रषित करता है। इस सन्देश को सन्देशग्राही प्राप्त कर समझकर तद्नुरूप अपनी प्रतिक्रिया प्रतिपुष्टि के रूप में व्यक्त करता है और सम्प्रेषण प्रक्रिया पूर्ण स्वरूप धारण कर लेती



4.3.6 दहामा प्रारूप

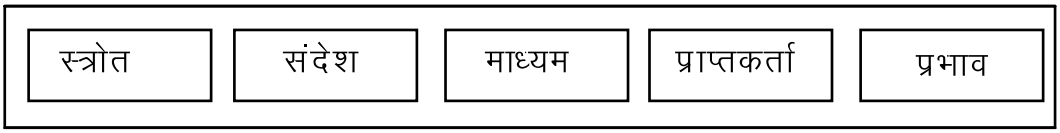
दहामा ने अपने सम्प्रेषण प्रतिमान के आधार पर सन्देश के प्रतिपादन पर अधिक बल दिया। दहामा कहते हैं कि संचार तभी सम्भव है जब संचारक कोई संदेश चुनकर उसे विशेष उपचारित कर प्रतिपादित करता है। इसके अनुसार संचार प्रणाली मे सन्देश का स्पष्ट

होना अत्यन्त आवश्यक है। सन्देश की स्पष्टता ही संचार प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाती है ।



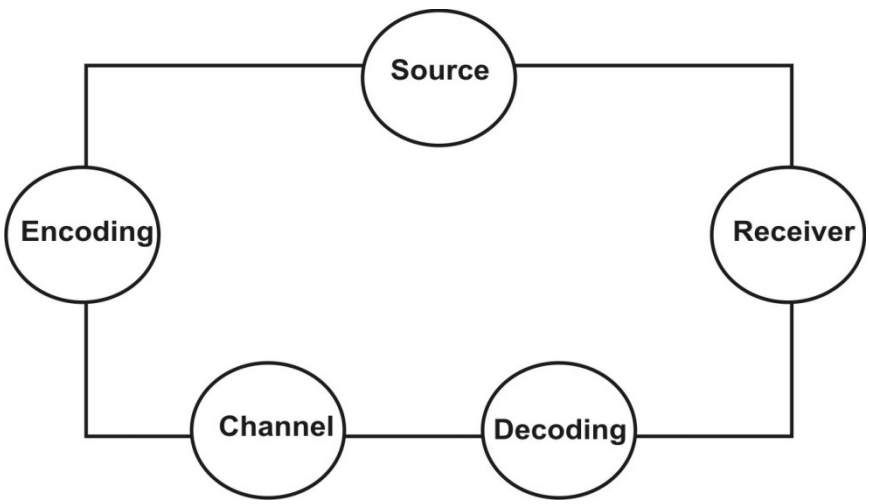
4.3.7 एस0एम0सी0आर0ई0 प्रारूप

इस प्रतिमापन का वर्णन सूपे द्वारा किया गया। इस प्रतिमान के अनुसार कोई भी सन्देश स्त्रोत के माध्यम से प्राप्तकर्ता तक पहुँचता है। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप प्राप्तकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन आते हैं। जिन्हें संचार प्रभाव कहा जाता है। यह प्रभाव प्राप्तकर्ता की मनोवृत्ति एवं सम्पादन क्षमता पर पड़ता है ।

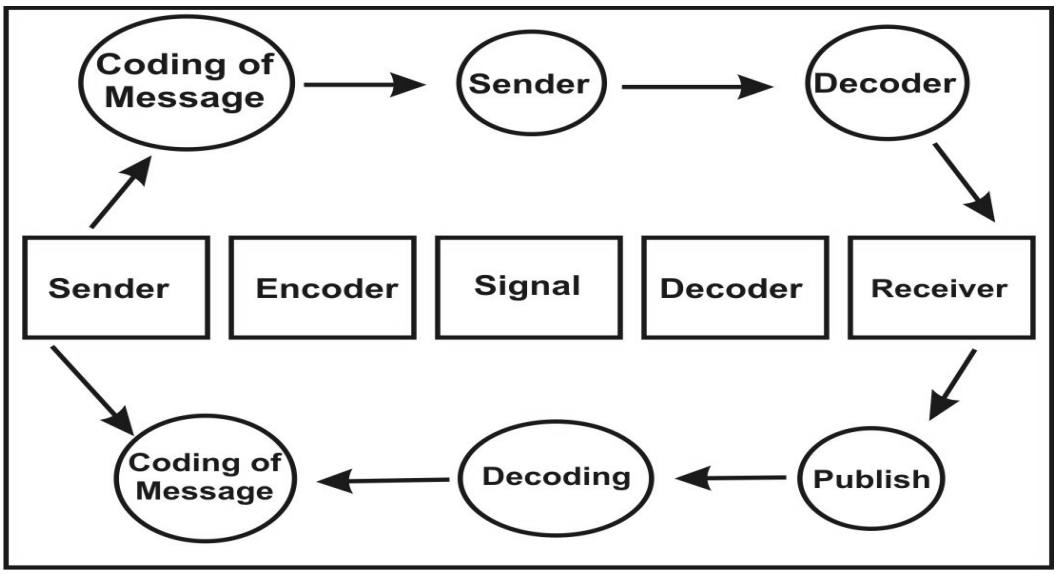


4.3.8 रणजीत सिंह प्रारूप

इस प्रारूप में स्त्रोत द्वारा संदेश संकेतीकरण के बाद उसे उचित माध्यम द्वारा प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया की जाती है, जिसे प्रतिपुष्ट कहा जाता है।

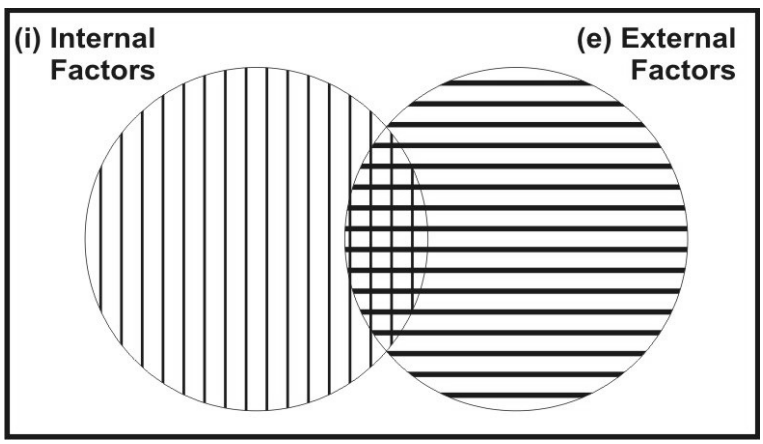


4.3.9 रोड डाक्टर व आस्पी डॉक्टर प्रारूप



4.4.0 ट्रान्सफर प्रारूप

यह प्रारूप आन्तरिक एवं बाह्य तत्वों पर आधारित हैं। सम्प्रेषण प्रक्रिया के अन्तर्गत एक साथ मिल हुए होते हैं। अलग–अलग करने की स्थिति में इनका प्रभाव भिन्न–भिन्न होता है।



संचार व सामाजिक/तकनीकी आधार कई प्रतिमान बताये व स्थापित किये गये जो निम्नलिखित हैं–

जॉन ह्वाइट रिले व मथलिथा ह्वाइट लिरे मॉडल (1959), गरहर्ड मैलेज्कें मॉडल (1963), जॅर्ज कोमस्टाव का तीव्री मॉडल (1978), इल्लू कार्ट्स व पौल एफ0 लेजार्स पील्ट मॉडल (1955), एवर्ड रोज से व फ्लोइड शमेफर मॉडज (1937), एवर्ट रोजर्स व फ्लाइड शूमेकर मूडल (1983), ओल्गा लीनो वेसिसीला जान फिल्टजीन का मॉडल (1972)। इन सिद्धान्तों को बनाने में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण अधिक कारगर सिद्ध हुआ है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संचार के लॉसवैल प्रारूप के बारे में विचार प्रस्तुत कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. गार्बनर के प्रारूप की विवेचना कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार के प्रारूपों के बारे में विवरण प्रस्ततु किया गया है जिसमें बताया गया है कि जब कोई व्यक्ति किसी सन्देश को किसी व्यक्ति को प्रेषित करता है और यदि उस माध्यम का प्रभाव उचित हो जाता है तो भविष्य में होने वाले उन सभी प्रकार के संचार को उसी प्रणाली के आधार पर करने की कोशिश करता है जिसे सामान्य भाषा में प्रारूप के बारे में बताया गया है कि जिसमें तीन तत्त्व महत्वपूर्ण होते हैं जिसमें सम्प्रेषक, सन्देश तथा स्त्रोता आते हैं। लासवैल प्रारूप के बारे में बताया गया है कि इसमें पांच महत्वपूर्ण तत्त्व होते हैं जिसमें संचारक, सन्देश, माध्यम, लक्ष्य तथा प्रभाव महत्वपूर्ण होते हैं। शनन व वीवर प्रारूप गणितीय रूपरेखा के अन्तर्गत सूचनाओं का प्रवाह करता है जिसमें स्त्रोत, सन्देश, ट्रान्समीटर, सीगनल, सन्देश, प्राप्तकर्ता एवं लक्ष्य प्रमुख रूप से आते हैं। न्यूकाम्ब प्रारूप में संचार एक त्रिभुजाकार आकार ग्रहण करता है जिसमें सम्प्रेषक, सामाजिक वातावरण तथा प्राप्तकर्ता प्रमुख भूमिका निर्वहन करते हैं।

इसी इकाई में आसगुड व स्क्रेम प्रारूप के बारे में बताते हुए लिखा गया है कि इसमें सर्वप्रथम सन्देश प्रेषित किया जाता है जिसकों यन्त्र के माध्यम से संकेतीकरण किया जाता है। जिसे पुनः सन्देश के माध्यम से अग्रेषित किया जाता है जिसका प्राप्तकर्ता कूट संकेतन कर सन्देश को प्राप्त करता है एवं प्रतिपुष्टि सन्देश भेजने वाले को करता है। गार्बनर के प्रारूप में प्रमुख तत्त्व सन्देश की कल्पना, ग्राह्यता तथा उसकी किसी घटना से प्रत्यक्ष सम्बन्धता का होना है। इसमें मशीन व व्यक्ति दोनों बराबरी से क्रियाशील रहते हैं।

अन्य प्रारूपों के बारे में भी चर्चा की गयी है जिसके बारे में आप लोग इस इकाई को पढ़ने के बाद ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई संचार के प्रारूपों के बारे में आपको वृहद् ज्ञान प्रदान करेगी जिसका प्रयोग आप लोग अपने वृत्तिक जीवन में कर सकेंगे।

4.4 पारिभाषिक शब्दावली

संचार के प्रारूप – जब कोई सन्देश किसी माध्यम द्वारा कहीं प्रेषित करना होता है तो सम्प्रेषक को स्वयं संचार के रास्ते, भाग, खतरे, सुविधाएं, प्रभाव व प्रमाणिकता की जानकारी हो जाती है, उसके बाद सम्प्रेषक अन्य सन्देश के लिए भी वही मार्ग चयनित करता है। यदि इस कार्य में उसे सफलता प्राप्त होती है तो वह उसी मार्ग का चयन अन्य सन्देशों को प्रेषित करने हेतु करता है। यही स्थिति किसी प्रारूप को जन्म देती है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1–अरस्तु प्रारूप पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

2–लासवैल प्रारूप से आप क्या समझते हैं?

3–शनन व वीवर प्रारूप पर प्रकाश डालिए।

4–न्यूकाम्ब प्रारूप के बारे में आप क्या जानते हैं?

5–आसगुड व स्क्रेम प्रारूप पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

6–गार्वनर प्रारूप पर टिप्पणी लिखिए।

7–बेर्लो प्रारूप पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

8–डेन्स प्रारूप की व्याख्या कीजिए।

विस्तृत

1– संचार के प्रारूप से आप क्या समझते हैं? किन्हीं पांच प्रारूपों की व्याख्या कीजिए।

2– संचार के दहामा प्रारूप, एस.एम.सी.आर.ई. प्रारूप एवं ट्रान्सफर

प्रारूप की विवेचना कीजिए।

3– संचार के प्रारूपों पर एक निबन्ध लिखिए।

4.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मिश्र, डॉ० विनोद एवं शुक्ल, डॉ० नरेन्द्र, व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.वी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस, आगरा, वर्ष– 2014–15, पेज–32–40

2– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005, पेज–659–666

3– लॉसवैल, एच. इन ब्रीसन, लि. (ई.डी.), 'दी कम्युनिकेशन ऑफ आइडियाज' , न्यूयार्क।

4– शैनन, क्लाउड ई. एण्ड वारेन वीवर, 'दी मैथमेटीकल थ्योरी ऑफ कम्युनिकेशन', अर्बन– III, यूनीर्वसिटी ऑफ इलियन्स प्रेस, वर्ष–1949, पेज–88 से 94

5– न्यूकाम्ब, रॉबर्ट, 'स्पीक अप, मैनेजमेन्ट, न्यूयार्क, फंक एण्ड वेगनाल्स, वर्ष 1953

6– आसगुड, सी.ई., सूशी, जी. जे, एण्ड टॉमनेबॉम, पॉल, 'दी मेजरमेन्ट ऑफ मिनिंग', अर्बना यूनीर्वसिटी ऑफ, हिनोईस प्रेस, वर्ष–1959,

7– वर्लो, डेबिड के, 'दी प्रोसेस ऑफ कम्युनिकेशन, न्यूयार्क, हॉल्ट, रेनहॉर्ट, एण्ड डिन्सटन, वर्ष 1960 पेज–32

8– मर्फी गार्डनर, 'एन इन्ट्रोडक्शन टू साइकोलॉजी', ऑक्सफोर्ट एण्ड एल.बी.एच., वर्ष–1947, पेज 55799

9– थील जॉन, वी. एण्ड कोटलैण्ड, एक्सीलेन्स इन बिजनेस कम्युनिकेशन, इन्टरनेशनल इडिसन, मेग्राहिल, पेज–312

10– रोड डॉक्टर एण्ड ऑस्पी डॉक्टर, प्रिसिंपल एण्ड प्रेक्टिस ऑफ बिजनेस कम्युनिकेशन, वर्ष–1991

टिप्पणी

खण्ड–प्रथम– संचार

इकाई –5, संचार के सिद्धान्त

5.0 इकाई का उद्देश्य

5.1 परिचय

5.2 संचार के सिद्धान्त

5.2.1 संचार के छः सहायक सिद्धान्त

5.2.2 संचार के चार 'एस' के सिद्धान्त

5.2.3 संचार के सात 'सी' के सिद्धान्त

5.3 संचार के सार्वभौमिक सिद्धान्त

5.3.1 कम्युनिस्ट संचार सिद्धान्त

5.3.2 चायनीज संचार सिद्धान्त

5.3.3 क्रिश्चियन संचार सिद्धान्त

5.3.4 इस्लामिक संचार सिद्धान्त

5.3.5 कन्जरवेटिव संचार सिद्धान्त

5.3.6 लिबरल संचार सिद्धान्त

5.3.7 वैदिक संचार सिद्धान्त

5.4 सार–संक्षेप

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

5.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

5.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय छात्र एवं छात्राओं, प्रस्तुत इकाई संचार के सिद्धान्तों से सम्बन्धित है। इस इकाई में संचार के सिद्धान्तों के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

1– संचार के छः सहायक सिद्धान्तों के बारे जान सकेगें।

2– संचार के चार 'एस' के बारे में लिख सकेगें।

3– संचार के 'सात' 'सी' के सिद्धान्त पर प्रकाश डाल सकेगें।

5.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई संचार के सिद्धान्तों के बारे में हैं। वास्तव में सिद्धान्त उस 'कुतूनमा' के समान है जो किसी भी व्यक्ति को उचित दिशा का ज्ञान कराता है। ठीक उसी प्रकार संचार के सिद्धान्त भी व्यक्ति को उसके लिए उचित मार्गदर्शन प्रस्तुत करते हैं। इस इकाई में संचार के सिद्धान्तों की महत्ता के बारे में लिखा गया है कि 'प्रभावी संचार वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्तियों, समूहों तथा संगठनों के बीच में सूचना को सूचित करने, प्रोत्साहित करने तथा प्रसिद्ध प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रेषित किया जाता है। यह स्पष्ट, पूर्ण तथा सही होती है तथा पढ़ने वाले का समय बचाती है तथा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होती है' वास्तव में संचार के सिद्धान्तों का तात्पर्य उन मार्गदर्श नियमों के समूह से है जिनके पालन करने पर संचार प्रक्रिया अपने निहित उद्देश्यों में सफल होती है।

प्रस्तुत इकाई में संचार के छः सहायक सिद्धान्त जैसे, क्यों, कौन, कहाँ, कब, क्या तथा कैसे के बारे में वर्णन किया गया है जबकि संचार के चार 'एस' सिद्धान्त के बारे मे ंबताया गया है कि, विश्वसनीयता, संदर्भ, संतुष्टता, स्पष्टता, माध्यम, अनुकूलता तथा श्रोताओं की क्षमता महत्वपूर्ण होती है।

प्रस्तुत इकाई में सिद्धान्तों की व्याख्या विस्तार रूप से की गयी है जिससे आप लोग संचार के सिद्धान्तों से पूरी तरह अवगत हो सकेगें।

5.2 संचार के सिद्धान्त

संचार माध्यम को सदैव प्रभावी रखने वाला व्यक्ति ही एक सफल व्यक्ति माना जा सकता है और संचार व्यवस्था को तभी प्रभावी माना जा सकता है जबकि वह अपेक्षित व्यक्ति पर अपना प्रभाव छोड़ सके

और अपने उद्देश्य की प्राप्ति कर सके। संचार माध्यम को तभी प्रभावी बनाया जा सकता है स्पष्ट एवं साफ हो, संक्षिप्त हो तथ उसका अर्थ दूसरे व्यक्ति की समझ में आ सके।

'प्रभावी संचार वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्तियों, समूहों तथा संगठनों के बीच में सूचना को सूचित करने, निवेदन करने, प्रोत्साहित करने तथा ख्याति प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रेषित किया जाता है। यह स्पष्ट पूर्ण तथा सही होती है तथा पढ़ने वाले का समय बचाती है तथा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होती है।'

सचांर के सिद्धान्तों का आशय उन मार्गदर्शक नियमों के समूह से है जिनके पालन करने पर संचार प्रक्रिया अपने निहित उद्देश्यों मे सफल होती है। संचार सिद्धान्तों का स्पष्ट करने से पूर्व विभिन्न विद्धानों द्वारा प्रतिपादित निम्न विचाराधारों का अध्ययन करना आवश्यक है:

अ) संचार के छः सहायक

ब) संचार के चार 'एस'

स) संचार के सात 'सी'

5.2.1 अ) संचार के छः सहायक–

1–क्यों– उद्देश्य– सूचित करना, प्रभावित करना, शिक्षित करना, सहानुभूति रखना, मनोरंजन करना।

2–कौन– श्रोताओं को समर्पण– व्यक्तित्व, उम्र, शिक्षा, ज्ञान

3–कहां– स्थान औपचारिक/अनौपाचारिक

4–कब– सन्दर्भ/समय

5–क्या– विषय सामग्री–क्षेत्र और आवश्यकता

6–कैसे– व्यूह रचना अपना–शब्द, तस्वीरें, पारदर्शी प्रिण्ट– जिसे हटाया जा सकता है एवं शामिल किया जा सकता है।

5.2.2 ब) संचार के चार 'एस'

1–संक्षिप्तता– संचार में प्रयुक्त शब्द तथा वाक्य संक्षिप्त होने चाहिए जिससे श्रोताओं को सुनने एवं समझने में आसानी हों

2–सारधारण– साधारण एवं सरल सन्देश अथवा सूचना विस्तृत रूप में समझना आसान होता है। कठिन अथवा घूमे हुए सन्देश को श्रोता सम्पूर्ण रूप से शीघ्र नहीं समझ पाते जिससे उचित प्रतिपुष्टि प्राप्त नहीं होती है।

3–शक्ति – सन्देश की शक्ति अथवा महत्वपूर्ण सम्पूर्ण वार्तालाप अथवा संचार प्रक्रिया को प्रभावित करती है।

4–यथार्थता– सन्देश की प्रभावशाली इस पर भी निर्भर करती है कि संचारक अपने द्वारा संचारित सन्देश के प्रति कितना यथार्थ अथवा निष्कपट है।

5.2.3 स) संचार के सात 'सी'

1–विश्वसनीयता– जब तक संचारक द्वारा संचारित सन्देश या सूचना का स्त्रोत विश्वसनीय नहीं होगा तब तक संचार विश्वसनीय नहीं हो सकता।

2–सन्दर्भ– संचार समय–विस्तार एवं वर्तमान परिस्थितियों से अन्तर्सम्बन्धित होना चाहिए।

3–सन्तुष्टता– सन्दर्भ के साथ सन्तुष्टता या तृप्ति अत्यधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। संचार के अन्तर्गत दोनो पक्षों सन्तुष्टता प्राप्त होना आवश्यक है।

4–स्पष्टता– प्रभावशाली संचार के लिए आवश्यक है कि सन्देश एवं उच्चारण सपष्ट होना चाहिए।

5–माध्यम– सन्देश की स्पष्टता माध्यमों पर निर्भर करती है जो संचार के लिए प्रयोग किय जाते हैं। यदि वह स्पष्ट है तो संचार प्रभावशाली होगा।

5– **अनुकूलता**– सन्देश अथवा सूचना की अनुकूलता या स्थिरता श्रोताओं को सर्वाधिक प्रभावित करती है।

6– **श्रोताओं की क्षमता**– सन्देश का संचार करने से पूर्व श्रोताओं की क्षमताओं का आकलन करना चाहिए तथा उसी के अनुरूप सन्देश या सूचना का प्रेषण करना चाहिए।

संचार सन्देश के माध्यम से मनुष्य को एक–दूसरे से जोड़ता है। संचार को किसी भी सीमा में बांधना असम्भव है बल्कि इसे कुछ मापदण्डों के आधार पर सम्प्रेषित किया जा सकता है। संचार के मापदण्ड या सिद्धान्त से क्या आशय है? इसकी परिभाषा व परिधि क्या है और ये मापदण्ड क्यों अनिवार्य हैं? इसे जानना हमारे लिए अत्यन्त अनिवार्य है–

5.3 संचार के सार्वभौमिक सिद्धान्त

संचार को जिन मान्यताओं व परिवेश में सर्वहित में सम्प्रेषित किया जाता है, उसे संचार सिद्धान्त कहते हैं। अर्थात सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश में आदर्श मूल्यों की रक्षा व स्थापना हेतु सार्वभौमिक समुदाय के लिए निर्धारित सीमा में किया गया संचार ही संचार सिद्धान्त है। संचार के अध्ययन से यह विदित होता है कि विश्व में संचार के सिद्धान्त विद्यमान है जो निम्नलिखित है–

1– कम्युनिस्ट संचार सिद्धान्त

2– चायनीज संचार सिद्धान्त

3– क्रिश्चियन संचार सिद्धान्त

4– इस्लामिक संचार सिद्धान्त

5– कन्जरवेटिव संचार सिद्धान्त

6– लिबरल संचार सिद्धान्त

7– वैदिक संचार सिद्धान्त

5.3.1 कम्युनिस्ट संचार सिद्धान्त–

यह संचार का अत्यधिक सशक्त व पृथक सिद्धान्त है। 1917 की सफल क्रान्ति के पश्चात् सोवियत संघ में इसे लागू किया गया था यह सिद्धानत निम्न बातों पर आधारित है–

अ) इसके अन्तर्गत मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के खिलाफ संचार किया जायेगा।

ब) कही भी मजदूरों पर हो रहे अत्याचार व उनकी आवाज को प्रमुखता से लिया जायेगा।

स) जनतन्त्र के लिए एक आचार संहिता है कि देश में सर्वोपरि कोई बात नहीं होगी।

द) देश के निर्माण में जनतन्त्र की प्रत्यख भूमिका होगी।

इस सिद्धान्त का प्रभाव इतना साफ था कि महान सम्प्रेषक लेनिन की आवाज को न केवल सोवियत संघ बल्कि भारत, चीन व संसार के कई दूर–दूर स्थित देशों में सुना गया। यह सिद्धान्त आज भी क्यूबा जैसे देश का आधार है। यह सिद्धान्त अपरिवर्तन व वैश्विक घटनाओं से जनतन्त्र को दूर रखना व परम्परागत तरीकों में जीवनयापन करने का समर्थक है अर्थात् क्रान्तिकारी परिवर्तनों के लिए इसका कोइ विकल्प नहीं हैं, अतः संकीर्णता के कारणवश यह सिद्धान्त अधिक प्रसिद्ध नहीं हो पाया।

5.3.2 चायनीज संचार सिद्धान्त–

विश्व में चीन अपनी संचार नीति के लिए काफी प्रसिद्ध है। यहाँ कम्यूनिस्ट प्रणाली है, साथ ही साथ यह एक अलग सोच–समझ वाला देश है। अत': इनके संचार सिद्धान्त को चाइनीज सिद्धान्त कहा जाता है। इसने कम्यूनिस्ट संचार सिद्धान्त की भाँति क्रान्ति की नहीं बल्कि शान्ति की बात कही है। इस देश की संचार व्यवस्था में बौद्ध के विचारों की वाहुल्यता है। बड़ों का आदर, सम्मान देना व सम्मान लेना, देश के प्रति वफादारी इत्यादि इस सिद्धान्त की विशेषताएं हैं। चीन की

सम्प्रेशण पद्धति पंचशील सिद्धान्त पर आधारित है। इस सिद्धान्त में सरकारी आदेशें, स्थापित मान्यताओं और लोकप्रिय परम्पराओं का निर्वाहन सम्मिलित हैं।

चाइनीज संचार सिद्धान्त की प्रमुख बातें निम्न हैं–

अ) इस सिद्धान्त मे ंसाम्यवाद एवं बाद्धधर्म का प्रभुत्व है।

ब) यह सिद्धान्त भारत के पंचशील सिद्धान्त पर आधारित है।

स) यह बड़ों का आदर, सम्मान एवं देश के प्रति वफादारी पर जोर देता है।

5.3.3 क्रिश्चियन संचार सिद्धान्त–

यह सिद्धान्त मनुष्य की संवेदना, कोमल हृदय, सेवाभाव आदि पहलुओं पर आधारित है। इसमें स्वतन्त्र विचार, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता व ईश्वर (प्रभु) के प्रति समर्पयणता इसकी मुख्य बातें हैं। यूरोप के अधिकांश देशों की संचार व्यवस्था का आधार यह सिद्धान्त है। यह एक प्रोग्रेसिव सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त में अवरोधों का कोई स्थान नहीं है, नयी से नयी वस्तु मानव कल्याण हित में अविलम्ब व्यक्तियों तक पहुँचा दी जाती है। अतः यह सिद्धान्त अत्यधिक लोकप्रिय है। इस सिद्धान्त की मुख्य विशेषता स्वतन्त्रता का क्षेत्र है। भारत में प्रारम्भ मे ंयह सिद्धान्त अपनाया गया, परन्तु भारतीय संस्कृति पर क्रिश्चियन संस्कृति के बढ़ते प्रभाव को राकने के लिए यह सिद्धान्त बदल दिया गया।

यह सिद्धान्त अत्यधिक लोकप्रिय इसलिए भी हे कि ब्रिटेन ने अधिकांश देशों पर शासन किया है और यही सिद्धान्त ब्रिटेन की संचार प्रक्रिया का आधार है।

5.3.4 इस्लामिक संचार सिद्धान्त–

इस सिद्धान्त का प्रमुख आधार पवित्र कुरान व हदीस है। इसमें धर्म के प्रचार की बात कही गयी है। यह कठोर, कट्टरवाद और मोहम्मद साहब के बनाये गये कानूनों पर आधारित है। इसे विस्तादवादी सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है। इस सिद्धान्त में पुरुष को ही ऊँचा स्थान दिया गया है। इस सिद्धान्त के दो भाग हैं–एक भाग जो शुद्ध

इस्लामिक सिद्धान्त है, यह अत्यन्त मानवीय, वैज्ञानिक व स्नेही है, परन्तु दूसरा भाग जिसे कठमुल्लाओं, धर्म के ठेकेदारों व मौलवियों ने अपनी जुवान से लिखा है वह अत्यन्त ही कठोर, निर्दयी व अरूचिकर है। यह सिद्धान्त इस्लामिक देशों में युवाओं को दिशा–भ्रमित करता है। इसलिए इस्तालमिक देशों में अधिकतर जातीय दंगे होते हैं। अधिकतर पाबन्दियाँ औरतों पर ही हैं। पुरुष भगवान के समतुल्य हैं। ये दोनों सिद्धान्त के हिस्से केवल इस्लामिक देशों में ही प्रचलित हैं। इस सिद्धान्त में तलाक एक प्रमुख हिस्सा है। पुरुष–प्रधान इस संचार प्रणाली में यह तक कहा जाता है कि जिसे यह सिद्धान्त पसन्द नहीं, वह इस्लाम छोड़ दें। यह सिद्धान्त अत्यन्त कही संकीर्ण है।

5.3.5 कन्जरवेटिव संचार सिद्धान्त

जब बिना किसी कारण से अचानक धर्म व जाति के नाम पर पाबन्दियाँ लगाकर संचार को एक तरफ कर दिया जाता है तो जनता दम घुटने जैसा महसूस करती है। इस प्रकार के संचार सिद्धान्त को कन्जरवेटिव संचार सिद्धान्त कहते हें। संचार में कई बार ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित होती है, जब संचार को रोकना पड़ता है। कुछ पाबन्दियाँ समाज के रहन–सहन, उठने–बैठन, लिखने–पढ़ने आदि पर लगाई जाती हैं। शासन की सतत् निगरानी रखी जाती है। इस स्थिति में स्वच्छ व सरल संचार की कल्पना व्यथ्र होती है। टी0वी0 व रेदियों पर महिलाओं की हिस्सेदारी पर पाबन्दी लगा दी जाती है। जब यह सिद्धान्त असफल हो जाता है तो उदारवादी सिद्धान्त को लागू कर दिया जाता है। बर्मा (म्यांमार), थाईलैण्ड, नेपाल व भूटान तथा तीन व पाकिस्तान कन्जरवेटिव सिद्धान्त की बुनियाद हैं।

5.36 लिबरल संचार सिद्धान्त–

यह संचार का सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त है। संचार की समस्त सर्वश्रेष्ठ बातों को इसमें सम्मिलित किया गया है। इसमें सम्प्रेक्षण के लिए दैनिक आवश्यकता व कठिनाइयों को सुलझाने, समझने, समाजिक शिक्षा जैसे

आदि विषयों को चयनित किया गया है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत समाज/सरकार के विरुद्ध सोच–समझ सम्बन्धी समाचारों, विचारों को उदारतापूर्ण सम्प्रेषित किया जाता है। इसलिए इसे उदारवादी सद्धानत कहा जाता है।

5.3.7 वैदिक संचार सिद्धान्त–

यह विश्व का अत्यन्त प्राचीन सिद्धान्त हैं। यह 'जननी जन्मभूमि स्वर्गदपि गरियसी' के सिद्धानत पर लागू है। यह भावना इस सिद्धान्त का सशक्त पहलू है। यह सिद्धान्त किसी समय किवशेष से नहं बँधा है। वैदिक संचार में हजारों वर्ष पूर्व तक केवल मौखिक स्वर सम्प्रेषित होता रहा था। अध्यापक व शिष्य परम्परा में अन्तः वैयक्तिक संचार के उदाहरण मिलते हैं। प्रभु और राजा में कोई अन्तर नहीं होता है। ज्येष्ठ सर्वश्रेष्ठ होता था यह सिद्धान्त भारतीय सम्प्रेक्षण प्रक्रिया का आधार है, परन्तु ब्रिटिश शासन ने भारतीय पद्धति को प्रभावित किया और आज ब्रिटिश सिद्धान्त की झलक भारतीय संचार प्रक्रिया में देखने को मिलती है।

वैदिक संचार सिद्धान्त की प्रमुख बातें निम्न हैं–

अ) वैदिक संचार सिद्धान्त विश्व का सबसे प्राचीन सिद्धान्त है।

ब) वैदिक संचार सिद्धान्त गुरू–शिष्य शिक्षा पद्धति पर आधारित है।

स) वैदिक संचार सिद्धान्त भारती संस्कृति एवं परम्पराओं को ही आधार मानता है।

द) वैदिक संचार सिद्धान्त भारतीय संचार प्रक्रिया का आधार है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. संचार के छः सहायक सिद्धान्तों के बारे में लिखिए।

.....

.....

2. संचार के सात 'सी' सिद्धान्त के बारे में लिखिए।

सूचना सिद्धान्त (Information Theory)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अतः उसका समाज के प्रति चिन्तनशील होना स्वाभाविक हे। उसके मस्तिष्क में तरह–तरह के विचार आते है। इन विचारों को हम सूचना (Infromation) का नाम देते है। यह विचार जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर विभिन्न माध्यमों से पहुंचता है तब सम्प्रेषण का जन्म होता है। इसको सूचना सम्प्रेषण सिद्धान्त बिल आई सिद्धान्त (Bill Eye Theory) या शैनन विचारधारा (Shannon Theory) भी कहते है। इस विचारधारा का प्रतिपादन शैनन (Shannon) ने सन् 1950 में किया था। इसके पश्चात् मिलर एवं फिक ने इस क्षेत्र में आगे कार्य किया। सूचना विधारधारा सम्प्रेषण से पृथक रूप में विकसिक हुई थी। इलेक्ट्रानिक सम्प्रेषण माध्यम इस विचारधारा की उत्पत्ति के प्रमुख कारण थे। कम्प्यूटर डाटा प्रोसेसिंग साईबर आदि ने सूचना विचारधारा को जन्म दिया। शैनन एक इन्जीनियर एवं गणितज्ञ थे। एक स्थान से दूसरे स्थान पर संकेतों एवं सन्देशों को प्रेषित करने में उनको कठिनाई हुई तो सम्प्रेषण को एक यांत्रिक उपकरण के रूप में प्रयोग किया।

शैनन ने सूचना विचारधारा के प्रतिपादन में निम्न महत्वपूर्ण सन्दर्भ व्यक्त किए है :

(1) शैनन से सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग कर संचालित की जाने वाली ओस सूचना को मान H के लिए निम्नलिखित समीकरण दिया :

$H = f\ P\log 2P$

P = संकेत के चुने जाने की सम्भावना

H = सूचना स्त्रोत की इन्ट्रोपी (सन्निहित शक्ति)

(2) मौलिक प्रमेय = C - H - R

(3) शोर सामाजिक तथा यान्त्रिक बाधाओं के कारण उत्पन्न होता है।

(4) BIT (बिट) वह इकाई है, जिसमें किसी सन्देश में सम्मिहित नापी जाती है। यह द्विपक्षीय अंक (Binary Digit) का सूक्ष्म रूप होता है।

सूचना विचारधारा की विशेषताएं

1. सम्प्रेषण प्रक्रिया रेखीय (Linear) होती है।
2. कार्य परिणति (Action View) इस प्रणाली का आधार है।
3. सम्पूर्ण सम्प्रेषण एक मार्गीय (One way) किया है।
4. सम्प्रेषण की प्रभावी भूमिका होती है। वह सन्देश को संकेतों अथवा लिपि में देता है।
5. इसमें शाब्दिक अथवा सांकेतिक सूचना का प्रवाह होता है।
6. इसके द्वारा ही सही शब्दों का चयन एवं सही सन्देश का प्रेषण सम्भव है।
7. सम्प्रेषण को किसी यान्त्रिक उपकरण द्वारा प्रेषित किया जाता है। जैसे कम्प्यूटर, साईबर आदि उपकरणों के द्वारा।

सूचना विचारधारा का महत्व (Importance of Information Theory)

सम्प्रेषण की सूचना विचारधारा के अन्तर्गत मानवीय सम्प्रेषण प्रक्रिया के आवश्यक घटकों को शामिल किया गया। भाषा के संकेतों एवं लिपियों का भाव लोगों की अपेक्षानुसार होता है। प्रेषण तथा प्राप्तकर्ता दोनो संकेतों एवं लिपि को समान अर्थों में समझते है। यदि दोनों के अर्थों के समझने में कोई बाधा है तो शोर (Noise) है, जो कि सामाजिक अथवा तकनीकी बाधाओं से उत्पन्न होता है। सूचना विचारधारा में सम्प्रेषक की भूमिका प्रभावी एवं त्रुटिरहित होनी चाहिए तथा प्रतिपुष्टि क्रिया इसमें नहीं होती है, केवल सूचनाओं का प्रेषण किया जाता है। व्यवसाय सम्प्रेषण में सूचना विचारधारा उपयोगिता निम्नलिखित है :

1. सूचनाओं की मात्रा (परिणाम) पर्याप्त होनी चाहिए।
2. सूचना का घनत्व एवं आवत्ति संगठनात्मक आवश्यकता के अनुरूप होनी चाहिए।

3. सूचना स्पष्ट एवं शीघ्र समझने योग्य होनी चाहिए।
4. सूचना उद्देश्यपरक होनी चाहिए।
5. सूचना पूर्ण (Up-to-date) होनी चाहिए।
6. सूचना प्रवाह की उचित दिशा होनी चाहिए, संगठन में सूचना का स्वतन्त्र एवं सन्तुलित प्रवाह होना चाहिए।
7. आन्तरिक एवं वाह्य दोनों साधनों से सूचनाओं का संग्रहण होना चाहिए।
8. सूचना संस्कृति का विकास एवं अर्थपूर्ण सूचना सम्प्रेषण पर ध्यान देना।

सम्प्रेषण या संचार के अन्तक्रियात्मक अथवा पारस्परिक क्रियात्मक (Interaction Theory of Communication)

इसको अन्तर्वैयक्तिक (Interpersonal) गंश्ती (Cyclical) अथवा पिंग पांग (Pin-Pong) विचार कहते है। पिंग–पांग टेविल टेनिस खेल की एक स्पर्धा है। जिस प्रकार टेविल–टेनिस की गेंद दोनों खिलाड़ियों के मध्य सतत् रूप से जाती–आती रहती है। उसी प्रकार सम्प्रेषण प्रक्रिया में सन्देश, विचार, भावनाएं प्रेषक और प्रकार के मध्य परस्पर आदान–प्रदान होते है। इसमें रेखीय एवं प्रत्यक्ष रूप में कारण और परिणाम का परस्पर सम्बन्ध होता है। प्रतिपुष्टि का विचार इस प्रक्रिया में ही स्थापित हुआ है।

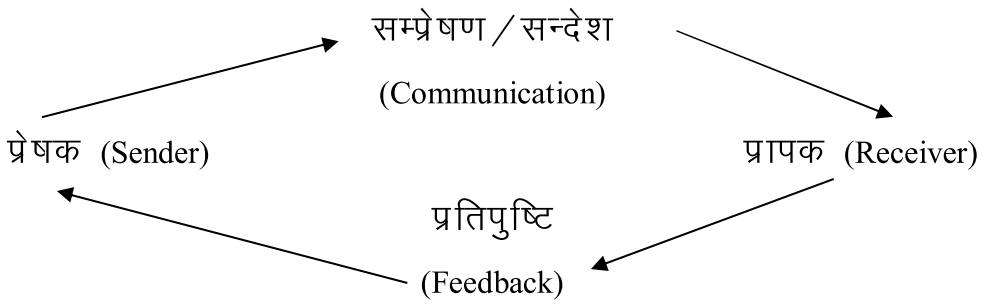
पारस्परिक क्रियात्मक विचारधारा के प्रमुख संघटक निम्न है।

1. सन्देश, विचार अथवा उत्प्रेरक (Message, Idea or Stimulus)
2. प्रेषक, परिषर्ण्ता अथवा सम्प्रेषण (Sender), Transmitter or communicator
3. सन्देश अर्थ को निहित करना (Encoding)
4. मार्ग (Channel)
5. माध्यम (Medium)
6. प्रापक (Receiver)
7. निहित अर्थ को समझना (Decoding)

8. क्रियान्वयन अथवा व्यवहार परिवर्तन (Action or behaviour change)

9. प्रतिपुष्टि (Feedback)

सम्प्रेषण की अन्तवैयक्तिक विचारधारा के अन्तर्गत उपरोक्त सभी नौ संघटक व्यवस्थित क्रम के द्वारा सम्प्रेषण क्रिया की प्रक्रिया में परिवर्तन करते हैं। रेखीय सम्प्रेषण (सूचना, विचारधारा) की सबसे प्रबलतम कमी प्रतिपुष्टि का अभाव था। प्रतिपुष्टि को सन्देश की वांछित प्रतिक्रिया एवं वापसी सूचना (Return Information) कहा जाता है। प्रतिपुष्टि के अभाव में सम्प्रेषण एकपक्षीय रहता है। जबकि व्यवहार विज्ञान के विद्वानों के अनुसार प्रभावी सम्प्रेषण चाहे व आमने–सामने, सेमिनार, विचारगोष्ठी आदि के रूप में मौखिक हो अथवा पत्र, दृश्य, श्रव्य, संकेतो के द्वारा लिखित रूप में हो। दोनों ही तरीकों में सम्प्रेषण प्रभावी तभी हो सकता है जब वांछित प्रतिपुष्टि प्राप्त होती है। जैसे – एक वक्ता श्रोताओं के मध्य सम्बोधन करता है और श्रोता भावशून्य होकर केवल सुनते है तो यह सम्प्रेषण उबाऊ, नीरस तथा वक्ता के ऊ विपरीत प्रभाव डालने वाला होगा, लेकिन इसके विपरीत यदि श्रोता ताली, मुखभिव्यक्ति, प्रतिक्रिया, प्रश्न करते है तो सम्प्रेषण प्रभावी एवं सम्प्रेषण व श्रोता दोनों ही की क्रियाएं सार्थक होती हैं। परस्पर सम्बन्धित सम्प्रेषण को निम्न चित्र द्वारा व्यक्त कर सकते है।



सम्प्रेषण सम्बन्धित सम्प्रेषण विचारधारा में सन्देश प्रेषक और प्रापक सम्प्रेषण के प्रति सजग एवं जागरूक रहते हैं। व्यावहारिक दृष्टिकोण से प्रेषक एवं प्रापक कुछ आन्तरिक और वाह्य चरों की अभिव्यक्ति परस्पर करते है। यही कारण है कि इसको अन्तवैयक्तिक या

परस्पर सम्बन्धित सम्प्रेषण कहा जाता है। इसको निम्न प्रकार दर्शाया जा सकता है :

सम्प्रेषणप्रापक	**प्रापक**
उत्प्रेरक, विश्लेषण, समझ,	उत्प्रेरक, विश्लेषण, समझ,
दृष्टिकोण	दृष्टिकोण
बल देना/अभिप्रेरणा	बल देना/अभिप्रेरणा
कियान्वयन/उत्तरदायी	कियान्वयन/उत्तरदायी

सम्प्रेषण की विशेषताएं (Characteristics)

1. सम्प्रेषण के गति प्रेषक और प्रापक दोनों सजग होते है।
2. प्रेषक सन्देश को Encode करता है जबकि प्रापक उसको Decode करता है।
3. सन्देश प्रापक वांछित प्रतिपुष्टि प्रदान करता है। इसलिए इसको Interaction कहा जाता है।
4. सम्प्रेषक को सन्देश की प्रतिक्रिया की जानकारी रहती है।
5. यह सम्प्रेषक की पूर्ण प्रकिया है।
6. यह द्विभागी प्रकिया है।

सम्प्रेषण की उपयोगिता अथवा महत्व (Utility or Importance Communication)

अन्तर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण व्यावसायिक संगठनात्मक सम्प्रेषण के लिए महत्वपूर्ण एवं प्रभावी सम्प्रेषण प्रकिया हैं। क्योंकि संगठनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि न केवल सन्देश का प्रेषण किया जाए बल्कि वांछित प्रतिकियाओं की प्राप्ति की जाए जिससे सन्देश अथवा विचारों की कमियों का संधोधन अथवा पुनः निरीक्षण किया जा सके।

संगठनात्मक गतिविधियां सामूहिक निर्णयन पर निर्भर होती है। इसलिए पारस्परिक सम्बन्धित सम्प्रेषण के द्वारा समूह, परिचर्चा, सेमीनार,

विचारगोष्ठी आदि का आयोजन पर किसी सार्थक, तार्किक एवं उद्देश्पूर्ण परिणाम पर पहुंच सकते है।

सम्प्रेषण या संचार की व्यावहारिक (लेन–देन) सिद्धान्त (TRANSACTION THEORY OF COMMUNICATION)

इस विचारधारा को घुमावदार (Spiral Theory) भी कहते है। Transaction का शाब्दिक व्युत्कम सम्बन्ध (Reciprocal Relation) अथवा अन्तनिर्भरता (Interdependence) का सृजन होता है। जिस प्रकार व्यावहारिक कय–विकय अथवा लेन–देन एक निरन्तर चलने वाली किया है, उसी प्रकार इस विचारधारा के अनुसार सम्प्रेषण कभी न समाप्त होनी वाली (Never Ending) प्रकिया हैं। इसमें सम्प्रेषक एवं सन्देश प्राप्तकर्ता दोनों की सम्प्रेषण के लिए समान रूप से सहयोगी एवं पारस्परिक निर्भर होते है। मेयर्स एवं मेयर्स (Myres & Myres) के अनुसार ''मानवीय सम्प्रेषण एक पद्धति है जिसमें प्रेषक एवं प्राप्तकर्ता समान रूप से प्राप्तकर्ता एवं प्रेषक है।''

व्यवहारिक लेन–देन की विचारधारा के अनुसार सम्प्रेषण स्थिर चित्र (Still Photograph) नहीं बल्कि एक चलचित्र (Motion Picture) की भांति है, जिसमें लगातार प्रवाह रहता है। थामस ए, हैरिस (Thomas A. Harris) ने व्यावहारिक विश्लेषण (Transaction Analysis) में यह प्रतिपादित किया कि अभिभावक (Parent) वयस्क (Adult) तथा बालक (Child) व्यवहार का शोधपरक कार्य करता है। जिस प्रकार एक छोटा शिशु रोता है तो मां उसकों दूध पिलाती है। यह व्यवहार विचारधारा के अन्तर्गत सम्प्रेषण अर्थ का आदान–प्रदान है।

संघटक – विचारधारा के संघटक निम्नलिखित है –

1. सन्देश
2. सम्प्रेषक
3. सन्देश

4. मार्ग
5. माध्यम
6. प्रापक
7. निहित अर्थ को समझना
8. व्यवहार परिवर्तन
9. प्रतिपुष्टि

महत्वपूर्ण है कि सम्प्रेषण की व्यावहारिक विचारधारा के अनुसार अनतर्सम्बन्धित सम्प्रेषण की आकृति (Frequency) सतत रूप से चलती रहती है और उक्त संघटक निरन्तर कियाशील रहते है।

विशेषताएं (Characteristics)

सम्प्रेषण की स्पाइरल अथवा लेन–देन की विचारधारा के अनुसार निम्नलिखित विशेषताएं है :

1. जिस प्रकार प्रत्येक किया की प्रतिकिया होती है उसी प्रकार सम्प्रेषण भी किया–प्रतिकिया हैं।
2. सम्प्रेषण में दोनों पक्ष प्रेषक–प्राप्तकर्ता निरन्तर सम्प्रेषण करते है। केवल एक या दो बार ही पारस्परिक सम्बन्ध (Interaction) पर्याप्त नहीं हैं बल्कि सतत् प्रकिया हैं।
3. इस सम्प्रेषण के संघटक एवं पारस्परिक सम्बन्ध सम्प्रेषण के संघटक एक समान होते है।
4. सन्देश – प्रतिपुष्टि – सन्देश – प्रतिपुष्टि, निरन्तर चलती रहती हैं क्योंकि प्रापक तथा प्रेषक के उत्प्रेरक का कार्य करती है।
5. जीवनकाल (Lifetime) से पूर्व संचित ज्ञान, अनुभव, कौशल तथा सूचनाओं के आधार पर सम्प्रेषण प्रकिया निर्भर रहती है।
6. सम्प्रेषण के दोनों पक्ष कारण –परिणाम (Cause-effect) से प्रभावित होते हैं।
7. सम्प्रेषणकर्ता तथा प्रापक भूमिकाओं का पूर्वानुमान लगाते हैं जिसमें परिस्थिति साक्षेप परिवर्तन भी होते हैं।

उपयोगिता (Importance)

घुमावदार अथवा स्पाइरल विचारधारा की संगठनात्मक सामूहिक निर्णयन में महत्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि व्यावसायिक संगठन संरचना विभिन्न स्तरों पर समूहों में विभाजित होती है। संरचना के समस्त समूह आपस में सम्प्रेषण की निरन्तरता तथा एक दूसरे की भूमिकाओं के प्रति यदि जागरूक होते हैं तो संगठनात्मक लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त कर सकते है।

इस विचारधारा के अन्तर्गत सूचनाओं एवं सन्देशों का एक पूल (Pool) होता है जिसको सम्प्रेषण में प्रयोग करके उसकी तार्किक परिणति की जाती है। इस विचारधारा में सम्प्रेषण के दोनों पक्षकार सम्प्रेषण से एक दूसरे को पर्याप्त सीमा तक प्रभावित करते है।

संगठनात्मक कियाओं की समस्या पहचान (Problem Identification) समस्या विश्लेषण (Problem Analysis) तथा निदान की खोज (Discovery of Possible Solution) तथा क्रियान्वयन (Action) की उक्त विचारधारा अत्यन्त उपयोगी हैं। जटिल संगठनात्मक संरचना के लिए सम्प्रेषण प्रकिया की यह विचारधारा उपुयक्त है।

5.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार के सिद्धान्तों के बारे में बताया गया है जिसमें कहा गया है कि संचार व्यवस्था को तभी प्रभावी माना जा सकता है जब वह अपेक्षित व्यक्ति पर अपना प्रभाव छोड़ सके और अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सके। संचार माध्यम को तभी प्रभावी बनाया जा सकता है जब संचार स्पष्ट एवं साफ हो, संक्षिप्त हो तथा उसका अर्थ दूसरे व्यक्ति की समझ में आ सके।

वास्तव में, संचार के सिद्धान्तों का आशय उन मार्ग दर्शक नियमों के समूह से है जिनके पालन करने पर संचार प्रक्रिया अपने निहित उद्देश्यों में सफल होती है। इस इकाई में संचार के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है जिसमें संचार के छः सहायक, संचार के चार

एस तथा संचार के सात सी के बारे में प्रकाश डाला गया है। संचार के छः सहायकों से तात्पर्य क्यो, कौन, कहाँ, कब, क्या, तथा कैसे आदि महत्वपूर्ण है। संचार के चार एस तात्पर्य संक्षिप्तता, साधारण, शक्ति, तथा यथार्थता, प्रमुख है। संचार के सात सी का विश्लेषण विश्वसनीयता, सन्दर्भ, सन्तुष्टता, स्पष्टता, माध्यम, अनुकूलता एवं श्रोताओं की क्षमता महत्वपूर्ण है ।

इसी इकाई में संचार के सार्वभौमिक सिद्धान्तों के बारे में भी प्रकाश डाला गया है, जिसमें कम्युनिस्ट संचार सिद्धान्त, चायनीज संचार सिद्धान्त, क्रिश्चियन संचार सिद्धान्त, इस्लामिक संचार सिद्धान्त, कन्जरवेटिव संचार सिद्धान्त, लिबरल संचार सिद्धान्त तथा वैदिक संचार सिद्धान्त प्रमुख है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई का पढ़ने के बाद उपरोक्त सिद्धान्तों के बारे में जानकारी प्राप्त हो चुकी होगी।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

सचांर के सिद्धान्त – सचांर के सिद्धान्तों का आशय उन मार्गदर्शक नियमों के समूह से है जिनके पालन करने पर संचार प्रक्रिया अपने निहित उद्देश्यों में सफल होती है। संचार सिद्धान्तों का स्पष्ट करने से पूर्व विभिन्न विद्धानों द्वारा प्रतिपादित निम्न विचाराधारों का अध्ययन करना आवश्यक है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु.

1– संचार के छः सहायक तथ्यों की विवेचना कीजिए।

2– संचार के चार 'एस' से आप क्या समझते है?

3– संचार के सात 'सी' पर प्रकाश डालिये।

4– संचार के कम्युनिस्ट सिद्धान्त पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

6– चाइनीज संचार सिद्धान्त से आप क्या समझते है?

7– क्रिश्चियन संचार सिद्धान्त पर टिप्पणी लिखिये।

8– वैदिक संचार सिद्धान्त पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत

1– संचार के छः सहायक, चार 'एस' एवं सात 'सी' सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

2– संचार के सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

5.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मिश्र, डा० विनोद एवं शुक्ल, डा० नरेन्द्र व्यावसायिक संचार, एस. बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा वर्ष 2014–15, पेज–54–64

2– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा, वर्ष–2013, पेज–57

3– निगम, डॉ० बी.एस., सूचना सम्प्रेषण और समाज, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ एकादमी, भोपाल, वर्ष–1994, पेज–44

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड
2
संचार के प्रकार

इकाई 6
औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार 98

इकाई 7
मौखिक एवं लिखित संचार 124

इकाई 8
प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार 140

इकाई 9
संचार के आधुनिक साधन 156

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे	:	कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 विनय मिश्रा	:	डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद
डॉ0 दिनेश सिंह	:	डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद
डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराम अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल	:	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड परिचय

द्वितीय खण्ड – संचार के प्रकार

संचार एवं परामर्श विषय का यह द्वितीय खण्ड संचार के प्रकारों पर आधारित है, इसमें संचार के विभिन्न प्रकारों एवं उनके कार्यों पर विस्तृत चर्चा की गयी है। इस खण्ड को चार इकाईयों में विभक्त किया गया है। पहली इकाई औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार पर आधारित हैं द्वितीय इकाई में मौखिक एवं लिखित संचार के अर्थ, कार्य एवं विशेषताओं पर चर्चा की गयी है। इस खण्ड की तीसरी इकाई में प्रत्यक्ष एवं प्रत्यक्ष संचार के अर्थ एवं विशेषताओं की चर्चा की गयी है। इस खण्ड की अन्तिम इकाई संचार के आधुनिक साधन पर आधारित है इसके अन्तर्गत संचार के नयी तकनीकों को दर्शाया गया है और उनके लाभों से भी अवगत कराया गया है।

खण्ड–द्वितीय– संचार के प्रकार

इकाई –6, औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार

6.0 इकाई का उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 औपचारिक संचार

- 6.2.1 औचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्य
- 6.2.2 औपचारिक संचार के माध्यम
- 6.2.3 औपचारिक संचार से लाभ
- 6.2.4 औपचारिक संचार से हानियां
- 6.2.5 औपचारिक संचार की सीमायें
- 6.2.6 औपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्व
- 6.2.7 औपचारिक संचार के प्रकार

6.3 अनौपचारिक संचार

- 6.3.1 अनौपचारिक संचार के उद्देश्य
- 6.3.2 अनौपचारिक संचार के माध्यम
- 6.3.3 अनौपचारिक संचार से लाभ
- 6.3.4 अनौपचारिक संचार से हानियां
- 6.3.5 अनौपचारिक संचार की सीमायें
- 6.3.6 अनौपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्व
- 6.3.7 अनौपचारिक संचारके प्रकार

6.4 सार–संक्षेप

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

6.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

6.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में संचार के औपचारिक एवं अनौपचारिक प्रकारों का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार से आप लोगों को अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई का महत्वपूर्ण उद्देश्य औपचारिक एवं अनोपचारिक संचार के तरीकों एवं प्रकारों के बारे में आपको अवगत कराना है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– औपचारिक संचार के अर्थ को जान सकेगें।

2– औपचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्यों पर प्रकाश डाल सकेगें।

3– औपचारिक संचार के माध्यमों पर प्रकाश डाल सकेगें।

4– औपचारिक संचार के लाभों पर टिप्पणी कर सकेगें।

5– औपचारिक संचार की सीमाओं की जानकारी कर सकेगें।

7– औपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्वों पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेगें।

8– औपचारिक संचार के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेगें।

9– अनौपचारिक संचार के अर्थ को समझ सकेगें।

10– अनौपचारिक संचार के उद्देश्यों को लिख सकेगें।

11– अनौपचारिक संचार माध्यमों पर प्रकाश डाल सकेगें।

12– अनौपचारिक संचार से होने वाले लाभों की जानकार कर सकेगें।

13– अनौपचारिक संचार से होने वाली हानियों पर लेख लिख सकेगें।

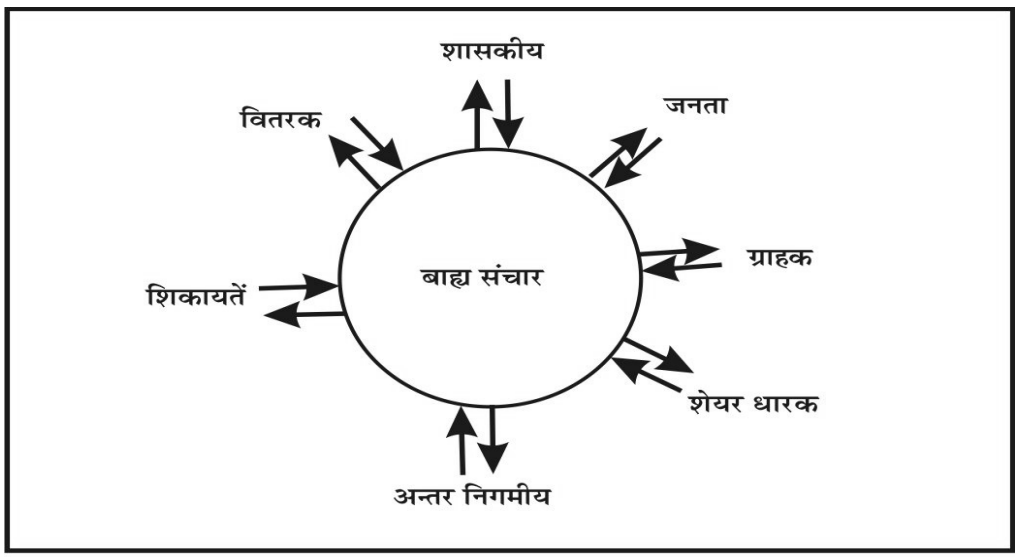
14– अनौपचारिक संचार की सीमाओं से अवगत हो सकेगें।

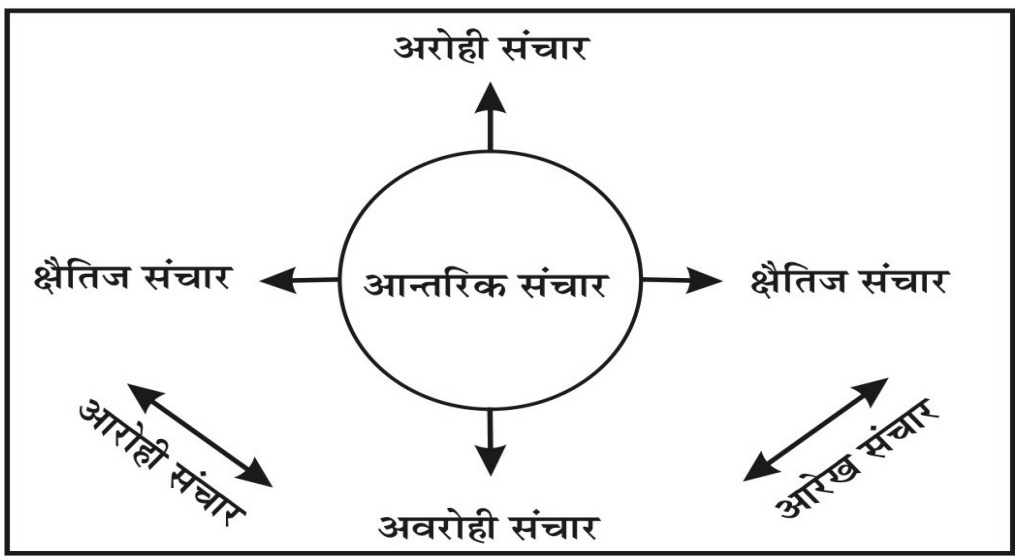
15– अनौपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्वों की जानकारी कर सकेगें।

16– अनौपचारिक संचार के प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेगें।

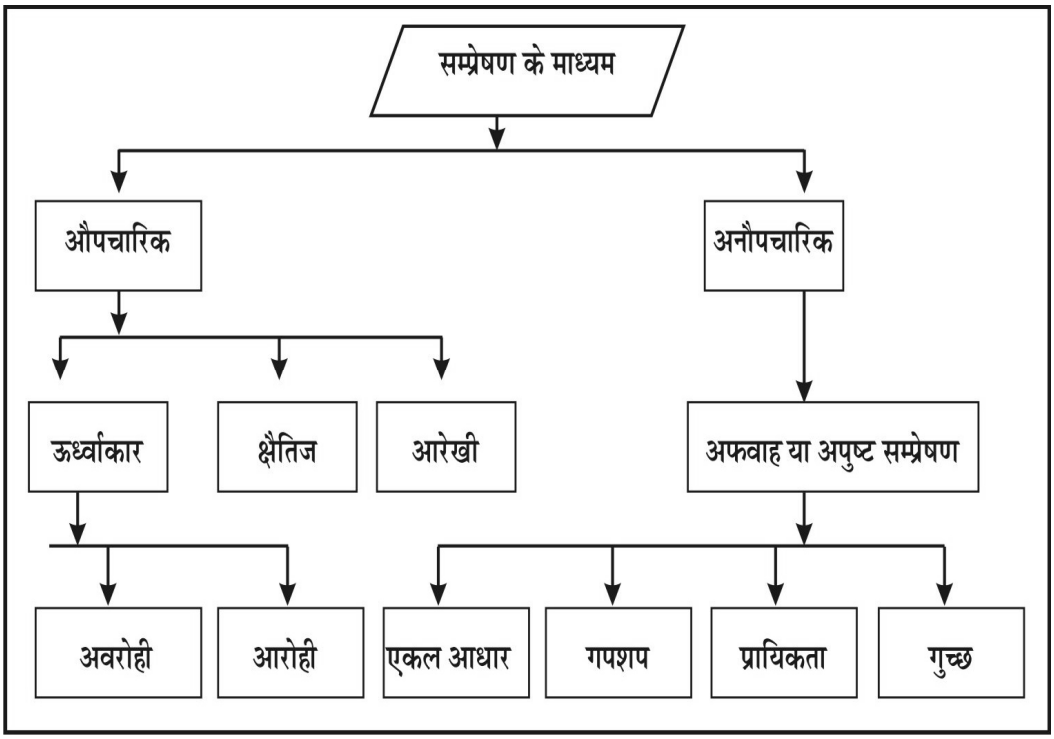
6.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रत्येक व्यावसायिक संगठन दो तरह के संचार से सम्बद्ध होता है– प्रथमः बाह्य संचार, द्वितीयः आन्तरिक संचार। बाह्य संचार का अभिप्राय अपने व्यावसायिक समूह, बैंकों, सरकारी कार्यालयों, प्रेस, उपभोक्ताओं व सामान्य जनता से सम्प्रेषण करने से है। आन्तरिक संचार का अभिप्राय अपने संगठन के आन्तरिक परिवेश में सम्प्रेषण करने से है।



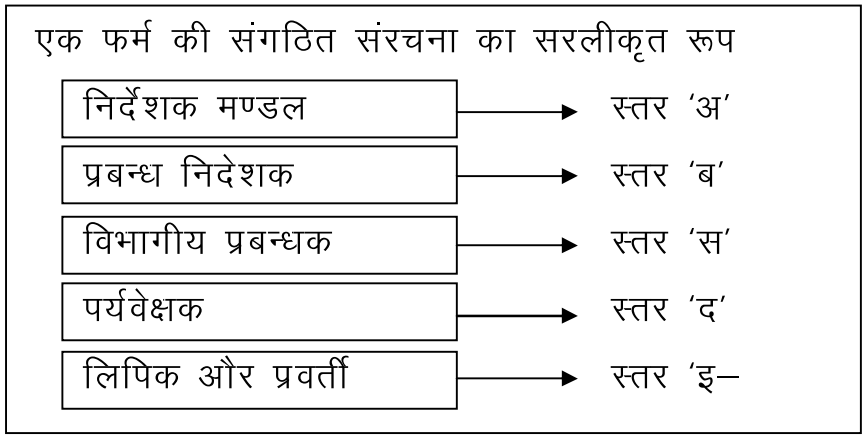


आन्तरिक संचार स्वयं दो प्रकार का होता है। इसे संचार का पथ या मार्ग भी कहा जाता है।



6.2 औपचारिक संचार

औपचारिक संचार एक प्रबन्धन द्वारा तैयार गया नेटवर्क होता है। जब हम किसी कार्य के लिए विधिवत् होने की बात करते हैं, तो इसका अभिप्राय किसी संगठन के प्रबन्धन ने जो नेटवर्क तैयार करने से है। इस प्रक्रिया से कार्य के होने की बात करते हैं। जैसे, एक क्लर्क जो किसी संगठन के किसी अन्य भाग में कार्यरत है, वह सीधे उस संगठन के प्रबन्ध निदेशक से संचार क्रिया नहीं कर सकता है। वह अपने पर्यवेक्षक से बात करेगा और उसके माध्यम से सन्देश को विभागीय प्रबन्धक के पास प्रेषित करेगा, तत्पश्चात् उसका सन्देश प्रबन्ध निदेशक तक पहुँचेगा। औपचारिक संचार क्षैतिज या ऊर्ध्वाकार तरीके से हो सकता है और ऊर्ध्वाकार संचार का प्रवाह अवरोही तथा आरोही होता है। क्षैतिज संचार का प्रवाह समान वर्ग के कर्मचारियों के मध्य होता है।



6.2.1 औपचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्य

औपचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1– अधीनस्थ अधिकारियों अथवा कर्मचारियों तथा सहायकों द्वारा किये गये अच्छे कार्यों की प्रशंसा करना।

2– संस्था अथवा उपक्रम के उच्चाधिकारियों द्वारा अपने अधीनस्थों को आदेश देना अथवा आवश्यक दिशा निर्देश प्रदान करना।

3– उच्चाधिकारियों द्वारा अधीनस्थों को कार्य सम्बन्धी आवश्यक जानकारी देना कि उनको क्या कार्य करना है? कब करना है? किस प्रकार करना है? तथा कहाँ करना है?

4– संगठन की प्रक्रियाओं तथा नीतियों की विधिवत् व्याख्या करना।

6.2.2 औपचारिक संचार के माध्यम

औपचारिक संचार के मुख्य माध्यम निम्नलिखित हैं–

1– **मौखिक माध्यम**– ध्वनि विस्तारक, टेलीफोन, सभाएँ, वक्तव्य इत्यादि मौखिक माध्यमों द्वारा निर्देश प्राप्त किया जाता हैं।

2– **लिखित माध्यम** – इलेक्ट्रॉनिक समाचार, नीति विवरण, पेम्फलेट, ज्ञापन, नोटिस, प्रिण्ट, कार्यवाहियाँ, प्रतिवेदन, नियम पुस्तिका, आदेश–पत्र इत्यादि लिखित माध्यम प्रयोग में लाये जाते हैं।

6.2.3 औपचारिक संचार से लाभ

1. चूँकि यह संचार विभिन्न अधिकारियों व जिम्मेदार व्यक्तियों के माध्यम से होता है, अतः इसमें उत्तरदायित्व का बोध होता है।

2– यह संचार अधिकारियों व उनके अधीनस्थ कर्मचारियों के जातीय सम्बन्धों को प्रगाढ़ करता है।

3– चूँकि इस संचार में दिये गये सन्देश की जिम्मेदारी प्रक्रिया में सम्मिलित व्यक्तियों की होती है, अतः इसमें सम्बन्धित सन्देश में प्रमाणिकता व विश्वसनीयता होती है।

4– संचार सन्देश में सार्वभौमिकता का बोध होता है।

6.2.4 औपचारिक संचार से हानियां

1– यह विभिन्न प्रबन्धकों को जिन सन्देशों को उनके द्वारा प्रसारित किया जाता है, के कार्यभार में वृद्धि करता है।

2– यदि उच्चाधिकारी व निम्न कर्मचारी के बीच संचार अन्तर–निर्मित होता है तो इसका प्रतिकूल प्रभाव उनके सम्बन्धों पर पड़ता है।

3– यदि मध्य वर्ग के कर्मियों द्वारा संचार सन्देश में परिवर्तन किया जाता है तो इससे उसकी यथार्थता कम हो जाती है।

4– यह संचार लालफीताशाही को जन्म देता है।

6.2.5 औपचारिक संचार की सीमाएं

1– लम्बवत् संचार भिन्न–भिन्न स्तरों से होता हुआ नीचे की ओर आता है जिसमें किसी भी स्तर पर आवश्यक कारणों से सन्देश को संशोधित तथा परिवर्तित किया जा सकता है। लेकिन कई बार ऐसा करने से सन्देश का भाव तथा अर्थ बदल जाता है।

2– लम्बवत् संचार के निर्णयन तथा नीतियों में अधीनस्थों की कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं होती है।

3– इस संचार में आदेश तथा निर्देश विभिन्न स्तरों से होकर ऊपर से नीचे की ओर जाते हैं, जिसके कारण सन्देश, आदेश तथा निर्देश के पहुँचने में देरी हो जाती है।

4– इस संचार में गोपनीयता भंग होने तथा अनावश्यक विवरण के कारण सन्देश का वास्तविक स्वरूप ही बदल जाता है।

5– उच्चाधिकारी द्वारा पूर्ण आदेश अथवा सन्देश दिये जाने के कारण कार्य परिणाम सन्तोषजनक हो, यह आवश्यक नहीं रहता।

6.2.6 औपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्व

1– संस्था के अधिकृत अधिकारियों अथवा कर्मचारियों को ही संचार किया जाना चाहिए।

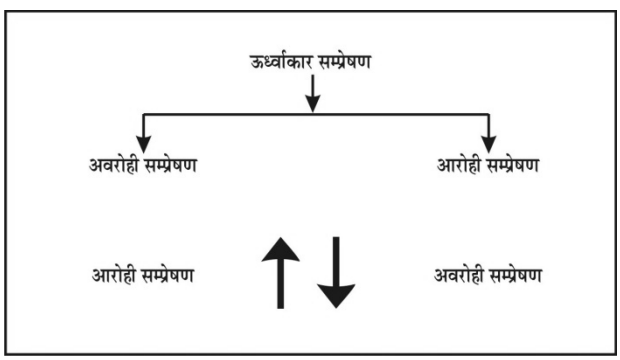
2– संस्था में भिन्न–भिन्न स्तरों पर निर्देशों का सृजन करना चाहिए, जिससे कि सन्देश उच्च अधिकारियों तक शीघ्र ही पहुँचाया जा सके।

3– उच्च अधिकारियों तथा प्रबन्धकों द्वारा संचार योजना के अनुसार ही लम्बवत् संचार किया जाना चाहिए।

4– संस्था के उच्च अधिकारियों तथा प्रबन्धकों को संस्था के उद्देश्यों, क्रियाओं, प्रगति तथा कर्मचारियों की दक्षता के विषय में पूर्ण ज्ञान होना चाहिए तथा तभी प्रभावी ढंग से लम्बवत् संचार किया जा सकता है।

6.2.7 औपचारिक संचार के प्रकार

(क) ऊर्ध्वाकार संचार– ऊर्ध्वाकार संचार प्रबन्धन व उनके अधीनस्थ कर्मचारियों के मध्य होता है। इसकी दिशा प्रबन्ध से कर्मचारी या कर्मचारी से प्रबन्धन की ओर होती है। जब यह निचले कर्मचारियों से प्रबन्धक की ओर हातेा है तो इसे अवरोही और और जब प्रबन्धक से निचले कर्मचारियों की ओर होता है तो इसे आरोही संचार कहते हैं। पूर्व में यह बताया जा चुका है कि यह एक औपचारिक संचार है।



1– अवरोही संचार–अवरोही संचार दिशा और नियन्त्रण को स्पष्ट करता है। इसकी दिशा ऊपर से नीचे अर्थात् प्रबन्ध से प्रवर्ती वर्ग तक होती है। इस संचार में एक सामान्य बात यह है कि इसमें कर्मचारियों को निर्देश कार्य निष्पादन से सम्बन्धित होते हैं व सन्देश संचारित होता है। इसमें लिखित व आमने–सामने के वार्तालाप, लोक संचार प्रक्रिया व लेख इत्यादि आते हैं। प्रभावी अवरोही संचार में भ्रम व विरूपण से बचत होती है। अवरोही संचार मौखिक या लिखित हो सकते हैं। मौखिक संचार प्रायः अनौपचारिक तरीके से व लिखित संचार प्रायः निर्देश पत्र, पेम्फलेट के द्वारा पूर्ण होते हैं।

अवरोही संचार

लिखित	**मौखिक**
जैसे– निर्देश–पत्र, हैण्डबुक्स	जैसे–निर्देश, भाषण
पेम्फलेट्स, नीति निर्धारक	दूरभाष लाउडस्पीकर
पत्रक, विधियां या प्रक्रिया,	
इलेक्ट्रॉनिक न्यूज डिस्प्ले	

2– आरोही संचार–आरोही संचार ठीक अवरोही संचार का व्युत्क्रम है। इसकी दिशा नीचे से ऊपर अर्थात् प्रवर्ती कर्मचारियों से प्रबन्धक की ओर होती है। इस संचार में प्रतिपुष्टि प्राप्त होती है। अतः इस संचार के दो लाभ है–

अ– सन्देश की प्रतिपुष्टि

ब– स्वैच्छिक संचार

सन्देश की प्रतिपुष्टि में उच्चाधिकारयों द्वारा समय–समय पर उनके कार्य निष्पादन व दिये गये दिशा–निर्देशों, आदेशों के अनुपालन के सम्बन्ध में जवाब मांगे जाते हैं, अतः इस परिप्रेक्ष्य में उनके अधीनस्थ

कर्मचारियों द्वारा अपने कार्य, प्रकृति, संवेदनाओं को उच्च अधिकारियों तक पहुँचाया जाता है।

स्वैच्छिक संचार में संगठन की नीतियां, नियमों के सम्बन्ध में अधीनस्थ अधिकारियों/कर्मचारियों के विचार, सुझाव, शिकायतें आमन्त्रित की जाती हैं।

आरोही संचार की विधियाँ—आरोही संचार की निम्न विधियाँ हैं—

1— **सार्वधिक बैठकें**—इसमें एक निश्चित समयावधि में संगठन के अधिकारियों व कर्मचारियों की समूह बैठकें बुलाकर उसमें अधीनस्थ कर्मचारियों के सुझावों, विचारों को आमन्त्रित किया जाता है। इन सुझावों, विचारों को उच्च अधकिारी वर्ग सुनता है व उस पर उचित कार्यवाही करता है।

2— **खुली द्वार नीति**—इस नीति के तहत कर्मचारी को अपने उच्चाधिकारयों के ऑफिस में अपने प्रकरणों के सन्दर्भ में बिना झिझक मिलने व बात करने की छूट रहती है।

3— **सुझाव बॉक्स**—इस नीति में संगठन या दफ्तर के समक्ष एक सुझाव पेटिका रखी जाती है। कर्मचारी इस पेटिका में अपने सुझावों, शिकायतों व विचारों को लिखकर छोड़ देता है। एक निश्चित समय—अन्तराल के उपरान्त इस पेटिका को खोलकर इनसे प्राप्त पत्रों में लिखित सुझावों, विचारों व कठिनाइयों पर विचार—विमर्श किया जाता है।

4— **अनौपचारिक सम्मेलन**— इसमें अनौपचारिक सम्मेलन, जैसे, पिकनिक के आयोजन द्वारा अपने कर्मचारियों को उनके विचारों को उच्चधिकारियों के साथ कहने व बाँटने का मौका दिया जाता है।

5— **काउन्सलिंग**—यह एक नई तकनीक है। इस तकनीक का प्रयोग बहुत कम संगठन करते हैं। इसके अन्तर्गत कर्मचारियों को उनके उच्च अधिकारियों से अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों को दूर करने हेतु प्रेषित किया जाता है।

(ब) क्षैतिज संचार

क्षैतिज संचार सहकारिता व सामूहिक कार्य की भावना को जन्म देती है। यह संगठन के समान वर्ग के अधिकारियों या कर्मचारियों के मध्य होता है। प्रभावी क्षैतिज संचार आपसी समक्ष की भावना को बढ़ाता है।

उदाहरण के लिए, संगठन के विपणन प्रबन्धक व उत्पादन प्रबन्धक के मध्य संचार अथवा सेल्समैन का अन्य दूसरे सेल्समैन के मध्य संचार।

उद्देश्य–

1– इसका उद्देश्य विभिन्न विभागों व व्यक्तियों के मध्य सहकारिता उत्पन्न करना है।

2– इसका उद्देश्य विभिन्न विशेषज्ञों की सहायता से समस्याओं का निदान करना है।

3– इसका उद्देश्य संगठन के विभिन्न विभागों के कर्मचारियों के मध्य सूचना या सन्देश का आदान–प्रदान करना है।

4– इसक उद्देश्य संगठन के विभिन्न कर्मचारियों के मध्य सामाजिक सम्बन्धों को बढ़ावा देना है।

5– इसका उद्देश्य विभिन्न कर्मियों के मध्य अन्तर्द्वन्द्व को समाप्त करना है।

क्षैतिज संचार के माध्यम

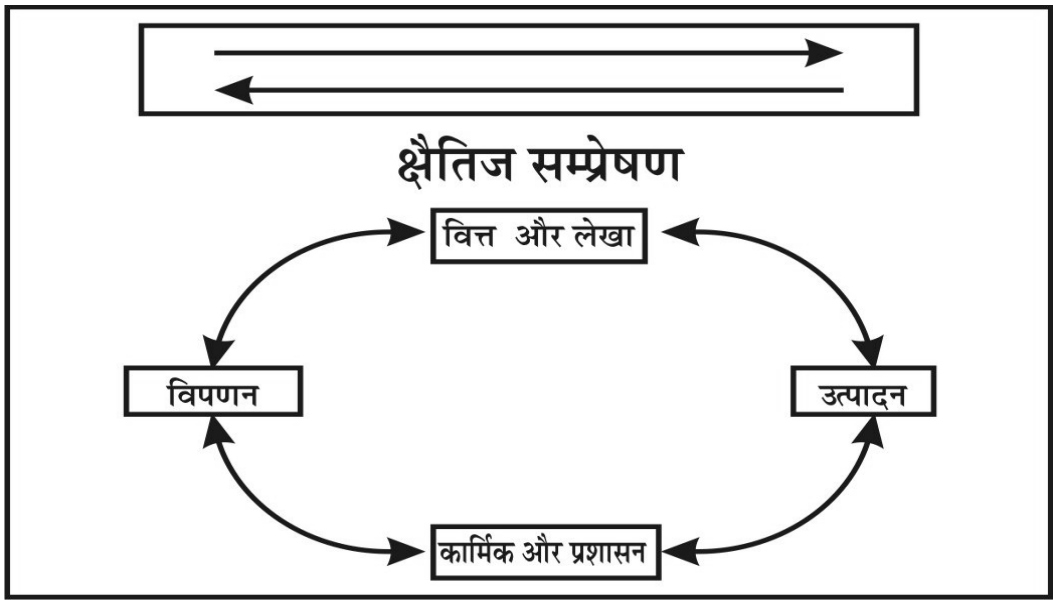
क्षैतिज संचार में निम्न माध्यमों का प्रयोग होता है–

1– टेलीफोन (दूरभाषा)

2– आमने–सामने वार्तालाप

3– बैठकें

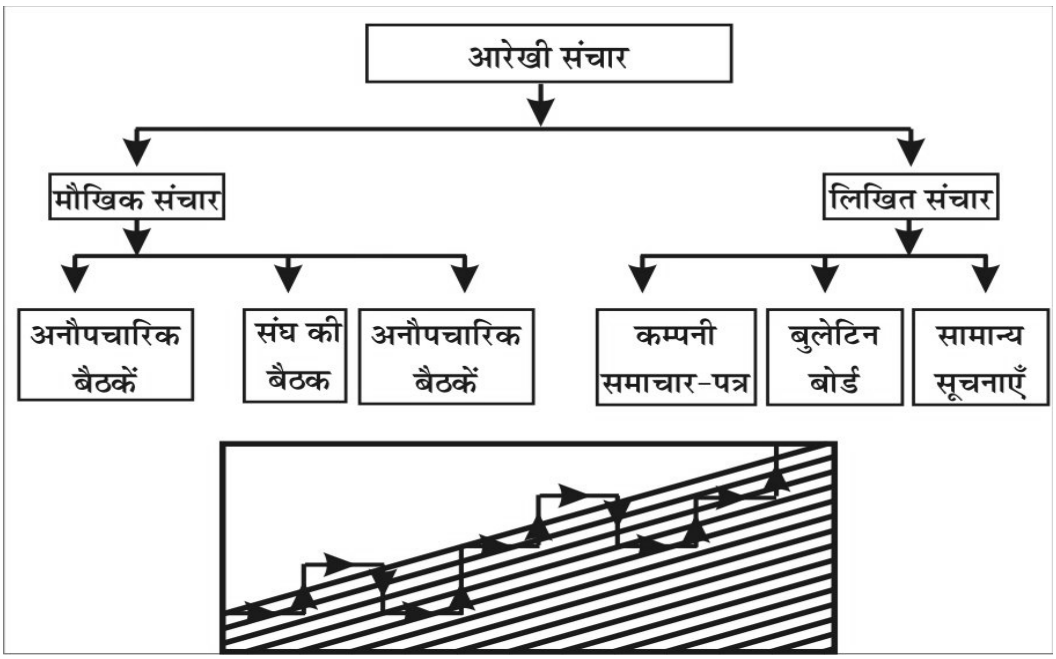
4– लिखित सन्देश, जैसे पत्र इत्यादि



(स) आरेख संचार

इस संचार के अन्तर्गत संचार के क्षैतिज प्रवाह के अतिरिक्त संगठन के विभिन्न स्तर के व्यक्तियों के मध्य संचार को सम्मलित किया जाता है जिनमें कोई प्रत्यक्ष सम्प्रेषण सम्बन्ध नहीं होता। इस प्रकार का संचार एक संगठन के उद्देश्य व लक्ष्यों को प्राप्त करने के अतिरिक्त सम्प्रेषण के प्रवाह में गति को बढ़ावा देता है।

आरेख संचार निम्न रूपों में होता है।

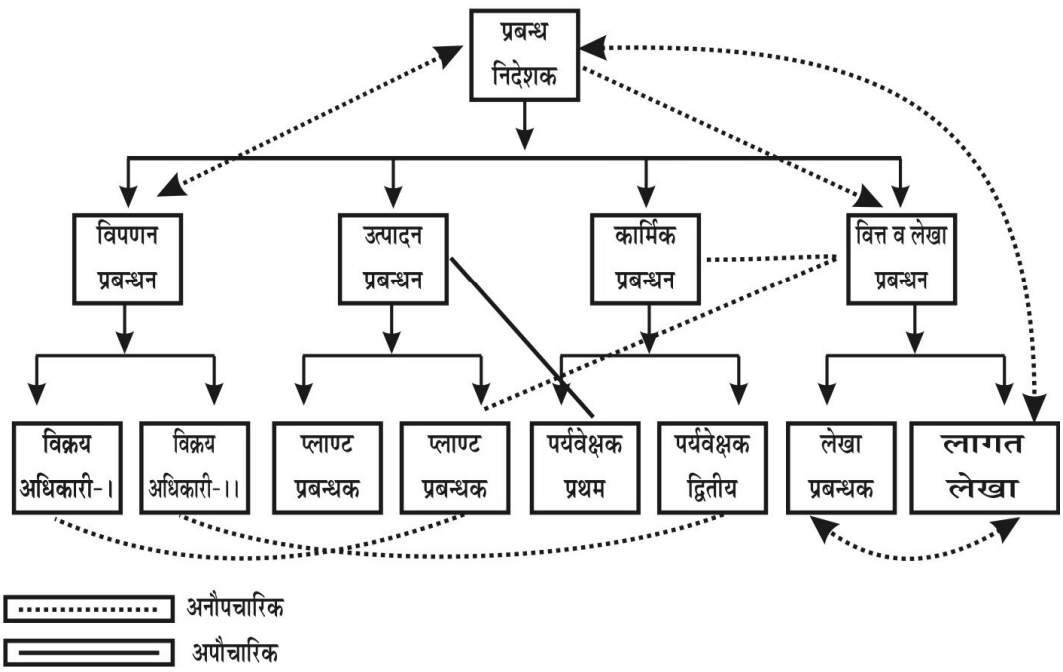


6.3 अनौपचारिक संचार

कोई भी संगठन संचार के मात्र औपचारिक माध्यम का प्रयोग ही नहीं करता, बल्कि इस औपचारिक माध्यम के साथ–साथ उतना ही प्रभावी माध्यम का प्रयोग करता है जिस अनौपचारिक संचार कहते हैं। इसका प्रचार अवैधानिक तरीके से किया जाता है। इसे अफवाह की संज्ञा दी जाती है, क्योंकि यह किसी भी दिशा में प्रसारित हो सकती है। कई संगठन इसे औपचारिक संचार के विकल्प के रूप में भी उपयोग करते हैं। इसके कोई निश्चित नियम, दिशा–निर्देश नहीं होते इसलिए यह किसी भी दिशा में क्षैतिज, ऊर्ध्वाधर या आरेख तेजी से प्रसारित होते हैं।

इसके बारे में कई विद्वानों का मत है कि संचार का यह अनौपचारिक माध्यम किसी संगठन के लिए सामान्यतः अनुकूल परिणाम देता है। यह अत्यन्त ही तीव्र गति से प्रसारित होता है। इसे अपुष्ट सम्प्रेषण भी कहा जाता है।

एक संगठन में अनौपचारिक संचार



6.3.1 अनौपचारिक संचार के उद्देश्य

1– इस प्रकार के संचार से संस्था के भिन्न–भिन्न स्तरों के बीच समन्वय स्थापित होता है।

2– इस प्रकार के संचार में अधीनस्थ अपने उच्च अधिकारियों को रचनात्मक सुझावोंसे अवगत कराते हैं।

3– अनौपचारिक संचार द्वारा नवीन नीतियों को सफलतापूर्वक लागू किया जा सकता है।

4– अनौपचारिक संचार में अधीनस्थ प्रतिवेदन तथा कठिनाइयों के विषय में उच्च प्रबन्धन को जानकारी देते हैं तथा सम्बंधित समस्याओं का समाधान एवं निवारण किया जाता है।

5– उच्च प्रबन्धन को अधीनस्थ कर्मचारियों की संगठनात्मक नीतियों के प्रति विचार को आसानी से पता लगाया जाता है।

6.3.2 अनौपचारिक संचार के माध्यम

1– **मौखिक**–गोष्टियाँ, टेलीफोन, आमने–सामने, साक्षात्कार, इत्यादि

2– **लिखित**– कर्मचारी संघों के प्रकाशन, सुझाव, व्यक्तिगत पत्र, सर्वेक्षण, शिकायतें प्रतिवेदन, इत्यादि।

6.33 अनौपचारिक संचार से लाभ

1– औपचारिक संचार की अपेक्षा अनौपचारिक संचार अत्यन्त तेजी से संचारित होता है या फैलता है। इसके कारण कुछ औपचारिक सन्देशों की पुष्टि व प्रसारण हो जाता है।

2– अनौचारिक संचार बहुआयामी होता है। इस कारण से वह किसी भी दिशा व कोण से कभी भी प्रसारित हो सकता है। अतः बड़ी आसानी व बचत द्वारा इसे संगठन के बड़े समूह तक फैलया जा सकता है।

3– अनौपचारिक संचार संगठन के सामाजिक आयाम को मजबूती प्रदान करता है, जिससे कर्मचारियों में संगठन के भीतर व बाहर सामाजिक मेलजोल बढ़ता है।

4– अनौपचारिक संचार संगठन के कर्मचारियों के मध्य प्रतिकूल संवेदनाओं, बातचीत व बैठकों के द्वारा व्यक्तिगत पेरशानियों को दूर कर भावोन्नयन में सहायक होता है।

5– अनौपचारिक संचार कभी–कभी कार्यालयीय माध्यमों से संचार होने से संगटन के वातावरण को कम बोझिल व कार्य में लगने वाले समय की बचत करता है।

6– अनौपचारिक संचार, औपचारिक संचार का पूरक होता है। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें औपचारिक संचार द्वारा प्रसारित करना कठिन होता है, जैसे कर्मचारियों की संवेदनाएं चाहे व्यक्तिगत हों या सामान्य, इस संचार से प्राप्त प्रतिपुष्टि को प्रबन्धन अपनी नीति/क्रियाओं के निर्धारण में प्रयोग करता है।

6.3.4 अनौपचारिक संचार से हानियां

1– अनौपचारिक संचार से अविश्वास, अफवाह, गलत व बनावटी कहानियों को बढ़ावा मिलता है, अतः यथार्थता की कमी से ये कर्मचारियों व अधिकारियों को भ्रमित व दिग्भ्रमित करता है।

2– इस संचार में सन्देश का विरूपीकरण कर दिया जाता है, क्योंकि प्राप्त सन्देश को प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी समझ व ज्ञान से कुछ घटा–बढ़ाकर प्रस्तुत करता है। अतः सन्देश की मौलिकता विभिन्न विचारों के कारण खत्म हो जाती है।

3– अफवाहें, विरूपित सन्देश कर्मचारियों के मध्य भ्रम को बढ़ाते हैं जिससे उनके सम्बन्धों पर भी प्रभाव पड़ता है। कभी–कभी अधिकारी गलत प्रतिपुष्टि से प्रभावित होकर निर्णय ले लेते हैं। तो कभी कर्मचारी इन अफवाहों के आधार पर अपने अधिकारियों से प्रतिकूल व्यवहार करते हैं। यह बात कभी–कभी संगठन के लिए अत्यन्त विस्फोटक स्थिति को जन्म देती है।

4– अनौपचारिक संचार के सम्बन्ध में किसी को भी जिम्मेदार नहीं बताया जा सकता, जबकि औपचारिक संचार में विरूपित सन्देशों व अन्य गलत तथ्यों के सम्बन्ध में सम्बन्धित व्यक्ति ही जिम्मेदार होता है।

6.3.5 अनौपचारिक संचार की सीमायें

1– अनौपचारिक संचार में भिन्न–भिन्न स्तरों पर निहित कारणों से सन्देशों का वास्तविक रूप जान–बूझकर बिगाड़ा जा सकता है।

2– इस प्रकार के संचार में अधीनस्थ कर्मचारी अपने निकटतम् वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा दिये गये आदेशों की अवहेलना कर सकते हैं तथा उच्च प्रबन्धन अथवा सर्वोच्च अधिकारियों से प्रत्यक्ष रूप से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं जिसके कारण संस्था के आपसी सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं।

3– इस संचार में अधीनस्थ अपनी शिकायतों तथा सुझावों का संचार निडरतापूर्वक नहीं कर पाता, क्योंकि उन्हें इस बात का डर रहता है कि उक्त संचार से सम्बन्धित अधिकारी यदि नाराज हो गये तो उनकी नौकरी छूट सकती है अथवा उनका शोषण किया जा सकता है।

6.3.6 अनौपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्वों के विषय में सुझावः

1– उच्चाधिकारियों को चाहिए कि वे अनौपाचारिक संचार में प्राप्त सन्देश तथा सूचना पर तत्काल विश्लेषणात्मक निर्णय लें।

2– उच्चाधिकारियों द्वारा रचनात्मक कार्यों की तत्काल प्रशंसा करनी चाहिए।

3– इस प्रकार के संचार में अधीनस्थों की 'अधिकारों के भय' की भावना को दूर किया जाना चाहिए।

4– संगठन संरचना के अन्तर्गत अनौपचारिक संचार के अलग–अलग अवरोधों को समाप्त किया जाना चाहिए।

5– उच्चाधिकारियों को चाहिए कि वे उदारतापूर्वक अधीनस्थों को अनौपचारिक संचार के लिए प्रेरित करें।

6.37 अनौपचारिक संचार के प्रकार

अंगुरीलता संचार

अनौपचारिक संचार का ही दूसरा रूप अंगूरीलता अथवा अपुष्ट संचार है। सामाजिक मनोविज्ञान के अनुसार मनुष्य की स्वाभाविक प्रकृति सामाजिक होती है। सामान्यतः ऐसा देखा जाता है कि मनुष्य बातचीत के अवसरों को खोना नहीं चाहता। जब किसी संस्था तथा व्यवसाय में कर्मचारी साथ–साथ कार्य करते हैं तो वह धीरे–धीरे आपस में मिलकर अनौपचारिक तरीके से व्यवसाय से सम्बन्धित सन्देशों तथा सूचनाओं का आदान–प्रदान करते हैं। यह संचार कई स्थानों पर किया जाता है, जैसे –क्लबों तथा पार्टियों में, सार्वजनिक तथा सामाजिक कार्यक्रमों में और अवकाश अथवा भोजनावकाश में। इस प्रकार के संचार में एक ओर तो तथ्यपूर्ण तथा सार्थक विषयों पर वार्तालाप होता है, जबकि दूसरी ओर अफवाहें तथा गपशप भी अत्यधिक मात्रा में चलती हैं।

अंगूरीलता की विशेषताएँ

अंगूरीलता संचार की प्रमुख विशषताओं को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

1– अपुष्ट संचार अत्यधिक प्राचीन प्रणाली है तथा वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य में इसका अत्यधिक महत्व है।

2– अपुष्ट सम्प्रेषण आड़ी–तिरछी, क्षैतिज तथा लम्बवत् किसी भी दिशा में हो सकता है।

3– अपुष्ट संचार में सुनी–सुनाई बातें प्रसारित होती हैं।

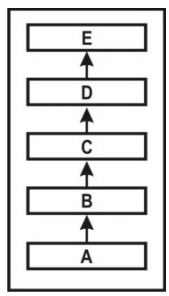
5– अधिक व्यक्तियों के बीच से सन्देश गुजरने के कारण सन्देश अधिक विकृत हो जाता है ।

6– अपुष्ट संचार में मूल्यवान, व्यर्थ, सामान्य तथा गोपनीय सभी प्रकार की सूचनाएं सम्प्रेषित होती हैं।

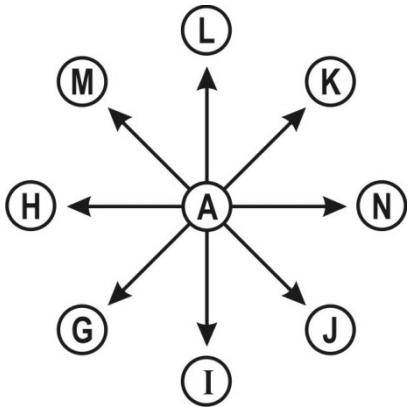
अंगूरीलता संचार की उच्च सक्रियता के कारण

अंगूरीलता संचार की उच्च सक्रियता के प्रमुख कारणों को निम्न प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है–

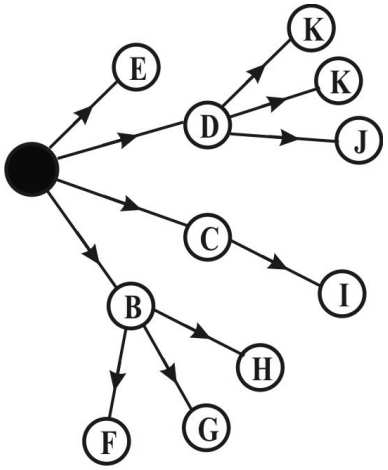
1– अपुष्ट संचार उस समय अधिक सक्रिय होता है जब संगठन में काम करने वाले कर्मचारियों में भावुकता, अन्धविश्वास, अशिक्षा तथा कार्य संस्कृति का अभाव होता है।



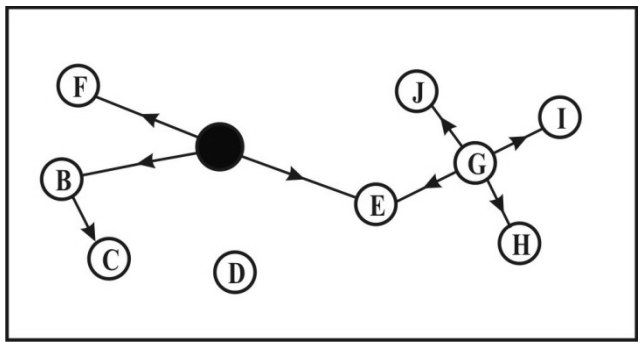
2– जब संरचना जटिल होती है तो समान मानसिकता वाले अधीनस्थ अनौपचारिक समूह का निर्माण करते हैं। इस प्रकार विभिन्न समूह में समान तथा असमान स्तर वाले बहुत से अधीनस्थ भी सम्मिलित हो जाते हैं। उक्त विभिन्न समूह एक–दूसरे से बिना किसी कारण प्रतिस्पर्धा बनाये रखते हैं तथा यह प्रयत्न करते है कि किस प्रकार संरचना के निर्णयों को प्रभावित किया जाये।



3– जब कोई व्यावसायिक संगठन किसी समस्या से गुजरता है तो अनिश्चितता तथा दिशा बोध के न होने के कारण जिन कर्मचारियों की समान मानसिकता होती है, उनके समूहों का निर्माण हो जाता है, जिसे अपुष्ट संचार अथवा अंगूरीलता संचार कहा जाता है।



4– अपुष्ट संचार उस स्थिति में अधिक सक्रिय तथा प्रभावी हो जाता है जब संगठन के उच्चाधिकारी अपने पक्ष के व्यक्तियों का अनौपचारिक समूह (कोटारी) बना लेते हैं।



अपुष्ट संचार अथवा अगुरीलता संचार के प्रकार

कीथ डेविस ने अपुष्ट संचार श्रृंखला को निम्नलिखित चार भागों मे बाँटा है–

1– **एकाकी धारा श्रृंखला**– इसमें एक तीर की तरह एक ही दिशा में संचार होता है। उदाहरण के लिए A कोई सन्देश B से कहता है, B इसी सन्देश को C से कहता है तथा इसी तरह यह क्रिया निरन्तर चलती रहती है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक संचार अपनी इच्छानुसार सन्देश में कुछ न कुछ मिलावट स्वाभाविक रूप से अवश्य करता है।

2– **गपशप श्रृंखला**– गपशप श्रृंखला एक गोल पहिये अथवा चक्र की तरह होती है। इसमें संचार की भूमिका धुरी पर या केन्द्र बिन्दु पर स्थित होती है। सम्प्रेषक अपना संचार गपशप द्वारा एक साथ बहुत से व्यक्तियों से करता है, जो चक्र के किनारों पर स्थित होते हैं।

3– **गुच्छ श्रृंखला**–जिस प्रकार अंगूर के गुच्छे में अंगूर आपस में एक–दूसरे से सम्बद्ध होते हुए एक समूह के रूप में दिखायी देते हैं, ठीक उसी प्रकार इस संचार श्रृंखला में भी संचार अन्य व्यक्तियों को संचार करता है, जिनका सम्बन्ध उससे होता है या जो उस पर विश्वास करते हैं। उपरोक्त श्रोता द्वारा उसे आगे संचार किया जाता है। नेट–वर्किंग की तरह गुच्छ श्रृंखला द्वारा सतत् रूप में संचार को आगे फैलाया जाता है।

4– **सम्भावना श्रृंखला**– इसे Random Chain भी कहा जाता है। इसमें अकस्मात ही संचार द्वारा किसी सोपक सन्देश को व्यक्त करते हैं एवं उसके आगे भी अकस्मात संचार द्वारा फैलाव होता रहता है।

अंगूरीलता या अपुष्ट संचार के गुण– अंगूरीलता संचार के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं–

1–तीव्र प्रसारण– अपुष्ट संचार अत्यन्त तीव्रता से प्रसारित होता है। सभी जानते हैं कि अफवाहें जंगल में आग की तरह फैलती हैं। कर्मचारियों की यह प्रवृत्ति होती है कि जब कोई एक बात जिसे गोपनीय कहा जाता है, उसके प्रति वह अत्यन्त जिज्ञासु होता है और वह इसे प्रथमतः अपने सबसे निकटतम मित्र को बतलाता है और वह मित्र अन्य को। इस प्रकार कुछ ही क्षणों में वह बात चारों तरफ फैल जाती है। एक प्रबन्धक संचार को सुनियोजित तरीके से "Just between you and me" रिमार्क द्वारा संचारित करता है।

2–प्रतिपुष्टि मूल्य –अपुष्ट संचार की सहायता से प्रबन्धकों को अपने संगठन की नीतियों, निर्णयों इत्यादि के सम्बन्ध में प्रतिपुष्टि प्राप्त होती रहती है। औपचारिक संचार की अपेक्षा अनौपचारिक संचार की सहायता से प्रतिपुष्टि अधिक तीव्रतापूर्वक प्राप्त होती है। अपुष्ट संचार से एक प्रबन्धक को अपने संगठन की दिशा के बारे में पता चलता है।

3–अन्य माध्यमों का सहयोगी– अपुष्ट संचार, संचार का पूरक अथवा समान्तर रूप है। अतः यह औपचारिक संचार के लिए सहयोगी का कार्य करता है।

4–संगठनात्मक शक्ति का विकास– अपुष्ट संचार संगठन के कर्मचारियों को असीम मनोवैज्ञानिक सन्तुष्टि व शक्ति प्रदान करता है। यह उन्हें एक दूसरे के करीब लाता है। यह एक संगठन के कर्मचारियों को असीम मनोवैज्ञानिक सन्तुष्टि व शक्ति प्रदान करता है। यह उन्हें एक–दूसरे के करीब लाता है। यह एक संगठन की सम्पूर्णता को समाजिक अस्तित्व के रूप में बनाये रखती है।

अंगूरीलता या अपुष्ट संचार के दोष–

अंगूरीलता संचार के प्रमुख दोष निम्न हैं–

1– मौखिक रूप से प्रेषित अपुष्ट सन्देश सदैव गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया जाता है और यह हमेशा भ्रमात्मक होा है, अतः इन पर निर्भर नहीं रहा जा सकता।

2– अपुष्ट संचार सदैव सम्पूर्ण सन्देश को समाहित नहीं करता। कानाफूसी के रूप सन्देश, सम्प्रेषणग्राही, को सन्देश का समग्र सन्देश देने में असमर्थ रहता है ।

3– अपुष्ट संचार, सन्देश को विरूपित कर देता है और इससे एक संगठन की छवि को क्षति पहुँचती है।

4– अपुष्ट संचार से संगठन की नीतियों, निष्कर्षों की गोपनीयता भंग होती है। संगठन की छवि के लिए भी हानिकारक है। और प्रबन्धक की योजना को चौपट भी कर देती है।

अपुष्ट संचार के प्रभावी प्रयोग–

अपुष्ट संचार विकृत व अपूर्ण सूचनाओं का प्रवाह भाग है, जो संगठन में कई प्रकार की समस्याओं को जन्म देता है। इसके प्रभावी प्रयोग के लिए निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिए–

1– एक प्रबन्धक को जहाँ तक सम्भव हो, खुली द्वार नीति का प्रयोग करना चाहिए। यह नीति उसके संगठन के लिए हितकारी होती है।

2– एक प्रबन्धक को यह स्वीकार करना चाहिए कि अपुष्ट संचार मानवीय संचार का एक हिस्सा है। उसे यह कोशिश करनी चाहिए कि संगठन के लिए हानिकारक अफवाहें रुकें। साथ ही साथ उसे अपुष्ट संचार की सत्यता को जानना व समझना चाहिए।

3– अपुष्ट सम्प्रेषण किसी नये उत्पाद को बाजार में लाने के लिए एक प्रभावी संचार यन्त्र की तरह प्रयोग किया जाना

चाहिए, क्योंकि इससे नये उत्पाद की सूचना तीव्र गति से चारों ओर प्रसारित होगी।

4– एक प्रबन्धक को संगठन के नेताओं के विश्वास को जीतकर अपने कर्मियों तक न पहुँचें।

5– अपुष्ट संचार का प्रयोग केवल प्रतिपुष्टि के लिए किया जाना चाहिए। इसे सदैव एक यन्त्र के रूप में प्रयुक्त करना संगठन के लिए हानिकारक होगा।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. औपचारिक संचार का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. अनौपचारिक संचार के बारे में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

6.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार के औपचारिक एवं अनौपाचारिक प्रकारों का वर्णन किया गया है। जिसमें बताया गया कि औपचारिक संचार एक प्रबन्धन द्वारा किया गया नेटवर्क होता है। जब हम किसी कार्य को विधिवत् सम्पन्न करने की बात करते हैं, इसका तात्पर्य यह होता है कि वह संगठन जिसके द्वारा नेटवर्क तैयार किया गया है उस प्रकार से कार्य होने की बात करता है। औपचारिक संचार क्षैतिज या उर्ध्वाकार तरीके से हो सकता है। और उर्ध्वाकार संचार का प्रभाव अवरोही तथा अरोही होता है। प्रस्तुत इकाई में ही औपचारिक संचार के माध्यम, इससे लाभ एवं हानियाँ सीमाऐं तथा इसको प्रभावी बनाने वाले तथ्यों के बारे में प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में ऊर्ध्वाकार संचार क दो प्रकारों, अवरोही संचार एवं आरोही संचार के बारे में भी बताया गया है। क्षैतिज संचार के बारे में वर्णन करते समय इसके माध्यमों, उद्देश्यों के बारे में प्रकाश डाला गया है।

अनौपचारिक संचार पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि इस प्रकार का संचार अवैधानिक तरीके से किया जाता है इसे अफवाह की संज्ञा दी जाती है क्योंकि यह किसी भी दिशा में प्रसारित हो सकता है। कई संगठन इसे औपचारिक के विकल्प के रूप में प्रयोग करते है इस संचार के निश्चित नियम, दिशा निर्देश नहीं होते हैं इसीलिए यह किसी भी दिशा में, अर्थात क्षैतिज, ऊर्ध्वाकार अथवा आरेखी तेजी से प्रसारित होते हैं। प्रस्तुत इकाई में ही अनौचारिक के उद्देश्य, माध्यम, लाभ, हानियाँ, सीमायें एवं अनौपचारिक संचार को प्रभावी बनाने वाले तत्वों के बारे में वृहद चर्चा की गयी है।

इकाई के अंत में अनौपचारिक संचार के विभिन्न प्रकारों का भी वर्णन किया गया है। आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि आप लोग प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार के बारे में वृहद ज्ञान अर्जित कर सकेगें।

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

औपचारिक संचार– औपचारिक संचार एक प्रबन्धन द्वारा तैयार किया गया नेटवर्क होता है। जब हम किसी कार्य के लिए विधिवत् होने की बात करते है, इसका तात्पर्य किसी संगठन के प्रबन्धन ने जो नटवर्क तैयार किया है उसी प्रक्रिया से कार्य होने की बात करते है। औपचारिक संचार क्षैतिज या ऊर्ध्वाकार तरीके से हो सकता है और ऊर्ध्वाकार संचार का प्रवाह अवरोही तथा आरोही होता है।

अनौपचारिक संचार– कोई भी संगठन संचार के मात्र औपचारिक माध्यम का प्रयोग ही नहीं करता, बल्कि औपचारिक माध्यम के साथ उतना ही माध्यम का प्रयोग करता है जिसे औपचारिक संचार कहते है। क्योंकि इस संचार को अवैधानिक तरीके से किया जाता है, इसीलिए इसे अफवाह की संज्ञा दी जाती है, क्योंकि यह किसी भी दिशा में प्रसारित हो सकता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– औपचारिक संचार से आप क्या समझते हैं?

2– औपचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।

3– औपचारिक संचार के माध्यम एवं इससे होने वाले लाभों का वर्णन कीजिए।

4– औपचारिक संचार से होने वाली हानियों एवं सीमाओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

5– औपचारिक संचार के प्रकारों पर प्रकाश डालिये।

6– अनौपचारिक संचार से आप क्या समझते हैं?

7– अनौपचारिक संचार के प्रमुख उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।

8– अनौपचारिक संचार के माध्यम एवं इससे होने वाले लाभों का वर्णन कीजिए।

9– अनौपचारिक संचार से होने वाली हानियों एवं सीमाओं पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

10– अनौपचारिक संचार के प्रकारों पर प्रकाश डालिये।

विस्तृत

1– अनौपचारिक संचार का अर्थ स्पष्ट करते हुए इससे होने वाले लाभों एवं होने वाली हानियों पर प्रकाश डालिये।

2– अनौचारिक संचार का उद्देश्य लिखते हुए इसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।

3– औपचारिक संचार से आप क्या समझते है, इसको प्रभावी बनाने वाले तत्वों की विवेचना कीजिए।

4– औपचरिक संचार के प्रमुख माध्यमों का वर्णन करते हुए इसके प्रकारों पर प्रकाश उालिये।

5– औपचारिक सांसर से होने वाले लाभों एवं इसकी सीमाओं की विवेचना कीजिए।

6.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची–

1– मिश्र, डा० विनोद एवं शुक्ल, डा० नरेन्द्र व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा, वर्ष 2014–15, पेज–95– 109

2– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा, वर्ष–2013

खण्ड–द्वितीय– संचार के प्रकार

इकाई –7, मौखिक एवं लिखित संचार

7.0 इकाई का उद्देश्य

7.1 परिचय

7.2 संचार के माध्यम

7.3 शाब्दिक संचार

7.4 मौखिक संचार

7.4.1 मौखिक संचार के माध्यम

7.4.2 मौखिक संचार के लाभ या गुण

7.4.3 मौखिक संचार की सीमायें या दोष

7.4.4 प्रभावी मौखिक संचार के आवश्यक तत्व

7.5 लिखित संचार

7.5.1 लिखित संचार के लाभ अथवा गुण

7.5.2 लिखित संचार की सीमायें।

7.5.3 प्रभावी लिखित संचार के आवश्यक तत्व

7.6 सार–संक्षेप

7.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

7.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

7.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य संचार के माध्यम के लिखित एवं मौखिक प्रकारों के बारे में आप लोगों को अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई में मौखिक एवं लिखित संचार के माध्यमों के बारें में चर्चा प्रस्तुत की गयी है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– संचार के माध्यमों के बारे में जान सकेगें।

2– शाब्दिक संचार के बारे में लिख सकेगें।

3– मौखिक संचार पर प्रकाश डाल सकगें।

4– मौखिक संचार के लाभों की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

5– मौखिक संचार के दोषों के बारे में लिख सकेगें।

6– मौखिक संचार के आवश्यक तत्वों के बारे में अवगत हो सकेगें।

7– लिखित संचार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

8– लिखित संचार के लाभों को जान पायेगें।

9– लिखित संचार की सीमाओं का वर्णन कर सकेगें।

10– लिखित संचार के आवश्यक तत्वों कर प्रकाश डाल सकेगें।

7.1 परिचय

प्रिय ज्ञानर्थियों प्रस्तुत इकाई में संचार के दो माध्यमों की चर्चा प्रस्तुत की गयी है, जिसमें मौखिक एवं लिखित संचारों के बारे में बताया गया है। वास्तव में संचार के माध्यमों के बारे में भी इस इकाई में संक्षिप्त रूप से वर्णन किया गया है। मौखिक संचार के बारे में लिखा गया है कि जब कोई संवाद एवं सूचना मौखिक उच्चारण कर प्रेषित की जाय तो उसे मौखिक संचार कहते हैं। इसी इकाई में मौखिक संचार के विभिन्न माध्यमों की भी चर्चा की गयी है। मौखिक संचार के लाभों या गुणों के बारे में तथा सीमाओं एवं आवश्यक तत्वों के बारे में भी वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

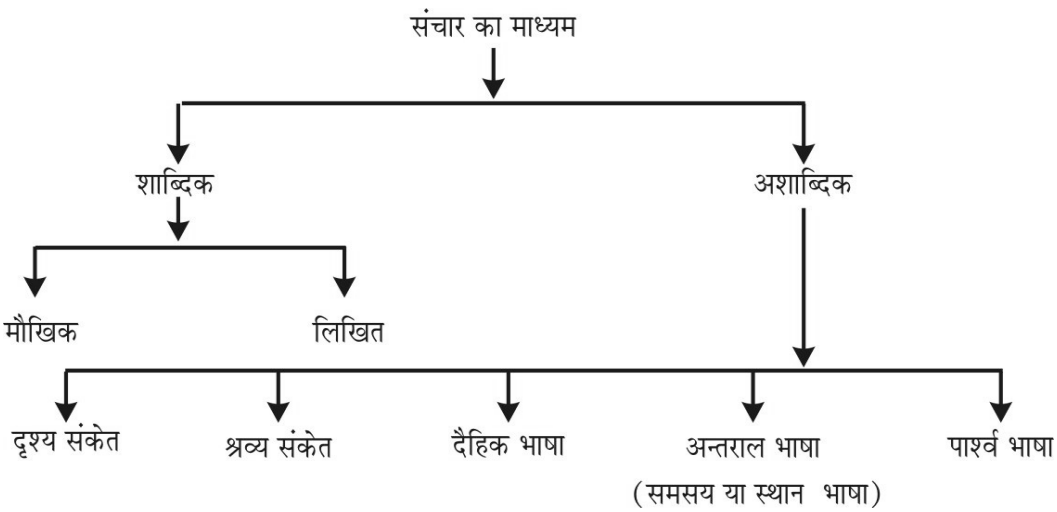
प्रस्तुत इकाई में लिखित संचार के बारे में प्रकाश डालते लिखा गया है कि, जब सन्देश का आदान–प्रदान लिखित रूप में होता है, तो उसको लिखित संचार कहते हैं। लिखित संचार में, पत्र टेलीग्राम परिपत्र, ज्ञापन, प्रतिवेदन, फार्म, सूक्ष्म सूचना, प्रश्नावली इत्यादि सम्मिलित किये जाते हैं। इसी इकाई में लिखित संचार के लाभों, सीमाओं एवं आवश्यक तत्वों के बारे में भी जानकारी प्रदान की गई है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान की वृद्धि में सहायक होती तथा आप लोग मौखिक एवं लिखित संचार के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

7.2 संचार के माध्यम

संचार माध्यमों का विकास मानवीय सभ्यता के विकासक्रम से सम्बन्धित है। जैसे–जैसे सभ्यता एवं तकनीकी ज्ञान का विकास होता गया, संचार के नवीन माध्यम प्रयोग में आए। यदि हम संचार माध्यम के विकास क्रम का अध्ययन करें तो पाते हैं कि मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल मे ंविचारों का आदान–प्रदान विभिन्न संकेतों, ध्वनि, इशारों या मुद्राओं (भावभंगिमा) के द्वारा ही किया जाता था। इसके बाद चित्रलिपि का प्रयोग किया गया जिसमें सूक्ष्म भाव और गतिविधियों का प्रदर्शन किया जा सकता था।

इसी से कालान्तर में शब्द भाषा का विकास हुआ एवं सन्देशों के लिए मौखिक एवं लिखित शाब्दिक भाषा का प्रयोग किया जाने लगा एवं वर्तमान युग में तकनीकी विकास के क्रम में इलेक्ट्रॉनिक एवं डिजिटल संचार माध्यम प्रयोग में आये। मनोवैज्ञानिकों, भाषाविदों, मानव स्वभाव के विद्वानों एवं प्रबन्ध विज्ञान के अनुसन्धानकर्ताओं के द्वारा संचार के अनेक नवीन माध्यम प्रयोग में लाए गए।



7.3 शाब्दिक संचार

मानव की सबसे बड़ी विशेषता उसकी शाब्दिक भाषा है। इसीलिए प्राणियों में मानव को श्रेष्ठतम स्थान प्राप्त है, क्योंकि अन्य प्राणी केवल ध्वनि एवं इशारे पर ही आश्रित है। शब्द भाषा से अभिव्यक्ति सरल, सुगम एवं बोधगम्य हो जाती है। शाब्दिक संचार को दो वर्गों में रखा गया है–मौखिक एवं लिखित।

7.4 मौखिक संचार

जब कोई संवाद एवं सूचना मौखिक उच्चारण कर प्रेषित की जाए तो इसे मौखिक संचार कहते हैं। इसमें दो पक्ष होते हैं–प्रेषक एवं संदेश प्राप्तकर्ता। भाषा प्रथम रूप में मौखिक होती है। मौखिक संचार ही वह सूत्र है जो मानवीय सम्बन्धों की स्थापना करता है, घर, सर्वाजनिक स्थान अथवा संगठन इन सभी में मौखिक संचार ही व्यक्तियों को आपस में एक सूत्र में जोड़ते हैं। संगठन में अनेक औपचारिक एवं अनौपचारिक संचार का माध्यम मौखिक ही होता है।

7.4.1 मौखिक संचार के माध्यम

मौखिक संचार में निम्नलिखित माध्यम उपयोग में लाये जाते हैं–

1– आमने–सामने वार्तालाप

2– दूरभाषा पर वार्तालाप

3– रेडियो प्रसारण

4– टेप रिकॉर्डर

5– साक्षात्कार

6– सामूहिक संवाद

7– सभाएं

8– सम्मेलन

9– विचारगोष्ठियां

10– भाषण

11– घोषणाएं

7.4.2 मौखिक संचार के लाभ या गुण

मौखिक संचार के लाभों अथवा गुणों का विवेचन निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

1– **शीघ्र संचार**– संचार का शीघ्रतम माध्यम मौखिक माध्यम है। मौखिक संचार से धन एवं समय दोनों की बचत होती है, क्योंकि सन्देश मौखिक उच्चारण के साथ प्रेषित हो जाता है।

2– **प्रभावपूर्ण** – मौखिक संचार प्रभावपूर्ण होता है। उच्चारण के ढंग, अभिव्यक्ति की भाव–भंगिमा एवं हाव–भाव द्वारा सन्देशों को प्रभावशाली ढंग से रखा जा सकता है। संदेश की विषय–सामग्री को चित्र एवं अभिनय द्वारा भी प्रभावी बनाया जा सकता है।

3– **अविलम्ब प्रतिपुष्टि**–मौखिक संचार में सन्देश प्रेषक तत्काल पुष्टि कर सकता है कि प्राप्तकर्ता ने सन्देश का वास्तविक अर्थ समझा लिया है एवं प्राप्तकर्ता की क्या प्रतिक्रिया है। यदि सन्देश के सन्दर्भ में कोई भ्रम है, तो उसका निवारण भी उसी समय हो जाता है।

4– **गोपनीय**–मौखिक सन्देश गोपनीय होते हैं। विश्वासपात्र लोगों से महत्वपूर्ण संचार अधिकांशः मौखिक ही होते हैं। मौखिक संचार में अशुद्धता, अनर्थ तथा तोड़–मरोड़ की सम्भावनाएं समाप्त हो जाती हैं।

5– **नियन्त्रण एवं प्रेरणा में अधिक प्रभावी**– मौखिक संचार सामूहिक विचार–विनियम के द्वारा दिया जाता है, जिससे कर्मचारियों को प्रेरणा प्राप्त होती है। मौखिक संचार कार्य निष्पादन की गति एवं नियन्त्रण में प्रभावी होता है।

6– **आपातकाल में अधिक उपयोगी**– असामान्य स्थितियों में मौखिक संचार ही अधिक उपयोग होता है। आकस्मिक परिस्थितियों में सन्देश की शुद्धता संचार के द्वारा ही सबसे शीघ्र एवं शुद्ध संचार सम्भव होता है। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों के मनोबल को ऊंचा उठाने में मौखिक संचार प्रेरणादायक होता है।

7.4.3 मौखिक संचार की सीमायें या दोष

मौखिक संचार की प्रमुख सीमाएं अथवा दोष निम्न हैं–

1– **वैज्ञानिक मान्यता का अभाव**– मौखिक संचार भविष्य में विवाद की दशा अथवा उत्तरदायित्व निर्धारण के समय प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। अतः मौखिक संचार का कोई स्थायी महत्व नहीं होता और इसकी कोई वैधानिक मान्यता भी नहीं होती। मौखिक संचार दीर्घकाल के लिए उपयोगी नहीं होता क्योंकि इसको लम्बे समय तक स्मृति में नहीं रखा जा सकता।

2– **सीमित क्षेत्र**– मौखिक संचार का क्षेत्र काफी सीमित होता है। यदि संचार करने वाले तथा पाने वाले के बीच प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं है, तो मौखिक संचार अनुपयुक्त होता है। दूरस्थ व्यक्तियों की दशा में जहां संचार के यान्त्रिक साधन नहीं हैं, मौखिक संचार सम्भव नहीं हो पाता।

3– **विस्तृत सन्देशों की दशा में अनुपयुक्त**–जब मौखिक सन्देश विस्तृत एवं लम्बा हो तो सन्देश प्राप्तकर्ता को सन्देश का अर्थ समझने में कठिनाई होती है एवं वह बार–बार स्पष्टीकरण चाहता है। विस्तृत मौखिक संचार में महत्वपूर्ण अंशों मे भूल जाने की सम्भावना बनी रहती है।

4– **विपरीत अर्थ**– मौखिक संचार में यदि सन्देश प्राप्तकर्ता उच्चारण को सही नहीं समझ पाया तो उसको अन्य अर्थ में भी समझ सकता है। मौखिक संचार के यान्त्रिक साधनों में यह सम्भावना और भी बढ़ जाती हैं कभी–कभी मौखिक संचार समय बरबाद करने वाला होता है। सभाएं, सम्मेलन, विचारगोष्ठी, आदि कोई तार्किक निष्कर्ष पर नहीं पहुंचती जबकि इनके आयोजन में काफी समय एवं धन लगता है।

7.4.4 प्रभावी मौखिक संचार के आवश्यक तत्व

यद्यपि मौखिक संचार की कई सीमाएं हैं, किन्तु संगठन में संचार का प्रारम्भिक व महत्वपूर्ण माध्यम मौखिक संचार ही है। प्रभावी मौखिक संचार के **फ्रांसिस जे, बरजिन** ने सात तत्व बताए हैं जिनको Seven C' के नाम से पुकारते हैं। जो इस प्रकार हैं– स्पष्ट, पूर्ण, संक्षिप्त, शुद्ध, सरल, वास्तविक, सौहार्दपूर्ण। संक्षेप में प्रभावी संचार के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं–

1– **स्पष्ट उच्चारण एवं उचित शब्द चयन**– मौखिक संचार में वक्ता का उच्चारण स्पष्ट होना चाहिए एवं सन्देश के लिए उचित शब्द एवं शुद्ध वाक्य का प्रयोग किया जाना चाहिए।

2– **स्वाभाविक आवाज एवं तार्किक क्रम**– मौखिक संचार को प्रभावी ढंग से व्यक्त करने के लिए वक्ता को सदैव अपनी स्वाभाविक आवाज का प्रयोग करना चाहिए। वक्ता अपने मौखिक संचार को प्रभावी ढंग तभी प्रदान कर सकता है जबकि सन्देश के विचारों एवं सूचनाओं को व्यवस्थित क्रम में व्यक्त किया जाए।

3– **संक्षिप्तता**– मौखिक संचार के प्रभावशाली अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक है कि सन्देश को संक्षिप्त रूप में व्यक्त किया जाए। अनावश्यक शब्दों का प्रयोग न किया जाए एवं दोहरे वाक्यांश एवं तकियाकलाम जैसे मेरे कहने का तात्पर्य अर्थात् क्या आप समझ गए, जैसा कि मैं कहना चाहता हूँ' आदि का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

4– **यथार्थ**–मौखिक संचार को अधिक प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए आवश्यक है कि यथार्थ अभिव्यक्ति की जाए। जैसे 'कल कार्यालय जल्दी जाएं' के स्थान पर 'कल 8 बजे प्रातः कार्यालय आए' का प्रयोग किया जाना चाहिए।

5– **विश्वासपूर्ण**– मौखिक सन्देश को पूर्व सोच–समझकर नियोजित रूप में उद्देश्यों को ध्यान में रखकर व्यक्त करना चाहिए। मौखिक

सन्देश जितना विश्वासपूर्ण व निश्चयात्मक होगा उतना ही अधिक प्रभावपूर्ण होगा।

अन्य तत्व– मौखिक संचार को प्रभावशाली बनाने के लिए आवश्यक है कि संचार जल्दबाजी में नहीं किया जाना चाहिए। वक्ता को पूर्ण रूप से यह मानकर संचार करना चाहिए कि प्राप्तकर्ता को सन्देश का कोई पूर्व ज्ञान नहीं है एवं प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रियाओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। यदि उसको सन्देश के सन्दर्भ में कोई भ्रम हो तो उसको भ्रम दूर करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।

7.5 लिखित संचार

जन सन्देश का आदान–प्रदान लिखित रूप में होता है, तो उसको लिखित संचार कहते हैं। विस्तृत सन्देशों अथवा स्थायी तथा भविष्य में सन्दर्भ के रूप में रखे जाने वाले सन्देशों का लिखित संचार किया जाता है। जब सदेशों को एक साथ विभिन्न स्थानों पर अनेक व्यक्तियों को संचारित करना हो तब लिखित संचार ही उपयोगी होता है।

कहा जाता है कि 'स्वाध्याय मनुष्य को पूर्ण व्यक्ति बनाता है जबकि लेखन व्यक्ति को यथार्थ स्वरूप प्रदान करता है।' जब सन्देशों को निश्चित अर्थ प्रदान करना हो तो लिखित संचार का ही प्रयोग किया जाना चाहिए। जिस प्रकार मौखिक संचार के अभाव में सामाजिक जीवन व्यावहारिक नहीं है, उसी प्रकार किसी व्यवसाय अथवा उसके संगठन में लिखित संचार के अभाव में उसका संचालन सम्भव नहीं है। संगठन के विभिन्न व्यक्तियों एवं समूह के मध्य कर्तव्यों, उत्तरदायित्वों एवं अधिकार सीमाओं का निर्धारण लिखित संचार से निश्चित किया जाता है।

लिखित संचार में पत्र, टेलीग्राम, परिपत्र, ज्ञापन, प्रतिवेदन, फार्म, सूक्ष्म सूचना, प्रश्नावली, नियमावली, रेखाचित्र, चित्र, चार्ट, फैक्स,

ई–मेल, काम्पैक्ट डिस्क, फ्लॉफी एवं लिखित शब्द शामिल होते हैं। लिखित संचार स्पष्ट पूर्ण, शुद्ध एवं बोधगम्य होना चाहिए।

7.5.1 लिखित संचार के लाभ अथवा गुण

लिखित संचार के निम्नलिखित लाभ अथवा गुण हैं:–

1– **विस्तृत पहुंच**– लिखित संचार का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है, लिखित संचार हेतु पक्षकारों के बीच सीधा एवं प्रत्यक्ष सम्पर्क आवश्यक नहीं है। दूरस्थ क्षेत्रों में जहां संचार के आधुनिक साधन नहीं हैं, लिखित संचार आसानी से पहुंच जाता है। एक साथ लगभग एक ही समय में अनेक व्यक्तियों को सुगमता से लिखित संचार किया जा सकता है।

2– **वैधानिक एवं स्थायी रिकॉर्ड**– लिखित संचार का साक्ष्य वैधानिक रूप से स्वीकृत किया जाता है। लिखित संचार व्यावसायिक संगठन में स्थायी रिकॉर्ड के रूप में रखा जाता है। जिसको भविष्य में सन्दर्भ के लिए प्रयोग किया जाता है, नवीन नीतियां एवं अनेक व्यावसायिक निर्णय सुविधा से लिए जा सकते हैं।

3– **उत्तरदायित्व निर्धारण में सहायक**–लिखित संचार उत्तरदायित्व निर्धारण में सहायता करता है। लिखित संचार से अधिकारी एवं अधीनस्थ कर्मचारी अपने दायित्वों को दूसरों के कन्धों पर नहीं डाल सकते। लिखित संचार का क्रियान्वयन होने पर उत्तरदायी व्यक्ति की पहचान आसानी से की जा सकती है क्योंकि इसमें परिवर्तन सम्भव नहीं होता है।

4– **निश्चित एवं सही**–लिखित संचार में सन्देश पूर्णतः स्प्ष्ट, निश्चत तथा सही होता है। प्रत्येक व्यक्ति उसे आसानी से समझ सकता है और उसी के अनुसार कार्य करता है। जो सन्देश विस्तृत एवं जटिल होते हैं तथा जिन्हें याद रखना कठिन होता है, ऐसे

सन्देशों को क्रमबद्ध ढंग से लिखित रूप में निश्चित एवं सही अर्थों में सुगमता से प्रस्तुत किया जा सकता है।

5– **एकरूपता**– लिखित संचार से संस्था की नीतियां एवं प्रक्रियाओं में एकरूपता आती है। लिखित संचार के द्वारा ही संगठन के क्रिया–कलापों के संचालन के लिए एकरूप मार्गदर्शक सिद्धान्तों का प्रसार किया जा सकता है। सेवा शर्तों तथा व्यावसायिक नीतियों में एकरूपता लिखित संचार द्वारा ही सम्भव है। प्रभावी लिखित संचार संस्था की ख्याति में वृद्धि करता है।

6– **क्रियान्वयन में सुविधा**– लिखित संचार में सन्देश प्रापक को सन्देश पर विचार करने तथा विश्लेषण करने का पर्याप्त समय एवं अवसर रहता है जिससे क्रियान्वयन की सही प्रक्रिया का निर्धारण किया जा सके।

7.5.2 लिखित संचार की सीमायें

लिखित संचार की सीमाओं को निम्न प्रकार से निरूपित किया जा सकता है–

1– **महंगी प्रक्रिया**– लिखित संचार एक खर्चीली पद्धति है। विचारों एवं सन्देशों को व्यवस्थित रूप से सोचने, डिक्टेशन देने, टाइपिंग करने, पत्र प्रेषण रजिस्टर में अंकित करने एवं प्रेषण करने में अनेक लोगों का श्रम एवं समय लगता है। इसके अतिरिक्त भविष्य में सन्दर्भ हेतु रिकॉर्ड रखने की व्यवस्था भी करनी पड़ती है। यदि लिखित संचार की सम्पूर्ण प्रक्रिया का अवलोकन करें तो यह एक अत्यन्त मंहगी प्रक्रिया है।

2– **समय लगाने वाली प्रक्रिया**– लिखित संचार अनावश्यक समय लगाने वाली प्रक्रिया है, क्योंकि सन्देश प्रेषण में अनेक औपचारिकताओं की पूर्ति करने में समय लगता है। इसके अतिरिक्त सन्देश प्राप्तकर्ता को अपनी प्रतिक्रिया भेजने में काफी समय लगाना पड़ता है। यदि सन्देश के सन्दर्भ में कोई

स्पष्टीकरण आवश्यक है तो और भी अधिक समय लग जाताा है। इस प्रकार लिखित संचार अत्यधिक समय में पूरी होने वाली प्रक्रिया है।

3– **गोपनीय नहीं**–लिखित संचार में अनेक व्यक्तियों का योगदान होता है। अतः सन्देश की गोपनीय बनाए रखना एक जटिल कार्य है। आधुनिक प्रतिस्पर्द्धा के युग में गोपनीयता भंग होने से व्यावसायिक प्रगति पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4– **व्याख्या की कठिनाई**– लिखित संचार में प्रयुक्त शब्दों की अलग–अलग व्यक्तियों द्वारा भिन्न–भिन्न व्याख्या की जा सकती है जिससे संचार का अर्थ परिवर्तित हो सकता है। इससे अधीनस्थों में कार्यों में टालमटोल एवं स्थगित रखने में प्रवृत्ति बढ़ती है।

7.5.3 प्रभावी लिखित संचार के आवश्यक तत्व

व्यावसायिक संगठन में अधिकांश औपचारिक संचार लिखित होते है। आधुनिक सामाजिक परिवेश में किसी भी व्यावसायिक संगठन के संचालन में लिखित संचार रीढ़ की हड्डी है। यद्यपि लिखित संचार की कुछ सीमाएं हैं, आज भी व्यावसायिक कार्याधिकारियों का आधा समय लिखित संचार में ही व्यतीत होता है। फिर भी लिखित संचार के महत्व को कम नहीं किया जा सकता है। वर्तमान में सूचना तकनीक ने काफी प्रगति की है। लेकिन लिखित संचार आज भी व्यावसायिक संगठन के लिए अपरिहार्य है। प्रभावी लिखित संचार के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं–

1– **सामान्य एवं सकारात्मक भाषा**– लिखित संचार की भाषा सरल एवं सकारात्मक होनी चाहिए। जटिल एवं कठिन भाषा के प्रयोग से बचना चाहिए। शब्द चयन, वाक्य–विन्यास, व्याकरण आदि में सम्बन्धित भाषा के नियमों को ध्यान में रखना चाहिए, क्योंकि लिखित संचार भविष्य के सन्दर्भ होते हैं।

2– **स्पष्ट एवं संक्षिप्त**–लिखित संचार स्पष्ट एवं संक्षिप्त होने चाहिए। सन्दर्भ विषय–वस्तु तथा उद्देश्यों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होना चाहिए। लिखित संचार में विचार एवं उनकी व्याख्या पूर्ण रूप से स्पष्ट होनी चाहिए। लिखित संचार में अनेकार्थी तथा अनावश्यक सजावटी भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

3– **मुख्य बिन्दुओं पर उचित ध्यान**– लिखित संचार के सभी सम्बन्धित तथ्य एवं अंक ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए एवं सभी मुख्य बिन्दुओं को सुव्यवस्थित क्रम से इस प्रकार लिखना चाहिए कि उनका यथोचित प्रदर्शन हो सके।

4– **बोधगम्य**–लिखित संचार का सार उसका बोधगम्य होना है। भाषा तथा तथ्य विचार अथवा सन्देश इस ढंग से लिखित होने चाहिए कि सन्देश प्राप्तकर्ता प्रथम दृष्टि में ही उसके अर्थ को आसानी से समझ सके। शब्दों एवं वाक्यों का लेखन एवं विश्लेषण इस प्रकार किया जाए कि उसकी विवेचना सुबोध हो।

5– **शिष्टता**–लिखित संचार व्यावसायिक संरचना के निर्माण के मूल भाग होते हैं। व्यावसायिक संगठन में परस्पर मैत्रीपूर्ण सौहार्द एवं समन्वय स्थापित करने में लिखित संचार की भूमिका सबसे प्रभावी होती ह। अतः इनका गठन एवं रचना शिष्ट भाषा में की जानी चाहिए, ताकि संगठन में अनावश्यक विवाद न उत्पन्न हो सके।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. शाब्दिक संचार का अर्थ लिखिए।

.....

.....

2. मौखिक संचार का अर्थ लिखिए।

7.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में मौखिक एवं लिखित संचार के बारे में प्रकाश डाला गया जिसमें बताया गया कि संचार माध्यमों का विकास वास्तव में मानवीय सभ्यता के विकासक्रम से सम्बन्धित है। जैसे–जैसे

सभ्यता–तकनीकी ज्ञान का विकास होता गया वैसे–वैसे संचार के नये माध्यम प्रयोग में लिये जाने लगे। वास्तव में मौखिक संचार का तात्पर्य, जब कोई संवाद या सूचना मौखिक उच्चारिक कर प्रेषित की जाती है तो इसे मौखिक संचार कहते है। इसी इकाई में मौखिक संचार के माध्यमों जैसे– रेडियो, टेपरिकार्डर, साक्षात्कार, सामूहिक संवाद, सभायें, सम्मेलन इत्यादि के बारे में भी प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में मौखिक संचार से होने वाले लाभ, दोष व सीमायें तथा इसके आवश्यक तत्वों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

लिखित संचार के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि जब सन्देश का आदान प्रदान लिखित रूप में होता है तो इसे लिखित संचार कहते हैं। लिखित संचार से होने वाले लाभों इसकी सीमाओं तथा इसके आवश्यक तत्वों की विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोतर वृद्धि करायेंगी। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग मौखिक एवं लिखित संचार के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर भविष्य में होने वाले संचारों में अंतर कर सकेगें।

7.7 पारिभाषिक शब्दावली

मौखिक संचार– जब कोई संवाद एवं सूचना मौखिक रूप से उच्चारित कर प्रेषित की जाती है तो इसे मौखिक संचार कहते है। इसके दो पक्ष होते है जिसमें प्रथम प्रेषक होता है तथा दूसरा संदेश प्राप्तकर्ता होता है।

लिखित संचार– जब संदेश का आदान–प्रदान लिखित रूप में होता है तो इस प्रकार के संचार को लिखित संचार कहते हैं। वास्तव में, लिखित संचार भविष्य के संदर्भ में सुरक्षित रखे जा सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– शाब्दिक संचार के आप क्या सकते है?

2– मौखिक संचार पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

3– मौखिक संचार से होने वाले लाभों की व्याख्या कीजिए।

4– मौखिक संचार के माध्यमों का वर्णन कीजिए।

5– मौखिक संचार के आवश्यक तत्वों की विवेचना कीजिए।

6– लिखित संचार से आप क्या समझते है?

7– लिखित संचार के गुणों पर प्रकाश डालिये।

8– लिखित संचार की सीमाओं का वर्णन कीजिए।

9– लिखित संचार के आवश्यक तत्वों की विवेचना कीजिए।

विस्तृत

1– मौखिक संचार का अर्थ स्पष्ट करते हुए, इसके गुण दोषों की विवेचना कीजिए।

2– मौखिक संचार के माध्यमों पर प्रकाश डालते हुए इसके आवश्यक तत्वों का वर्णन कीजिए।

3– लिखित संचार से आप क्या समझते है? इसके गुण दोषों की विवेचना कीजिए।

4– लिखित संचार का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके आवश्यक तत्वों पर प्रकाश डालिये।

7.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मिश्र, डा० विनोद एवं शुक्ल, डा० नरेन्द्र व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.बी.पी. डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा वर्ष 2014–15, पेज–16–20

2– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा वर्ष–2013, पेज–58–61

3– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005, पेज–656–659

टिप्पणी

खण्ड–द्वितीय– संचार के प्रकार

इकाई –8, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार

8.0 इकाई का उद्देश्य

8.1 परिचय

8.2 अशाब्दिक संचार

8.3 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार

8.3.1 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार के गुण

8.3.2 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार की सीमायें

8.4 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार

8.4.2 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार के गुण

8.4.3 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार की सीमाएं

8.5 दैहिक भाषा संचार

8.5.1 दैहिक भाषा संचार के लाभ

8.5.2 दैहिक भाषा संचार की सीमायें

8.6 समय भाषा संचार

8.7 पार्श्व भाषा

8.7.1 पार्श्व भाषा संचार से लाभ

8.7.2 पार्श्व भाषा संचार की सीमायें

8.8 सार–संक्षेप

8.9 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

8.10 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

8.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य संचार के माध्यम के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रकारों के बारे में आप लोगों को अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार के माध्यमों के बारें में चर्चा प्रस्तुत की गयी है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– अशाब्दिक संचार के बारे में लिख सकेगें।

3– प्रत्यक्ष संचार पर प्रकाश डाल सकगें।

4– प्रत्यक्ष संचार के लाभों की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

5– प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत संचार के दोषों के बारे में लिख सकेगें।

6– प्रत्यक्ष संचार के आवश्यक तत्वों के बारे में अवगत हो सकेगें।

7– अप्रत्यक्ष संचार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

8– अप्रत्यक्ष संचार के लाभों को जान पायेगें।

9– अप्रत्यक्ष संचार की सीमाओं का वर्णन कर सकेगें।

10– अप्रत्यक्ष संचार के आवश्यक तत्वों कर प्रकाश डाल सकेगें।

8.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार के बारे में बताया गया है। वास्तव में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार अशाब्दिक संचार के ही प्रतिरूप है। हम जानते है कि संचार प्रक्रिया में संदेशों का आदान–प्रदान होता है। प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता संदेश विचार को एक समान अर्थ में समझते हैं। जब इस प्रक्रिया में संदेश शब्दों में व्यक्त किया जाये तो उसे शाब्दिक संचार कहते है। जब इसके विपरीत, शब्दों के अतिरिक्त चिन्हों, लक्षणों या संकेतों तथा सूचित चिन्हों के द्वारा संचार हो तो उसे अशाब्दिक संचार कहते हैं।

वास्तव में देखा जाये तो प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार अशाब्दिक संचार के प्रतिरूप है जिसमें दृश्य, संकेत भाषा, श्रव्य संकेत भाषा, दैहिक भाषा, समय भाषा एवं पार्श्व भाषा प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार के बारे जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

8.2 अशाब्दिक संचार

संचार का सबसे प्रमुख आधार भाषा के संचार से होता है। भाषा के सचांर का अर्थ है– बोलने वाला व्यक्ति जिस भाषा का प्रयोग कर रहा है। सुनने वाला व्यक्ति भी उस भाषा की जानकारी रखता हो। आपने देखा होगा कि यदि आपको हिन्दी भाषा का ज्ञान है और कोई व्यक्ति बहुत अधिक ज्ञान की बात जर्मनी भाषा में आपके सम्मुख प्रस्तुत कर रहा है तब भी आप उसे ज्ञानी व्यक्ति नहीं कहेंगे। मानवशास्त्रियों का यह मत है कि जब से मानव जाति ने आपस में वार्तालाप प्रारम्भ किया होगा तब सर्वप्रथम उसने अपने शरीर के विभिन्न अंगों के माध्यम से इशारों के आधार पर सन्देश दिए होंगे। धीरे–धीरे वो इशारे किसी प्रकार एक–एक शब्द में बदल गए जिससे एक भाषा का निर्माण हुआ होगा। उदाहरण के तौर पर जब व्यक्ति यहां तक जानवर तक को जब क्रोध आता है तब उसकी अभिव्यक्ति वह दांत पीसकर करता है। इसके विपरीत स्नेह प्रकट करने की दशा में वह दूसरे को स्पर्श करना पसन्द करता है।

संचार प्रक्रिया में सन्देशों का आदान–प्रदान होता है। प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता सन्देश एवं विचार को एक समान अर्थ में समझते हैं। जब इस प्रक्रिया में सन्देश शब्दों में व्यक्त किया जाए तो उसको शाब्दिक संचार कहते हैं। इसके विपरीत, जब सन्देश शब्दों के अतिरिक्त चिन्हों, लक्षणों अथवा संकेतों तथा सूचित चिन्हों के द्वारा संचारित हो तो उसको अशाब्दिक संचार कहते हैं।

प्रारम्भ में जब मानव सभ्यता ने शब्द भाषा की खोज नहीं की थी उस समय भी अपने सन्देशों का आदान–प्रदान संकेतों एवं चिन्हों के द्वारा करता था। आज जब इक्कीसवीं शताब्दी में मानवीय सभ्यता काफी विकसित हो गई है, सूचना संचार के अनेक आधुनिक साधन एवं तन्त्र मानव सभ्यता के पास उपलब्ध हैं। लेकिन आज भी अशाब्दिक संचार महत्वूपर्ण है। वह विचार, भाव अथवा सन्देश जो हजारों शब्दों में

सम्प्रेषित नहीं हो पाता, वह मात्र संकेत, चित्र, हाव–भाव, भाव–भंगिमा द्वारा कुछ पलों में ही संचारित किया जा सकता है, क्योंकि मानव की ज्ञानेन्द्रिय का बोध एवं उसका प्रभाव मानव जीवन के स्वस्थ्य अस्तित्व का प्रमाण है। इस प्रकार संचार का एक शक्तिशाली , स्वाभाविक एवं प्राकृतिक माध्यम अशाब्दिक संचार है। इसको संकेत संचार भी कहते हैं। अशाब्दिक संचार के संकेत ज्ञान विचारों, दृष्टिकोण, विश्वास एवं भावनाओं के प्रतीक होते हैं। जिनका संचार हेतु चयन वातावरण के अनुरूप सामयिक ढंग से किया जाता है।

रेमण्ड एवं जान के अनुसार 'संचार के वे सभी माध्यम अशाब्दिक संचार में शामिल होते हैं जो न तो लिखित और न ही मौखिक शब्दों में व्यक्त हैं'। अशाब्दिक संचार का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है–

8.3 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार

दृश्य संकेत भाषा संचार की प्राचीन, सरल एवं बोधगम्य पद्धति है। ऐतिहासिक महत्व के मन्दिरों, गुफाओं एवं अन्य इमारतों पर आज भी चित्रलिपि एवं भित्ति चित्र पाए जाते हैं, जो प्राचीन शासकों की शौर्य गाथा, तत्कालिक सामाजिक परिवेश, धार्मिक परम्पराओं एवं व्यावसायिक मान्यताओं के सन्दर्भ में काफी जानकारियां प्रदान करते हैं। चित्रों का सांकेतिक सम्प्रेषित महत्व एक गम्भीर अध्ययन की विषय–वस्तु है। कुछ ही दृश्य संकेत स्थानीय एवं सीमित अर्थ में अपने भाव सम्प्रेषित करते हैं। दृश्य संकेत भाषा में चित्र, पेण्टिंग, चार्ट, ड्रांइग, रेखाचित्र, नक्काशी, खुदाई, प्रतिमा, भित्ति चित्र, पोस्टर, कार्टून, फोटोग्राफ्स, साइनबोर्ड, नक्शा, डायग्राम, चलचित्र आदि को शामिल करते हैं। रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डों, सड़क परिवहन केन्द्रों पर लाल, हरी या पीली रोशनी, शल्य कक्ष के ऊपर जलता हुआ लाल बल्ब, एम्बुलेन्स, अधिकारी अथवा राजनेता की गाड़ी पर घूमती नीली या लाल बत्ती बिना कोई ध्वनि किए अपने अर्थ सभी को संचारित करती है।

8.3.1 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार के गुण

1–संचार के स्थायी साधन– दृश्य संकेत सारधारणतया मौलिक और सामान्य सन्देशों के सचांर का माध्यम है। पथ प्रदर्शन, स्थान निर्देशन तथा वर्जित कार्यों के दृश्य संकेत स्थायी प्रकृति के होते हैं। एक बार इनका दृष्य रेखांकित कर देने पर लम्बी अवधि तक अपने दृश्य संकेत का अर्थ प्रदान करते रहते हैं।

2–विज्ञापन व विपणन के प्रभावी साधन– रंगीन पेण्टिग, फोटोग्राफ्स, पोस्टर, संचार को आकर्षक बना देते हैं जिसके द्वारा प्राप्तकर्ता में रुचि एवं उत्सुकता उत्पन्न होती है। प्रतिस्पर्द्धात्मक बाजारों में प्रभावी विज्ञापन विपणन एवं नवीन ग्राहकों की खोज के लिए दृश्य संकेत संचार माध्यम का उपयोग धीर–धीरे बढ़ता जा रहा है।

3–शैक्षिक मूल्य– दृश्य संचार कर्मचारियों, श्रमिकों को प्रशिक्षित करने में काफी सहायक होते हैं। चित्रों तथा पोस्टरों द्वारा नवीन तकनीकी कार्य पद्धति, परिचालन ढंग एवं अन्य सम्बन्धित जानकारी सुविधापूर्वक दी जा सकती है। इसलिए कहा जाता है कि दृश्य संकेत भाषा का शैक्षिक मूल्य अधिक होता है।

4–सार्वभौमिक भाषा–सामान्यतया संकेत भाषा सार्वभौमिक होती है। कुशल–अकुशल, स्त्री–पुरुष, शिक्षित– बच्चों एवं बुजुर्ग आदि को दृश्य संकेत एक समान अर्थ में सन्देश संचारित करते हैं।

5–सन्देश प्रेषक का प्रतिबिम्ब–दृश्य संकेत सन्देश भेजने वाले की बौद्धिक क्षमता व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को प्रतिबिम्बित करते हैं। पोस्टर, फोटाग्राफ तथा पेण्टिंग में सूक्ष्म भाव एवं विचार बड़े आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

8.3.2 प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार की सीमायें

1–साधारण सन्देशों की दशा में अनुपयुक्तता–दृश्य संकेत भाषा केवल सामान्य संकेतों, सन्देशों तथा विचारों को ही संचारित करने का माध्यम है। जटिल विशिष्ट, विषम सन्देशों का दृश्य संकेत

भाषा में संचारित करना लगभग असम्भव कार्य है। दृश्य संकेत भाषा काफी दीर्घ अवधि में सर्वव्यापी होती है। इस माध्यम में सन्देश प्राप्तकर्ता को दृश्य संकेत के अर्थ का पूर्वज्ञान होना आवश्यक है।

2–विशेष दक्षता की आवश्यकता–चित्र, फोटोग्राफ, पोस्ट आदि के द्वारा सन्देश संचारित करना एक कठिन कार्य है। केवल अनुभवी, दक्ष और विशिष्ट कुशलता वाले व्यक्ति ही अपने सभी विचार इन माध्यमों से प्रेषित कर सकते हैं।

3–सीमित क्षेत्र–दृश्य संकेत भाषा का क्षेत्र सीमित हैं, क्योंकि दृश्य संकेत भाषा तभी प्रभावी होती है जब साथ–साथ मौखिक संचार भी किया जाए। इसके अतिरिक्त दृश्य संकेत भाषा प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता के मध्य गलतफहमी उत्पन्न कर सकती है।

8.4 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार

इसकी ध्वनि संकेत भाषा भी कहा जाता है। मानव सम्भ्यता के प्राचीनकाल से ही ध्वनि संकेतों द्वारा संचार किया जाता है। खुशी, गम, हर्ष, युद्ध एवं भय के लिए अति प्राचीन काल से ध्वनि संकेतों का प्रयोग किया जाता है, जो परम्परागत ढंग से आज भी किया जाता है ।

ध्वनि उत्पन्न करने के लिए ढोल, नगाड़ों एवं अन्य वाद्य यन्त्रों की सहायता ली जाती है।

आधुनिक समय में भी किसी व्यावसायिक कार्यालय, कारखाने आदि के दैनिक क्रियाकलापों के संचार के लिए ध्वनि संकेत भाषा अपरिहार्य है। जैस– अधिकारी द्वारा अपने चपरासी को बुलाने के लिए घण्टी का प्रयोग तथा कारखानों में पारी शुरू होने, समाप्त होने, भोजनावकाश के लिए हूटर, सायरन सीटी का प्रयोग होता है।

ध्वनि की गति, आकृति, तरंग, मात्रा के अनुसार ध्वनि संकेत भाषा के अर्थ अलग–अलग होते हैं। इसी प्रकार ध्वनि संकेत भाषा भी सीमित अर्थों में सर्वव्यापी होती है। जैसे–अति महत्वपूर्ण (विशिष्ट) व्यक्तियों के काफिले के सारयन की आवाज, एम्बुलेन्स का सायरन, युद्ध में ब्लैक

आउट के हूटर के ध्वनि आदि। आधुनिक व्यावसायिक कार्यालय एवं कारखाने बिना बजर, बटन दबाने वाली घण्टी, विद्युतचालित घण्टी या अन्य कोई ध्वनि विस्तारक यन्त्र के अभाव में अपूर्ण होंगे।

8.4.2 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार के गुण

1—शीघ्र संचार— ध्वनि विस्तारण बड़ी तीव्र गति के साथ होता है जिससे यह अपने सन्देश का संचार पर्याप्त स्थान में बड़ी सुविधा से सभी भाव संचारित कर देता है।

2—समय प्रबन्धन में उपयोगी— ध्वनि संकेत भाषा व्यावसायिक एवं प्रबन्धन में अत्यन्त लाभकारी है। सायरन, हूटर तथा घण्टी की आवाज के साथ ही कार्य पर आने वाले तथा कार्य छोड़ने वाले अविलम्ब सक्रिय हो जाते हैं। विशिष्ट ध्वनि यन्त्रों के द्वारा व्यस्त अधिकारी अपने समय का प्रबन्धन करते हैं।

3—आकस्मिक स्थिति में उपयोगी— आकस्मिक अथवा आपातकाल में ध्वनि संकेत भाषा अत्यधिक प्रभावी है। कार्यालयों अथवा कारखानों में आपातकाल अथवा कार्य अवरोधों की दशा में सुरक्षात्मक उपाय अपनाने के लिए ध्वनि संकेत भाषा सबसे प्रभावी संचार माध्यम है।

8.4.3 अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार की सीमाएं

1—सीमित प्रयोग—श्रव्य संकेत भाषा का प्रयोग काफी सीमित है।

2—दुरूपयोग— श्रव्य संकेत भाषा केवल ध्वनि पर आधारित है, जो किसी यन्त्र के माध्यम से विस्तारित की जाती है। हड़ताल एवं निहित कार्यों में इन यन्त्रों का दुरूपयोग किया जा सकता है।

8.5 दैहिक भाषा संचार

प्रभावी सन्देशग्राही के लिए आवश्यक है कि, वह संचार से नेत्र सम्बन्ध बनाय रखे तथा आवश्यकतानुसार सन्देश को समझने तथा सहमत होने के सम्बन्ध में अपने सिर को सकारात्मक रूप में हिलाकर

यह प्रदर्शित करे कि सन्देश का आशय पूर्णतया स्पष्ट है। इससे संचारक को प्रभावी ढंग से बोलने के लिए बल मिलता है।

जिस प्रकार बूरी आदतों को परिवर्तित करने में समय लगता है उसी प्रकार नई अच्छी आदतों का विकास करने में भी समय लगता है। इसके लिए निरन्तर प्रयास की आवश्यकता होती है। सुनना संचार प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है तथा इसे प्रभावी बनाने के लिए संचारक एवं सन्देशहीनता दोनों का मिश्रित प्रयास करने की आवश्यकता हेाती है तभी इस प्रक्रिया को प्रभावी बनाया जा सकता है।

अशाब्दिक संचार का एक विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण माध्यम दैहिक भाषा है। इसे हम शारीरिक संचालन भाषा भी कह सकते हैं। दैहिक भाषा संचार सहज रूप से सूक्ष्म विचार भी तीव्र गति से सम्प्रेषित करती है। दैहित भाषा में आन्तरिक भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं। भावनाओं, विचारों, चिन्तन, दृष्टिकोण तथा अनुभूतियों का प्रभाव मानव व्यवहार पर परिलक्षित होता है।

मनुष्य का शारीरक संचालन भंगिमा, मुद्रा, दृष्टिसम्बन्ध, उतार–चढ़ाव आदि शब्दरहित माध्यम अपने विचारों या सन्देशों को प्रभावी ढंग से सम्प्रेषित करते हैं।

सकारात्मक अथवा नकारात्मक अनुभूति गर्मजोशी अथवा तटस्थता मानसिक अवस्था, सम्बन्धों का स्तर, आदि का दैहिक संचार न केवल अनौपचारिक वरन् औपचारिक संचार दोनों में समान महत्व रख्ता है।

8.5.1 दैहिक भाषा संचार के लाभ

1–सम्बन्ध सृजन–मुखाभिव्यक्ति, दृष्टि, सम्बन्ध, भंगिमा, आदि नवीन सम्बन्धों के सृजन एवं पूर्व सम्बन्धों में स्थायित्व प्रदान करते हैं। इनके द्वारा उत्सुकता, गर्मजोशी, अभिवादन एवं अभिवादन प्रति के भावों को प्रभावी ढंग से सम्प्रेषित कर सम्बन्धों को निकटता प्रदान की जा सकती है।

2— भावनायुक्त—मुख्याभिव्यक्ति, भंगिमा, दृष्टि सम्बन्ध, मुद्रा आदि आन्तरिक भावनाओं को अभिव्यक्ति करते हैं। संवेदना, सहानुभूति, प्रेरणा, उल्लास, हर्ष का अशाब्दिक संचार सहज रूप से दूसरों को प्रभावित कर सकते हैं एवं दूसरों के मनोभावों की जानकारी भी प्राप्त कर सकते हैं। शारीरिक संचालन संचार प्रक्रिया में भावनाओं का मिश्रण करता है।

3—परिपूरक—मूलतः शारीरिक संचालन मौखिक संचार को परिपूर्ण एवं प्रभावी बनाता है। मुखाभिव्यक्ति एवं भंगिमा के अभाव में मौखिक संचार नीरस, बेजान एवं अप्रभावी रहता है।

4—मनोवैज्ञानिक प्रभाव—शारीरिक संचालन द्वारा संचार देखने व सुनने वाले पर मानसिक प्रभाव डालता है। भंगिमा, मुद्रा, दृष्टि सम्बन्ध एवं मुखाभिव्यक्ति द्वारा किए गए संचार का श्रोता के मन एवं मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

5—स्वस्थ्य वातावारण का निर्माण—आत्म—विश्वास से परिपूर्ण मुख, उल्लासपूर्ण भंगिमा, उत्साहित मुखाभिव्यक्ति, गहन दृष्टि रखती आंखें, साफ एवं स्वस्थ्य प्रकटन के कार्य स्वस्थ वातावारण को तीव्र गति प्रदान करते हैं एवं सौहार्दपूर्ण स्वस्थ वातारण का निर्माण करते हैं।

6—अन्तर्निहित भाषा का अर्थ समझने में सुविधा—सन्देश में अन्तर्निहित अर्थ को मुखाभिव्यक्ति, भंगिमा एवं दृष्टि सम्बन्ध द्वारा स्पष्ट बोध एवं ज्ञान कराया जा सकता है, क्योंकि मुखाभिव्यक्ति, भंगिमा आदि दूसरों को स्पष्ट दिखाई देती है।

8.5.2 दैहिक भाषा संचार की सीमायें

1—भ्रामक व्याख्या— दैहिक भाषा द्वारा संचार भ्रामक हो सकता है। लिखित एवं मौखिक शब्दों को गम्भीरतापूर्वक लेना चाहिए। मुखाभिव्यक्ति, भंगिमा, मुद्रा, आदि पूर्ण विश्वसनीय नहीं होते एवं प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता के मध्य भ्रम उत्पन्न कर सकते हैं।

2—साक्ष्यरहित— साक्ष्यरहित दैहिक भाषा एक अल्प अवधि की प्रतीकात्मक प्रक्रिया है, जिसका सामान्यतः कोई साक्ष्य नहीं होता है। अतः उत्तरदायित्व निर्धारण में जटिलता पैदा कर सकता है।

3—अतिरिक्त सावधानी की आवश्यकता—विभिन्न सामाजिक एवं भौगोलिक पृष्ठभूमि में मुखाभिव्यक्ति, भंगिमा एवं दृष्टि सम्बन्ध में अलग—अलग अर्थ होते हैं। अतः दैहिक भाषा का प्रयोग एवं अर्थ समझने में अतिरिक्त सावधानी बरतनी चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो जाता है।

4—भीड़ में अधिक प्रभावी नहीं— आमने—सामने अथवा छोटी संख्या की उपस्थिति में शारीरिक संचालन प्रभावी होता है। बड़ी संख्या में उपस्थित भीड़ में मुखाभिव्यक्ति, भंगिमा, दृष्टि सम्बन्ध महत्वहीन होते हैं।

8.6 समय भाषा संचार

दैहिक एवं संकेत भाषा के अतिरिक्त स्थान, समय एवं भौतिक वातावरण को भी अशाब्दिक संचार में शामिल किया जाता है। संचार में वक्ता एवं श्रोता के मध्य की दूरी (स्थान अन्तराल) अन्तर्निहित भावों की अभिव्यक्ति करती है। इसी प्रकार संचार में समय भी विशिष्ट भावों का संचार करता है। भौतिक वातावरण का स्वरूप भी अपने सन्देशों का सम्प्रेषण करता है। अन्तराल भाषा अशाब्दिक संचार का महत्वपूर्ण भाग है। विस्तृत अर्थों में इसका आशय, स्थान, समय एवं भौतिक वातावरण की अशाब्दिक भाषा से है।

दैहिक भाषा की तरह स्थान भाषा भी अपने अन्तर्निहित सन्देशों की अभिव्यक्ति करती है। आमने—सामने संचार में वक्ता (सन्देश प्रेषणकर्ता) एवं श्रोता (सन्देश प्रापक) के मध्य की दूरी स्थान अन्तराल काा विशिष्ट अर्थ एवं सन्देश होता है। स्थान अन्तराल भाषा में गोपनीयता अथवा सार्वजनिकता, औपचारिकता अथवा अनौपचारिकता,

निकटता अथवा दूरी, सामाजिक अथवा व्यक्तिगत आदि अर्थो का स्वतः प्रभावी संचार होता है।

8.7 पार्श्व भाषा

पार्श्व भाषा भी अशाब्दिक संचार का एक सशक्त माध्यम है। पार्श्व भाषा मौखिक संचार की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाती है। मौखिक संचार में शब्द होते हैं जबकि पार्श्व भाषा अशाब्दिक है।

मौखिक संचार शब्द के माध्य से 'क्या कहते है' का बोध होता है। जबकि पार्श्व भाषा 'किस प्रकार कहते हैं' का अशाब्दिक संचार है।

Para language में para शब्द का आशय समान तथा Language का अर्थ भाषा से है। दोनों के संयुक्त अर्थ को हिन्दी में 'पार्श्व भाषा' कहते हैं। मौखिक संचार में वक्ता का यदि गहन अवलोकन करें तो पता चलता है कि वह अपने संचार में अनेक संकेतों, स्वर का उतार–चढ़ाव, धारा प्रवाह अथवा अप्रवाह, जगह–जगह वाणी को अल्प–विराम, ऊंची अथवा धीमी आवाज जाने–अनजाने में प्रयोग करता है।

इस प्रकार की अभिव्यक्ति को ही मिश्रित रूप में पार्श्व भाषा मौखिक अभिव्यक्ति का एक ऐसा ढंग है जिसमें शब्दों को शामिल नहीं किया जाता है। इसलिए इसको अशाब्दिक संचार का माध्यम कहते हैं। पार्श्व भाषा का एक विस्तृत क्षेत्र है जिसके महत्वपूर्ण भाग निम्नलिखित हैं:–

आवाज, आवाज उच्चावचन एवं शब्द दाब

8.7.1 पार्श्व भाषा संचार से लाभ

1– मौलिक संचार से अन्तर्सम्बन्धित–पार्श्व भाषा एवं मौखिक संचार एक–दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। मौखिक संचार का शाब्दिक प्रेषण 'क्या कहते है' तथा पार्श्व भाषा के रूप में अशाब्दिक अभिव्यक्ति 'किस' प्रकार कहते हैं।

2—वक्ता की पृष्ठभूमि की पहचान—पार्श्व भाषा के आधार पर वक्ता के शैक्षिक लिंग, सामाजिक वर्ण, व्यवसाय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय पृष्ठभूमि, आयु व्यक्तित्व की पहचान आसानी से की जा सकती है। साथ—साथ उसकी मनोदशा, प्रसन्नता, उल्लास एवं अन्तर्मुखी या बाह्य मुखी स्वभाव का बोध आसानी से हो जाता है।

3—भाषा प्रवाह—पार्श्व भाषा मौखिक संचार में भाषा को प्रवाह एवं वाणी को जीवन प्रदान करती है। न्यायपूर्ण अप्रवाही उच्चारण, तर्कपूर्ण अल्प—विराम या विश्राम द्वारा भाषा के प्रवाह को उत्पन्न करता है तथा आवाज के कुशल उतार—चढ़ाव द्वारा वाणी को जीवन्त बनाया जाता है।

4—श्रोताओं को आकर्षण— मौखिक शाब्दिक संचार बिना उचित पार्श्व भाषा के नीरस एवं खीज भरा होता है। पार्श्व भाषा तथा मौखिक शाब्दिक संचार का अनुकूलतम संयोग श्रोताओं को आकर्षण प्रदान कर उनको एकाग्रचित होकर सुनने के लिए स्वतः स्फूर्त करता है।

5—मौखिक संचार का पूर्ण प्रभाव—आवाज एवं स्तर का उतार—चढाव तर्कपूर्ण शब्द दाब, अवसरानुकूल विभाग, अप्रवाही शब्दों का न्यायसंगत प्रयोग, स्वर एवं व्यंजन का सही उच्चारण के द्वारा मौखिक संचार प्रवाह, गुणवत्ता, आकर्षक एवं सृजनात्मक बनाते हैं।

8.7.1 पार्श्व भाषा संचार की सीमायें

1—अपूर्ण— पार्श्व भाषा की उपयोगिता मौखिक संचार द्वारा स्पष्ट होती है। पार्श्व भाषा मौखिक संचार के अन्तर्गत अपने निहित भावों की अभिव्यक्ति करती है। स्वयं में पार्श्व भाषा अपूर्ण है, क्योंकि पार्श्व भाषा, भाषा के समान है, किन्तु भाषा नहीं है।

2—एकरूपता का अभाव—पार्श्व भाषा में सर्वव्यापकता एवं सर्वस्वीकृति नहीं होती। विभिन्न परिवेश एवं विभिन्न भाषाओं में एकरूपता नहीं है। अतः पार्श्व भाषा प्रयोगों में भी विभिन्नता पाई जाती है एवं उनके अर्थ संचार में एकरूपता का अभाव होता है।

3—मिश्रित संकेत—भाषा के शब्दों का अर्थ एवं पार्श्व भाषा के संकेतों के अर्थ में समानता होनी चाहिए। यदि पार्श्व भाषा के संकेत एवं भाषा के शब्दों में अन्तर है तो संचार मिश्रित हो जाता है एवं संचार भ्रामक, अर्थहीन अथवा विभिन्न अर्थों वाला हो जाता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार के गुण के बारे में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8.8 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है, जिसमें बताया गया है कि जब संचार संदेशों के अलावा चिन्हों, लक्षणों अथवा संकेतों तथा सूचित चिन्हों के द्वारा संचार हो तो उसको अशाब्दिक संचार कहते है। वास्तव में जब मानव सभ्यता ने शब्द की खोज नहीं की थी तो अपने संदेशों का आदान–प्रदान करने के लिए मानव चिन्हों एवं संकेतों का प्रयोग करता था। जब इक्कीसवीं शताब्दी में संचार के विभिन्न माध्यम विकसित हो गये तो संचार क्रान्ति का जन्म हुआ। वस्तुत आज भी अशाब्दिक संचार महत्वपूर्ण है। वह विचार भाव या संदेश जो हजारों शब्दों में प्रेषित नहीं हो जाता है, वह मात्र संकेत, चित्र, हावभाव, भावभंगिमा के द्वारा कुछ ही पलों में प्रसारित या संचारित किया जा सकता है, क्योंकि मानव की ज्ञानेन्द्रिय का बोध एवं उसका प्रभाव मानव जीवन के स्वस्थ अस्तित्व का प्रमाण है। इस प्रकार संचार का एक शक्तिशाली, स्वाभाविक एवं प्राकृतिक माध्यम अशाब्दिक संचार है। प्रस्तुत इकाई में प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत

भाषा संचार एवं अप्रत्यक्ष या श्रव्य संकेत भाषा संचार के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया। प्रत्यक्ष संचार के गुणों एवं दोषों के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। अप्रत्यक्ष संचार के गुण एवं दोषों पर भी चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

इसी इकाई में अशाब्दिक संचार के अन्य प्रकार जैसे दैहिक भाषा संचार, समय भाषा संचार एवं पार्श्व भाषा संचार के बारे में व्यौरा प्रदान किया गया है। आशा है कि प्रस्तुत इकाई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष संचार के बारे में आप ज्ञान में वृद्धि करायेगी।

8.9 पारिभाषिक शब्दावली

अशाब्दिक संचार– जब संचार शब्दों के माध्यम से न होकर चिन्हों, लक्षणों या संकेतों तथा सूचित चिन्हों के द्वारा हो तो उसक अशाब्दिक संचार कहते है।

दृश्य संकेत भाषा– सभी प्रकार के चित्र, पेंन्टिग, चार्ट, ड्राईंग, रेखा चित्र, नक्कासी, खुदाई, प्रतिमा, भित्ति चित्र, पोस्टर, कार्टून एवं चलचित्र आदि दृश्य संकेत भाषा शामिल किये जाते है।

ध्वनि संकेत भाषा– इसको श्रव्य संकेत भाषा भी कहा जाता है। मानव सम्भ्यता के प्राचीन काल से ध्वनि संकेतों द्वारा संचार किया जाता है। खुशी, गम, हर्ष, विजय, युद्ध एवं भय के लिए अति प्राचीन काल से ही ध्वनि संकेतों का प्रयोग किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु.

1– अशाब्दिक संचार से आप क्या समझते है?

2– प्रत्यक्ष या दृश्य संकेत भाषा संचार पर प्रकाश डालिये।

3– प्रत्यक्ष संचार के गुणों के बारे में लिखिए।

4– अप्रत्यक्ष संचार आप क्या समझते है?

5– अप्रत्यक्ष संचार की सीमाओं का वर्णन कीजिए।

6– दैहिक भाषा संचार आप क्या समझते है।

7– पार्श्व भाषा संचार पर टिप्पणी कीजिये।

विस्तृत

1– प्रत्यक्ष संचार का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसके गुण दोषों की विवेचना कीजिए।

2– अप्रत्यक्ष संचार पर निबन्ध लिखिए।

8.10 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मिश्र, डा० विनोद एवं शुक्ल, डा० नरेन्द्र व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा वर्ष 2014–15,

2– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा वर्ष–2013, पेज–61–64

खण्ड–द्वितीय– संचार के प्रकार

इकाई –9, संचार के आधुनिक साधन

9.0 इकाई का उद्देश्य

9.1 परिचय

9.2 संचार के आधुनिक साधन

9.2.1 पेजर

9.2.2 सेल्युलर फोन

9.2.3 फैक्स

9.2.4 वीडिया क्रान्फ्रेंसिंग

9.2.5 सिटीजन बैंड रेडियो

9.2.6 उपग्रह संचार

9.2.7 इण्टरनेट

9.2.8 ई–मेल

9.3 सार–संक्षेप

9.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

9.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

9.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई संचार के आधुनिक साधनों के बारे में आप लोगों को जानकारी देने के लिए प्रस्तुत की जा रही है। इस इाकई को पढने के बाद आप लोग अग्रलिखित संचार के आधुनिक साधनों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– आधुनिक संचार के साधन के रूप में पेजर के बारे में जान सकेगें

2– पेजर के लाभ व सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेगें।

3– संचार के आधुनिक साधन के रूप में सेल्युलर फोन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

4– सेल्युलर फोन की सीमायें एवं लाभों की जानकारी कर सकगें।

5– फैक्स के बारे में लिख सकेगें।

6– फैक्स के महत्व पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

7– वीडिया कान्फ्रेंसिंग के बारे में जान सकेगें।

8– वीडिया कान्फ्रेंसिंग की आवश्यक सामग्री के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

9– वीडिया कान्फ्रेंसिंग के लाभ व सीमाओं पर प्रकाश डाल सकेगें।

10– सिटीजन बैण्ड रेडियो के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

11– उपग्रह संचार के बारे में जान सकेगें।

12– इण्टरनेट के प्रयोग पर जानकारी हासिल कर पायेंगे।

13– ई–मेल के बार में जान सकेगें।

9.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई संचार के आधुनिक साधनों के बारे में व्याख्या प्रस्तुत करती है। वास्तव में हम आज के इस यांत्रिक युग में संचार या सम्प्रेषण के लिए विभिन्न प्रकार के साधनों का उपयोग कर रहे हैं। आज से लगभग– 30 वर्ष पूर्व हम जिन संचार साधनों का प्रयोग करते थे वे बहुत समय के बाद अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंचते थे जिससे सूचना बहुत देर से प्राप्त होती थी। लेकिन आधुनिक समय में मानव ने संचार माध्यमों की खोज में इतना अधिक प्रबलता प्राप्त कर लिया है जिससे विश्व एक नेटवर्क से जुड़ गया है। आज इण्टरनेट, सेल्युलर फोन, वीडिया कान्फ्रेसिंग, सिटीजन बैण्ड रेडिया, टेलीफोन इत्यादि संचार के आधुनिक साधनों के द्वारा सैकण्डों में सूचनायें विश्व के किसी भी कोने में पहुंचाई या प्राप्त की जा सकती हैं। अब प्रश्न उठना लाजमी है कि ये संचार के आधुनिक साधन क्या हैं? तथा इनकी कार्य

प्रणाली कैसे काम करती है? वस्तुतः संचार के आधुनिक साधनों के बारे में प्रकाश डालने के लिए प्रस्तुत इकाई का गठन किया गया है। जिसमें बताया गया है कि ये साधन कैसे होते हैं तथा इनकी कार्य विधि क्या होती है?

पेजर के बारे लिखा गया है कि यह एक आयाताकार 3.5 इंज लम्बा व 2.5 इंज चौड़ा छोटा सा यंत्र होता है जो आने वाले संदेशों को यंत्र के स्क्रीन पर लिखित रूप प्रदर्शित करता है। वास्तव में यह यंत्र वर्तमान में सेल्युलर फोन के आने से मृत प्राय हो चुका है। सेल्युलर फोन एक ऐसी युक्ति होती है जो बिना किसी तार के कनेक्शन पर कार्य करती है जिसके माध्यम से संदेश भी भेजे जाते हैं तथा वार्तालाप भी किये जा सकते हैं। फैक्स मशीन द्वारा किसी भी कागज पर अंकित सूचना को सुदूर रखे फैक्स में डिजीटल माध्यम से ठीक उसी प्रतिरूप के रूप में प्रेषित किया जाता है। वीडियों कान्फ्रेंसिंग के द्वारा न केवल संदेश भेजे जाते हैं बल्कि एक दूसरे से सजीव वार्तालाप भी किये जा सकते हैं। सिटीजन बैंण्ड रेडियो से लगभग 20 किलोमीटर के व्यास में मौखिक संचार को प्रसारित किया जा सकता है। इसी इकाई में उपग्रह संचार के माध्यम से भी संचार की प्रक्रिया पर प्रकाश डाला गया है।

इण्टरनेट के साधन पर भी विस्तृत से प्रकाश डाला गया है जिसके बारे में वृहद्चर्चा प्रस्तुत की गयी है। वास्तव में इण्टरनेट, इण्टरनेशनल नेटवर्क का संक्षिप्त नाम है। अंत में ई–मेल जैसे आधुनिक संचार के माध्यम पर भी विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की गई है।

आशा है कि आप लोगों की जिज्ञासा, जो खासतौर से संचार के आधुनिक साधनों से सम्बन्धित है, का यह इकाई उचित रूप से समाधान प्रस्तुत करेगी तथा आप लोग संचार के आधुनिक साधनों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर उनका रोजमर्रा के जीवन में उपयोग कर सकेगें।

9.2 संचार के आधुनिक साधन

आधुनिक तकनीक पर आधारित संचार के प्रमुख साधन निम्नलिखित है।

1–पेजर, 2–सेल्युलर फोन, 3–फैक्स, 4–वीडियो क्रान्फ्रेंसिंग, 5–सिटीजन बैंड रेडियो, 6–उपग्रह संचार, 7–इण्टरनेट, 8–ई–मेल

9.2.1 पेजर

भारत में पेजर का 1982 में एशियन गेम्स के दौरान पहली बार प्रयोग किया गया। यह आयताकार 3.5 इंच लम्बा तथा 2.5 इंच चोड़ा छोटा–सा यन्त्र होता है जो आने वाले सन्देशों को लिखित रूप में यंत्र की स्क्रीन पर दिखाता है। इसका बेतार कनेक्शन पेपर बॉक्स से जुड़ा होता है। सन्देश पर यह यन्त्र पीप–पीप की ध्वनि करता है तथा यन्त्रधारक बटन दबाकर सन्देश प्राप्त कर लेता है।

लाभ – (अ) इस यन्त्र को जेब में डालकर व्यक्ति निर्धारित परिधि में कहीं भी घूम सकता है। (ब) पेजधारक संगठन से निरन्तर सम्पर्क में रहता है।

सीमायें– (अ) यह निर्धारित परिधि में ही क्रियाशील होता है। (ब) यह केवल निश्चित भाषा में ही लिखित सन्देश प्राप्त करता है। (स) एकलमार्गीय होता है। इसका धारक सन्देश प्राप्त कर सकता है, दे नहीं सकता।

9.2.2 सेल्युलर फोन

परम्परागत टेलीफोन कनेक्शन तार से जुड़े होते हैं एवं एक निश्चित स्थान पर ही स्थिर होते हैं, किन्तु सेल्युलर फोन आसानी से जेब में आ जाने वाला छोटा–सा टेलीफोन यन्त्र है। इसको मोबाइल फोन भी कहते हैं जिसको प्रयोगकर्ता कहीं भी ले जा सकता है। कहीं से भी मोबाइल फोन धारक परम्परागत अथवा दूसरे मोबाइल फोन पर

संचार कर सकता है। भारत में विभिन्न निजी क्षेत्र की तथा सरकारी क्षेत्र की कम्पनियां इस सुविधा को प्रदान कर रही हैं।

भारत में सेल्युलर टेलीफोन–विश्व में इस समय लगभग 10 करोड़ ऐसे उपभोक्ताओं की संख्या है जो सेल्युलर टेलीफोन का प्रयोग कर रहे हैं। प्रत्येक वर्ष इनकी संख्या में 54 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। सेल्युलर टेलीफोन के द्वारा उपभोक्ता बिना किसी बाधा के कहीं से भी इसका उपयोग कर सकते हैं। इरिडियम और टेलीडिस्क परियोजनाओं के लागू हो जाने के बाद समूचे विश्व के लिए यह सेवा उपलब्ध है।

भारत में सबसे पहले अगस्त 1995 में कोलकाता में मोदी टेलस्ट्रा नेटवर्क ने सेल्युलर फोन सेवा शुरू की। इसकी निर्माण फिनलैण्ड की नोकिया टेली कम्प्यूनिकेशन्स प्राइवेट डिमिटेड द्वारा किया गया। 27 जुलाई, 1995 को मुम्बई में हचिन्सन मैक्स टेलीकॉम लिमिटेड ने दिल्ली में 27 सितम्बर, 1995 को पहली सेल्युलर टेलीफोन शुरू की। सेल्युलर फोन सेवा का उपयोग करने वाले प्रत्येक उपभोक्ता को सब्सक्राइबर आइडेंटिटी मोडयूल कार्ड दिया जाता है। जिसमें एक कम्प्यूटर चिप होता है।, उस कम्प्यूटर चिप में उपभोक्ता की संख्या और उसके द्वारा मूल्य सम्बंधित सेवाओं को उल्लेख होता है। एस.आई.एम. कार्ड पर निजी पहचान संख्या उद्धृत रहती है, जिसका उपयोग करना उपभोक्ता के लिए आवश्यक है।

सेल्युलर सेवा के क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है और प्रत्येक वर्ष इसके उपभोक्ताओं की संख्या दुगनी होती जा रही है। दिसम्बर 1999 में मोबाइल सेवा के उपभोक्ताओं की संख्या 16 लाख थी। वर्तमान में 21.30 करोड़ मोबाइल फोन उपभोक्ता हैं।

लाभ–(1) यात्रा करते समय अथवा दूरदराज के क्षेत्रों में भी मोबाइल फोन पर दूसरे मौखिक सन्देश प्राप्त एवं भेज सकता है।

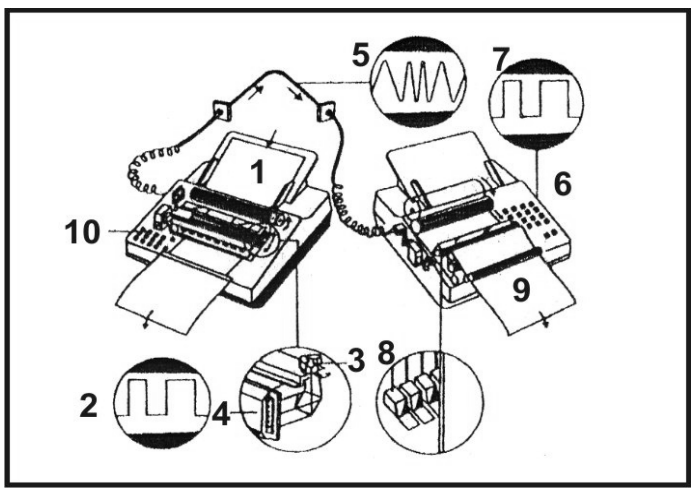
(2)सेल्युलर फोन का नम्बर भारत में कम से कम 10 अंकों का होता है।
(3) कभी–कभी मोबाइल फोन खो जाने का भय रहता है।

9.2.3 फैक्स

फैक्स क्या है?– संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में फैक्स एक लोकप्रिय प्रणाली है। फैक्स का उपयोग मुख्य रूप से दस्तावेजों को भेजने में किया जाता है। इस उपकरण की सहायता से टेलीफोन नेटवर्क के द्वारा किसी दस्तावेज को दूरवर्ती स्थान पर बिल्कुल इस प्रकार से भेजा जाता है, जिस प्रकार से हम किसी दस्तावेज की फोटोस्टेट मशीन से प्रतिलिपि प्राप्त करते हैं।

फैक्स का आविष्कार– विश्व की प्रथम फैक्स मशीन, पैटलीग्राफ का आविष्कार इटली के भौतिकीविद् जिमोवान्नी कैसेली ने 1866 में किया था, लेकिन जनसारधारण द्वारा प्रयोग करने लायक इलेक्ट्रॉनिक फैक्स मशीन लगभग एक सदी बाद ही बाजार में आ सकी। 1980 के दशक में ही फैक्स मशीनों का आकार कार्यालयों व घरों में उपयोग लायक छोटा हो सका।

फैक्स की कार्य–प्रणाली– फैक्स में सूचना–पत्र का प्रेषण कोड नम्बर की सहायता से होता है। चित्रानुसार सूचना–प्रेषक अपने कागजात को फैक्स–मशीन (1) में डालता है, और जहां संदेश भेजा जाना होता है, वहां का कोड नम्बर सेट कर देता है।



फैक्स मशीन में डाले गए कागजात को यह मशीन डिजिटल कोड (2) में परिवर्तित कर देती है। कागजात के पृष्ठ (3) पर तेज प्रकाश के पड़ने पर कोड का निर्माण होता है। मशीन के संवेदक परावर्तित प्रकाश की मात्रा का आंकलन करते हैं जहा पर स्याही होती है, प्रकाश का परावर्तन कम होता है और कम वोल्टेज का विद्युती स्फुकरण बन जाता है। जब प्रकाश का परावर्तन सफेद कागज से होता है तब यह स्फुकरण उच्च बोल्टेज का बनता है।

(4) डिजिटल कोड, मोडेम के द्वारा फैक्स में एनालॉग सिगनल (सादृश्य संकेत) में परिवर्तित हो जाते हैं। (5) तथा टेलीफोन नेटवर्क द्वारा प्राप्त काने वाली फैक्स मशीन (6) को भेज दिये जाते हैं। दूसरी मशीन में लगा मोडेम एनालॉग कोड को वापस डिजिटल कोड में परिवर्तित कर देता है। (7) तथा एक प्रिंटर (8) डिजिटल कोड को भाषान्तरित कर उसकी प्रतिलिपि देता है। (9) प्रत्येक मशीन का एक नम्बर (10) होता है, जिसे की–बोर्ड की सहायता से डायल किया जाता है।

फैक्स का महत्व– यह एक त्वरित एवं सस्ती प्रणाली है जिसके द्वारा हम अपने दस्तावेजों की फोटो कॉपी इच्छित व्यक्ति तक अविलम्ब पहुंचा सकते हैं। दैनिक कार्य–प्रणाली से लेकर स्वास्थ्य, चिकित्सा, शिक्षा, व्यापार, कृषि, बैंकिंग तथा बीमा आदि के क्षेत्र में फैक्स व्यापक परिवर्तन का एक मुख्य आधार बन गया है।

9.2.4 वीडियो क्रान्फ्रेंसिंग

सचित्र संचार का महत्वपूर्ण साधन वीडियों कॉन्फ्रेसिंग है। इसके द्वारा विभिन्न अलग–अलग स्थानों पर उपस्थित लोग 'वास्तविक सभा' की भांति संचार करते हैं। इसमें न केवल सन्देशों को संचारित करते हैं, बल्कि एक–दूसरे से सजीव वार्ता भी कर सकते हैं। जिससे उनके हावभाव, मुखाभिव्यक्ति, भाव–भंगिमा का भी संचार हो जाता है। भारत के लगभग हर जिले में वीडियो कॉन्फ्रेसिंग की सुविधा उपलब्ध है।

वीडियो कॉन्फ्रेसिंग दो प्रकार से की जा सकती है। (अ) कम्प्यूटर के द्वारा तथा (ब) बिना कम्प्यूटर के द्वारा।

आवश्यक सामग्री–

(अ) कम्प्यूटर के द्वारा– इसको कम्प्यूटर कॉन्फ्रेंसिंग भी कहते हैं। इसके लिए कम्प्यूटर अथवा पी.सी., वेब कैमरा, टेलीफोन कनेक्शन, इण्टरनेट कनेक्शन आवश्यक सामग्री है।

(ब) बिना कम्प्यूटर के द्वारा– इसके लिए डिजिटल वेब कैमरा, वीडियों कॉन्फ्रेंसिंग मशीन, टेलीफोन, सैटेलाइट कनेक्शन प्रोजेक्टर आवश्यक सामग्री है।

लाभ–(1) विभिन्न स्थानों पर बैठे लोग लगभग आमने–सामने की तरह संचार करते हैं।

(2) एक साथ संचार तो केवल दो अलग–अलग स्थानों से पक्षों के साथ ही किया जा सकता है, लेकिन उन स्थानों से संचार बनाए रखा जा सकता है।

(3) संगठन के अलग–अलग स्थानों के विभागों, शाखाओं से त्वरित गति से लगभग प्रत्यक्ष संचार होता है।

(4) दृश्य एवं श्रव्य दोनों संकेतों का संचार हो सकता है।

(5) लम्बी दूरियों के बिना यात्रा किए सभा सम्मेलन में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से सहभागिता सम्भव होती है।

(6) मुख्य कार्यालय से विभिन्न क्षेत्रों के कार्यालयों की लगभग प्रत्यक्ष समीक्षा कर सकते हैं।

सीमायें–(1) वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के लिए आवश्यक संसाधन महंगे हैं।

(2) छोटे तथा स्थानीय संगठनों के लिए अनुपयुक्त हैं।

देश का पहला शैक्षिक उपग्रह 'एजुसैट'

अन्तरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में देश ने अपने पहले एजूकेशनल सैटेलाइन 'एजुसैट' का अन्तरिक्ष की कक्षा में स्थापित कर दिया है। श्रीहरिकोटा के सतीश धवन सेन्टर से 20 सितम्बर, 2004 को जब

जीएसएलबी–एफ–01 ने 1950 किलाग्राम के एजुसैट को भू–स्थिर कक्षा में सफलतापूर्वक स्थापित किया। एजुसैट से आठों पहर शैक्षिक कार्यक्रम के द्वारा लोगों का घर क्लासरूम में परिवर्तित हो जाएगा। जिससे छात्र, शिक्षक और प्रोफेशनल्स भी खुद को अद्यतन कर सकेंगे।

इस उपग्रह की मदद से शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तनों की उम्मीद की जा रही है। मुख्य रूप से दूरस्थ शिक्षा क क्षेत्र में वह उपग्रह विशेष रूप से उल्लेखनीय योगदान देगा।

एजुसैट को बनाने में नवीन तकनीक का सहारा लिया गया है। एजुसैट में केयू बैड ट्रान्सपोंडर नेशनल बीम को नियन्त्रित करेगा, जबकि सी–बैंड ट्रान्सपोंडर नेशनल कबरेज बीम पर नियन्त्रण रखेंगे। इन्हीं केयू बैंड और सी–बैंड की मदद से दूरसंचार और टेलीविजन सेवाओं की विविधता प्राप्त हो सकेगी।

9.2.5 सिटीजन बैंड रेडियो

सिटीजन बैण्ड रडियो तकनीक लगभग 20 मिलोमीटर के व्यास के लिए मौखिक संचार की तकनीक है। इसमें लगभग 27 MHZ संचार के लिए सन्देश भेजने के लिए रखा जाता है। सिटीजन बैण्ड रेडियों के सेट साधारण एवं सस्ता है। अतः इस बेतार प्रणाली के द्वारा ग्रामीण तथा पिछड़े दूरदराज के क्षत्रों में सन्देश प्रसारित करने की सस्ती तथा उपयोगी पद्धति है। भारत सरकार ने ग्रामीण अंचलों में इसका जाल बिछाने का प्रयत्न किया है। लगभग 40 चैनल सिटीजन बैण्ड रेडियों के अब तक आवण्टित किए जा चुके हैं।

9.2.6 उपग्रह संचार

इण्टरनेट, ई–मेल, सेल्युलर टेलीफोन, आदि में संचार उपग्रह के माध्यम से किया जाता है, किन्तु आज इण्टरनेट, सेल्युलर फोन आदि पर आवश्यकता से अधिक कार्य का बोझ पड़ने लगा है, जिससे सम्पर्क कराने में देरी होती है। कम्पनियां तथा निगम, जिनको विशाल एवं व्यापक क्षेत्र में संचार कार्य करना पड़ता है, इस अवरोध से समस्याग्रस्त

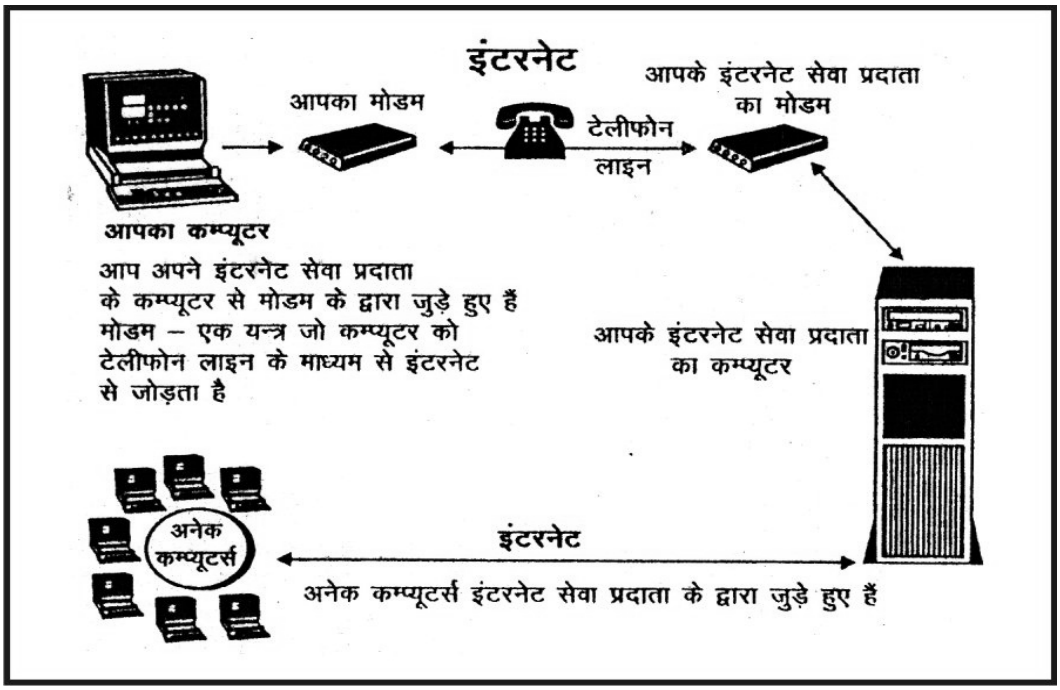
हो जाते हैं। इसलिए स्वयं के अथवा किराए पर लेकर वे उपग्रह द्वारा अपने सम्पूर्ण संचार तन्त्र को अधिक सक्रिय बनाने का प्रयास कर रहे हैं। जब स्वयं का उपग्रह होता है, तो सम्पर्क एवं संचार में अवरोध की सम्भावना काफी कम हो जाती है।

ग्लोब्लास्टर, इरीडियम तथा ओडिसी आदि ने लगभग 100 से अधिक उपग्रह संचार ऐसे उन्नत व्यावसायिक संगठन को किराए पर देने की योजना बनायी है। कुछ संगठन इसका प्रयोग भी कर रहे हैं।

9.2.7 इण्टरनेट

इण्टरनेट एक अत्यधिक बलशाली एवं गतिशील संचार माध्यम से वह बहुत सारे कम्प्यूटर का एक जाल है जो कि उपग्रहों और सेल्युलर तन्त्र प्रणालियों, लैन और वैन प्रणालियों तथा टेलीफोनों के द्वारा एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। सूचना प्रसारण के इस बढ़ते हुए युग में इण्टरनेट का महत्व बढ़ता जा रहा है। अब कोई भी व्यक्ति, देश अथवा समाज सूचना प्रौद्योगिकी के इस अद्‌भुत अंग से अछूता नहीं रह गया है।

इण्टरनेट की शुरूआत 1986 में हुई थी। तब अमेरीका के प्रतिरक्षा विभाग ने अपने आंकड़ों को विभिन्न विभागों, जो दूर–दूर के राज्यों में स्थित थे, भेजने व प्राप्त करने के लिए उपग्रहों और केबल नेटवर्कों का उपयोग किया था। बाद में पुस्तकालय और कुछ निजी संस्थान भी इससे जुड़ गए। बैल लैब्स ने इण्टरनेट के जाल को फैलाने में काफी सहायता की और उसके अनुसंधान निरन्तर जारी हैं। सन् 2005 तक विश्व के एक बिलियन इण्टरनेट कनैक्शन हो जाने की सम्भावना है।



प्रमुख भाग– इण्टरनेट के मुख्य भाग हैं– मुख्य सूचना कम्प्यूटर, टेलीफोन, मोडम, क्षेत्रीय नेटवर्क या वृहत् क्षेत्रीय नेटवर्क, उपग्रह संचार तथा केबल नेटवर्क। इण्टरनेट देखने और उससे सूचना एकत्रित करने के कार्य को सर्फिंग कहते हैं। सर्फिंग करने का तरीका कठिन नहीं है। इण्टरनेट पर सूचनाएं डालने के लिए जिस सॉफ्टवेयर की आवश्यकता होती है, उसे ब्राउसर कहा जाता है।

इण्टरनेट पर सम्बद्धता के स्तर–इण्टरनेट पर सम्बद्धता के तीन स्तर हैं।

प्रथम स्तर पर उपभोक्ता केवल इण्टरनेट पर सूचनाएं या जानकारी देख सकता है। द्वितीय स्तर पर वह इण्टरनेट का एक भाग बन जाता है जिससे यह इण्टरनेट पर सूचनाएं देखने के साथ–साथ अपनी वेबसाइट बनाकर सूचनाएं एकत्रित कर सकता है। तृतीय स्तर पर वह इण्टरनेट प्रणाली का मुख्य हिस्सा बन जाता है। उसका अपना मुख्य सूचना कम्प्यूटर होता है जिसके अन्तर्गत द्वितीय स्तर के प्रयोगकर्ता अपनी वेबसाइट बना सकते हैं।

इन्टरनेट सेवा देने वाला–इण्टरनेट सेवा का प्रारम्भ अस्सी के दशक से ही हो गया था, किन्तु नब्बे के दशक के मध्य में इण्टरनेट में

हुए भारी विस्तार से कम्प्यूटर जगत् में तहलका मच गया। आज सूचना प्रौद्योगिकी और इण्टरनेट विश्वस्तर पर एक प्रबल आधारभूत संरचना के रूप में उभरकर आया है।

प्रारम्भ में भारत में एक ही आई.एस.पी. था जिसे हम वी.एस.एन. एल. के नाम से जानते हैं। वी.एस.एन.एल. का प्रारम्भ 1986 के आरम्भ में किया गया था।

वर्तमान में कई निजी कम्पनियां जैसे–सत्यम्, मन्त्रा आदि इण्टरनेट सेवाएं प्रदान कर रही हैं। इसके अलावा सरकारी उपक्रम तथा महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड भी इण्टरनेट सेवाएं प्रदान कर रहा है। इसके अतिरिक्त केबल ऑपरेटर भी यह सुविधा प्रदान कर रहे हैं। देश के सभी जिलों में इण्टरनेट गेटवेस डाले जा चुके हैं।

भारतीय इण्टरनेट– जनवरी, 1995 को भारत में प्रथम विश्वस्तरीय आंकड़ा सूचना सेवा 'इण्टरनेट' के रूप में शुरू हुई। इस सेवा के अन्तर्गत 160 देशें के अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क सम्बद्ध हैं। ज्ञातव्य है कि इसके द्वारा विश्वभर के लाखों कम्प्यूटर सूचना–केन्द्रों से प्राप्त सूचनाओं व आकड़ों को अपनी भाषा में बड़ी सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि को 'ट्रांसमिशन कन्ट्रोल प्राटोकॉल या इण्टरनेट प्रोटोकॉल' कहा जाता है।

इण्टरनेट इण्टरनेशनल नेटवर्क का संक्षिप्त नाम है। दूरसंचार के क्षेत्र में पेजर और सेल्युलर फोन के बाद यह अनुसंधान विश्व में 20वीं सदी की अभी तक की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इंटरनेट सेवा के कारण कोई व्यक्ति घर बैठे देश–विदेश की प्रत्येक प्रकार की घटनाओं को देख सकता है और उनसे सम्पर्क स्थापित कर सकता है।

भारत में इण्टरनेट का प्रवेश वर्ष 1987–88 में ही हो गया था, परन्तु उस समय इसकी सुविधा सीमित लोगों को ही उपलब्ध हो पाई थी। जनसामान्य के लिए इसकी सुविधा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से 15 अगस्त, 1995 को विदेश संचार निगम लिमिटेड ने 'गेटवे इण्टरनेट' सेवा

आरम्भ की। नवम्बर 1998 से इण्टरनेट सेवा निजी भागीदारी के लिए खोल दी गयी। 31 अक्टूबर, 2003 तक लाइसेन्स शुल्क हटा दिया और 1 नवम्बर, 2003 से लाइसेन्स शुल्क मात्रा एक रुपया वार्षिक रहेगा। देश में पंजीकृत कोई भी व्यक्ति लाइसेन्स प्राप्त कर सकता है। 30 सितम्बर, 2006 तक 336 इण्टरनेट सर्विस प्रोवाइड लाइसेन्स जारी किए गए थे। भारत के 612 जिलों में से 303 जिलों में इण्टरनेट नोड सुविधा उपलब्ध है। देश में इस समय 71 लाख इण्टरनेट उपभोक्ता है। इंटरनेट कम्प्यूटर के माध्यम से लोकल कॉल, एस.टी.डी. या आई.एस.डी. किसी भी माध्यम को अपनाने पर लोकल कॉल का ही चार्ज लगता है। वर्तमान में विश्व के लगभग 160 देशों के प्रमुख पुस्तकालयों, अस्पतालों, अनुसधान–संस्थानों, मनोरंजन–कक्षों, आदि को इण्टरनेट के अन्तर्गत लाया जाा सकता है, जिससे सूचनाओं के आदान–प्रदान में अत्यधिक सुविधा होती है।

दूरसंचार विभाग के पैकेट स्विच्ड पब्लिक डाटा, नेटवर्क आईनेट के उपभोक्ता अब साइबर स्पेस की नई दुनिया का अनुभव कर सकते हैं। अहमदाबाद, बंगलुरू, मुम्बई, कोलकाता, नई दिल्ली, हैदराबाद, चेन्नई तथा पुणे में आईनेट प्रथम चरण से ही चल रहा है जबकि इसके द्वितीय चरण में इसे 80 और शहरों में बढ़ाऐ जाने की योजना है।

इण्टरनेट के प्रयोग– सूचना क्रान्ति के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इण्टरनेट का प्रयोग धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है। व्यावसायिक जगत् के सूचना संचार में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। आज चाहे व्यवसाय का आकार लघु हो, मध्यम हो या दीर्घ, इण्टरनेट की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इण्टरनेट के विभिन्न प्रयोग निम्न प्रकार है।

1– ई–कॉमर्स– इण्टरनेट के माध्यम से ई–कॉमर्स का विशाल करोबार लगातार बढ़ रहा है। इण्टरनेट के द्वारा अब लोग अपने घरों में ही काम कर सकेंगे। इसका आशय है कि 'साहो' की तकनीक अब घर–घर में स्थान बना लेगी।

2– ई–बैंकिंग–इण्टरनेट ने बैंकिंग क्षेत्र में भी नए युग का सूत्रपात किया है। बैंकिंग कार्यप्रणाली में ई–बैंकिंग, पी.सी. बैंकिंग, टेली बैंकिंग तथा मोबाइल बैंकिंग का प्रयाग लगातार बढ़ता जा रहा है।

3– सूचनाओं का आदान–प्रदान– इण्टनेट से किसी भी विषय से सम्बन्धित सूचना प्राप्त की जा सकती है। इण्टरनेट द्वारा चिकित्सा, जनसंचार, परिवहन, शिक्षा, स्वास्थ्य, शोधकार्य आदि की सूचनाएं एवं आंकड़े सहजता से उपलब्ध हो जाते हैं।

4– विज्ञापन–वर्तमान में व्यावसायिक संगठन एवं पेशेवर इण्टरनेट के माध्यम से विज्ञापन कराते हैं। इसके लिए उन्हें वेबसाइट, जो विज्ञापन सेवा उपलब्ध कराती है, को सुनना पड़ेगा। वेबसाइट अपन साइट पर विज्ञापन के लिए व्यय वसूल करती हैं।

5– विपणन– वर्तमान में इण्टरनेट द्वारा खरीद–फरोख्त एक फैशन बन गया है। बहुत–सी कम्पनियां, विभागीय स्टोर, आदि क्रेडिट कार्ड द्वारा इण्टरनेट के माध्यम से बिक्री करते हैं।

विश्वव्यापी वेब– इण्टरनेट ऐसे कम्प्यूटरों की प्रणाली है जो सूचना लेने और उसके आदान–प्रदान के लिए आपस में जुड़े हैं। यह लाखों–करोड़ों कम्प्यूटरों को जोड़ने वाला विश्वव्यापी वेब संजाल हैं। वर्ष 1998 में इण्टरनेट के विश्वभर में 10 करोड़ से अधिक प्रयोक्ता थे। अब यह संख्या तेजी से बढ़ रही है। एक सौ अधिक देश आंकड़ों, समाचारों और समितियों के आदान–प्रदान के जरिए आपस में जुड़े हैं। इंण्टरनेट बनावट से विकेन्द्रित है। प्रत्येक इंण्टरनेट कम्प्यूटर होस्ट कहलाता है और स्वतन्त्र रूप से काम करता है। इसके संचालनकर्ता यह चयन कर सकते है कि किन इण्टरनेट समुदाय को कौन–सी स्थानीय सेवाएं उपलब्ध कराई जाएं। पिछले तीन दशकों में कम्प्यूटर–प्रयोक्ताओं को संजाल बढ़ा है और दुनियाभर के कम्प्यूटर प्रयोक्ता आपस में जुड़ गए हैं।

डब्ल्यू. डब्ल्यू. डब्ल्यू. का आविष्कार सर्न में किया गया जो स्विट्जरलैण्ड में कण–भौतिकी का संस्थान है। आरम्भ में ली ऑफ सर्न, टिम वर्नर्स ने उच्च यूजर्स भौतिकी के क्षेत्र में केवल विश्वव्यापी संचार के लिए डब्ल्यू. डब्ल्यू. डब्ल्यू. का विकास किया। लेकिन इस कम्प्यूटर नेटवर्क के साथ अतिसम्पर्कों की अवधारणा ने विश्वव्यापी वेब को लोकप्रिय बना दिया क्योंकि उपयोगकर्ता जटिल कम्प्यूटर कमानों के बिना एक पेज से दूसरे पेज पर जा सकते थे।

एक और घटना जिसने इंटरनेट को आम लोगों तक पहुंचाया, वह थी मोसेक नामक लेखाचित्रीय वेब ब्राउचर जिस का विकास एक वर्ष के बाद पहला ब्राउजर मौसेक जारी किया गया। इंटरनेट की विकास दर 341 प्रतिशत रही जिस पर विश्वास नहीं होता। यह किसी भी व्यक्ति के लिए किसी विषय पर सूचना हासिल करने का मूल्यवान स्त्रोत है। साथ ही हजारों मील दूर बैठे लोगों के साथ बातचीत का सुरम्य माध्यम है। बाद में नेटस्केप नैवीगेटर आर इंटरनेट एक्सप्लोरर जैसे वेब ब्राउजरों ने इंटरनेट को बहुत लोकप्रिय बना दिया।

9.2.8 ई–मेल

प्रमुख भाग–ई–मेल द्वारा संचार करने के लिए इण्टरनेट में आवश्यक यन्त्रों के साथ ई–मेल पते की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त आवश्यक सॉफ्टवेयर, जो ब्रिटेन के एशुपुल टेलीकॉम द्वारा बनाया गया है, की आवश्यकता होती है।

जिस प्रकार साधारण सन्देश भेजने के लिए सन्देश प्राप्त करने वाले का नाम, पता आदि की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार ई–मेल प्रणाली में ई–मेल पते की आवश्यकता होती है।

ई–मेल सुविधा को प्राप्त करने के लिए जब सन्देश को ई–मेल पते के साथ इण्टरनेट आधारित कम्प्यूटर पर डाला जाता है तो पहले कम्प्यूटर के साथ जुड़ा मोडेम कम्प्यूटर में भण्डारित सन्देश को डिजिटल रूप से एनलॉग रूप में परिवर्तित करके लिए गए पते पर

सम्प्रेषित कर देता है। वह कम्प्यूटर जिस पर सन्देश भेजा गया है से जुड़ा मोडेम उसे दोबारा एनालॉग रूप से डिजिटल रूप में बदलकर सूचना संगृहीत कर लेता है।

सीमायें– (1) ई–मेल द्वारा संचार करने के लिए सन्देश प्राप्तकर्ता के पास भी ई–मेल सुविधा होना आवश्यक है। (2) ई–मेल द्वारा संचार प्राप्त करने पर प्राप्तकर्ता को इसकी जानकारी होना आवश्यक है।

भारत में इलेक्ट्रॉनिक मेल– भारत में इलेकट्रॉनिक मेल सेवा विदेश संचार निगम लिमिटेड के HRMS-400 नाम से शुरू की गयी थी, जिसका कार्यक्षेत्र मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, दिल्ली, बंगलुरू, पुणे, विरुवनन्तपुरम और भुवनेश्वर तक ही सीमित था। इस सेवा को कनाडा, अमरीका, इंग्लैण्ड, जापान और इटली से जोड़ दिया गया है। ई–मेल आधारित अनेक मूल्य वर्द्धित सेवाएं देश में आरम्भ की गयी हैं।

देश के चारों महानगरों में कुल मिलाकर 100 से भी अधिक ई–मेल सेवाएं अब कार्यरत हैं। सरकारी नीतियों में उदारीकरण के कारण निजी कम्पनियों द्वारा विभिन्न प्रकार की ई–मेल सेवाएं शुरू कर दी गयी हैं। सार्वजनिक क्षेत्र की कुछ कम्पनियां भी इस सेवा क्षेत्र से जुड़ गई है।

ई–मेल इण्टरनेट के प्रयोग का महत्वपूर्ण आयाम है। संचार के बढ़ते हुए युग में संचारकर्ता अपने सन्देश को शीघ्रता के साथ संचारित करना चाहता है। ई–मेल सुविधा संचार के अन्य साधनों की अपेक्षा सन्देश को तीव्रता के साथ एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को संचारित करती है इस प्रणाली में उपग्रह के द्वारा सन्देश एक स्थान से दूसरे स्थान पर संचारित होता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. उपग्रह संचार का अर्थ लिखिए।

2. ई–मेल के बारे में लिखिए।

9.3 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में संचार के आधुनिक साधनों के बारे मं व्याख्या की गयी है। हमारा वर्तमान समय यांत्रिक युग का है जिसमें हम सभी लोग संचार के लिए विभिन्न प्रकार के साधनों का उपयोग कर रहे है। वास्तव में प्रस्तुत इकाई विभिन्न प्रकार के आधुनिक संचार के साधनों पर प्रकाश डाला गया जिसमें पेजर के बारे में लिखते हुए बताया गया है यह एक ऐसी युक्ति है जो संदेशों को लिखित रूप से यंत्र की स्क्रीन पर दर्शाता है। सेल्युलर फोन के बारे में लिखिते हुए बताया गया है यह एक ऐसी युक्ति है जो आसानी से प्रयोगकर्ता कहीं भी ले जा सकता है तथा संदेश को ध्वनि के रूप में सुन सकता है तथा भेज सकता है। इसी इकाई में फैक्स के बारे में बताते हुए लिखा गया है यह एक ऐसी युक्ति है जिसके द्वारा किसी भी संदेश को कागज के रूप में भेजा व प्राप्त किया जा सकता है। वीडिया कॉन्फ्रेंसिंग के बारे में लिखिते हुए बताया गया है कि इसके द्वारा न केवल संदेशों को भेजा जाता है बल्कि एक दूसरे से सजीव वार्ता भी की जा सकती है। इकाई के अंत में इण्टरनेट के बारे में बताया गया है जिसमें लिखा गया है कि इसमें मुख्य सूचना कम्प्यूटर, टेलीफोन, मॉडम, क्षेत्रीय नेटवर्क तथा उपग्रह संचार एवं केबल नेटवर्क के द्वारा सूचना भेजी एवं प्राप्त की जा सकती है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों को संचार के आधुनिक साधनों से परिचय करवायेगी एवं आपके ज्ञान में उत्तरोतर वृद्धि करायेगी।

9.4 पारिभाषिक शब्दावली

पेजर– पेजर एक ऐसी युक्ति है जो आयताकार होती है जिसमें आने वाले सन्देश यंत्र की स्क्रीन पर दिखते है जिसे यंत्रधारक आसानी पढ़ कर संदेश प्राप्त कर लेता है।

सेल्युलर फोन– इसे मोबाइल फोन भी कहते है जिसकों प्रयोगकर्ता कहीं भी ला जा सकता है। कहीं से भी मोबाइल फोन धारक परम्परागत या मोबाइल फोन पर संचार कर सकता है।

फैक्स– फैक्स वह युक्ति है जिसके द्वारा दस्तावेजों की फोटो कापी इच्छित व्यक्ति तक अविलम्ब पहुंचा सकते है।

वीडियों कॉन्फ्रेसिंग– यह एक ऐसी युक्ति है जिसमे माध्यम से व्यक्ति न केवल सन्देशों को प्रेषित करता है बल्कि एक दूसरे से सजीव वार्ता भी कर सकता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– संचार के आधुनिक साधानों से आप क्या समझते है?

2– पेजर क्या है।

3– सेल्युलर फोन पर टिप्पणी कीजिए।

4– फैक्स मशीन के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

5– वीडिया कॉन्फ्रेसिंग से आप क्या समझते है?

6– सिटीजन बैण्ड रेडियों क्या है?

7– उपग्रह संचार से आप क्या समझते है?

8– इण्टरनेट पर टिप्पणी लिखिए।

9– ई–मेल के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत

1– संचार के आधुनिक साधनों पर एक निबन्ध लिखिए।

2– वीडियों कॉन्फ्रेसिंग, उपग्रह संचार, फैक्स एवं इण्टरनेट पर टिप्पणी लिखिए।

9.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– मिश्र, डा० विनोद एवं शुक्ल, डा० नरेन्द्र व्यावसायिक सम्प्रेषण, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस, आगरा वर्ष 2014–15

2– सम्पादक मण्डल, शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, प्रतियोगिता साहित्य सीरीज, आगरा वर्ष–2013

टिप्पणी

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड

3
संचार एवं मीडिया

इकाई 10
मीडिया प्रतिनिधित्व एवं दस्तावेजीकरण 180

इकाई 11
समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता 198

इकाई 12
समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियाँ 212

इकाई 13
संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति 226

इकाई 14
संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरण 238

इकाई 15
संगठित कार्यक्रमों के प्रकार 248

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे	:	कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 रूपेश सिंह	:	डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ
डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
डॉ0 दिनेश सिंह	:	डॉ0 राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल	:	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड परिचय

तृतीय खण्ड – संचार एवं मीडिया

संचार एवं परामर्श विषय के इस तृतीय भाग को कुल छः इकाईयों में विभक्त किया गया है। प्रथम इकाई मीडिया प्रतिनिधित्व एवं दस्तावेजीकरण पर आधारित हैं इसमें स्पष्ट किया गया है कि मीडिया का प्रतिनिधित्व कैसे किया जा सकता है एवं मीडिया से सम्बन्धित सभी दस्तावेज का रख रखाव व वर्गीकरण किस प्रकार किया जा सकता है। इस खण्ड की दूसरी इकाई में समाज कार्य की गतिविधियों में मीडिया का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है। स्पष्ट किया गया है। इस खण्ड की तीसरी इकाई समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियों पर आधारित है। इस खण्ड की चौथी इकाई संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति पर आधारित है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि संस्थागत कार्यक्रमों का नियोजित तरीके से कैसे सफल आयोजन किया जा सकता है। इस खण्ड की पाँचवी इकाई संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरणों पर आधारित है इस खण्ड की अन्तिम इकाई संगठित कार्यक्रमों के प्रकार एवं विशेषताओं पर आधारित है।

खण्ड–तृतीय–संचार एवं मीडिया

इकाई 10 मीडिया प्रतिनिधित्व एवं दस्तावेदीकरण

इकाई की रूप रेखा

10.0 – उद्देश्य

10.1 – प्रस्तावना

10.2 – मीडिया की अवधारणा तथा अर्थ

10.3 – मीडिया की विशेषता

10.4 – मीडिया तकनीक तथा शैलियां

10.5 – मीडिया के मुख्य माध्यम तथा शैलियां

10.6 – मीडिया और प्रतिनिधित्व

10.7 – मीडिया और प्रतिनिधित्व की प्रमुख विशेषता

10.8 – मीडिया एवं दस्तावेजीकरण

10.9 – सार–संक्षेप, 10.10 पारिभाषिक शब्दावली एवं अभ्यास प्रश्न–लघु, विस्तृत

10.9 – संदर्भ सूची

10.0 उददेश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है मीडिया की अवधारणा तथा अर्थ की व्याख्या करना तथा साथ ही साथ मीडिया के प्रतिनिधित्व एवं दस्तावेजी करण का वर्णन करना। आधुनिक युग में शिक्षा के प्रसार तथा विज्ञान की प्रगति से जो जन जागृति आई है उसके फलस्वरूप राजनीति, समाज और सत्ता के लिए मीडिया के माध्यम अति आवश्यक हो गये है। लोगों तक बात पहुंचाने और जनमत तैयार करने के लिए आज मीडिया क्षेत्र का बहुआयामी विकास एवं प्रसार

हुआ है। फिल्म, लोककला नाटक और टेलीविजन आदि का भी अब मीडिया माध्यमों के रूप में व्यापक इस्तेमाल होने लगा है। मीडिया का व्यवसाय कैसा है, वह कैसे चलना चाहिए, इसके तौर–तरीके क्या हो, इसका दर्शन क्या है, इसका प्रतिनिधित्व कैसे हो तथा इसका दस्तावेजीकरण कैसे किया जाए इसके लिए इस विषय का ज्ञान, अध्ययन और अध्यापन आवश्यक है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. मीडिया की अवधारणा तथा अर्थ की व्याख्या कर सकेंगें।
2. मीडिया की तकनीक तथा शैलियों का वर्णन कर सकेंगे।
3. मीडिया के प्रतिनिधित्व की व्याख्या कर सकेगें।
4. मीडिया के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
5. मीडिया के दस्तावेजीकरण का उल्लेख कर सकेगें।

10.1 प्रस्तावना :

मानव समाज में मीडिया की उपयोगिता और उसके महत्व तथा उसके प्रतिनिधित्व और दस्तावेजीकरण का अध्ययन करने के लिए हमें मानव के अतिरिक्त अन्य प्राणियों के जीवन का भी अवलोकन करना होगा क्योंकि मूलतः इन्सान भी तो अन्य जीवों की तरह एक प्राणी ही है। अंतर है तो मात्र यह कि इसकी सोच विचार की शक्ति, या बोलने और मनोदशा को अभिव्यक्त करने की क्षमता ने उसे परमात्मा की समस्त सृष्टि में एक सर्वोपरि स्थान दिया है। मीडिया के सिद्धांतों की स्थापना के लिए पशु–पक्षियों में संचार का काम किस तरह चलता है उसे हम बारीकी में देखे तो बहुत से रहस्य खुल जाते है।

हमने अक्सर देखा है कि जब भी कभी कोई खतरा दिखाई देता है तो कई पक्षी बहुत शोर मचाना शुरू कर देते है। कौओं को ही लीजिए। अगर कोई कौआ कहीं पकड़ा जाए या कंकर छर्रे–का

निशाना हो जाए तो समूह के सारे कौए इकट्ठे हो जाते है। कॉव–कॉय करके आसमान सिर पर उठा लेते है।

आज का युग मीडिया का युग है। मीडिया का यह युग शताब्दियों से चल रहा है। मीडिया का उल्लेख करते ही हमारा ध्यान मुद्रण, पत्र, दूरभाष, रेडियो आदि संचार के साधनों की ओर जाता है। ये सभी उपकरण शताब्दियों से चले आ रहे यह सभ्यता या विज्ञान के विकास का परिणाम है। जिस तरह परिवहन या यातायात के आधुनिक साधनों, रेलगाड़ियों, मोटरकार, वायुयान, जलपोतों से हम लाभ उठाते हैं, इसी तरह संचार के साधन भी हमारी सहायता करते हैं।

मीडिया के विकास का यह सिलसिला जो प्राचीन युग से ही चला आ रहा है, अभी रूका नहीं और न ही कभी रूकेगा। यह प्रकृति का नियम है कि कोई नहीं कह सकता है कि इस प्रगति की दिशा कौन सी होगी। संचार के साधनों के विज्ञान को समझने के लिए मीडिया के विशेषज्ञों ने इस प्रक्रिया की कुछ महत्वपूर्ण स्थितियां निश्चित की है।

10.2 मीडिया की अवधारणा तथा अर्थ

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और भौतिक आवश्यकताओं के अतिरिक्त भी उसकी कुछ अन्य महत्वपूर्ण एवं मूलभूत आवश्यकतायें हैं। अपने साथियों से संपर्क साधना और अपने मन की बात उन तक पहुंचाना भी इसी प्रकार की एक ऐसी मूलभूत जरूरत है जो मनुष्य को संतोष के साथ–साथ मनुष्यत्व प्रदान करने में भी सहायक सिद्ध होती है। इसलिए मीडिया का आश्रय वह लेता है। सरल शब्दावली में हम कह सकते हैं कि किसी सूचना, विचार तथा मनोभाव को दूसरों तक पहुचाने की कला ही मीडिया है।

सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ–साथ पढ़े–लिखे एवं सुसंस्कृत जन–समुदाय ने इस कला के आधार पर समय की

मांग को ध्यान में रखते हुए अपना संदेश दूसरों तक पहुंचाने के अनेक भव्य साधनों एवं माध्यमों का विकास कर लिया है जिन्हें हम आज की परिभाषित शब्दावली में मीडिया कहते हैं। जैसे–जैसे वैज्ञानिक उपकरणो का विकास होता जा रहा है, त्यों–त्यों इस मीडिया की कला में भी उत्तरोत्तर पैनापन और सूक्ष्मता दिखाई देने लगी है।

प्राचीन काल में भारत वर्ष में जबकि लिखने पढ़ने व मुद्रण आदि के इतने साधन उपलब्ध नहीं थे, मीडिया का सबसे बड़ा माध्यम गुरू तथा पूर्वज के मुख से बात सुनकर उस संदेश को आने वाली पीढ़ी तक पहुंचाना होता था। कालान्तर में लेखन का प्रचलन होने पर भोजपत्रों आदि पर लिखकर संदेश पहुंचाये जाने लगे। यह प्रथा हमारे देश में कारगर सिद्ध हुई। इसी के बदौलत हमारे वेद पुराण आदि हम तक पहुंच सके है।

मीडिया का अर्थ

मीडिया एक कला है मीडिया किसी भी बात को गहराई तक पहुंचाती है। मीडिया शब्द का नाम आते ही हमारे जेहन में टेलीविजन, रेडियो, समाचार पत्र व अन्य परंपरागत माध्यम घूमने लगते हैं। मीडिया से हमारा सीधा तात्पर्य उस माध्यम से है जिसके द्वारा सूचना प्राप्त की जाती है।

मीडिया लोकमत का सुधारक और समाज में सृजनशील माहौल का निर्माणकर्ता है। जहां एक तरफ मीडिया हमें देश की राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों की जानकारी देता है, वहीं विदेशों में घटती घटनाओं और बदलते सामाजिक मूल्यों की भी जानकारी देता है। समाचारों को जन–जन तक पहुंचाने के अलावा मीडिया हमें अधिक शिक्षित कर हमारे मानसिक क्षितिज का भी विस्तार करती है। देश विदेश में घटने वाली घटनाओं से अवगत कराकर मीडिया लोगों को सही दिशा भी प्रदान करती है।

स्वतंत्रता संग्राम में देश की स्वतंत्रता के प्रति जनमानस में क्रांति की चेतना जागृत करने का बीड़ा मीडिया ने ही उठाया था, जिसके कारण देश में युवाओं ने स्वराज्य प्राप्ति के उद्देश्य से हंसते–हंसते अपने प्राणों की आहुति दे दी। इस प्रकार देश को स्वतन्त्र कराने में मीडिया ने एक महान और महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मीडिया का सामान्य अर्थ जनमाध्यमों के सूचना प्रेषण व्यवहार एवं प्रक्रिया से जुड़ा है। वास्तव में मीडिया संचार प्रक्रिया का व्यवहार पक्ष है। इसी माध्यम से संचार मूर्तरूप लेता है। इस संबंध में आक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार ''मीडिया सूचना, सामग्री के संकलन, लेखन एवं प्रकाशन से जुड़ा कार्य है जो समाचार पत्र, पत्रिका, रेडियो एवं टी0वी0 से जुड़ा है।

"Media is the work of collecting, writing and publishing materials in newspapers and magazines or on television and radio."

- ६ मीडिया पांचवा वेद है, जिसके द्वारा ज्ञान विज्ञान संबंधी बातों को जान कर हम अपनी बुद्धि का विकास करते है।
- ६ मीडिया एक व्यवसाय है जिसका सीधा संबंध सामाजिक ज्ञान से है।
- ६ मीडिया जन सेवा है, कला है।
- ६ मीडिया एक व्यापक सूचना प्रक्रिया है।
- ६ मीडिया पर पर्यावरण, स्थान, समय, व्यक्ति एवं समाज का प्रभाव पड़ता है।
- ६ मीडिया का संबंध मनुष्य एवं मानव समाज से है।
- ६ मीडिया एक कार्य, कौशल अथवा कला है।
- ६ मीडिया एवं संचार का अन्योन्यश्रित संबंध है।
- ६ मीडिया विश्व मानव समाज के आधार तत्व है।

- मीडिया प्रत्येक समाज की अनिवार्य आवश्यकता है।
- मीडिया के अभाव में मानव समाज की स्थापना नही हो सकती है।
- मीडिया के द्वारा विचारों को देश के एक कोने से दूसरे कोने तक सुगमता से पहुचाया जाता है।
- मीडिया का काम बिखरे हुए को एकत्र करना है।
- मीडिया लोकतंत्र का प्रहरी है।
- मीडिया सरकार पर दबाव बनाने का कार्य करता है।
- मीडिया साक्षरता पर आधारित ज्ञान है।
- मीडिया के द्वारा सूचनाओ को व्यापक स्तर पर प्रसार किया जाता है।

10.3 मीडिया की विशेषता

1. सूचना का आदान प्रदान करना।
2. जनमत तैयार करना।
3. सामाजिक मूल्य की स्थापना करना।
4. शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना।
5. समाज को मनोरंजन प्रदान करना।
6. जन जागरूकता का विकास करना।
7. समाज की बुराइयों को दूर करना।
8. लोकतंत्र के प्रहरी के रूप में कार्य करना।
9. समाज में जन सूचना का प्रसार करना।
10. समाज को सरकार की नीतियों से अवगत कराना।
11. सामुदायिक विकास।
12. मानव संसाधनों का विकास।
13. शिक्षा का व्यावसायीकरण करना।
14. सामाजिक परिवर्तन लाना।
15. जन शिक्षा का प्रसार करना।

10.4 मीडिया तकनीक तथा शैलियां

मीडिया एक सहज प्रवृत्ति है। समस्त प्राणि जगत मीडिया की एक लंबी नैसर्गिक श्रंखला से जुडा हुआ है, अर्थात् ऐसा कोई भी क्षण नहीं होता जब हम संचार की प्रक्रिया से न गुजर रहे हों। मस्तिक विज्ञानियों का कहना है कि हमारे शरीर की लाखो कोशिकायें भी एक दूसरे से लगातार संचार करती रहती है और जिस क्षण यह संचार प्रक्रिया बंद हो जाती है, उसी क्षण हम मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। मृत्यु का दूसरा नाम संचार–शून्यता है। मीडिया का मुख्य उद्देश्य वैचारिक धरातल पर सहभागिता अथवा साझेदारी स्थापित करना होता है। यदि हम प्रभावकारी ढंग से संचार करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि संचारक अथवा संदेशवाहक के शब्दों और प्रतीकों का अर्थ–संदेश प्राप्त कर्त्ता के लिए वही हो जो संचार के लिए होता है। जब हम बहुत बड़े दर्शक–श्रोता समूह के साथ संचार करते है तो इसे जनसंचार कहा जाता है। जनसंचार का दर्शक–श्रोता आमतौर पर विविध होता है और इसमें विभिन्न सामाजिक समूहों के लोग होते हैं। दर्शक–श्रोता गुमनाम होते है क्योंकि वे और संचारक एक दूसरे को नहीं जानते। जनसंचार बहुधा एक तरका होता है।

जब हम मीडिया की तकनीको और शैलियों की बात करते है तो दो तथ्य हमारे सामाने उभर कर आते है।

1. मानव।
2. मशीन अथवा इलैक्ट्रानिक प्रौद्योगिकी।

मनुष्य ही विचारों का जनक है और विचारों के प्रेषण के लिए विभिन्न तकनीकों और माध्यमों की भूमिका आनुषंगिक है। टैक्नोलॉजी और प्रौधोगिकी मीडिया को प्रभावी ढंग से प्रसारित–प्रचारित करने में सहायक सिद्ध हो सकती है। लेकिन वह प्रेषित किए जाने वाले कार्यक्रम की गुणवक्ता को सुनिश्चित नहीं

कर सकती। संचार को निम्न चार आधार भूत तथ्यों को दृष्टि में रखना चाहिए।

1. पाठक, दर्शक–श्रोत विभिन्न परिवेशो से संबंध रखते हैं और वे कई प्रभावों के अधीन होते है जिनमें से संचारक का संदेश केवल एक होता है।
2. लोग आम तौर पर उन्हीं बातों को सुनते, देखते अथवा पढ़ते हैं जिनमें उनके दृष्टिकोणों को प्रस्तुत किया गया हो।
3. मीडिया के माध्यम अपने अलग समुदाय पैदा करते है। उदाहरण के तौर पर वे लोग जो अखबार बढ़ते है, उन लोगों से भिन्न होते है जो समाचार के लिए टेलिविजन पर निर्भर है।
4. मीडिया माध्यमों से व्यक्ति के आचरण एवं व्यवहार पर अनेक प्रकार के प्रभाव पड़ते है, जिसमें से सभी को मापा नही जा सकता।

10.5 मीडिया के मुख्य माध्यम तथा भौलियां :

1– अन्तवैर्यक्तिक एवं परंपरागत संचार माध्यम :

यह माध्यम सर्वोत्तम संचार माध्यम है, जिसमें विचार–विनियम एक–दूसरे व्यक्ति से सीधे होता है। यह एक जीवन्त माध्यम है क्योंकि आप एक दूसरे से बातचीत करके अपने दृष्टिकोण को अच्छी तरह से समझ सकते है। अतः यह माध्यम अधिक प्रभावकारी और शक्तिशाली है। इस माध्यम में प्रतिक्रिया तुरन्त और तात्कालिक होती है। यह एक सामाजिक माध्यम है जो हमें एक–दूसरे के निकट लाता है।

यह एक अत्यधिक सहज, प्रामाणिक, ईमानदार तथा प्राकृतिक माध्यम है और इस प्रकार यह बहुत ही कारगर और शक्तिशाली होता है। चर्चा, परिचर्चा गोष्ठी, सम्मेलन मनोरंजन, मेले तथा प्रदर्शनी आदि इस श्रेणी में आते है।

प्राचीन काल में मीडिया का माध्यम संगीत और नृत्य हुआ करते थे। सामवेद को संगीत का आदि–श्रोत माना जाता है। नाना प्रकार के धार्मिक तथा सामाजिक अवसरों पर नृत्य की प्रथा जनता में प्रचलित थी। यूरोप में आज से 2500 वर्ष पहले यूनानी रंगमंच की शुरूआत हुई और मीडिया का प्रथम माध्यम रंगमंच बना।

2– विज्ञापन तथा बाह्य प्रचार :

मीडिया ने विज्ञापन का विशेष महत्व है। आज के युग में कोई भी संस्था चाहे वह सरकार है अथवा गैर सरकारी संगठन, विज्ञापन के जादू से बच नहीं सकती। विज्ञापन का मुख्य उद्देश्य किसी सेवा अथवा उत्पादन की बिक्री ही नहीं होता बल्कि अपने संगठन या संस्था की छवि का निर्माण करना भी इसका एक प्रयोजन रहता है। विज्ञापन के लिए अखबार, रेडियो फिल्म तथा टेलीविजन किसी भी माध्यम को अपनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त होर्डिंग, पोस्टर, इश्तहार, दीवारों पर लिखाई, ब्रोशर, नाटक गाना, भजन, मेले, हैण्डबिल, नुमाइश आदि द्वारा भी विचारों को विज्ञापित किया जा सकता है। राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार का विज्ञापन एवं दृश्य प्रचार निदेशालय सरकारी विज्ञापनों की देखरेख का कार्य करता है।

बाह्य विज्ञापन अथवा प्रचार भारत के लिए नया माध्यम नही है। मौखिक प्रचार के अलावा यह माध्यम हमारे देश में अशोक के समय से ही प्रचलित है।

वाह्य प्रचार के माध्यम का अशोक ने सरकारी नीतियों के प्रचार–प्रसार के लिए भरपूर प्रयोग किया था। चट्टानों पर उकेरे गये सन्देश इस तथ्य के साक्ष्य है। मोटे तौर पर बाह्य विज्ञापन अथवा प्रचार में विज्ञापन के सभी रूप शामिल है जिन्हें लोग आमतौर पर अपने घर से बाहर देखते है। ये रूप लिखित चित्रात्मक अथवा मौखिक हो सकते है। बाह्य प्रचार अन्य माध्यमों

से भिन्न होता है। यह अपना सन्देश किसी मार्केट को नहीं भेजता बल्कि मार्केट इसके इर्द–गिर्द घूमती है। इस प्रकार यह सही मायनों में जन–माध्यम है। बाह्य प्रचार से आप अधिकतम लोगों तक अपना संदेश पहुंचा सकते है जैसे रेलवे स्टेशन, बस अड्डा, सिनेमा घर, चौक चौराहे अथवा अधिकतम यातायात वाले क्षेत्र इसके केन्द्रबिन्दु होते है।

बाह्य प्रचार हेतु निम्न माध्यमों का प्रयोग किया जाता है :–

1. **होर्डिंग** :– होडिंग एक बड़े साईज का प्रदर्शन बोर्ड होता है जिस पर विज्ञापन का संदेश और आकर्षक चित्र बना हुआ होता है। इसे ऐसे स्थान पर लगाया जाता है, जहां लोगों का ध्यान बरबस चला जाता है।
2. **परिवहन विज्ञापन होडिंग** :– आजकल ऐसी कोई बस नहीं होगी जिस पर आप विज्ञापन न देखते हों। परिवहन बसें प्रचार का एक बहुत ही बढ़िया माध्यम है जो कि दूर–दराज के गांवों तक पहुंचती है।
3. **एनेमल बोर्ड** :– ये ऐसे बोर्ड होते हैं जिन पर स्थायी किस्म के विज्ञापन अंकित रहते हैं। परिवार नियोजन जैसे संदेश ऐसे बोर्डों पर अंकित किए जाते है और ये आमतौर पर रेलवे स्टेशन पर लगाये जाते है।
4. **न्यूनसाइन** :– न्यूनसाइन भी एक प्रकार की होडिंग होती है जिसमें बिजली का उपयोग होता है। इसमें विज्ञापन का प्रदर्शन दिन–रात किया जाता है।
5. **कियोस्क** :– ये 30"×40" साइज के पेनल होते है जो कि इस्पाती चादर के बने हुए होते है। इन्हें लकड़ी के फ्रेम पर जड़ा जाता है और टेलीफोन, बिजली के खम्बों से फिट किया जाता है। विज्ञापन का प्रदर्शन दोनों तरफ होता है ताकि दोनों तरफ से आने वाले लोग इन्हें देख सके।

6. **सिनेमा स्लाइड तथा विज्ञापन फिल्में** :– सिनेमा स्लाइड भी विज्ञापन का एक प्रभावकारी माध्यम है क्योंकि स्लाइड को कुछ क्षणों तक ही पर्दे पर प्रदर्शित किया जाता है, इसलिए सन्देश अति संक्षिप्त होना चाहिए। बाह्य प्रचार की प्रभावशाली तकनीक इस बात पर निर्भर करती है कि सन्देश को होडिंग पर किस ढंग से प्रदर्शित किया जाता है।

7. **रेडियो** :– रेडियो मीडिया का एक ऐसा प्रभावी और द्रुतगामी माध्यम है जो एक ही समय में स्थान और दूरी को लांघकर विश्व के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुंच सकता है। यह ध्वनि तरंगों का माध्यम है। सभी मीडिया माध्यमों की तरह रेडियो के भी तीन मुख्य उद्देश्य है। श्रोताओं को सूचित करना, शिक्षा देना और उनका मनोरंजन करना।

8. **टेलीविजन** :– टेलीविजन मीडिया का बहुत ही प्रभावशाली और युवा माध्यम है। ध्वनि के साथ–साथ चित्रों को प्रस्तुत करके इस माध्यम द्वारा मानव व्यक्तित्व को भी प्रस्तुत किया जाता हैं इस प्रकार इसका जनता पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इस सार्वभौमिक माध्यम भी कहा जाता है। यह माध्यम अन्य माध्यमों की तुलना में मंहगा है।

9. **फिल्म अथवा सिनेमा** :– फिल्म अथवा सिनेमा मीडिया का एक अत्यंत शक्तिशाली और प्रभावकारी माध्यम है। संचार माध्यमों के कुछ विशेषज्ञ इसे केवल लोकरंजन का माध्यम मानते हैं। संचार विज्ञान के कुछ विद्वान ऐसे भी है जो सिनेमा को ओपेरा, चित्रकला अथवा वास्तुकला की तरह कला का एक स्वतंत्र रूप मानते है। वस्तुतः फिल्म निदेशक का ही माध्यम होता है और जिस कलात्मक ढंग से वह कलाकार को कैमरे के सामने प्रस्तुत करता है, उस पर ही अक्सर फिल्म की सफलता और असफलता निर्भर करती है। संसार में सबसे

अधिक फिल्में हमारे देश में बनती है और यहां के लोग सबसे अधिक फिल्में देखते है।

10.6 मीडिया और प्रतिनिधित्व :

मीडिया सूचनाओं के आदान–प्रदान का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। किसी भी समाज में परिवर्तन लाने में मीडिया ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

जहां तक मीडिया और प्रतिनिधित्व की बात आती है तो इसका अर्थ हो जाता कि मीडिया किस तरह से सामाजिक विकास में अपना प्रतिनिधित्व स्थापित कर रही है। चूकि मीडिया लोकतंत्र का प्रहरी होता है और इसके प्रतिनिधित्व से समाज को विकसित करने में तथा सूचना प्रचार–प्रसार करने में सहायता मिलती है, मीडिया का समाज और लोकतंत्र के प्रति प्रतिनिधत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है।

10.7 मीडिया और प्रतिनिधित्व की प्रमुख विशेषता :

1. **मीडिया द्वारा सामाजिक परिवर्तन** :– मीडिया के प्रतिनिधित्व से सर्वप्रथम हम समाज में परिवर्तन ला सकते है। मीडिया के माध्यमों के द्वारा व्यापक सामाजिक परिवर्तन संभव है। विश्व के अनेक देशों में समाज का चेहरा बदलने के अनेक ऐतिहासिक अभियान शुरू किए गए, जिसमें मीडिया के माध्यमों का इस्तेमाल बखूबी किया गया। सामाजिक मान्यताओं को अन्धविश्वास की बंद गली से निकालकर वैज्ञानिक विवेक के खुले–उजले चौराहे तक लाने में भी मीडिया की क्रान्तिकारी भूमिका रही। मसलन अब चेचक के बारे में बहुत हद तक यह माना जाने लगा है कि वह शीतला माता के अप्रसन्न होने जैसे दैवी प्रकोप के कारण नहीं बल्कि कुछ रोगाणुओं के कारण होती है।

2. **मीडिया द्वारा जनमत तैयार करना** :– जनमत का निर्माण प्रचार द्वारा होता है और प्रत्येक काल में समाज हर क्षेत्र में जनमत द्वारा प्रभावित होता है। आधुनिक काल में समाज सुधार के लिए जो भी प्रयत्न हुए हैं, उनमें प्रचार का स्थान मुख्य रहा है। सती प्रथा, बाल विवाह, दहेज प्रथा के विरोध और विधवा विवाह आदि के समर्थन में जितने भी सुधारात्मक आंदोलन हुए, उन सबकों अब तक केवल सीमित सफलता ही मिल पायी है, पर जितनी भी सफलता मिली है उसका कारण प्रचार ही है। मीडिया माध्यमों को इस बात का ध्यान रखना होगा कि वे जो नयी बाते जनता तक ले जा रहे है, उनका समाज पर कोई नकारात्मक प्रभाव न पड़े वे समाज के वर्तमान ढांचे में अस्थिरता पैदा कर अराजकता फैलाने में सहायक न हों।

3. **मीडिया और जन शिक्षा** :– समाचार–पत्र, रेडियो तथा टेलीविजन मीडिया के मुख्य साधन है जिन्होंने इस भूमण्डल पर बसने वाले हर व्यक्ति के जीवन को प्रभावित किया है। शिक्षा ने विज्ञान को जन्म दिया है और विज्ञान ने मीडिया के साधनों को। अब मीडिया के ये साधन शिक्षा और विज्ञान दोनों के प्रचार और प्रसार के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। किसी देश की सर्वागीण प्रगति की कहानी वास्तव में वहां की शिक्षा और विज्ञान की प्रगति की कहानी है संचार साधनों का शिक्षा एवं विज्ञान के प्रसार के लिए उपयोग एक सरल प्रक्रिया नहीं है।

4. **मीडिया और जन सम्पर्क** :– जनसम्पर्क आधुनिक लोक सम्पर्क का पर्यायवाची शब्द हैं मोटे रूप से लोक सम्पर्क का अभिप्राय उस सम्पर्क से है जो एक सरकार अपने नागरिकों के साथ स्थापित करती है।

जनसम्पर्क व्यावसाय का ऐसा कार्य है जिससे जनता के मनोभावों का पता चलता है और जिसकी सहायता से एक व्यक्ति या संस्था की नीतियों और योजनायें जनहित से जुड़ती है।

जनसम्पर्क विचारों का वह तकनीकी संचार है जो जनता तक इसलिए भेजा जाता है कि वह उद्‌देश्यों की ओर वांछित परिणाम उपलब्ध करा सके।

भारत प्रजातंत्र राष्ट्र है इसलिए इसके शासन की मुख्य जिम्मेदारी जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों पर होती है इन्ही प्रतिनिधियों में से प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री और मंत्रीगण बनते है। मीडिया के द्वारा जनता से उचित जनसम्पर्क स्थापित किया जाता है।

10.8 मीडिया एवं दस्तावेजीकरण :

आज दुनिया मे प्रत्येक क्षेत्र में बहुत तेज गति से परिवर्तन हो रहे है। इन सभी क्षेत्रों में से मीडिया का भी एक क्षेत्र आता है। मीडिया हमारे समाज के लिए सूचना का प्रचार–प्रसार का कार्य करती है। मीडिया के द्वारा ही जनता से उचित जनसम्पर्क भी स्थापित किया जाता है। मीडिया के उचित संचालन हेतु उसका उचित दस्तावेजीकरण भी अत्यन्त आवश्यक है जिससे मीडिया का कार्य सुचारू रूप से चल सके।

दस्तावेजीकरण की अवधारणा :

दस्तावेजीकरण को प्रलेखन, प्रलेखीकरण के नाम से भी जाना जाता है। दस्तावेज एक प्रकार का रिकार्ड होता है। मीडिया के क्षेत्र में दस्तावेज महत्वपूर्ण संसाधन है। मीडिया में संदेश एवं सूचना का आदान–प्रदान किया जताा है। अतः वह सूचना या संदेश दस्तावेज के माध्यम से ही संभव है। दस्तावेज के अंतर्गत पत्र, पत्रिका, फोटो, तस्वीर, मैप, समाचार पत्र आदि आते है। मीडिया में

जितनी अच्छी तरह का दस्तावेजीकरण होगा उसका असर समाज पर उतना ही अच्छा पड़ेगा। दस्तावेजीकरण के माध्यम से ही किसी भी सूचना को सही दिशा मिलती है और उसकी सार्थकता सिद्ध होती है। मीडिया में दस्तावेजीकरण हेतु मीडिया कर्मी को उचित ज्ञान एवं निपुण होना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे सूचना का सही अर्थ जनता जान सके। दस्तावेजीकरण हेतु मीडिया कर्मी के अंदर रचनात्मकता का भी उचित ज्ञान होना चाहिए तभी सूचना का सही अर्थ निकलता है। दस्तावेजीकरण सरकारी तथा गैर सरकारी सभी क्षेत्र के लिए अत्यन्त आवश्यक है। सरकारी कार्यालय तथा गैर सरकारी कार्यालय में दस्तावेजीकरण के ही माध्यम से हम संबंधित सूचना एवं रिकार्ड रखते है। दस्तावेज में महत्वपूर्ण सूचना अंकित होती है। आजकल कम्प्यूटर का जमाना है इसलिए दस्तावेज को ऑनलाइन भी संग्रहित किया जाता है। दस्तावेज मे किसी भी व्यक्ति या विषय के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी होती है।

दस्तावेजीकरण की विशेषता :

1. वस्तुनिष्ठता
2. सामाजिक सरोकार
3. कानूनी सरोकार
4. राष्ट्र के प्रति सरोकार
5. राजनीतिक सरोकार
6. जनमत निर्माण
7. जनरूचि
8. समापन

मीडिया में दस्तावेजीकरण ही सामाजिक चेतना का दर्पण है। इसका जनमत पर सीधा प्रभाव पड़ता है। और यह आगे चल कर इतिहास बन जाता है इसलिए प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता इसके प्राण माने गए है। प्राचीन काल में जब न कागज छापने की मशीन

थी और न कागज था उस जमाने में भी दस्तावेजीकरण होता था और उसका माध्यम था शिलालेख और स्तम्भ लेख। दस्तावेजीकरण का समाचार के साथ अत्यन्त गहरा संबंध है। समाचार भी दस्तावेजीकरण का ही एक स्वरूप है। समाचार को भी कई श्रेणी में विभाजित किया गया है। जो इस प्रकार से है :–

दस्तावेजीकरण में समाचार के प्रकार :

1. आपराधिक समाचार
2. राजनीतिक समाचार
3. खेल समाचार
4. आर्थिक समाचार
5. साहित्यिक समाचार
6. स्वास्थ्य समाचार
7. रोजगार समाचार
8. विधि समाचार
9. फिल्म समाचार
10. शैक्षिक समाचार
11. शासकीय समाचार
12. कृषि समाचार
13. प्रेस नोट
14. प्रेस विज्ञप्तियां
15. प्राकृतिक आपदा समाचार।

अतः हम कह सकते है कि दस्तावेजीकरण के बिना मीडिया का अस्तित्व नगण्य है। मीडिया के उचित संचालन हेतु दस्तावेजीकरण अत्यन्त आवश्यक है।

10.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. गौतम, रूप चंद, 2008, प्रिट मीडिया सिद्धांत एवं व्यवहार, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली 110053।

2. शर्मा, राधेश्याम, 1999, जनसंचार, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
3. पाण्डेय, अनुपम, 2006, पत्रकारिता के विविध आयाम डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–110002।
4. गौतम, रूपचंद, 2006, मीडिया लेखन, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली, 110053।
5. सिंह ए0एन0, 2007, समाज कार्य, रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।
6. सूदन, कृपाल सिंह, 2010, समाज कार्य अभ्यास एवं सिद्धान्त।

टिप्पणी

खण्ड तृतीय – संचार और मीडिया

इकाई–11, समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता

इकाई की रूप रेखा

11.0 – उद्देश्य

11.1 – प्रस्तावना

11.2 – समाज कार्य की अवधारण एवं अर्थ

11.3 – मीडिया की अवधारणा एवं अर्थ

11.4 – मीडिया के उद्देश्य

11.5 – मीडिया के क्षेत्र

11.6 – समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता

11.7 – संदर्भ सूची

11.0 उद्देश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता का उल्लेख करना साथ ही साथ समाज के अर्थ का उल्लेख करना एवं मीडिया की अवधारणा एवं अर्थ का वर्णन करना, मीडिया के उद्देश्य एवं क्षेत्र का वर्णन करना। मीडिया के बारे में तो वैसे हमें विभिन्न विचार देखने को मिलते है। कोई इसे धर्म युद्ध कहता है तो कोई समाज सेवा तो कोई लोकतंत्र का नींव मानता है। मीडिया का जन्म वास्तव में विश्व स्तर पर हो रहे परिवर्तन एवं समय और समाज के प्ररिप्रेक्ष्य में सजग उत्कृष्ट नागरिकों में दायित्व बोध कराने के लिए हुआ था।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. समाज कार्य की अवधारणा एवं अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे।
2. मीडिया की अवधारणा एवं अर्थ का वर्णन कर सकेंगे।

3. मीडिया के उद्देश्य का वर्णन कर सकेंगे।
4. मीडिया के क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।
5. समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता की व्याख्या कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना :

अपनी बात या सिद्धान्त दूसरो तक पहुंचाना और उन्हें अपनी राय से सहमत करना मनुष्य का शुरू से ही स्वभाव रहा है। यह काम कभी व्यक्ति अकेला करता है तो कभी इसके लिए सामूहिक प्रयास भी होते है। कोई गुट, संस्था या सरकार भी अपने पक्ष में जनमत बनाने के लिए कोशिश करती है। कभी यह काम सार्वजनिक हित के लिए होता है तो कभी निजी या सीमित लोगो के स्वार्थ या मन की शांति के लिए। इसके लिए मीडिया के कई माध्यमों का उपयोग होता है। अपनी बात लोगों तक पहुंचाने का मीडिया का काम सतत रूप से चलता रहा है। आजकल तो विचारों, महत्वाकांक्षाओं और सत्ता के टकराव के कारण इसके लिए ज्यादा ही होड़ और दौड़ देखने को मिलती है।

समाज कार्य एक कला है जो व्यक्ति, समूह व समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक साधनों से उपलब्ध कराने के लिए वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा जनसाधारण की इस प्रकार सहायता करता है कि वे अपनी सहायता स्वयं कर सके। समाज को उसकी आवश्यकता को पूरा कराने में मीडिया की उपयोगिता को भी महत्वपूर्ण माना गया है। समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जो मानवीय संबंधों के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान व निपुणता पर आधारित है। किसी भी विषय के प्रति जानकारी पहुंचाने और जानकारी प्राप्त करने में मीडिया के माध्यम महत्वपूर्ण संपर्कसूत्र का काम करते हैं। मीडिया क्षेत्र का बहुआयामी प्रसार एवं विकास हुआ है। लोगों तक बात पहुंचाने के लिए और जनमत बनाने के लिए प्रचार माध्यमों के

अलावा फिल्म, लोक कला, नाटक यानी, रंगमंच आदि का भी उपयोग होता है। अब मीडिया अपने आप में एक व्यापक विषय हो गया है। आज मीडिया का काम केवल सूचना देना और जनमत तैयार करना ही नहीं है, बल्कि सही जानकारी देना, सही संपर्क कायम करना और गलत प्रचार को निरर्थक बनाना भी है।

इस इकाई के माध्यम से समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त किया जा सकता है।

11.2 समाज कार्य की अवधारणा एवं अर्थ :

समाज कार्य भारतीय सामाजिक जीवन का प्रारंभ से ही अभिन्न अंग रहा है। निर्धनो की सहायता, असहयों की देखभाल का सामाजिक दायित्व भारत की परंपरा रही है। समाज कार्य की औपचारिक शिक्षा प्रारंभ 1936 में ही प्रारंभ हो गया था। सर दोराबजी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क जिसे वर्तमान में 'टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ' सोशल सांइसेज'' के नाम से जाना जाता है, प्रथम संस्थान थी। 1936 में स्थापित एक संस्था से वर्तमान समय में समाज कार्य के विद्यालयों की संख्या 300 से अधिक है। समाज कार्य के व्यावसायिक स्वरूप का विकास मुख्य रूप से इंग्लैण्ड और अमेरिका में हुआ।

समाज कार्य की शिक्षा एक व्यावसायिक शिक्षा है। इसका व्यावसायिक उद्देश्य है प्रजातांत्रिक मूल्यों पर आधारित एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था के विकास की दिशा में प्रयास करना जिससे व्यक्ति को केवल व्यक्ति होने के नाते सम्मान प्राप्त हो तथा प्रत्येक नागरिक को उसकी योग्यता और रूचि के अनुरूप व्यक्तित्व विकास के अवसर प्राप्त हो सके। समाज कार्य व्यक्ति तथा उसके परिवेश दोनों में परिवर्तन पर जोर देता है जिसके लिए वह सामाजिक परिस्थितियों तथा सामाजिक संस्थाओ का अध्ययन करता है।

समाज कार्य वर्तमान सदी का एक क्रियात्मक दर्शन है। इसका लक्ष्य व्यक्ति तथा समाज की समस्याओं का निदान और समाधान करना है। इसके विकासक्रम के दौरान इस बात पर जोर दिया गया कि उसका लक्ष्य उपस्थित समस्या का समाधान तथा उपस्थित पर्यावरण के साथ सामंजस्य करना है। समाज कार्य की पद्धति एक ओर सम्पन्न और संतुष्ट व्यक्तियों की समस्याओं को हल कर रही है तथा दूसरी ओर इसके द्वारा दुखी असहाय और दिव्यांग व्यक्तियों को सहायता दी जाती है।

समाजकार्य का अर्थ :

मानव अपने उत्पत्ति काल से ही समूह में रहने का अभ्यस्त रहा है। समूह में रहने के कारण व्यक्ति तथा व्यक्ति के बीच, व्यक्ति तथा समूह के बीच और समूह तथा समूह के बीच अन्तःक्रिया होनी स्वाभाविक है। इस अन्तःक्रिया में समूह में कुछ सदस्यों में शारीरिक, मानसिक तथा भौतिक निर्योग्यताएं विद्यमान होती है, जिसके कारण वह सक्रिय भागीदारी नही दे पाते हैं। इससे उनका सामाजिक अनुकूलन तथा समायोजन नहीं हो पाता है, जिसके कारण समाज में अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म होता है: जैसे निर्धनता, अपराध, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, भिक्षावृत्ति, भगोड़ापन आदि।

समाज कार्य इन्ही समस्याओं का अध्ययन करके उसमें प्रर्याप्त समाधान का प्रयास करता है। इसके लिए समाज कार्य अपने प्रमुख छः विधियों तथा तकनीको का उपयोग करता है।

परिभाषा :

फीडलैण्डर के अनुसार :– समाज कार्य एक व्यवसायिक सेवा है जो मानवीय संबंधो के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान तथा निपुणता पर आधारित है जो व्यक्तियों की अकेले अथवा समूहो में इस प्रकार

सहायता करता है कि वे सामाजिक एवं व्यक्तिगत संतुष्टि तथा आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सके।

विटमर के अनुसार :– समाज कार्य का प्रमुख कार्य व्यक्तियों की उन समस्याओं को दूर करने में मदद करना है जो वह एक संगठित समूह की सेवाओं का प्रयोग करने में या एक संगठित समूह के सदस्य के रूप में अपने कार्य संपादन में अनुभव करते है।

इंडियन कान्फ्रेन्स ऑक सोशल वर्क के अनुसार :– समाज कार्य एक कल्याणकारी क्रिया है जिसका आधार मानवोचित दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एवं प्रावैधिक निपुणताओं पर है और जिसका उद्देश्य व्यक्तियों, समूहों या समुदायो की सहायता करना जिससे वह एक सुखी और सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें।

समाज कार्य की विशेषतायें :

1. वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित।
2. कौशल व निपुणता पर आधारित।
3. मानवीय समस्या का समाधान करना।
4. व्यक्ति, समूह व समुदाय द्वारा सहायता प्रदान करना।
5. अवरोधों का निवारण करना।
6. सेवार्थी को आत्म सेवार्थ सक्षम बनाना।
7. सेवार्थी में आत्म निर्देशन का विकास करना।
8. मानव की मूलभूत आवश्यकताओं की संतुष्टि प्रदान करना।

समाज कार्य के क्षेत्र :

1. परिवार व बाल कल्याण।
2. महिला कल्याण।
3. युवा कल्याण।
4. वृद्ध कल्याण।
5. श्रम कल्याण।
6. ग्रामीण विकास।

7. शहरी विकास।
8. पर्यावरण संरक्षण।
9. जनजाति कल्याण।
10. अपराध सुधार।
11. चिकित्सा व मनश्चिकित्सा।
12. पिछड़ी जाति कल्याण।
13. शारीरिक बाधित कल्याण।
14. आवास सुधार।
15. शिक्षा।
16. राजकीय कर्मचारी कल्याण।
17. सामाजिक सुरक्षा।
18. मानवाधिकारो का संरक्षण।
19. सामाजिक विकास।
20. सामाजिक नीति।
21. सामाजिक नियोजन।
22. कानूनी सहायता।
23. सामाजिक न्याय।
24. परिवार नियोजन।
25. एच0आई0वी0 / एड्स

11.3 मीडिया की अवधारणा एवं अर्थ :

ईश्वर ने मनुष्य को अत्यंत जिज्ञासु प्राणी बनाया है वह सदैव कुछ न कुछ पाने की पद्धति से इस लक्ष्य की ओर लगा रहता है। इसी का नतीजा है कि वह आज चांद पर भी पहुंच चुका है। नारद मुनि को विश्व का पहला पत्रकार माना जाता है। देवताओं एवं दानवों के बीच पत्राचार का काम नारद मुनि ही करते थे।

मीडिया एक कला है। एक ऐसी कला जो दूरियां घटाती है, जो रात के अंधेरे में उजाला और शीतलता देने वाले चंद्रमा में उपस्थित गड्ढ़ो को बखूबी दर्शाती है। यह माना जा सकता है कि

मीडिया प्रत्येक बात की गहराई तक पहुंचना चाहती है। मीडिया की परिभाषा लोगों ने अपने अपने तरीके से दी है। कोई इसे धर्म युद्ध कहता है, कोइ समाज–सेवा तो कोई इसे लोकतंत्र के लिए नीव मानता है। कुल मिलाकर यह कहना गलत नही होगा कि मीडिया सिर्फ एक व्यवसाय नही परन्तु संसार में हो रहे बदलाव को उजागर करने वाला एक साधन है।

मीडिया का काम सिर्फ बिखरे हुए को एकत्र करना और उपदेश देना ही नहीं बल्कि अपने श्रोता, दर्शक व पाठकों के बीच संवाद करना भी है और समाज में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक बुराइयों के खिलाफ आंदोलन छेड़ना भी है। तभी मीडिया समाज के लिए एक अच्छा दर्पण बन सकता है। एक देश दूसरे देश का चेहरा मीडिया रूपी दर्पण में देख सकता है।

मीडिया की परिभाषा :

- महात्मा गांधी के अनुसार :– मीडिया का लक्ष्य, सेवा करना है।
- जवाहर लाल नेहरू के अनुसार :– मीडिया समय और अभिभावक है, प्रति दर्पण और सूर्य है।
- इन्द्र विद्यावाचस्पति के अनुसार :– मीडिया पांचवा वेद है, जिसके द्वारा ज्ञान विज्ञान संबंधी बातों को जान कर हम अपनी बुद्धि का विकास करते है।
- न्यू वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार :– प्रकाशन, संपादन, लेखन अथवा प्रसारण सहित समाचार माध्यम के संचालन के व्यवसाय को मीडिया कहते हैं।
- सी0जी0 मूलर के अनुसार :– मीडिया एक व्यवसाय है जिसका सीधा संबंध सामाजिक ज्ञान से है। इस व्यवसाय के तहत तथ्यों की प्राप्ति, ध्यानपूर्वक उसका मूल्यांकन तथा सम्यक प्रस्तुति जरूरी है।
- डब्ल्यू0वी0 स्टीड के अनुसार :– मीडिया जन सेवा है, कला है।

11.4 मीडिया के उद्देश्य :

समाज में एक दूसरे को जानने की जिज्ञासा ने मीडिया को जन्म दिया। आज मीडिया ने संपूर्ण विश्व को एक छोटे से गांव मे तब्दील कर दिया है। मीडिया का उद्देश्य लोक कल्याण है। लोक कल्याण की इच्छा समाचारों, विचारों एवं भावनाओं को जन–जन तक पहुंचाने में तत्पर है।

मीडिया के प्रमुख उद्देश्य :

1. सूचित करना।
2. शिक्षित करना।
3. मनोरंजन करना।
4. जनमत तैयार करना।
5. दिशा–निर्देश देना।
6. सामाजिक विकृतियों को दूर करना।
7. लोक चेतना पैदा करना।
8. जन जीवन का नियामक।
9. सामाजिक मूल्य स्थापित करना।
10. जगरूकता लाना।
11. लोक कल्याण करना।
12. सृजनात्मकता पैदा करना।

11.5 मीडिया के क्षेत्र :

समाज की प्रत्येक समस्या पर प्रिंट एवं इलेक्टॉनिक मीडिया द्वारा विचार–विमर्श होता है। यही जनता के दो सदन है। यानी इन दोनों माध्यमों को जनता की लोकसभा तथा राज्य सभा कह सकते है। जन समस्याओं को सरकार तक तथा सरकार की नीति को जनता तक लाना मीडिया का रचनात्मक कार्य है।

1. **विकास मीडिया** :– विकास मीडिया में सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक वैज्ञानिक, प्राविधिकी आदि पर प्रकाश डाला जाता

है। केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकारें अपने विकासशील कार्यक्रमों को जनता तक पहुंचाने के लिए पत्रिकाएं प्रकाशित करती है।

2. **व्याख्यात्मक मीडिया** :– समाचार की पृष्ठ भूमि एवं दूरगामी परिणामों को विश्लेषणात्मक निर्देशित करना व्याख्यात्मक मीडिया के अंर्तगत आता है। समाचार एजेंसियां इस कार्य को अच्छा अंजाम दे रही है।

3. **खेल मीडिया** :– खेल दो प्रकार के होते है इंडोर तथा आउटडोर। खेलों में इंडोर के अंर्तगत, शतरंज, बिलियर्ड, कैरम बोर्ड, टेबिल टेनिस आते हैं तथा आउटडोर खेलों में क्रिकेट, हॉकी, फूटबाल आदि। दोनों प्रकार के खेल में मीडिया महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

4. **फोटो मीडिया** :– फोटो मीडिया समाचारों में चार चांद लगाती है। यानी पाठक का ध्यान समाचार की तरक खींचना फोटो मीडिया का पहला उद्देश्य है। एक फोटो कई सौ शब्दों के बराबर होती है। इसका महत्व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी बढ़ गया है।

5. **आर्थिक मीडिया** :– धन है तो जीवन है। क्योंकि धन के बिना मनुष्य का कोई कार्य सफल नहीं हो सकता। आर्थिक मीडिया मनुष्य के जीवन में चार चांद लगाती है। कुछ समय पूर्व आर्थिक मीडिया की तरफ न तो संपादकों की रूचि थी और न पाठकों की। जब से देश में विदेशी कंपनियों ने आकर अपनी दस्तक दी है तब से आर्थिक मीडिया का कलेवर बदला है। बाजार समाचार, आर्थिक योजना, मुद्रा बाजार पूंजी बाजार, वस्तु बाजार आर्थिक मीडिया के उदाहरण हैं।

6. **खोजी मीडिया** :– जब पत्रकार समसामयिक विषयों, घटनाओं, गतिविधियों स्थितियों एवं तथ्यों के आधार पर

अध्ययन करके निष्कर्ष निकालता है तो इसे खोजी मीडिया कहा जाता है।

7. **रेडियों मीडिया** :– रेडियों मीडिया के अंर्न्तगत समाचार लेखन, वाचन, समीक्षा, आंखों देखा हाल सुना जा सकता है। इस पर कहानी, नाटक, व्यंग्य, विज्ञापन एवं फीचर लिखे व सुने जाते है।

8. **टेलीविजन मीडिया** :– मीडिया में टेलीविजन मीडिया का एक अलग महत्व है। यह दृश्य एवं श्रव्य माध्यम है। इसमें भी समाचार लेखन, वाचन समीक्षा, नाटक, चुटकुले, विज्ञापन एवं टेलीफिल्म लिखी, सुनी व देखी जाती है।

9. **कृषि मीडिया** :– भारत कृषि प्रधान देश है। ग्रामीण जनता की समस्याएं सड़कों, पशुपालन, बीज, खाद, खडंण्जा, कीटनाशक आदि होती है। प्रिण्ट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में कृषि मीडिया को पढ़ा सुना एवं देखा जा सकता है।

10. **शैक्षिक मीडिया** :– शैक्षिक मीडिया एक सकारात्मक पक्ष है, जिसके माध्यम से समाज में वैचारिक क्रांति के अलावा शैक्षिक क्रांति पैदा होती है।

11. **फिल्म मीडिया** :– फिल्मी नायक/नायिकाओं के व्यक्तित्व, साक्षात्कार अनुभव आदि का लेखा–जोखा इसके अंतर्गत आता है। नयी फिल्मों की जानकारी एवं पुरानी फिल्मों को ताजा फिल्म मीडिया से किया जाता है। समाज में फिल्म मीडिया का ग्राफ दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

12. **विज्ञान मीडिया** :– विज्ञान जगत की गतिविधियां विज्ञान मीडिया के माध्यम से पाठकों, श्रोताओं एवं दर्शकों तक पहुंचती हैं। पत्रकार विज्ञान जैसी गंभीर विषय को सरल ढंग से पाठकों तक पहुंचाता है।

13. **साहित्यिक मीडिया** :– विचारगोष्ठी, सम्मेलन, पुस्तक विमोचन, पुस्तक चर्चा, कवि गोष्ठी, नाटक एवं बैद्धिक चर्चाओं की प्रिण्ट तथा इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में स्थान देना साहित्यिक मीडिया के अंतर्गत आता है।

14. **मौसम मीडिया** :– मौसम की जानकारी मौसम मीडिया के द्वारा प्राप्त होती है। समाचार पत्र पत्रिकाओं के अलावा रेडियो, टेलीविजन पर मौसम की खबरे पढी सुनी व देखी जा सकती है।

15. **संसदीय मीडिया** :– संसदीय मीडिया के अंतर्गत लोकसभा, राज्यसभा के अलावा प्रांतों की विधानसभा एवं विधान परिषादों के समाचार आते है। इनका संपादन करना भी बड़ा जोखिम भरा कार्य है। इसलिए इन समाचारों के लिए बड़ी सजगता की जरूरत है।

11.6 समाज कार्य में मीडिया की उपयोगिता :

समाज कार्य प्राचीनकाल से विभिन्न रूपों से होता आया है। प्राचीनकाल में व्यक्ति की सहायता, दान तथा प्रत्यक्ष सेवा के द्वारा की जाती थी। उस समय लोग परोपकार की भावना से प्रेरित थे। धीरे–धीरे मानवतावाद ने इसका स्थान ले लिया। परंपरागत समाजकार्य सेवा एवं सहायता की कोई वैज्ञानिक प्रणाली तथा विधि नहीं रखता था लेकिन आधुनिक समाज कार्य की अपनी विशिष्ट वैज्ञानिक प्रणालियां है। परंपरागत समाज कार्य में व्यक्ति की सेवा तथा सहायता का भाव था किन्तु आधुनिक समाज कार्य उसको आत्म निर्भर करने में विश्वास रखता है।

आधुनिक युग में समाज कार्य ने एक व्यवसाय का रूप धारण कर लिया है। समाजकार्य की कार्य प्रणाली, उद्देश्य व सेवा के स्वरूप में परिवर्तन आया। अब व्यक्तियों, समूहो, समुदायो की

आवश्यकता की पूर्ति तथा समस्या का समाधान एक वैज्ञानिक ज्ञान, दर्शन, सिद्धांत व आचार संहिता के आधार पर किया जाने लगा।

मीडिया की उपयोगिता :

1. भ्रष्टाचार का पर्दाफाश करना।
2. देश की अखंडता एवं एकता का ध्यान रखना।
3. समाज का स्वच्छ मनोरंजन करना।
4. समाज को जागरूक करना।
5. दलित एवं महिला की आवाज को महत्व देना।
6. जनता और सरकार के बीच सरोकार।
7. रूढ़िवादिता पर अंकुश लगाकर चेतना पैदा करना।
8. मीडिया द्वारा जनसंपर्क को बढ़ावा देना।
9. मीडिया द्वारा जनसहभागिता को बढाना।
10. मीडिया दारा समुदाय में चेतना पैदा करना।
11. सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रचार करना।
12. जनसमुदाय की मनोवृत्ति में बदलाव लाना।
13. सरकारी कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता लाना।
14. समाज की समस्याओं को उजागर करना।
15. शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना।
16. दूषित धार्मिक तथा सामाजिक प्रथाओं का उन्मूलन करना।
17. पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाना।
18. स्वास्थ्य कार्यक्रमों का प्रचार–प्रसार करना।
19. नशा उन्मूलन के प्रति समाज को जागरूकता करना।
20. देश में अपराध पर नियंत्रण हेतु पुलिस की सहायता करना।
21. सामाजिक भेदभाव का उन्मूलन करना।

11.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. गौतम, रूप चंद, 2008, प्रिंट मीडिया सिद्धांत एवं व्यवहार, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली 110053।
2. शर्मा, राधेश्याम, 1999, जनसंचार, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
3. पाण्डेय, अनुपम, 2006, पत्रकारिता के विविध आयाम डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–110002।
4. गौतम, रूपचंद, 2006, मीडिया लेखन, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली, 110053।
5. सिंह ए0एन0, 2007, समाज कार्य, रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।
6. सूदन, कृपाल सिंह, 2010, समाज कार्य अभ्यास एवं सिद्धान्त।

टिप्पणी

खण्ड – तीन – संचार और मीडिया

इकाई–12, समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

12.0 – उद्देश्य

12.1 – प्रस्तावना

12.2 – समाज कार्य की प्रस्तावना तथा अर्थ

12.3 – समाज कार्य के उद्देश्य

12.4 – मीडिया की प्रस्तावना तथा अर्थ

12.5 – समाज कार्य मैं मीडिया और बातचीत की कला

12.6 – समाज कार्य में मीडिया के विविध रूप

12.7 – मीडिया के प्रमुख प्रकार

12.8 – समाज कार्य में मीडिया के प्रमुख माध्यम

12.9 – समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियां

12.10 – संदर्भ सूची

12.0 उद्देश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियों को समझाना। समाजकार्य एक व्यवसायिक सेवा है। समाज कार्य का उद्देश्य व्यक्ति, समूह या समुदाय की मनोसामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन करते हुए उनकी समस्याओं का उचित निदान तथा समाधान करना है। इस इकाई के द्वारा आप समाज कार्य के विषय में आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकते है तथा मीडिया किस प्रकार से समाज कार्य की आवश्यकता को पूरा कर सकता है। समझ सकते हैं। साथ ही साथ ही मीडिया की रणनीतियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते है। किसी भी देश की व्यवस्था को चलाने तथा कायम रखने के लिए मीडिया की आवश्यकता होती है।

इस इकाई के अध्ययन से आप निम्न जानकारी प्राप्त कर सकते है।

1. समाजकार्य के अर्थ एवं प्रस्तावना।
2. समाज कार्य का महत्व।
3. मीडिया की प्रस्तावना तथा अर्थ।
4. समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियां।
5. समाज कार्य में मीडिया की विधि एवं प्रविधि।
6. समाज कार्य में मीडिया के विविध रूप।

12.1 प्रस्तावना :

मानव जीवन के इतिहास में हमेशा से निर्धनों अपंगो, आवारा, असहाय, निराश्रित तथा शोषित वर्गों की सहायता का प्रावधान चला आ रहा है। शुरूआत में इसे समाज कल्याण, समाज सुधार, समाज सेवा, दान, परोकार, करूणा, दया, सहानुभूति आदि के रूप में समझा जाता था। परन्तु धीरे–धीरे लोगों के विचारों में परिवर्तन आने लगा तथा लोग इसे समाज के रूप में सहायता प्रदान करने वाली एक पद्धति के रूप में समझने लगे।

समाज कार्य के विभिन्न क्षेत्रों में लोगों को सहायता दिलाने तथा जागरूक करने में मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मीडिया के माध्यम से जन–जन तक लोगों को सूचना प्रसारित की जाती है तथा लोगों की सहभागिता को बढ़ाया जाता है। मीडिया सरकार तथा जनता को जोड़ने का कार्य करती है। मीडिया के द्वारा ही शिक्षा, चिकित्सा, कानून, अपराध, विज्ञान आदि के विषय में नयी–नयी जानकारी तथा सूचना लोगों तक पहुंचाई जाती है। इस जानकारी को उपलब्ध कराने में अखबार, रेडियो, टेलीविजन पत्रिका अहम भूमिका अदा करते है। मीडिया के द्वारा ही किसी देश एवं समाज मैं सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक बुराइयों के खिलाफ आंदोलन संभव है। मीडिया किसी भी समाज के लिए एक

दर्पण का कार्य करती है। सामाजिक वातावरण को सुखद बनाने में मीडिया बहुत बड़ी जिम्मेदारी निभाती है। मीडिया किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र का एक प्रमुख स्तंभ होता है। जो सरकार पर दबाव डालने का भी कार्य करती है। अतः इस इकाई के द्वारा आप समाज कार्य हेतु मीडिया की प्रमुख रणनीतियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

12.2 समाज कार्य की प्रस्तावना तथा अर्थ :

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है, इसमें कार्यकर्ता अपने ज्ञान एवं निपुणताओं के माध्यम से व्यक्ति, समूह या समुदाय की सहायता करता है। समाज कार्य के अंतर्गत कार्यकर्ता किसी व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करता है जिसके लिए वह समाज कार्य की प्रणालियों का सहारा लेता है। समाज कार्य की छः प्रमुख प्रणालियां है प्रथम तीन प्राथमिक तथा अगली तीन सहायक प्रणालियां है। प्राथमिक प्रणालियों के माध्यम से व्यावसायिक सेवाएं दी जाती है तथा सहायक प्रणालियों का प्रयोग अभ्यास की समस्याओं का समाधान खोजने में किया जाता है। समाज कार्य की प्राथमिक एवं सहायक प्रणालियों के नाम इस प्रकार हैं: प्राथमिक प्रणालियॉं—वैयक्तिक समाज कार्य एवं सामुदायिक संगठन; सहायक प्रणलियॉं—समाज कल्याण प्रशासन, समाज कार्य शोध, एवं सामाजिक किया।

समाज कार्य का अर्थ :

1. समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जिसका आधार मानव संबंधों के ज्ञान और संबंधों में निपुणता पर है जिसका संबंध वैयक्तिक एवं अंतर वैयक्तिक समायोजन संबंधी समस्याओं से है।
2. समाज कार्य एक अस्तित्व है जिसके तीन स्पष्ट रूप से भिन्न परंतु परस्पर संबंधित भाग है। सामाजिक सेवाओं का जाल,

सावधानीपूर्वक विकसित की गयी प्रणालियां एवं प्रक्रियाएं एवं सामाजिक नीति जो व्यक्तियों और सामाजिक संस्थाओं के द्वारा प्रकट होती है।

3. समाज कार्य एक कल्याणकारी क्रिया है जिसका आधार दर्शन, वैज्ञानिक एवं प्राविधिक निपुणताओं पर है। इसके द्वारा व्यक्तियों, समूहों तथा समुदायों की सहायता की जाती है।
4. समाज कार्य मानव व्यवहार को समझने के लिए अनेक विषयों का अध्ययन करता है और अनेक सहायता करने वाले व्यवसायों की पद्धतियों को अपने में उपयोगी होने पर आत्मसात कर लेता है।
5. समाज कार्य व्यक्ति तथा उसके परिवेश दोनों में परिवर्तन पर जोर देता है जिसके लिए वह सामाजिक परिस्थितियों तथा सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन करता है।
6. समाज कार्य अनुपलब्ध साधनों एवं सुविधाओं का सृजन में समुदाय को सहयोग देता है। धन तथा वस्तु सहायता, औजार के रूप में प्रयोग की जाती है।

12.3 समाज कार्य के उद्देश्य :

1. माननीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
2. स्वस्थ जनमत तैयार करना।
3. मनोसामाजिक समस्याओं का समाधान करना।
4. समाज में सामंजस्य क्षमता विकसित करना।
5. व्यक्ति में प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास करना।
6. व्यक्तियों में सामाजिक चेतना जगाना।
7. सामाजिक संबंधों को मधुर बनाना।
8. व्यक्तियों को उत्तम स्वास्थ्य शिक्षा उपलब्ध कराना।
9. स्वस्थ पर्यावरण का निर्माण करना।
10. समाज में शांति व्यवस्था कायम करना।

11. सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार विधानों में परिवर्तन कराना।
12. नये विधानों का निर्माण करवाना।
13. व्यक्तियों के कल्याण के बीच समन्वय स्थापित करना।
14. व्यक्तियों के जीवन में सुख व शांति स्थापित करना।
15. सामाजिक विकास के अवसर उपलब्ध करना।
16. समाज में जन जागरूकता लाना।
17. सामाजिक उन्नति के अवसर उपलब्ध कराना।
18. सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाना।
19. व्यक्ति को अपनी सहायता स्वयं करने के योग्य बनाना।
20. मानसिक समस्याओं के समाधान में सहायता देना।
21. वैयक्तिक समायोजन स्थापित करना।

12.4 मीडिया की प्रस्तावना एवं अर्थ :

मीडिया किसी भी प्रजातांत्रिक राष्ट्र का स्तंभ होता है। जिसके माध्यम से जनमानस को सूचना प्रदान की जाती है तथा जनता को जागरूक किया जाता है। मीडिया के द्वारा कोई भी नई जानकारी एवं सूचना एक छोर से दूसरे छोर तक आसानी से पहुंचाई जाती है। मीडिया के द्वारा महत्वपूर्ण संपर्कसूत्र स्थापित किया जाता है। अर्थात् जनसम्पर्क स्थापित करने का महत्वपूर्ण माध्यम है।

चूंकि समाजकार्य एक व्यवसायिक सेवा है जो व्यक्तियो, समूहों तथा समुदायों की समस्याओं का समाधान करती है तथा उनको सहायता प्रदान करती है। समाज कार्य के उद्देश्यों को पूरा कराने में मीडिया अहम भूमिका अदा करती है। मीडिया के द्वारा जनमानस को जागरूक किया जाता है मीडिया के द्वारा गलत प्रचार को निरर्थक भी बनाया जाता है।

मीडिया माध्यम का काम है कि वह हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था को गतिशील, मजबूत, संवेदनशील, विकासशील और जागरूक बने रहने में योगदान दे, जनमानस को भी उसका परिपूरक बनाये रखे। मीडिया के द्वारा लोगों को इतनी एवं ऐसी जानकारी दी जाती है कि वे अपने अच्छे कामों के महत्व का और भूली के नतीजों का अहसास कर सके। मीडिया सार्वजनिक हित, राष्ट्रीय हित और उच्च मूल्यों के प्रति हमेशा समर्पित रहता है। इसके द्वारा आम आदमी की समस्याओं तथा तकलीफों को समझा जाता है तथा उसके निराकरण में अपना योगदान देता है।

12.5 समाज कार्य में मीडिया और बातचीत की कला :

मीडिया में कार्यकर्ता को बातचीत की विशेष कला होनी चाहिए क्योंकि बातचीत के आधार पर ही हम जनता को जागरूक कर सकते है। मीडिया में बातचीत एक कला है। सामान्यतः जो बाते एक दूसरे से घर में या बाहर करते है वह व्यावसायिक बातचीत की श्रेणी में नहीं गिनी जाती है। इस बातचीत में बहुत कुछ निरर्थक भी कह सुन लिया जाता है। लेकिन व्यावसायिक बातचीत जो हम मीडिया के उद्देश्य से करते है, उसके नियम और तरीके कुछ विशेष प्रकार के होते है। मीडिया के सभी साधनों में बात करके समझाने को बहुत महत्व दिया जाता है।

मीडिया मे जब कार्यकर्ता लोगों से मिलने जाते है तथा सभाओं में भाषण देते हैं तो वे इस बारे में प्रशिक्षण लेकर जाते है। उन्हें समझाया जाता है कि बातचीत वही व्यक्ति अच्छी तरह कर सकता है जो दूसरों की बात सुनने में धीरज और शालीनता से काम ले। अगर आप दूसरों की बात नहीं सुनेगे या बात–बात पर उत्तेजित हो जायेंगे तो आपके संदेश को कौन सुनेगा या आपकी बात पर कौन ध्यान देगा? मीडिया में काम करने वाले व्यक्तियों को

गोष्ठियों, सेमिनारों और लोगों के समूहों या समुदायों में औपचारिक अथवा अनौपचारिक बाते करनी पड़ती है

मीडिया की भाषा सरल, सुबोध और सुस्पष्ट होना चाहिए। सीधी सी बात है अगर हमारी बात किसी दूसरे की समझ में ही नहीं आती है तो हमने जो मीडिया के माध्यम से जनसंचार किया वह सब बेकार है। हमारे शब्द ऐसे होने चाहिए जो हमारे विचारों की एक तस्वीर बनाकर दूसरे के सामने रख दे। मीडियाकर्ता को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमे जो बात लोगों तक पहुंचानी है और उन्हें अपने साथ लेना है इसलिए ऐसे मामलों में स्थिति को देखकर अपनी सूझबूझ से काम लेना चाहिए।

12.6 समाज कार्य में मीडिया के विविध रूप :

1. जनमत
2. जनतंत्र
3. जनसम्पर्क
4. जनसमुदाय
5. संचार
6. प्रचार
7. गोष्ठी कक्ष प्रचार
8. निर्णय लेना
9. सूचना के भागीदार
10. संचार की साख।

12.7 मीडिया के प्रमुख प्रकार :

1. खोजी मीडिया।
2. व्याख्यात्मक मीडिया।
3. खेल मीडिया।
4. फोटो मीडिया।
5. आर्थिक मीडिया।

6. विकास मीडिया।
7. टेलीविजन मीडिया।
8. रेडियो मीडिया।
9. संसदीय मीडिया।
10. कृषि मीडिया।
11. शैक्षिक मीडिया।
12. फिल्म मीडिया।
13. विधि मीडिया।
14. मौसम मीडिया।
15. विज्ञान मीडिया।
16. साहित्यिक मीडिया।
17. संदर्भ मीडिया।

12.8 समाज कार्य में मीडिया के प्रमुख माध्यम :

1. समाचार पत्र–पत्रिकाएं।
2. रेडियो।
3. फिल्म।
4. टेलीविजन।
5. विज्ञापन।
6. कम्प्यूटर
7. टेलीफोन
8. गोष्ठी
9. सम्मेलन
10. संगोष्ठी

12.9 समाज कार्य में मीडिया की रणनीतियां :

समाज कार्य के अंतर्गत मीडिया को अधिक उपयोगी व प्रभावशाली बनाने के लिए अनेक विधियों व प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। समाज के उद्देश्यों को पूरा करने में मीडिया की

भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मीडिया जनता में जन जागरूकता लाती है तथा स्वस्थ जनमत का निर्माण करती है। लोकतंत्र की एक आम मान्यता है कि व्यक्तियों को न केवल अपनी बात कहने का अधिकार है, बल्कि जानने का भी अधिकार है। ऐसी स्थिति में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। जनता तक सही और स्पष्ट सूचना प्रसारित करने हेतु मीडिया की उपयोगिता बढ़ जाती है। आधुनिक काल में मीडिया मानव मूल्यों की गरिमा बनाये रखने तथा मनुष्य के राजनैतिक व सामाजिक अधिकारों की रक्षा करने का एक सशक्त माध्यम है। इसलिए इंग्लैण्ड के महान वक्ता व दार्शनिक एडमण्ड बर्क ने इसे राष्ट्र का चौथा स्तंभ कहा।

मीडिया लोकमत का सुधारक और समाज में सृजनशील माहौल का निर्माणकर्ता है। जहां मीडिया एक तरफ हमें देश की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों की जानकारी देता है, वहीं विदेशों में घटती घटनाओं और बदलते सामाजिक मूल्यों की भी जानकारी देता है। समाचारों को जन–जन तक पहुंचाने के अलावा मीडिया हमें अधिक शिक्षित कर हमारे मानसिक क्षितिज का भी विस्तार करती है। स्वतंत्रता संग्राम में देश की स्वतंत्रता के प्रति जनमानस में क्रांति की चेतना जागृत करने का बीड़ा मीडिया ने ही उठाया था।

आज का युग सूचना क्रांति का युग है, जिसमें सभी को सभी प्रकार की सूचनाओं को प्रदान करने का तथा सूचनाओं को एकत्र करने का अधिकार प्राप्त है। इस संदर्भ में सूचना एंव मीडिया साधनों की भूमिका को नकारना संभव नहीं है। इसके द्वारा समाज कार्य के सभी क्षेत्रों की आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद मिलती है।

समाज कार्य में मीडिया की विधियां एवं प्रविधियां :

1. जनता के विचारों में जन जागरूकता लाना।

2. समाधान हेतु नियोन तैयार करना।
3. प्रमुख व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करना।
4. प्रमुख संस्थाओं से संपर्क स्थापित करना।
5. सार्वजनिक सम्मेलनों का आयोजन करना।
6. प्रचार–प्रसार करना।
7. जनता के साथ विचार विमर्श करना।
8. पत्र पत्रिकाओं का उपयोग करना।
9. सामाजिक शिक्षा का कार्यक्रम चलाना।
10. समूहों के साधनों का आंकलन करना।
11. सामाजिक शिक्षा हेतु जनता को प्रेरित करना।
12. विशेषज्ञों की सेवायें प्राप्त करना।
13. अधिकारियों को प्रस्ताव प्रेषित करना।
14. गोष्ठियां आयोजित करना।
15. प्रतिवेदन बनाना।
16. जनता में आपसी सहयोग की भावना का विकास करना।
17. उपलब्ध संचार साधनों का समुचित प्रयोग करना।
18. नारों का प्रयोग करवाना।
19. नीति निर्धारकों को सामाजिक परिस्थितियों से अवगत कराना।
20. प्रतिवेदन लेख को सार्वजनिक करना।

समाज कार्य में मीडिया की रणनीति :

1– सहभागिता की रणनीति :– इस रणनीति का सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है। इसमें सामाजिक संरचना में परिवर्तन हेतु सहभागिता को महत्व दिया जाता है। सहभागिता की रणनीति के द्वारा मीडियाकर्ता समाज में सहभागिता को बढ़ाता है। जिससे सूचनाओं का अधिक से अधिक प्रचार प्रसार हो सके।

2– सहयोग की रणनीति :– यह वह विधि है जिसके द्वारा मीडियाकर्ता किसी मुद्दे के समाधान के बारे में बुनियादी सहमति हो या सहमति की होने की संभावना हो पर जोर देता है। साथ ही साथ समाज समाज कार्य के साथ सहयोग की भावना को जागृत करता है।

3– प्रतिस्पर्धा की रणनीति :– मीडिया समाज में परिवर्तन लाने के लिए इस रणनीति का प्रयोग करता है। इससे प्रचार व प्रसार के माध्यम से वर्तमान परिस्थिति को बदलने का प्रयास करता है। वह इस प्रकार प्रचार करता है कि समुदाय के सदस्य उसके कार्यक्रम की ओर उन्मुख होने लगते है।

4– गतिशीलता की रणनीति :– मीडियाकर्ता जितना अधिक गतिशील होगा उतना ही वह अपने रचना–कर्म में सफल होगा। समस्या की सूचना मिलते ही उसकी खोज में निकल पड़ना मीडियाकर्मी की प्रमुख भूमिका मानी जाती है। जिससे समय रहते समस्या का उचित समाधान हो सके।

5– व्यवहार कु□ालता की रणनीति :– मीडियाकर्मी को अपने कार्य में दक्ष होने के साथ व्यवहार कुशल होना चाहिए। बड़ो के प्रति मान–सम्मान जनता के साथ भाईचारा तथा छोटों के साथ स्नेह की भावना रखनी चाहिए। मीडिया कर्मी का व्यवहार ही उसकी फोटोकॉपी होती है।

6– समयबद्धता की रणनीति :– समय के साथ किया गया कार्य हमेशा सफल माना जाता है। समयबद्धता अनुशासन को दर्शाती है। किसी भी सम्मेलन, गोष्ठी, संगोष्ठी एवं समारोह में विलंब से पहुंच कर हम किसी समस्या का समाधान नहीं कर सकते। समय के प्रति निष्ठावान व प्रतिबद्ध नहीं होगा तो वह समस्या के स्रोत तक नहीं पहुंच सकेगा। सूचना एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में समयबद्धता का होना अति आवश्यक है।

7– अनुशासनात्मकता की रणनीति :– वैसे तो अनुशासन जीवन के हर पहलू में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। परंतु मीडिया में इसका विशेष महत्व है। मीडियाकर्मी अपने आत्मनियंत्रण से ही आत्मानुशासन स्थापित कर सकता है तथा जनता के लिए प्रेरणास्रोत बन सकता है। साथ ही साथ उनका विश्वास जीत सकता है। कठिन से कठिन कार्य को आसान बनाकर उस पर सफलता प्राप्त कर सकता है।

8– स्पष्टवादिता की रणनीति :– मीडिया एक मिशन है, इसलिए समाज कार्य में समस्या समाधान हेतु मीडिया को स्पष्टवादी होना अति आवश्यक है। मीडिया सत्य को निर्भीकता से प्रेषित करता है तो वह अपने व अपने व्यवसाय के प्रति न्याय कर सकता है। अपने जनता का विश्वास जीत सकता है। उसका सामाजिक सरोकार का दायरा बढ़ सकता है। वर्तमान समाज में हर व्यक्ति अपनी महत्ता एवं विश्वसनीयता को प्रदर्शित करने के लिए मीडिया का सहारा लेता है।

9– बहुमुखी कार्यक्रम की रणनीति :– इसके अन्तर्गत समाज कार्य के उद्देश्य तथा क्षेत्र को देखते हुए विविध कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। इस रणनीति के द्वारा समस्या के समाधान में सहायता मिलती है। मीडिया द्वारा प्रचार–प्रसार करके कार्यक्रमों को सफल बनाया जा सकता है तथा समाज की एक नई दशा और दिशा प्रदान की जा सकती है।

10– सतर्कता की रणनीति :– भारतीय समाज में समस्याओं का अंबार लगा हुआ है तथा पग–पग में कांटे बिछे हुए होते है। जरूरत है उन पर संभल कर चलने की। थोड़ी सी असावधानी से समाज को बहुत ही नुकसान हो सकता है। इसलिए समाज कार्य के समस्या समाधान के समय मीडिया को हर समय सतर्क एवं सावधान

होना चाहिए। अतः कुल मिलाकर यही कहना उचित है कि उसे बिल्ली के समान चतुर और शेर के समान सतर्क होना चाहिए।

12.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. गौतम, रूप चंद, 2008, प्रिंट मीडिया सिद्धांत एवं व्यवहार, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली 110053।
2. शर्मा, राधेश्याम, 1999, जनसंचार, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
3. पाण्डेय, अनुपम, 2006, पत्रकारिता के विविध आयाम डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली–110002।
4. गौतम, रूपचंद, 2006, मीडिया लेखन, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली, 110053।
5. सिंह ए0एन0, 2007, समाज कार्य, रैपिड बुक सर्विस, लखनऊ।
6. सूदन, कृपाल सिंह, 2010, समाज कार्य अभ्यास एवं सिद्धान्त।

टिप्पणी

खण्ड – तृतीय – संचार और मीडिया

इकाई–13, संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति

इकाई की रूप रेखा

13.0 – उद्देश्य

13.1 – प्रस्तावना

13.2 – संस्थागत की अवधारणा तथा अर्थ

13.3 – संस्थागत कार्यक्रमों का कार्य क्षेत्र

13.4 – संस्थागत कार्यक्रमों का महत्व

13.5 – संस्थागत कार्यक्रमों की भूमिका

13.6 – संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति

13.7 – संस्थागत नीति–निर्धारण की पद्धति

13.8 – संदर्भ सूची

13.0 उद्देश्य :

भारत एक कल्याणकारी राज्य हैं यहां की जनता के कल्याण हेतु सरकारी और गैर सरकारी संगठनों एवं संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। जनता के कल्याण हेतु सरकार द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इस इकाई का उद्देश्य है संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति का उल्लेख करना साथ ही साथ संस्थागत की अवधारणा तथा अर्थ का वर्णन करना। जो कार्य संस्था द्वारा उचित नियोजन के साथ किया जाता है संस्थागत की श्रेणी में आता है। इस इकाई में सर्वप्रथम संस्थागत के अर्थ का उल्लेख किया गया है। साथ ही साथ संस्थागत कार्यक्रमों की विशेषता का भी वर्णन किया गया है। संस्थागत कार्यक्रमों के विषय क्षेत्र/कार्य क्षेत्र पर भी प्रकाश डाला गया है। भारत वर्ष में संस्थागत कार्यक्रमों के माध्यम से ही जनमानस का कल्याण किया जाता। इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य है संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति अर्थात् कोई भी संस्था किस प्रकार से कल्याणकारी

कार्यक्रमों का आयोजन करती है तथा उसके कार्य करने की तकनीक एवं पद्धति किस प्रकार की है पर प्रकाश डाला गया हैं। यह एक महत्वपूर्ण इकाई है जिसके माध्यम से छात्र/छात्राओं को संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति के विषय में उचित ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

1. संस्थागत की अवधारणा एवं अर्थ की व्याख्या कर सकेंगे।
2. संस्थागत कार्यक्रमों पर प्रकाश डाल सकेगे।
3. संस्थागत कार्यक्रमों की विशेषताओं का वर्णन कर सकेगे।
4. संस्थागत कार्यक्रमों के कार्य क्षेत्र का उल्लेख कर सकेंगे।
5. संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति का वर्णन कर सकेंगे।
6. संस्थागत कार्यक्रमों की कार्य प्रणाली का उल्लेख कर सकेगे।

13.1 प्रस्तावना :

भारत में संस्थागत कार्यक्रमों का इतिहास बहुत प्राचीन है। ये संस्थाएं अभावग्रस्त, दुर्बल, असहाय, गरीब, अपंग एवं बाधित व्यक्तियों के लिए समाज कल्याण सेवाओं एवं कार्यक्रमों का आयोजन करती आयी है। भारत में अंग्रेजी सरकार द्वारा समाज कल्याण कार्यक्रमों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया, इसलिए संस्थागत संगठनों ने निर्धनों, अपंगों असहाय, बाधितों एवं अभावग्रस्त बालकों और महिलाओं के लिए अनुरक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना आंरभ किया। स्वतंत्रता के पश्चात् जब भारत ने अपने संविधान के अनुसार कल्याणकारी राज्य की स्थापना का दायित्व अपने कंधो पर लिया तब भी पंचवर्षीय योजनाओं में निर्धारित नीति के अनुसार समाज कल्याण सेवाओं और कार्यक्रमों के संचालन का मुख्य दायित्व संस्थागत संस्थाओं के कंधो पर आ गया।

सरकार संस्थागत कार्यक्रमों के आधार पर जनकल्याण की बात करती है। संस्थागत क्षेत्र की अपनी एक कार्यप्रणाली होती है जिसके आधार पर वह कार्य करती है। 'संस्थागत' शब्द संस्था से बना है। संस्थागत के द्वारा किया गया कार्य लोगों की आवश्यकता को पूरा करता है।

इस इकाई में संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति पर प्रकाश डाला गया है। संस्थागत के अंतर्गत नियोजित रूप से कार्य किया जाता हैं संस्थागत के तहत नियोजित कार्य को क्रियान्वित करने हेतु मानव संसाधन की महत्वपूर्ण भूमिका रहती हैं संस्थागत क्षेत्र के तहत किया गया कार्य संस्था के उद्देश्यों को पूरा करता है तथा लोगों के कल्याण के लिए हमेशा प्रयासरत रहता है।

संस्थागत संस्थाएं सरकारी तथा गैर सरकारी दोनो रूपों में कार्य करती है। ये सभी नियमों और विधियों का पालन करते हुए कार्य करती है जिससे उद्देश्यों को पूरा करने में मदद मिल सके। सरकारी संस्थान सरकारी कानूनों द्वारा विनियमित की जाती है। गैर सरकारी संस्थान समुदाय द्वारा बनाई गयी उपविधियों द्वारा संचालित की जाती है।

13.2 संस्थागत की अवधारणा एवं अर्थ :

'संस्थागत' शब्द को अंग्रेजी भाषा में Institutional कहा जाता है। संस्थागत शब्द संस्था शब्द से निकल कर बना है। संस्था या संस्थागत एक प्रकार का संगठन होता है और संगठन का निर्माण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मिलने से बनता है। किसी भी कार्यक्रम का आयोजन इसी संस्थागत या संस्था के माध्यम से होता है। आइये, संस्थागत को व्यक्तियों द्वारा स्थापित किया जाता है। संस्थागत शब्द को समझने से पूर्व सर्वप्रथम हम संस्था के विषय में जानकारी प्राप्त कर ले।

संस्था किसी संगठन का एक भाग होता है। संस्था सरकारी एवं गैरसरकारी दोनो प्रकार के होते है। संस्था के द्वारा कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। संस्था, संस्थान एवं संस्थागत एक ही समूह के अंतर्गत आते है विद्यालय, विश्वविद्यालय, सरकारी विभाग, संस्थान या संस्था के अंतर्गत आते हैं। संस्था एक प्रकार से कर्मचारियों एवं अधिकारियों का समूह होता है संस्था मुख्यतः दो प्रकार के हेाते है।

(क) सरकारी संस्था :– सरकारी संस्था सरकार द्वारा स्थापित कर साधनों से संचालित और वैतनिक पदाधिकारियों द्वारा चलाई जाने वाली संस्था होती है।

(ख) गैर–सरकारी संस्था :– गैर–सरकारी संस्था समुदाय द्वारा आत्म–सहायता के सिद्धान्त पर समुदाय से संग्रहीत धनराशि से चलाई जाने वाली संस्था होती है।

संस्थागत का अर्थ :

संस्थागत शब्द संस्था एवं संस्थान का प्रयार्यवाची शब्द है। संस्थागत शब्द संस्था+गत शब्द से मिलकर बना है। संस्थागत शब्द का अर्थ होता है नियोजित एवं व्यवस्थित रूप से किया गया कार्य। संस्थागत के लिए मानवीय संसाधन की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। मानवीय संसाधन मिलकर ही संस्थागत का निर्माण करते है।

- संस्थागत एक प्रकार का वैसा संगठन है जो नियोजित रूप से कार्य करता है।
- संस्थागत के द्वारा लोगों के लिए कल्याणकारी कार्य किये जाते है।
- संस्थागत शब्द संस्था से मिलकर बना है जिसका अर्थ होता है नियम के अनुसार कार्य करना।
- संस्थागत शब्द के अनुसार वैसा कार्य जो संस्था के द्वारा संपादित किया जाता है संस्थागत कहलाता है।

- संस्थागत शब्द वह है जिसमें अर्न्तगत किया गया कार्य व्यवस्थित एवं नियोजित तरीके से होता है।
- संस्थागत औपचारिक रूप से संगठित समूह है।

13.3 संस्थागत कार्यक्रमों का कार्य क्षेत्रः

संस्थागत कार्यक्रमों के आधार पर ही मानवीय कल्याण की बात की जाती है। यहां क्षेत्र से तात्पर्य भौगोलिक क्षेत्र से नही बल्कि आर्थिक नीति वाले क्षेत्र से है। संस्था के द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। कार्य क्षेत्रों का संस्थागत कार्यक्रमों में विशेष महत्व है। संस्थागत कार्यक्रमों के विशेष कार्य क्षेत्र निम्नलिखित है।

1. समाज कल्याण
2. महिला एवं बाल कल्याण
3. जनजातीय विकास
4. परिवार कल्याण
5. युवा कल्याण
6. वृद्ध कल्याण
7. वन एवं पर्यावरण
8. मानवाधिकार
9. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य
10. स्वच्छता एवं पेयजल
11. उपभोक्ता संरक्षण
12. यातायात
13. पुनर्वास
14. लघु एवं कुटीर उद्योग
15. शिक्षा एवं प्रौढ़ शिक्षण
16. नशामुक्ति
17. सामाजिक सुरक्षा

18. धार्मिक कार्य
19. निःशक्तजन कल्याण
20. वन्यजीव संरक्षण
21. गैर परंपरागत एवं अक्षय ऊर्जा
22. कृषि विकास
23. पशु कल्याण
24. पशुधन विकास
25. लघु सिंचाई
26. ग्रामीण विभाग
27. पंचायती राज
28. कला एवं संस्कृति
29. युवा एवं खेलकूद
30. सूचना एवं प्रौद्योगिकी
31. जनसंचार एवं शिक्षा
32. पुरातत्व संरक्षण

13.4 संस्थागत कार्यक्रमों का महत्व :

संस्थागत कार्यक्रमों के द्वारा ही जनकल्याण की प्रक्रिया को संपादित की जाती है। संस्थागत कार्यक्रमों का जनकल्याण हेतु अति महत्वपूर्ण होती हैं संस्था के अधिकारी, पदाधिकारी, कर्मचारी मिलकर कार्यक्रमों का आयोजन एवं संचालन करते है।

संस्थागत कार्यक्रमों के प्रमुख महत्व :

मानवीय प्रयासों का अनुकूलतम उपयोग :– संस्थागत कार्यक्रमों के लिए यह आवश्यक है कि कार्यक्रम की सफलता के लिए मानवीय प्रयासों का अनुकूलतम उपयोग हो। इसके लिए प्रत्येक कर्मचारी का कार्य, उसके अधिकार एवं दायित्व सुनिश्चित होते हैं, इस बात की संभावना समाप्त हो जाती है कि किसी कार्य के लिए कोई व्यक्ति उपलब्ध नहीं है और किसी कार्य को करने के लिए बहुत सारे

लोगों को कह दिया गया हो। इस प्रकार संस्थागत कार्यक्रमों के मानवीय प्रयास का सर्वोत्तम उपयोग होता है।

कार्य की आवश्यकतानुसार साधनों का आवंटन :– संस्थागत कार्यक्रमों के उचित संचालन हेतु संगठन संरचना के अंतर्गत कार्यों का विभागों, उपविभागों तथा जांच के रूप में आवंटन द्वारा प्रत्येक कार्य का महत्व उपयोगिता प्रबन्ध की नजर में आ जाती है। अतः संस्थागत कार्यक्रमों की सफलता के लिए साधनों का आवंटन उचित दिशा में हो।

विशिष्टीकरण को प्रोत्साहन :– संगठन श्रम विभाजन पर आधारित है। संस्थागत कार्यक्रमों की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि विशिष्टीकरण को समय–समय पर प्रोत्साहित किया जाता रहे जिससे कार्य का उचित निष्कर्ष प्राप्त होगा।

भ्रष्टाचार एवं अक्षमताओं पर रोक :– अच्छे संगठन के अभाव में कच्चे माल की चोरी व बर्बादी, श्रमिकों की अनुपस्थिति तथा विलम्ब से काम पर आने ली प्रवृत्ति बढ़ जाती है तथा कर्मचारी के मनोबल का स्तर नीचे हो जाता है जिससे संस्थागत कार्यक्रमों पर असर पड़ता है इसलिए सही कार्य के संचालन के लिए इसके द्वारा भ्रष्टाचार एवं अक्षताओं पर रोक लगाई जाती है।

वातावरण से सामंजस्य :– प्रत्येक संस्थागत कार्यक्रमों के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने कार्य के वातावरण तथा वाह्य वातावरण के बीच परस्पर सामंजस्य बनाकर रखे जिससे कार्य सुचारू रूप से चल सके तथा कार्यक्रम सफलता पूर्वक आयोजित किया जा सके।

13.5 संस्थागत कार्यक्रमों की भूमिका :

- जनकल्याण में अगुवा
- सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वयन
- सामाजिक परिवर्तन में सहायक

- सामाजिक कानूनों के क्रियान्वयन में सहायक
- उत्तरदायित्व–भावना का विकास
- सामाजिक नियोजन तथा नीति–निर्माण में सहायक
- सामुदायिक सहभागिता में वृद्धि
- जन जागरूकता तथा जनमत निर्माण

13.6 संस्थागत कार्यक्रमों की पद्धति :

संस्थागत कार्यक्रम के पदाधिकारी :

क– प्रधान

ख– उप–प्रधान

ग– महामंत्री

घ– संयुक्त/सहायक मंत्री

ड़– कोषाध्यक्ष

च– मुख्य कार्यपालक

छ– लेखा–निरीक्षक

संस्थागत कार्यक्रम की समितियां :

क– प्रबंध समिति

ख– वित्त समिति

ग– कार्मिक समिति

घ– स्वैच्छिक कार्यकर्ता समिति

ड़–जन सम्पर्क समिति

च– विधि–समति

छ– भवन समिति

ज– मूल्यांकन समिति

क– प्रबंध समिति :– प्रबंध समिति का निर्वाचन सामान्य सभा करती है। संस्था के पदाधिकारी तथा कुछ अन्य निर्वाचित सदस्य इस समिति के सदस्य होते है। इस समिति का कार्यक्षेत्र बहुत

विस्तृत होता है। इस समिति का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसे प्रशासनिक तथा संसदीय कार्यों का अनुभव हो।

ख– वित्त समिति :– वित्त समिति संस्था का बजट बनाती है, धन संग्रह करवाती है और संस्था का हिसाब किताब रखती है। बजट और लेखा वित्त समिति द्वारा प्रबंन्ध समिति को पेश किया जाता है। इस समिति का अध्यक्ष कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए, जिसे वित्तीय मामलों और लेखा–पर्यवेक्षण का अनुभव हो।

ग– कार्मिक समिति :– कार्मिक समिति का काम है कार्यकर्ताओं की नियुक्ति, तरक्की, सेवा मुक्ति, वेतनमान, भत्ता तथा नौकरी की अन्य शर्तों के विषय में नीति निर्धारित करने के लिए प्रबंध–समिति को सिफारिश करना। कोई ऐसा व्यक्ति, जिसे प्रशासनिक अथवा कार्मिक संबंधी मामलों में अनुभव हो, इस समिति का अध्यक्ष बनाया जाना चाहिए।

घ– स्वैच्छिक कार्यकर्ता–समिति :– संस्था में स्वयंसेवकों और स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं की नियुक्ति, काम के बंटवारे तथा उनके काम के पर्यवेक्षण के लिए एक समिति बनानी चाहिए। इस समिति का अध्यख एक स्वैच्छिक कार्यकर्ता होना चाहिए।

ड– जन–संपर्क समिति :– संस्था के कामों के विषय में समुदाय को सूचित करने के लिए एक जन–संपर्क समिति बनानी चाहिए। दूसरी संस्थाओं के साथ समन्वय स्थापित करना भी इस समिति का कार्य होना चाहिए। इस समिति का अध्यक्ष कोई अनुभवी पत्रकार होना चाहिए।

च– विधि– समिति :– संस्था के विधि संबंधी मामलों को संभालने के लिए विधि–समिति की नियुक्ति की जा सकती है। इसका अध्यक्ष विधि संबंधी मामलों में अनुभवी व्यक्ति होना चाहिए।

छ– भवन–समिति :– संस्था के भवन के निर्माण तथा मरम्मत के लिए एक अनुभवी इंजीनियर की अध्यक्षता में एक अलग समिति होनी चाहिए।

ज– मूल्यांकन–समिति :– संस्था के संगठन, पद्धतियों और कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिए एक समिति बनाई जाए, जिसका अध्यक्ष समाजशास्त्र/समाजकार्य का विशेषज्ञ हो।

13.7 संस्थागत नीति–निर्धारण की पद्धति :

नीति निर्धारण :– नीति–संस्था के उद्देश्यों, लक्ष्यों, कार्य–पद्धति और सिद्धांतों का विवरण है। संस्था के नीति–संबंधी वक्तव्य को तैयार करने के लिए समिति की बैठक में मुख्य कार्यपालक का होना न केवल आवश्यक है, अपितु नीति–संबंधी मसविदा उसे ही बनाना चाहिए।

पद्धति :– नीति–निर्धारण की क्रिया–विधि में निम्नलिखित बाते सम्मिलित होनी चाहिए।

1. नीति–निर्धारण के लिए निर्णय लेना।
2. नीति निर्धारण की आवश्यकता को मान्यता प्रदान करना।
3. किसी व्यक्ति या समूह को नीति का मसविदा तैयार करने के लिए नियुक्त करना।
4. नीति उप–समिति, कर्मचारी समिति और सामान्य सभा में इस मसविदे पर विचार होना चाहिए।
5. यह देखने के लिए कि नीति सुदृढ़ है, समय–समय पर कार्यक्रमों का मूल्यांकन होना चाहिए।

कार्यक्रमों को उपयोगी तथा प्रभावकारी बनाने के लिए नीति का समय–समय पर पुनरीक्षण होना चाहिए।

सिद्धान्त :– नीति–निर्धारण करते समय निम्नलिखित सिंद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए।

1. संस्था की नीति का आधार उसके विधान में दिए गए उद्देश्य हों।
2. कार्यक्रम को चलाने वाले व्यक्ति नीति–निर्धारण से संबंद्ध रहे।
3. संपूर्ण संस्था को नीति–निर्धारण में भाग लेना चाहिए।
4. नीति सामाजिक आवश्यकताओं और संस्था के साधनों के अनुरूप होनी चाहिए।
5. नीति–निर्धारण का ज्ञान संस्था के सभी कार्यकर्ताओं को होना चाहिए।

13.8 सन्दर्भ सूची

1. फडिया, बी0एल0, 2003, लोक प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. अग्रवाल, आर0सी0 2012 व्यवसाय प्रबन्ध के सिद्धान्त, एस0बी0पी0डी0 पब्लिशिंग हाउस, आगरा।
3. कटारिया, सुरेन्द्र, 2010 सामाजिक प्रशासन, आर0बी0 एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर।
4. चौधरी, धर्मपाल, 2002, समाज कल्याण प्रशासन, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
5. सिंह, सुरेन्द्र, 2010, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ।

टिप्पणी

खण्ड – तृतीय – संचार और मीडिया

इकाई–14, संगठित कार्यक्रमो के आयोजन के चरण

इकाई की रूप रेखा

14.0 – उद्देश्य

14.1 – प्रस्तावना

14.2 – संगठित कार्यक्रम की अवधारणा एवं अर्थ

14.3 – संगठित कार्यक्रम के महत्व

14.4 – संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के महत्वपूर्ण बिन्दु

14.5 – संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरण

14.6 – संगठित कार्यक्रमों के आयोजन की तकनीक

14.7 – संदर्भ सूची

14.0 उद्देश्य :

इस इकाई का उद्देश्य है संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरण का उल्लेख करना तथा साथ ही साथ संगठित कार्यक्रमो की अवधारणा का वर्णन करना। संगठित का अर्थ होता है सुनियोजित तरीके से किया गया कार्य। संगठित हो कर रहना, संगठित होकर कार्य करना हमेशा सफलता की बात करता है। किसी भी कार्यक्रम की सफलता के लिए उसके चरण की आवश्यकता पड़ती है जिससे कार्यक्रम का उद्देश्य पूरा हो सके। इस इकाई में सर्वप्रथम संगठित कार्यक्रमों की अवधारणा पर प्रकाश डाला गया है तथा चरण के मुख्य बिंदुओ की व्याख्या की गई है जिससे छात्रो को इस विषय को समझने में आसानी होगी। इस इकाई के माध्यम से कार्यक्रम के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ ही साथ कार्यक्रम आयोजन हेतु महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :–

- संगठित स्वरूप की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- संगठित कार्यक्रमो के महत्व को समझ सकेंगे।

- कार्यक्रमों के आयोजन के महत्वपूर्ण बिंदुओं की व्याख्या कर सकेंगें।
- संगठित कार्यक्रमों के चरण की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरण की व्याख्या कर सकेंगें।

14.1 प्रस्तावना :

संगठन मूल रूप से व्यक्तियो का समूह होता है जो किसी निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मिल कर कार्य करते हैं। मिलकर कार्य करना ही संगठित स्वरूप की व्याख्या करता है। हमारा परिवार भी एक प्रकार का संगठन है जिसके सभी सदस्य जब संगठित हो कर कार्य करते है या जीवन यापन करते है तभी वह परिवार हमेशा सफलता की ओर बढ़ता है। ठीक इसी प्रकार हमारा शरीर भी एक प्रकार का संगठन है और जब शरीर के सभी अंग संगठित हो कर कार्य करते है तो व्यक्ति सफलता की ओर अग्रसर होता है तथा शरीर भी स्वस्थ रहता है। संगठित होकर किया गया कार्य हमेशा सफलता की राह को दिखाता है।

संगठित कार्य की सफलता के लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य है सफल नियोजन। वास्तव में, नियोजन के आधार पर ही सफलता की कहानी लिखी जा सकती है। संगठित कार्यक्रम के सफल आयोजन हेतु उसके चरण की भी विस्तृत व्याख्या करनी चाहिए। चरण एक प्रकार की कार्य की पद्धति होती है। किसी भी कार्य को चरणबद्ध तरीके से करने से कार्यक्रम सफल रहता है। जिस प्रकार किसी मकान के निर्माण की शुरूआत का प्रथम चरण है नींव खोदना उसके उपरांत चरण–दर–चरण से संपूर्ण मकान का निर्माण होता है। उसी प्रकार चरण बद्ध तरीके से किसी संगठित कार्यक्रम का भी आयोजन करना चाहिए। इस इकाई में संगठित कार्यक्रम के आयोजन के चरण की व्याख्या की गई है जिससे छात्र/छात्राओं को इस विषय पर संपूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

14.2 संगठित कार्यक्रम की अवधारणा एवं अर्थ :

किसी भी कार्य को नियोजित एवं व्यवस्थित रूप से करना ही संगठित कार्य कहलाता है। संगठित होना अपने आप में सफलता की राह को दर्शाता है, संगठित होने के लिए परस्पर ज्ञान और निपुणता की आवश्यकता पड़ती है। संगठन के द्वारा ही संगठित होना संभव है। संगठन और सगठित का आपस में गहरा संबंध है। किसी भी संगठन मैं जब तक संगठित होकर कार्य नही किया जायेगा तब तक कार्य की सफलता भी संभव नही है। सरकार या गैर सरकारी संगठन जो भी कार्यक्रम जनता के लिए चलाती है उसकी सर्थकता तभी सिद्ध होगी जब वह संगठित होकर किया जाए। सरकार के कई विभाग होते है जिसके माध्यम से कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। ये विभाग कार्यक्रम की सफलता के लिए अपना अपना बहुमूल्य योगदान देते है।

भारत एक कल्याणकारी राज्य है। जनता के कल्याण तथा राष्ट्र के सर्वांगीण विकास हेतु हमारी सरकार अनेक योजनाएं तथा कार्यक्रम का निर्धारणा करती है। इस कार्यक्रमों के माध्यम से जनता के जीवन स्तर को सुधारने समस्या का निराकरण करने, सामाजिक न्याय दिलाने तथा समानता दिलाने का प्रयास करती है। संगठित कार्यक्रम के द्वारा सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक विकास का मसौदा तैयार किया जाता है।

संगठित कार्यक्रम का अर्थ :

- वह कार्यक्रम जो नियोजित तरीके से किया जाता है और जिसका लाभ संबंधित लोगो को मिलता है संगठित कार्यक्रम की श्रेणी में आता है।
- संगठित कार्यक्रम एक प्रकार का यंत्र होता है जिसके माध्यम से जनता को जागरूक किया जाता है।

- संगठित कार्यक्रम के द्वारा जनता की समस्याओं का निराकरण किया जाता है।
- वह कार्यक्रम जो व्यवस्थित एवं सुनिश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए आयोजित किया जाता है उसे संगठित कार्यक्रम कहते है।
- संगठित कार्यक्रम हमेशा जनता की आवश्यकताओं तथा रूचियो को ध्यान में रख कर आयोजित किया जाता है।
- वह कार्यक्रम जो संगठन की नीतियो के अनुरूप आयोजित किया जाता है संगठित कार्यक्रम कहलाता है।

14.3 संगठित कार्यक्रम के महत्व :

1. इसके द्वारा जनता को मनोरंजन प्रदान किया जाता है।
2. स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध होते है।
3. समस्या के निराकरण में सहायता मिलती है।
4. इसके माध्यम से सूचना का प्रचार–प्रसार संभव होता है।
5. इसके द्वारा सामाजिक शिक्षा के कार्यक्रम को आसानी से चलाया जा सकता है।
6. जनता के जीवन स्तर को उपर उठाने में मदद मिलती है।
7. इसके माध्यम से कानूनों का उचित क्रियान्वयन संभव होता है।
8. इसके द्वारा जनता के स्वास्थ्य स्तर को उपर उठाया जाता है।
9. इसके द्वारा सामाजिक जीवन की अड़चनों को दूर किया जाता है।
10. इसके द्वारा जनता में रचनात्मकता का विकास होता है।
11. व्यक्तित्व विकास का यह महत्वपूर्ण माध्यम है।
12. इसके द्वारा व्यक्तियों में कौशल का विकास होता है।
13. सामाजिक समायोजन में मदद मिलती है।
14. व्यक्ति में सकारात्मक गुणों का विकास होता है।
15. सरकार के नीतियों के प्रसार में मदद मिलती है।

14.4 संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के महत्वपूर्ण बिन्दु :

1. जन जागरूकता।
2. प्रचार–प्रसार।
3. उचित क्रियान्वयन।
4. सफल नियोजन।
5. उचित कार्यप्रणाली।
6. संगठित प्रयास।
7. संगठित उद्देश्य।
8. कार्य का समुचित वितरण।
9. उचित नियंत्रण।
10. आदेश की एकता।
11. कार्य विभाजन का विशेषीकरण।
12. प्रत्यायोजन।
13. सहयोग की भावना।
14. अनुशासन।
15. सुव्यवस्था।
16. प्रतिवेदन।
17. उत्तरदायित्व।
18. संतुलित समन्वय।
19. विकेन्द्रीकरण।
20. श्रम विभाजन।

14.5 संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के चरण :

किसी कार्य को व्यवस्थित ढंग से सम्पन्न करने के लिये जिस प्रकार एक क्रमबद्ध योजना की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए उसे कई चरणो से गुजरना आवश्यक है। ये चरण संगठित कार्यक्रमो के आयोजन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं जिसके आधार पर कार्यक्रम की

विषय वस्तु स्पष्ट होती है। संगठित कार्यक्रमो के भी विभिन्न विद्वानो ने कुछ चरण बताये है जिसमें से कुछ प्रमुख चरण निम्नलिखित है।

1. **अवलोकन करना** :– प्रत्येक समाज की अपनी अलग संस्कृति एवं सभ्यता होती है, जो दूसरे समाज से भिन्न होती है। इसलिए किसी भी कार्यक्रम के आयोजन से पूर्व सर्वप्रथम क्षेत्र एवं समस्या का अवलोकन करना चाहिए। अवलोकन करने से क्षेत्र एवं समस्या के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाती है। अवलोकन के माध्यम से समस्या की गहराई को बेहतर तरीके से समझा जा सकता है तथा उद्देश्य को पूरा किया जा सकता है।

2. **अध्ययन करना** :– संगठित कार्यक्रम के आयोजन के लिए दूसरे चरण के रूप में क्षेत्र एवं समस्या का अध्ययन करना अत्यंत आवश्यक है। किसी भी कार्यक्रम के आयोजन से पूर्व तथ्यों का अध्ययन एक करना महत्वपूर्ण कार्य है। अध्ययन करने से किसी भी समस्या के विषय में गहनता से जानकारी प्राप्त होती है जिससे कार्यक्रम के आयोजन में मदद मिलती है। अध्ययन के द्वारा ही लोगों की आवश्यकताओं एवं समस्याओं से संबंधित सूचना को एकत्र किया जाता है। अध्ययन करते समय समस्त विषय वस्तु पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए जिससे कार्य की सार्थकता सिद्ध हो सके।

3. **सर्वेक्षण करना** :– औपचारिक संगठन के निर्माण के पश्चात् समुदाय की दशाओं के सर्वेक्षण की आवश्यकता होती है। सर्वेक्षण का उद्देश्य तथ्यों को ज्ञात करना होता है। सर्वेक्षण के माध्यम से ही आंकड़ों को भी एकत्र किया जाता है, जिससे कार्यक्रम को सफलतापूर्वक आयोजित करने में मदद मिलती है। यह एक प्रकार की तकनीक है जिसके द्वारा तथ्यों

एवं आंकड़ों को एकत्र किया जाता है। सर्वेक्षण तकनीक के द्वारा ही समुदाय का दशाओं का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जाता है जिससे कार्यक्रम को सही दिशा में आयोजित किया जा सके।

4. **समस्या का विश्लेषण करना** :– कार्यक्रम का आयोजन करना ही वास्तव में समस्या का निदान है अतः जब तक समस्याओं एवं आवश्यकताओं का सही दिशा में विश्लेषण नहीं किया जायेगा तब तक उस समस्या के अनुरूप कार्यक्रम का आयोजन संभव नहीं है। विश्लेषण के द्वारा ही समस्या की गहराई को समझा जाता है, फिर उसी के अनुसार कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। समस्या का विश्लेषण करना संगठित कार्यक्रम के आयोजन का एक महत्वपूर्ण चरण है। विश्लेषण करते समय सावधानी अत्यंत आवश्यक है।

5. **संसाधनों की तलाश करना** :– सफल और संगठित कार्यक्रम के आयोजन के लिए लिए पर्याप्त मात्रा में संसाधनों का होना अति आवश्यक है। संसाधन के द्वारा ही कार्यक्रम सफल होता है। संसाधन के रूप में भौतिक, एवं मानव संसाधन, तथा बजट का होना अति आवश्यक है। बिना प्रर्याप्त संसाधन के कोई भी कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता है। कार्य का विश्लेषण करने के उपरान्त संसाधनो को जुटाना एवं संग्रहित करना अति महत्वपूर्ण कार्य है। उचित मात्रा में संसाधनों के द्वारा ही जनता की आवश्यकता को पूरा करना तथा समस्याओं का समाधान करना संभव होता है।

6. **कल्याणकारी योजना एवं कार्यक्रम तैयार करना** :– जनता एवं समुदाय के आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु तथा समस्या के समाधान के लिए उचित कल्याणकारी योजना एवं कार्यक्रमों को तैयार करना महत्वपूर्ण चरण है। यह आवश्यक

है कि कार्यक्रम लोगों की आवश्यकता के अनुरूप हो। इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए। कार्यक्रम तैयार करते समय जनता की सहभागिता भी अति आवश्यक है जिससे उनको संबंधित कार्यक्रम एवं योजना का लाभ प्राप्त हो सके। कार्यक्रमों को सही दिशा में तैयार करना महत्वपूर्ण कार्य है, जिससे संबंधित लोगों को इसका भरपूर लाभ मिल सके।

7. **नेतृत्व का उचित विकास करना** :—सामुदायिक नेतृत्व एक ऐसा व्यवहार है दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को उससे कहीं अधिक प्रभावित करता है जितना कि उनका व्यवहार नेता को प्रभावित करता है। यह परम सत्य है कि बिना परस्पर नेतृत्व के कोई भी कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता है। संगठित कार्यक्रम के आयोजन के लिए भी यह अत्यन्त आवश्यक है कि कार्यक्रम की सफलता के लिए उचित नेतृत्व का विकास हो। यह भी एक महत्वपूर्ण चरण है। नेता समय—समय पर कार्यक्रम की सफलता के लिए उचित निर्देश एवं सुझाव देता रहता है ताकि कार्यक्रम अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सके। सफल नेतृत्व पर ही कार्यक्रम की सफलता केन्द्रित होती है। नेतृत्व के द्वारा ही कार्यक्रम को सफलता के साथ क्रियान्वित किया जाता है। अतः हम कह सकते है कि संगठित कार्यक्रमों के आयोजन के लिए नेतृत्व का सफल विकास होना परम आवश्यक है।

8. **कार्यक्रमों का कार्यान्वयन करना** :—कल्याणकारी योजनाओं एवं संगठित कार्यक्रमों के निर्धारण के पश्चात् कार्यक्रमों का सफल कार्यान्वयन किया जाना भी महत्वपूर्ण चरण है। कार्यक्रमों को आवश्यकता एवं समस्या के अनुरूप निर्धारण करने के उपरांत कार्यक्रमों का सफलतापूर्वक क्रियान्वयन

अत्यन्त आवश्यक है तभी कार्यक्रम की सार्थकता का पता चलेगा। कार्यक्रमों के कार्यान्वयन द्वारा ही संगठित कार्यक्रमों को आयोजित किया जाता है तथा उद्देश्यों को पूरा किया जाता हैं। कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु उचित कार्यविधि का प्रयोग किया जाता है जिससे कार्यक्रम को क्रियान्वित करने में आसानी से सफलता प्राप्त हो।

9. **कार्यक्रमों का उचित अनुश्रवण एवं मूल्यांकन करना:**—अनुश्रवण एवं मूल्यांकन किसी भी कार्य की सफलता की एक महत्वपूर्ण विधि है। कोई भी कार्यक्रम चाहे वह सफल हो या असफल कार्यक्रम का अनुश्रवण एवं मूल्यांकन अवश्य किया जाता है इस विधि के द्वारा कमी का पता लगाया जाता है तथा कमी के दोषी कारकों—मानवीय एवं संस्थागत, का भी पता लग जाता है। मूल्यांकन विधि द्वारा ही कार्यक्रम में आने वाली बाधाओं को भी ज्ञात किया जाता है। अनुश्रषण एवं मूल्यांकन किसी भी कार्यक्रम की सफलता का महत्वपूर्ण तकनीक है जिससे कार्य की दशा एवं दिशा का भी ज्ञान होता है। यह विधि संगठित कार्यक्रम के शुरूआत से अंत तक चलने वाली विधि है। समय—समय पर कार्यक्रम का करना कार्यक्रम की दशा को दर्शाता है। कार्यकम के पश्चात अथवा मूल्यांकन के द्वारा ही भविष्य की योजना का भी निर्माण किया जाता है। साथ ही साथ कार्यक्रम की गहराई का भी पता लगाया जाता है। अतः हम कह सकते है कि संगठित कार्यक्रम सफल आयोजन के जो भी चरण है उनमें अनुश्रवण एव मूल्यांकन करना भी एक महत्वपूर्ण हैं।

14.6 संगठित कार्यक्रमों के आयोजन की तकनीक :

संगठित कार्यक्रमों के सफल आयोजन हेतु तकनीक का भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है। तकनीक के द्वारा ही कार्यक्रम के

आयोजन का मसौदा तैयार किया जाता है जिससे कार्यक्रम सफल हो सके। संगठित कार्यक्रम के आयोजन में ये तकनीक एक सहायक के रूप में कार्य करते हैं। अतः कार्यक्रम की सफलता के लिए इन तकनीकों को महत्वपूर्ण माना गया हे। तकनीक निम्नवत है :–

- नियोजन करना
- संगठित करना
- कर्मचारी प्रबध करना
- निर्देशन करना
- समन्वय करना
- प्रेरित करना
- प्रतिवेदन देना
- आय–व्यय का हिसाब देना

14.7 संदर्भ सूची :

1. कटारिया, सुरेन्द्र, 2010, सामाजिक प्रशासन, आर0बी0एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर।
2. सिंह,ए0एन0, 2002, सामुदायिक संगठन, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
3. सिंह, सुरेन्द्र, 2010, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ।
4. फड़िया, बी0एल0, 2003, लोक प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।

खण्ड – तृतीय – संचार और मीडिया

इकाई–15, संगठित कार्यक्रमों के प्रकार

इकाई की रूप रेखा

15.0 – उद्देश्य

15.1 – प्रस्तावना

15.2 – संगठन की अवधारणा एवं अर्थ

15.3 – संगठित की अवधारणा

15.4 – आदर्श संगठित स्वरूप की विशेषता

15.5 – कार्यक्रम की अवधारणा एवं लाभ

15.6 – संगठित कार्यक्रमों के प्रकार

15.7 – संगठित कार्यक्रमों के अंर्तगत महत्वपूर्ण नीति

15.8 – संदर्भ सूची

15.0 उद्देश्य :

आदिकाल से हमारे समाज में संगठन मौजूद हैं। समय के साथ–साथ संगठनों का रूप बदलता गया है। किसी भी कार्य को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के लिए आपस में संगठित होना अत्यन्त आवश्यक है। इस इकाई का उद्देश्य है कि भारत में किस प्रकार से सरकार द्वारा संगठित कार्यक्रमों को चलाया जा रहा है तथा संगठित कार्यक्रमों के कितने प्रकार है। सगठित कार्यक्रमों के आधार पर ही किसी भी देश का विकास संभव है और बिना संगठन के किया गया कार्य असफलता की राह पर ले जाता है। इस इकाई में सर्वप्रथम संगठन की अवधारणा एवं अर्थ को समझाया गया है तथा संगठित कार्यक्रमों के प्रकार को समझाया गया हैं, साथ ही साथ संगठित क्षेत्र का भी वर्णन किया गया है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

1. संगठन की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे।

2. संगठित क्षेत्र का वर्णन कर सकेगे।
3. संगठित की प्रस्तावना एवं अर्थ का उल्लेख कर सकेंगे।
4. आदर्श संगठित स्वरूप की विशेषता का वर्णन कर सकेंगे।
5. कार्यक्रमों की अवधारणा एवं लाभ की व्याख्या कर सकेंगे।
6. संगठित कार्यक्रमों के प्रकार की व्याख्या कर सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना :

आज विश्व में जीवन स्तर को बढ़ाने वाले एवं भौतिक सुख देने वाले जो साधन उपलब्ध है वे सभी संगठित स्वरूप की ही देन है। संगठित स्वरूप के अभाव में हमारा जीवन स्तर, हमारी संस्कृति और हमारा प्रजातान्त्रिक जीवन कायम नहीं रह सकता। हम संगठित समाज में जन्म लेते है, शिक्षा प्राप्त करते है, कार्य या व्यवसाय करते है; अधिकांश लोग अपने जीवन का अधिकांश समय संगठित समाज में ही व्यतीत करते है। सामान्य बोलचाल की भाषा में हम यह कह सकते है कि किसी कार्य को योजनाबद्ध ढंग से करना ही संगठित कार्य है।

किसी देश के विकास हेतु वहां सरकार द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों को चलाया जाता है। भारत एक कल्याणकारी राष्ट्र है इसलिए यहां पर सभी धर्म, जाति, सम्प्रदाय और समुदाय के विकास की बात की जाती है। इसके लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों का संचालन किया जाता है और सभी कार्यक्रमों को संगठित रूप से चलाया जाता है, ताकि सभी को इसका समुचित लाभ प्राप्त हो सके। कार्यक्रम एक प्रकार से विकास कार्य का माध्यम होता है। इस इकाई के माध्यम से इन्ही सभी मुख्य बातों पर प्रकाश डाला गया है ताकि विद्यार्थियों को इस विषय में समुचित ज्ञान प्राप्त हो सके। वास्तव में संगठित हो कर किया गया कार्य हमें हमेशा सफलता दिलाता है तथा अपने उद्देश्य को पूरा करता है।

आज हमारा देश और समाज भिन्न–भिन्न प्रकार की समस्याओं से जूझ रहा है इसलिए समस्या के निराकरण हेतु एक मात्र उपाय है संगठित रूप से कार्य को सम्पन्न करना। संगठित होना अपने आप में एकता को दर्शाता है। संगठन लोगों का समूह होता है और उस संगठन के लोगों द्वारा किया गया कार्य संगठित कार्य कहलाता है।

15.2 संगठन की अवधारणा एवं अर्थ :

जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी उपक्रम में साथ–साथ कार्य करते है तो इन व्यक्तियों के मध्य कार्य को बांटने की आवश्यकता होती है। इसी का नाम संगठन है। जिस प्रकार मानव शरीर में अनेक छोटे–छोटे भाग होते हैं तथा प्रत्येक भाग का एक नियत कार्य होता है। जैसे– हाथो का कार्य–कार्य करना, मुख का खाना, पेट का पचाना, आंखों का देखना, कान का सुनना, पैरो का चलना तथा नाक का सूंघना होता है इसके अतिरिक्त मानव शरीर में मस्तिष्क में एक केन्द्रीय विभाग भी होता है जो सभी को संगठित रहकर कार्य करने की सलाह देता है, जिससे मानव शरीर का सही दिशा में विकास एवं सचालन हो सके। जब हमारे मस्तिष्क में कोई विचार पैदा होता है तो उसको क्रियान्वित करने के लिए शरीर के सभी अंग संगठित होकर कार्य करने लगते है।

संगठन के अर्थ :

- एक निश्चित व्यक्ति समूह के द्वारा लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु किये जाने वाले कार्यों को ही संगठन कहते है।
- संगठन मुख्यतः मानव का मानव से, कार्य का कार्य से तथा विभाग का विभाग से सबंध है।
- संगठन सामान्य हितों की पूर्ति के लिए बनाया गया मनुष्यों का एक समुदाय है।

- संगठन को समूहों के प्रयासों को निदेशन के द्वारा नियंत्रित किया जाता है।
- संगठन में श्रम विभाजन, अधिकार एवं दायित्वों के विभाजन, आदि का नियोजन किया जाता है।

संगठन के लक्ष्य :

- लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग करना।
- मानवीय संसाधनों की प्राप्ति एवं विकास करना।
- संगठन की प्रभावशीलता में वृद्धि करना।
- सेवा की भावना जागृत करना।
- श्रम तथा पूँजी के बीच मधुर संबन्धो की स्थापना।
- संस्था को स्थापन प्रदान करना।
- सामाजिक जीवन स्तर को ऊचा उठाना।
- उपलब्ध सीमित साधनों का अधिकतम सदुपयोग करना।

15.3 संगठित स्वरूप की अवधारणा :

किसी कार्य को नियोजित एवं व्यवस्थित रूप से करना संगठित कार्य कहलाता है। संगठन मनुष्यौं का समूह है। और यही मनुष्य जब किसी कार्य को सामूहिक रूप से मिलकर करते हैं तो यह संगठित कार्य कहलाता है। संगठित होना अपने आप में सफलता की राह को दर्शाता है। संगठत होने के लिए परस्पर ज्ञान और निपुणता की आवश्यकता पड़ती है। संगठित की आवश्यकता एवं लक्ष्य पूरा करने के लिए संगठित प्रयास अति आवश्यक होता है। किसी भी देश, अथवा राष्ट्र, राज्य, समाज तथा संगठन की सफलता के लिए यह आवश्यक हो जाता है वहां के नागरिक संगठित हो कर कार्य करे तभी लक्ष्य की प्राप्ति संभव है।

संगठित स्वरूप के क्षेत्र :

1. भारत सरकार के विभाग
2. राजनीति का क्षेत्र।

3. बैंक।
4. पुलिस विभाग।
5. सरकारी विद्यालय तथा महाविद्यालय।
6. बड़े स्तर की प्राइवेट कंपनी।

15.4 आदर्श संगठित स्वरूप की विशेषताए :

1. उद्देश्यो की प्राप्ति।
2. नियंत्रण का उचित क्षेत्र।
3. कार्यों का स्वस्थ समूहीकरण।
4. कर्तव्यों एवं दायित्वो का स्पष्ट आबंटन।
5. सन्तुष्टि का विकास।
6. विकास एवं विस्तार की व्यवस्था।
7. तथ्यों का विशिष्टीकरण।
8. समन्वय।
9. मानव शक्ति का अधिकतम उपयोग।
10. उच्च मनोबल।
11. संगठनात्मक सन्तुलन।
12. स्वस्थ संदेशवाहन व्यवस्था।
13. कार्यान्वयन में सुविधा।
14. प्रभावी नेतृत्व।
15. स्थायित्वता।

15.5 कार्यक्रम की अवधारणा एवं लाभ :

भारत एक लोक कल्याणकारी राज्य है। लोककल्याण राज्य होने के नाते हमारी सरकारें राष्ट्र के सर्वांगीण विकास हेतु अनेक योजनाएं तथा कार्यक्रम निर्धारित करती है। ये क्रार्यक्रम मुख्यतः जीवन स्तर को सुधारने, सामाजिक न्याय तथा समानता सुनिश्चित करने तथा सामाजिक–आर्थिक नियोजन के लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु तैयार किये जाते है। सरकार की इन नीतियों तथा कार्यक्रमो

को जन–जन तक पहुंचाने में गैर–सरकारी संगठन (एन0जी0ओ0) की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

कार्यक्रम एक प्रकार से महत्वपूर्ण तत्व है जिसके द्वारा जनता को लाभ पहुंचाया जाता है। कार्यक्रम का प्रयोग व्यक्तियों के उद्देश्यों की प्रप्ति के लिए किया जाता है। कार्यक्रम एक प्रकार का यंत्र होता है। कार्यक्रम के द्वारा ही जनता को जागरूक भी किया जाता है तथा उनके जीवन स्तर को उपर उठाने का प्रयास किया जाता है।

कार्यक्रम के लाभ :

1. समस्या का निराकरण करना।
2. जन जागरूकता लाना।
3. सूचना का प्रसार करना।
4. जनता को मनोरंजन प्रदान करना।
5. सामाजिक शिक्षा का कार्यक्रम चलाना।
6. जनता को प्रेरित करना।
7. जीवन स्तर को उपर उठाना।
8. सामाजिक नीति का प्रचार करना।
9. स्वास्थ्य के स्तर को उपर उठाना।
10. कानूनो का उचित क्रियान्वयन करना।

15.6 संगठित कार्यक्रमों के प्रकार :

संगठित रूप से किया गया कार्य हमेशा सफलता की राह दिखाता है। सफल कार्यक्रमो से ही आम जन मानस को लाभ भी मिलता। यहां संगठित कार्यक्रमों के प्रमुख प्रकार का वर्णन किया जा रहा है, जो इस प्रकार है।

1. **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत एक अप्रैल, 1999 को किया गया। इस कार्यक्रम के द्वारा गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे परिवारो को

अनुदान प्रदान किया जाता है। इस योजना में केन्द्र तथा राज्य सरकारें क्रमशः 75:25 का वित्तीय योगदान देती है।

2. **जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 3 दिसंबर 2005 को की गई। इसके द्वारा चयनित शहरों के तीव्र गति से सर्वांगीण, सुनियोजित विकास की बात की जाती है।

3. **भारत निर्माण परियोजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 16 दिसंबर, 2005 को की गई। इसके द्वारा सिंचाई, ग्रामीण पेयजल, ग्रामीण आवास, ग्रामीण सड़क, ग्रामीण टेलिफोन तथा ग्रामीण विद्युतीकरण को तीव्र गति से विकसित किया जा रहा है।

4. **इंदिरा आवास योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत मई, 1985 को की गई। यह योजना भी केन्द्र तथा राज्य सरकारों के 75:25 के संयुक्त वित्तीय संसाधनो के द्वारा क्रियान्वित होती है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले अनुसूचित जाति एवं जनजाति परिवारो को पक्का मकान बनाने हेतु अनुदान प्रदान किया जाता है।

5. **प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत एक अप्रैल 2000 को की गई। इसके द्वारा आवास,स्वास्थ्य, प्राथमिक शिक्षा, पेयजल, तथा पोषाहार नामक पांच क्षेत्र को बढ़ावा दिया जा रहा है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य है ग्रामीण क्षेत्रो का समग्र विकास करना।

6. **सर्वशिक्षा अभियान** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत सन् 2001 में की गई। इसके तहत 6–14 वर्ष आयु वर्ग वाले सभी बच्चो को उपयोगी तथा प्रासंगिक प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना

है। इस हेतु केन्द्र तथा राज्य क्रमशः 50:50 वित्तीय भार वहन करते है।

7. **मध्यान्ह भोजन योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 15 अगस्त 1995 को की गई। विद्यालयों में नामांकन बढ़ाने, उन्हे बनाए रखने तथा उपस्थिति के साथ–साथ बच्चो को पोषण स्तर में सुधार लाने हेतु इस कार्यक्रम को शुरू किया गया। इसके द्वारा सभी बच्चों को प्रतिदिन 300 कैलोरी एवं 8–10 ग्राम प्रोटीन वाला पका हुआ भोजन प्रदान किया जाता है।

8. **अन्नपूर्णा योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत एक अप्रैल, 2000 में की गई थी। इसमें वरिष्ठ नागरिको को प्रतिमाह 10 किलो अनाज मुफ्त दिया जाता है।

9. **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन** : – इस कार्यक्रम की शुरूआत 12 अप्रैल, 2005 को की गई। इसके द्वारा महिलाओ एवं बच्चों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने, संक्रामक रोग नियंत्रण, स्वच्छता, जनसंख्या स्थिरीकरण तथा स्वास्थ्य सेवाओ को उपलब्ध कराया जाता है। इसी कार्यक्रम के तहत ग्राम स्तरीय कार्यकर्त्ता आशा (ASHA= Accredited Social Health Activist) की नियुक्ति की गई। इसके द्वारा देश भर के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावी स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती है।

10. **महिला समृद्धि योजना** : – इस कार्यक्रम की शुरूआत 2 अक्टूबर, 1993 को की गई थी। इस कार्यक्रम की शुरूआत महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा की गई थी। इसके तहत किसी भी ग्रामीण महिला द्वारा डाकघर में एक वर्ष में 300 रू0 जमा करवाने पर 25 प्रतिशत ब्याज अर्थात 75 रू. सरकार द्वारा दिये जाते है। अल्प बचत को बढावा देने हेतु यह योजना शुरू की गई थी।

11. **प्रधानमंत्री रोजगार योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 2 अक्टूबर 1993 को केन्द्र सरकार द्वारा की गई थी। यह योजना 18–35 वर्ष आयु समूह के ग्रामीण एवं शहरी युवक–युवतियों के लिये है। 10वीं कक्षा उत्तीर्ण इस युवक–युवतियों को स्वरोजगार अपनाने के लिए एक माह का प्रशिक्षण तथा बैंको के माध्यम से एक लाख रू0 तक का ऋण उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना में वे व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं जिनकी वार्षिक आय 24 हजार रू0 से अधिक न हो।

12. **बालिका समृद्धि योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 15 अगस्त 1997 को की गई थी। यह योजना गरीबी रेखा के नीचे यापन करने वाले चयनित परिवारों हेतु है। इसके तहत बालिका के नाम 500रू0 की राशि समीप के डाकघर या बैंक में एफ0 डी0 करायी जाती है। इसके अतिरिक्त बालिका शिक्षण हेतु कक्षा 1 से 10 तक 300 से 1000 रू0 वार्षिक छात्रवृत्ति भी खाते में जमा होती है।

13. **राष्ट्रीय सेवा योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 24 सितंबर, 1969 को की गयी थी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य था छात्रों के व्यक्तित्व का विकास एवं चरित्र निर्माण करना है। इस योजना के माध्यम से छात्रों में आत्म–अनुशासन की भावना जागृत करना है। इसके साथ ही महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थी दो वर्षों तक लगातार रहकर कम से कम 120 घण्टे (दो वर्ष में 240 घण्टे) सेवा कार्य करे।

14. **नेहरू युवा केन्द्र योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 14 नवंबर, 1972 को की गयी थी। इस योजना का उद्देश्य है–ग्रामीण युवकों को अपने व्यक्तित्व एवं कौशल के विकास

हेतु अवसर प्रदान करना, साथ ही साथ ग्रामीण युवकों में आत्मनिर्भरता, भारतीय होने का गौरव की भावना, समाजवाद, राष्ट्रीय एकता की भावना का विकास करना था।

15. **एज केयर इण्डिया** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 1980 में की गयी थी। यह एक प्रकार से स्वैच्छिक संगठन है। इस कार्यक्रम का उद्देश 50 वर्ष से अधिक आयु वाले पुरूषों तथा स्त्रियों को आवासीय व संस्थागत सुविधाओं के माध्यम से शैक्षिक मनोरंजनात्मक, सामाजिक व सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक सेवायें प्रदान करना, वृद्धों को चिकित्सकीय सुविधायें प्रदान करना, वृद्धों के लिए अंशकालिक रोजगार व आयवृद्धि का कार्यक्रम चलाना, उनके लिए भ्रमणों की व्यवस्था करना तथा उनकी समस्याओं का अध्ययन करना इत्यादि।

16. **बीस सूत्रीय कार्यक्रम** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत जुलाई, 1975 में गयी थी, जो सन् 1982 में संशोधित हुआ। इसका मुख्य उद्देश्य शहरी तथा ग्रामीण जनकल्याण तथा विकास है। यह मूल रूप से निर्धनता निवारण हेतु कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम के बीस क्षेत्र निम्नवत उल्लेखित है:

1. गरीबी के विरूद्ध संघर्ष
2. वर्षा पर निर्भर कृषि का विकास
3. सिचाई का श्रेष्ठतर उपयोग
4. उन्नत कृषि उत्पादन
5. भूमि सुधार
6. ग्रामीण श्रमिकों का पुर्नवास
7. पीने को स्वच्छ पानी
8. सभी के लिए स्वास्थ्य
9. दो बच्चों के परिवार की आवश्यकता पर बल
10. शिक्षित राष्ट्र

11. सामाजिक न्याय
12. महिलाओं को समानता एवं पर्याप्त सहायता
13. युवा वर्ग हेतु नये अवसर
14. सबके लिए आवास
15. मलिन बस्तियों का सुधार
16. वनों का विस्तार
17. पर्यावरण की रक्षा
18. उपभोक्ता कल्याण
19. ग्रामीण उर्जा की व्यवस्था
20. संवेदनशील प्रशासन

ये महत्वपूर्ण 20 लक्ष्य बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत रखा गया।

17. **निःशक्तजन पेंशन योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत सन् 1965 में की गयी थी। इसके तहत अपाहिज, अपंग अन्ध या अन्य असमर्थताएं जिनसे व्यक्ति आजीविका कमाने में असमर्थ हो तथा आजीविका का अन्य कोई साधन न हो तो राज्य सरकार शुरूआत में 400रू0 प्रतिमाह पेंशन प्रदान किया जाता है।

18. **प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना** :– इस कार्यक्रम की शुरूआत 25 दिसंबर, 2000 को की गयी थी। इसके तहत एक हजार की जनसंख्या वाले गावों को 3 वर्ष में तथा 500 की आबादी वाले गावों को 4 वर्ष में सड़क से जोड़ेगी। आदिवासी क्षेत्रों के लिए 250 की आबादी वाले गांव सड़कों से जुड़ेगे।

15.7 संगठित कार्यक्रमों के अंतर्गत महत्वपूर्ण नीति :

संगठित कार्यक्रमों के अन्तर्गत कुछ प्रमुख नीतियों का भी उल्लेख किया गया है जो निम्नलिखित है :–

1. पोषाहार नीति।
2. सामाजिक न्याय/आरक्षण नीति
3. स्वास्थ्य नीति
4. महिला नीति
5. शिक्षा नीति
6. बाल नीति
7. वृद्धजन नीति
8. युवा नीति
9. श्रम नीति
10. जनसंख्या नीति
11. निःशक्तजन नीति
12. जनजाति नीति

15.8 सन्दर्भ सूची

1. फडिया, बी0एल0, 2003, लोक प्रशासन, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. अग्रवाल, आर0सी0 2012 व्यवसाय प्रबन्ध के सिद्धान्त, एस0बी0पी0डी0 पब्लिशिंग हाउस, आगरा।
3. कटारिया, सुरेन्द्र, 2010 सामाजिक प्रशासन, आर0बी0 एस0ए0 पब्लिशर्स, जयपुर।
4. चौधरी, धर्मपाल, 2002, समाज कल्याण प्रशासन, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
5. सिंह, सुरेन्द्र, 2010, भारत में समाज कार्य का क्षेत्र न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड

4

समाज कार्य एवं परामर्श

इकाई 16
परामर्श अर्थ एवं आवश्यकताऐं 264

इकाई 17
परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्त 274

इकाई 18
परामर्श पद्धति एवं चरण 288

इकाई 19
परामर्श के प्रकार 300

इकाई 20
परामर्श के उपागम 330

इकाई 21
समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका 346

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे	:	कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 विनय मिश्रा	:	डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद
डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल	:	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड परिचय

चतुर्थ खण्ड – समाज कार्य एवं परामर्श

इस खण्ड को छः इकाईयों में विभक्त किया गया है। इस खण्ड की प्रथम इकाई परामर्श के अर्थ, परिभाषा एवं इसकी आवश्यकता पर आधारित है। इस खण्ड की दूसरी इकाई परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्त पर आधारित है इसमें परामर्श के विभिन्न सिद्धान्तों पर चर्चा की गयी है। इस खण्ड की तीसरी इकाई परामर्श की पद्धति एवं चरणों पर आधारित है। इसमें परामर्श कि विभिन्न पद्धतियों पर विस्तृत चर्चा की गयी है। इस खण्ड चौथी इकाई परामर्श के विभिन्न प्रकारों पर आधारित है। पॉचवी इकाई परामर्श के उपागम एवं छठवीं इकाई समाज कार्य में परामर्श की उपयोगिता पर आधारित है।

खण्ड चतुर्थ– समाज कार्य एव परामर्श

इकाई –16, परामर्शः अर्थ एवं आवश्यकता

16.0 इकाई का उद्देश्य

16.1 परिचय

16.2 परामर्श का अर्थ एवं परिभाषायें

16.3 परामर्श की आवश्यकता

16.4 अच्छे परामर्श की विशेषतायें।

16.5 सार–संक्षेप

16.6 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

16.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

16.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थियों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य है परामर्श या मंत्रणा के अर्थ एवं आवश्यकता के बारे में आप लोगों को जानकारी प्रदान करना। वस्तुतः इस इकाई के द्वारा आप लोगों को परामर्श के अर्थ एवं परिभाषाओं की जानकारी प्रदान करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप लोग अग्रिलिखित के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेगें–

1– परामर्श का अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2– परामर्श की आवश्यकता के बारे में लिख सकेगें।

3– अच्छे परामर्श की विशेषताओं पर प्रकाश डाल सकेगें।

16.1 परिचय

हम जानते है कि, बिना निर्देशन का परामर्श और बिना परामर्श का निर्देशन मनुष्य के किसी काम का नहीं होता। निर्देशन तथा परामर्श एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। परामर्श के बिना निर्देशन व्यर्थ है और

निर्देशन के बिना परामर्श निष्प्राण है। इसलिये **सी0 वी0 गुड** ने परामर्श की व्याख्या करते हुए कहा है– परामर्श अकेले और वैयक्तिक रूप से शैक्षिक, व्यावसाायिक तथा व्यक्तिगत रूप से तत्सम्बन्धी समस्याओं के समाधान में सहायता करता है। इसमें सभी तथ्यों का अध्ययन तथा विश्लेषण किया जाता है, समस्याओं का समाधान विशेषज्ञों, विद्यालयों, सामुदायिक साधनों और व्यक्तिगत साक्षात्कारों की सहायताा से ढूँढा जाता है और परामर्श प्राप्त करने वाले को आत्मनिर्णय की क्षमता से अवगत कराया जाता हैं।'

परामर्श तथा निर्देशन में अन्तर्सम्बन्ध हैं। इन सम्बन्धों की व्याख्या हेतु परामर्श के स्वरूप, दर्शन तथा विस्तार तथा प्रक्रिया पर ध्यान देने के साथ–साथ व्यक्ति की वृत्तिक या कैरियर सम्बन्धी आवश्यकताओं को समझना भी आवश्यक है।

परामर्श के विषय में यह कथन प्रचलित है कि, यह एक कला है और विज्ञान भी। जब परामर्श व्यक्तिनिष्ठ होता है तब यह कला का रूप लेता है और जब इसमें वस्तुनिष्ठता पर बल देते हैं, तब इसका स्वरूप वैज्ञानिक हो जाता है।

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के अर्थ एवं परिभाषायें, आवश्यकता तथा विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है। आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी।

16.2 परामर्श का अर्थ एवं परिभाषायें

प्राचीन काल से ही परामर्श मानव समाज में किसी न किसी रूप में विद्यमान रहा है। समय–समय पर अनेक विद्वानों ने इसको परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। वेबस्टर अपने शब्दकोश में परामर्श का अर्थ पूछताछ, पारस्परिक तर्क–वितर्क या विचारों का पारस्परिक आदान–प्रदान बताया गया है। परन्तु वेबस्टर द्वारा दिये गये उपर्युक्त अर्थ से परामर्श का स्वरूप पूर्ण स्पष्ट नहीं हो पाता है।

रॉबिन्सन ने परामर्श के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए परामर्श की व्याख्या इस प्रकार की है–'परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है जिनमें एक व्यक्ति को उसके स्वयं के एवं पर्यावरण के बीच अपेक्षाकृत प्रभावी समायोजन प्राप्त करने में सहायता की जाती है।'

कार्ल रोजर्स के अनुसार–परामर्श 'एक निश्चित रूप से निर्मित स्वीकृत सम्बन्ध है, जो उपबोध्य को अपने को उस सीमा तक समझने में सहायता करता है, जिसमें अपने ज्ञान के प्रकाशन द्वारा विद्यात्मक कार्य में अग्रसर हो सकें।'

हम्फ्रीज तथा ट्रेक्सलरन ने परामर्श की परिभाषा देते हुए कहा है–'परामर्श विद्यालय तथा अन्य संस्थाओं के कर्मचारियों की सेवाओं का व्यक्तियों की समस्याओं के समाधान के लिय किया जाने वाला उपयोग है।'

हम्फ्रीज एवं ट्रेक्सलर की उपर्युक्त परिभाषा का आशय कर्मचारियों के द्वारा उपबोध्य व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने और उनकी समस्याओं के समाधान में सहायता के लिये किया जाने वाला उपयोग है।'

बरनार्ड तथा फुलमर ने परामर्श के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है –'परामर्श को उसके अन्तर–वैयक्तिक सम्बन्ध के रूप में देखा जा सकता है जिसमें वैयक्तिक तथा सामूहिक परामर्श के साथ–साथ वह कार्य भी सम्मिलित है जो अध्यापकों एवं अभिभावकों से सम्बन्धित है और जो विशेष रूप से मानव सम्बन्धों के भावात्मक पक्षों को स्पष्ट करता है।'

इस प्रकार बरनार्ड तथा फुलमर ने परामर्श की व्याख्या मानव सम्बन्धों के सन्दर्भ में करते हैं। इनके अनुसार– बुनियादी तौर पर परामर्श के अन्तर्गत व्यक्ति को समझाना और उसके साथ कार्य करना होता है, जिससे कि उसको अपनी आवश्यकताओं, अभिप्रेरणाओं,

अभिप्रेरणाओं और क्षमताओं की जानकारी हो और फिर उसे इनके महत्व को जानने में सहायता दी जाये।'

16.3 परामर्श की आवश्यकता

परामर्श में मूल आवश्यकता आमने–सामने बैठकर समस्याओं को समझने और हल करने की है। इसमें परामर्श प्राप्त करने वाला तथा परामर्श देने वाला दोनों सम्मिलित होते हैं। परामर्श की परिभाषा को और अधिक अर्थपूर्ण बनाने के लिये उसे तीन स्तरों मे व्यक्त कर सकते हैं–

1–अनौपचारिक परामर्श– इसमें किसी प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है, लेकिन यदि परामर्शदाता को प्रशिक्षण दिया जाये तो इस प्रकार के परामर्श को अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है।

2–सामान्य परामर्श–व्यावसायिक व्यक्तियों जैसे–डॉक्टरों, अध्यापकों और वकीलों के काम का भाग बनाकर इसको प्राप्त किया जा सकता है।

3–व्यावसायिक परामर्श– यह परामर्श पूर्ण रूप से प्रशिक्षित व्यावसायिक व्यक्ति से ही प्राप्त किया जा सकता है। प्रशिक्षित व्यावसायिक परामर्शदाता पूर्ण रूप से व्यावसायिक, नीतिशास्त्र को मानने वाला हो तथा उसमें क्षमता हो कि वह दूसरे व्यक्तियों के लिये महत्वपूर्ण निर्णय ले सके।

तात्पर्य यह है कि परामर्शदाता तब तक उपयुक्त परामर्श नहीं दे सकता जब तक कि वह काउंसिलिंग की विधियों को को अच्छी तरह नहीं जानता।

अतः स्पष्ट है कि परामर्श का मूल तत्व दो व्यक्तियों के बीच ऐसा सम्पर्क है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे को स्वयं को समझने में सहायता देता है। परामर्श के दर्शन को समझने से पूर्व हमें दो बातों को ध्यान में रखना चाहिये– मानवीय सम्बन्ध एवं सहायता।

परामर्श में (1) परामर्शदाता एवं (2) उपबोध्य आमने–सामने होते हैं तथा परामर्शदाता उपबोध्य को उसकी समस्याओं का समाधान खोजने में सहायता देता है। परामर्श एक ऐसी सेवा है जिसका उद्देश्य भिन्न–भिन्न आयु के लोगों की समस्याओं के समाधान में सहायता देना है। इस प्रकार एक समस्याग्रस्त व्यक्ति परामर्शदाता के सामने बैठकर अपनी समस्याओं को उसकी सहायता से स्वयं सुलझाने का प्रयास करता है।

16.4 अच्छे परामर्श की विशेषतायें

निर्देशन के कार्य में परामर्श को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बिना परामर्श के निर्देश सम्बन्धी किसी कार्य का होना सम्भव नहीं है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने निर्देश देने या लेने में आने वाली समस्याओं का उल्लेख अपनी रिपोर्ट में किया है। इन समस्याओं के समाधान हेतु उपयोग में आने वाली युक्तियों में परामर्श एक महत्वपूर्ण युक्ति है। परामर्श एक प्राचीन शब्द है। परामर्श की प्रक्रिया आदिकाल से चली आ रही है। लेकिन परामर्श की अवधारणा सामाजिक परिवर्तनों के साथ बदलती रही है। आज परामर्श से आशय व्यक्ति में ऐसी अन्तर्दृष्टि पैदा करना है कि, वह स्वयं को पहचानकर अपनी समस्या का समाधान स्वयं करने में सक्षम हो जाये। परामर्श एक प्रक्रिया है जिसकी अपनी अनेक विशेषताएँ हैं। एक अच्छे परामर्श में निम्न विशेषताओं का होना आवश्यक है–

1– परामर्श दो व्यक्तियों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया है, जिसमें परामर्शदाता और उपबोध्य सम्मिलित होते हैं। अच्छा परामर्श कभी भी सामूहिक रूप में सम्पादित नहीं होता है।

2– अच्छे परामर्श में उपबोधक द्वारा अपने निर्णय थोपे नहीं जाते हैं। उपबोधक तो निर्णय लेने में उपबोध्य की सहायता करता है। अन्ततोगत्वा निर्णय उपबोध्य द्वारा ही लिये जाते हैं।

3– अच्छे परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की स्वयं को समझने में सहायता प्रदान करता है। स्वयं की योग्यता और क्षमताओं का ज्ञान होने पर वह अपनी समस्याओं के समाधान का स्वयं निर्णय लेता है।

4– अच्छा परामर्श वह है, जहाँ दो व्यक्ति परस्पर विचार–विमर्श कर रहे हों तो वातावरण सौहार्द्रपूर्ण और मित्रता से युक्त हो।

5– परामर्श के समय उपबोधक को सहानुभूति और सहयोग की भावना का प्रदर्शन उपबोध्य का विश्वास जीतने के लिए करना चाहिए।

6– अच्छा परामर्श वह है जहाँ उपबोध्य अपने को सामान्य अनुभव करता है तथा उसकी भावनाओं को कोई आघात नहीं पहुँचाया जाता है।

7– परामर्श जिसमें उपबोध्य में समस्या समाधान के लिए आत्मविश्वास पैदा हो, अच्छा माना जाता है।

8– परामर्श वही अच्छा है जिसमें परामर्श प्रक्रिया उपबोध्य केन्द्रित होती है। उपबोधक को परामर्श में हावी नहीं होना चाहिए।

9– परामर्श में उपबोध्य के बारे में कुछ तथ्य पहले से ही एकत्रित कर लेने चाहिए ताकि उपबोधक यह प्रदर्शित कर सके कि वह उपबोध्य से परिचित है।

10– परामर्श वही अच्छा है जिसमें सहायता का रूप ऐसा होता है कि उपबोध्य अपनी समस्या का समाधान स्वयं करने का निर्णय लेना सीखता है।

11– अच्छे परामर्श की एक विशेषता, उपबोध्य से सम्बन्धित सूचनाओं को गुप्त रखना है। उपबोधन में उपबोधक को अधिकांश गुप्त सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। इन सूचनाओं को गुप्त रखकर ही वह उपबोध्य का विश्वास जीवने में सफल हो सकता है।

12– परामर्श प्रक्रिया में लचीलापन होना चाहिए। ऐसा होने पर परिस्थिति के अनुसार प्रक्रिया में बदलाव किया जा सकता है।

13– अच्छे परामर्श का समापन इस प्रकार होता है कि उपबोध्य पुनः परामर्श के लिए आतुर रहे।

14– अच्छे परामर्श में उपबोधक उपबोध्य के साथ आत्मीयता स्थापित करना है।

15– अच्छे परामर्श में तनाव तथा हताशा दूर करने के लिए हास्य का प्रयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श का अर्थ एवं परिभाषायें लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. अच्छे परामर्श की विशेषतायें लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

16.5 सार–संक्षेप

रॉविन्सन के अनुसार, 'परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है जिनमें एक व्यक्ति को अपने एवं पर्यावरण के बीच प्रभावी समायोजन प्राप्त करने में सहायता की जाती हैं।' परामर्श में दो तत्व महत्वपूर्ण हैं– मानवीय सम्बन्ध एवं सहायता।

परामर्श के लक्ष्यों के स्थान पर कई बार साधनों को अधिक महत्व दे दिया जाता है। किन्तु तकनीक या साधन को ही लक्ष्य मान बैठना भूल है। साध्य और साधन दोनों ही समान महत्व रखते हैं। साध्य कार्य के प्रारम्भ की ओर प्रेरित करता है। जबकि साधन लक्ष्य को प्रशस्त करते हैं। परामर्श के लक्ष्यों के निर्धारण की तीसरी मुख्य बात यह है कि व्यक्ति के सर्वांगीण विकास में उसे सहायता करनी चाहिए। उसे अपनी दृष्टि परिधि में समग्र व्यक्तित्व को ग्रहण करना चाहिए।

अच्छे परामर्श में कुछ विशेषताएँ होती हैं। यदि परामर्श में उन विशेषताओं को ध्यान मे रखा जाये तो परामर्श प्रक्रिया अच्छी प्रकार

फलीभूत हो सकती है। परामर्श निर्देशन का अभिन्न अंग है। यह निर्देशन की प्रविधि मात्र है।

16.6 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श– परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के सम्पर्क की उन सभी स्थितियों का समावेश करता है जिनमें एक व्यक्ति को उसके स्वयं के एवं पर्यावरण के बीच अपेक्षाकृत प्रभावी समायोजन प्राप्त करने में सहायता की जाती है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– परामर्श का अर्थ लिखिए।

2– परामर्श को परिभाषित कीजिए।

3– परामर्श की आवश्यकता पर अपने विचार दीजिए।

4– अच्छे परामर्श की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

विस्तृत

1– परामर्श को परिभाषित करते हुए इसकी आवश्यकता पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

2– परामर्श की अवधारणा स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

16.7 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वर्ष–2012, पेज–7

2– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15, पेज –201–202, 2012

3– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज– 4–7

4– रॉविन्सन, एफ.पी., प्रिन्सिपल्स एण्ड प्रोसिजर्स इन स्टूडेन्ट काउन्सिलिंग, वर्ष–1950, पेज–2

5– वर्ननार्ड एण्ड फुलमर, ' प्रिंसिपल्स ऑफ गाइडेन्स, वर्ष–1960, पेज–16

6– हम्फ्रेज,जे0 एन्थोली एण्ड ट्रेक्सलरर, आर्थर, ई. गाइडेन्स सर्विसेज, वर्ष1954, पेज–11

7– रोजर्स, कार्ल, आर. 'परसन्स ऑर साइन्स–ए फिलोसोफिकल क्वेशचन, दी अमेरिकन साइकोलाजिस्ट, वर्ष–1955, पेज–10

खण्ड–चतुर्थ– समान कार्य एवं परामर्श

इकाई –17, परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्त

17.0 इकाई का उद्देश्य

17.1 परिचय

17.2 परामर्श के लक्ष्य

17.3 परामर्श के उद्देश्य की दिशायें

17.4 परामर्श के लक्ष्यों का निर्धारण

17.5 परामर्श के सिद्धांत

17.6 सार–संक्षेप

17.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

17.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

17.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय ज्ञानार्थी, मित्रों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों के बारे में आप लोगों को जानकारी प्रदान करना है। वास्तव में इस इकाई का वास्तविक उद्देश्य परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों की वस्तुस्थिति से आपको अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– परामर्श के लक्ष्यों के बारे लिख सकेगें।

2– परामर्श के उद्देश्य की दिशाओं के बारे ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।

3– परामर्श के लिक्ष्यों के निर्धारण पर प्रकाश डाल सकेगें।

4– परामर्श के सिद्धान्तों पर अपने विचार प्रस्तुत कर सकेगें।

17.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई में परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला गया है। परामर्श के अर्थ एवं परिभाषाओं को जानने

के बाद आपके मन में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि परामर्श क्यों दिया जाता है? तथा उसको किन सिद्धान्तों के आधार पर परखा जाता है? अतः प्रस्तुतइकाई आपके उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर खोजने में सहायक सिद्ध होगी। इसी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत इकाई में परामर्श के लक्ष्यों पर प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि व्यक्ति का अपने सम्बन्ध में सही मूल्याकन प्राप्त करना परामर्श का लक्ष्य है। उसके बाद व्यक्ति का अपने परिवेश के साथ किस प्रकार का सामंजस्य है, इस बात पर ध्यान देना चाहिए। व्यक्ति जीवन में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक अपने परिवेश के साथ उसका सन्तोषजनक सामंजस्य स्थापित न हो जाए। अतः सामंजस्य का वास्तविक रूप से स्थापित न होने की दशा में परामर्श की आवश्यकता होती है। परामर्श का लक्ष्य व्यक्ति को उचित मार्गदर्शन प्रदान करना है ।

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के उद्देश्य की दिशाओं पर प्रकाश डालते हुए बताया गया है कि आत्म ज्ञान, आत्म स्वीकृति, तथा सामाजिक समरसता सन्निहित होते हैं। इकाई के अंत में परामर्श के लक्ष्यों के निर्धारण के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें, बताया गया है कि परामर्श उपबोध्य के आत्मज्ञान व स्व–निर्देशन के लिए समर्पित होता है, परामर्श संरचित अधिगम की स्थिति है, पर्यावरण व स्वयं के मध्य सम्बन्ध को समझने की अन्तर्दृष्टि पैदा करना, परामर्श उपबोध्य के लिए अनिवार्य नहीं होना चाहिए, परामर्श मुख्यतः प्रतिरोधात्मक प्रक्रिया है, न कि उपचारात्मक। उपबोध की समस्या तथा योग्यतानुसार परामर्श विधियों में भिन्नता होनी चाहिए तथा परामर्श मे ंसभी सहकर्मियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी तथा परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

17.2 परामर्श के लक्ष्य–

यहाँ पर पमरार्श की प्रक्रिया का मुख्य अंग होने के कारण लक्ष्यों का विवेचन विस्तार से अपेक्षित है। परामर्श मनोवैज्ञानिकों द्वारा स्वीकृत कुछ उद्देश्यों का पुनराख्यान यहाँ प्रस्तुत है। ध्यान रखने की बात यह है कि इन विद्वानों ने परामर्श एवं मनोचिकित्सा को एकार्थवाची माना है। अतः जहाँ परामर्श एवं परामर्शदाता से सम्बन्ध रखते हैं वहीं मनोचिकित्सा से भी इनका सम्बन्ध जुड़–जाता है।

रॉबर्ड, डब्ल्यू हाइट के अनुसार '..... जब कोई व्यक्ति मनोचिकित्सक की हैसियत से कार्य करता है तब उसका उद्देश्य प्रभाव डालने अथवा सहमति प्राप्त न होकर केवल अच्छे स्वास्थ्य की दशा को पुनर्स्थापित करना होता है। एक मनोचिकित्सक को न तो कुछ बेचना होता है और न ही विहितीकरण करना।'' **ह्वाइट** के इस दृष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि मनोचिकित्सक या परामर्शदाता का कार्य केवल उपबोध्य के मानसिक स्वास्थ्य को सामान्य बनाना होता है। अपना कोई आग्रह या दृष्टिकोण उपबोध्य पर आरोपित करना उसका लक्ष्य नहीं होता। परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य को किसी खास विचारधारा या जीवन पद्धति को स्वीकार करने का आग्रह नहीं करता।

ग्राहक केन्द्रित उपबोधन की प्रकृति पर विचार करते हुए **ए0बी0 ब्याय तथा जी0 जे0 पाइन** ने परामर्शदाता द्वारा विशेष रूप से माध्यमिक स्कूल स्तर पर विद्यार्थी को 'अधिक प्रौढ़ क्रियाशील बनाने, विधेयात्मक तथा रचनात्मक दिशा में आगे बढ़नें, अपने साधनों एवं सम्भावनाओं के उपयोग व समाजीकरण की ओर बढ़ने में सहायता देने के लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित रखने के लिए कहा है। इस प्रकार परामर्श का लक्ष्य विद्यार्थी को अधिक परिपक्व ढंग से विचार रखने के लिए कहा गया है। इस प्रकार परामर्श का लक्ष्य विद्यार्थी को अधिक परिपक्व ढंग से विचार करने एवं स्वयं कार्य करने में सहायता देना है। विद्यार्थी को

अपनी योग्यता एवं सम्भावना का पता लगाने तथा उनका उसके सामाजिक विकास में उपयोग करना परामर्श का लक्ष्य है।

सामान्य नैदानिक परामर्श पर विचार करते हए **ब्याय एवं पाइन** ने जिन लक्ष्यों को ध्यान में रखने को कहा है, वे हैं– 'उपबोध्य को अधिक अच्छा करने में सहायता देने अर्थात् उपबोध्य को अपने महत्व को स्वीकारने, वास्तविक 'स्व' एवं आदर्श 'स्व' के बीच के अन्तर को मिटाने में सहायता देने तथा लोगों को अपनी वैयक्तिक समस्याओं में अपेक्षाकृत स्पष्टता से विचार करने मे सहायता देने से सम्बन्धित हैं।'

इस प्रकार **ब्वाय तथा पाइन** व्यक्ति को अपनी क्षमता एवं सीमाओं से परिचित कराना एवं अपनी समस्याओं के प्रति सम्दृष्टि का विकास करना परामर्श का लक्ष्य स्वीकार करते हैं। प्रायः लोग अपने सम्बन्ध में एक अवास्तविक आदर्श धारणा विकसित कर लेते हैं, जो उनकी वास्तविक क्षमता से भिन्न होती है। इसी भिन्नता को दूर करने के लिए **ब्वाय तथा पाइन** वास्तविक 'स्व' एवं आदर्श 'स्व' की दूरी मिटाने की बात कहते हैं।

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने परामर्श के उद्देश्यों को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया है–

1– उपबोध्य द्वारा अपनी क्षमताओं, अभिप्रेरकों तथा आत्म–दृष्टिकोणों की यथार्थ स्वीकृति,

2– उपबोध्य के द्वारा सामाजिक, आर्थिक तथा व्यावसायिक परिवेश के साथ तर्कसंगत सामंजस्य की प्राप्ति, तथा

3– वैयक्तिक भिन्नताओं की समाज द्वारा स्वीकृति तथा समुदाय, रोजगार एवं वैवाहिक सम्बन्धों के क्षेत्र में उनका निहितार्थ।'

उपर्युक्त उद्देश्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि, परामर्श के लक्ष्य में कई बातें आ जाती हैं। सर्वप्रथम व्यक्ति का अपने सम्बन्ध में सही मूल्यांकन प्राप्त करना, परामर्श का लक्ष्य है। तत्पश्चात् व्यक्ति का अपने परिवेश के साथ किस प्रकार का सामंजस्य है, इस पर ध्यान देना

चाहिए। व्यक्ति जीवन में तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक अपेन परिवेश के साथ उसका सन्तोषजनक सामंजस्य स्थापित न हो जाये। समाज में उपलब्ध आर्थिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों एवं सम्भावनाओं को उसे अपनी योग्यताओं एवं सीमाओं के सन्दर्भ में देखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य के लिए जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से उसका सामंजस्य वास्तविक धरातल पर होना चाहिए। परामर्श के उद्देश्य की जिन तीन दिशाओं पर ऊपर विचार किया गया है उन पर अब अलग–अलग विचार करेंगे–

17.3 परामर्श के उद्देश्य की दिशायें

1–आत्मज्ञान– व्यक्ति को अपने मुल्यांकन में सहायता करना परामर्श का लक्ष्य है। व्यक्ति को अपने विषय में जानने, अपनी शक्ति और सम्भावनाओं को पहचानने हेतु इस परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। परामर्श एक प्रकार से उस ज्योति की तरह है जिसके आलोक में व्यक्ति को अपने अन्तर्बाह्य स्वरूप को पहचानने में सहायता मिलती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति के आत्मज्ञान के लिये तथा उसके मूल्यांकन के लिये परामर्श के अनेक विधियों का सहारा लेना पड़ता है। परामर्श साक्षात्कार अथवा ग्राहक–केन्द्रित परामर्श अथवा अनिदेशात्मक उपबोधन आदि अनेक प्रकार से व्यक्ति को अपने यथार्थ स्वरूप से परिचित होने में सहायता की जाती है। परामर्श प्रक्रम की सफलता इस मापदण्ड द्वारा ऑकी जाती है कि कहाँ तक वह उपबोध्य को उसके वास्तविक आत्मज्ञान से अवगत कराने में सहायक रहा है। **लियोना टायलर** के अनुसार, 'हमें परामर्श को एक सहायक प्रक्रम के रूप में प्रयुक्त करना है जिसका उद्देश्य व्यक्ति को बदलना नहीं है अपितु उसको उन स्त्रोतों के उपयोग में समर्थ बनाना है जो उसके पास इस समय जीवन का सामना करने के लिए मौजूद हैं। तब हम परामर्श से इस उपलब्धि की आशा करेंगे कि उपबोध्य अपनी ओर से कुछ रचनात्मक क्रिया करें।'

2—आत्म स्वीकृति— परामर्श का दूसरा प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को आत्म—स्वीकृति में सहायता देना है। व्यक्ति का जो व्यक्तित्व अथवा प्रतिमा होती है उसे वह स्वयं स्वीकार करे। कई बार लोग अपने बारे में उचित दृष्टिकोण नहीं बना पाते, वे दूसरों के द्वारा जैसे स्वीकार किये जाते हैं उसी रूप में अपने को मान लेते हैं। किन्तु व्यक्ति का जहाँ एक—दूसरे द्वारा स्वीकृत रूप होता है वहाँ उसको अपने स्वरूप को स्वयं भी स्वीकारना पड़ता है। कोई व्यक्ति यदि बाह्य आकृति से रूपवान नहीं है तो उसे अपने प्रति कुरुप अथवा निषेधात्मक धारणा नहीं बना लेनी चाहिये, अपितु उचित परामर्श द्वारा उसे समझाया जाना चाहिये कि वास्तविक सौन्दर्य हृदय का होता है। यदि कोई व्यक्ति बाहर से अत्यन्त सुन्दर है किन्तु उसका स्वभाव एवं आचरण अच्छा नहीं है तो वह यथार्थतः सुन्दर नहीं होगा। इसी प्रकार कुरूप होते हुए भी व्यक्ति अपने गुणों एवं अच्छे स्वभाव से सुन्दर लगता है और लोग उसकी ओर आकृष्ट होते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि व्यक्ति अपने यथार्थ मूल्यांकन के रूप में अपने वास्तविक स्वरूप को स्वीकार करें। परामर्श इस कार्य में उसकी सहायता कर सकता है।

आत्म स्वीकृति में व्यक्ति को अपने स्वरूप निर्माण में अपनी कमियों, कमजोरियों एवं सीमाओं पर भी दृष्टि रखनी चाहिये। इसके अभाव में वह अपने सम्बन्ध में गलत धारणा बना सकता है और उसे असफलता एवं निराशा के अभाव में वह अपने सम्बन्ध में गलत धारणा बना सकता है और उसे असफलता एवं निराशा का सामना करना पड़ सकता है। इस प्रकार यदि परामर्श व्यक्ति को अपने सही रूप को स्वीकार करने में सहायक होता है तो वह व्यक्ति के विकास के लिये एक दृढ़ आधार प्रदान कर सकता है। अपने स्वरूप के परिज्ञान के आधार पर व्यक्ति जीवन के लक्ष्यों का निर्धारण भी आसानी से कर सकता है तथा उसकी प्राप्त में सफल हो सकता है।

3—सामाजिक समरसता— परामर्श का एक लक्ष्य व्यक्ति की सामाजिक समरसता में सहायक होना भी है। व्यक्ति की अनेक समस्याएँ उसके समाज के साथ भली प्रकार समायोजन न कर पाने के कारण उत्पन्न होती हैं। सामाजिक व्यवहार एवं सामाजिक जीवन को समझने एवं लोक व्यवहार के अनुरूप कार्य करने में व्यक्ति को अपने वैयक्तिक स्वार्थों की परिधि से निकलना पड़ता है। ऐसा करने के लिये व्यक्ति को अपने वैयक्तिक स्वार्थों की परिधि से निकलना पड़ता है। ऐसा करने के लिये व्यक्ति में सहिष्णुता, उदारता एवं मित्रता से मुक्त कर उसे सामाजिक जीवन के साथ समायोजित करने में परामर्श अपना योगदान देता है। परामर्श व्यक्ति से अपेक्षित सामाजिक एवं मानवीय मूल्यों का ज्ञान कराकर उन्हें व्यक्ति को उसके जीवन दृष्टि का अंग बनाने में सहायता करता है। यद्यपि यह कठिन कार्य है, किन्तु व्यक्ति का सामाजिक समंजन इसके विकास एवं सन्तोष के लिय आवश्यक है। अतः परामर्श के लक्ष्यों में सामाजिक समंजन प्राप्त करने में व्यक्ति को सहायता देने का कार्य महत्वपूर्ण लक्ष्य है।

17.4 परामर्श के लक्ष्यों को निर्धारण

परामर्श के दर्शन के आधार पर ही परामर्श के लक्ष्यों का निर्धारण होता है। आधुनिक युग में साध्य के स्थान पर साधनों की चर्चा अपेक्षाकृत अधिक होती है। परामर्श की तकनीकी, उसकी नवीन कार्य प्रणालियों आदि के निर्धारण पर जितना बल दिया जा रहा है उतना उसके लक्ष्य एवं मूल्य निर्धारण की ओर नहीं। वस्तुतः साधनों का निर्धारण या चयन साध्य की दृष्टि से किया जाता है।

प्रथम बात महत्वपूर्ण है—साध्य की उपेक्षा कर साधनों पर ही ध्यान केन्द्रित रखना अनुचित है। परामर्श में व्यक्ति की आवश्यकताओं एवं समस्याओं के स्वरूप निर्धारण के लिय अनेकानेक परीक्षणों एवं तकनीकों का विकास किया गया है। इसमें कोई सन्देश नहीं कि आवश्यकताओं का निर्धारण वांछनीय है, किन्तु व्यक्ति की वास्तविक

प्रकृति एवं जीवनादेद्दश्य को ध्यान में रखकर ही उन आवश्यकताओं एंव समस्याओं के समाधान का यत्न परामर्शदाता को करना चाहिये। साधन और साध्य की अभिन्नता एवं दोनों की अपरिहार्यता पर **जॉन डीवी** के विचार दृष्टव्य हैं –'किसी भी मंजिल का बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय उस तक ले जाने वाले मार्ग से अलग हटकर नहीं कया जा सकता। बिना मार्ग की बाधाओं एवं लक्ष्य की ओर अग्रसर करने वाले साधनों के लक्ष्यों को प्ररेक अथवा कार्य निर्देशक लक्ष्य नहीं माना जा सकता। यदि विस्तार से कहा जाये तो साधनों से अलग साध्य खोखले हैं। लक्ष्य हल्की योजना एवं प्रयोजन के रूप में प्रारम्भ का निर्धारण कर सकते हैं। यह योजना एवं प्रयोजन यदि साधनों की ओर ले जाते हैं, तो उपयोगी हैं।'

जॉन डीवी और उनके साथियों ने साधन और साध्य को समान महत्व प्रतिपादित किया है। उनके अनुसार लक्ष्य आरम्भ बिन्दुओं की स्थापना करते हैं, जबकि साधन लक्ष्य की पूर्णता तक ले आने का रास्ता प्रस्तुत करते हैं। परामर्श में साधन और साध्य किसी एक को अधिक महत्व देना अनुचित है।

लक्ष्यों के निर्धारण में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि परामर्श के लक्ष्यों को जीवन के लक्ष्यों की सापेक्षता में निर्धारित किया जाये। प्रत्येक समाज अथवा धर्म में जीवन के लक्ष्यों की स्पष्ट विवेचना मिलती है। उदाहरण के लिये, हिन्दू धर्म में जीवन के चार पुरुषार्थों को जीवन का प्राप्तव्य स्वीकार किया गया है। ये चार पुरुषार्थ हैं– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। भारतीय चिन्तन पद्धति सामान्यतः व्यापक एवं समन्वयात्मक रही है। इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति के साधनों का निर्देश भी पुरुषार्थों के अन्तर्गत ही किया गया है। इसी प्रकार बौद्ध, जैन, ईसाई आदि सभी मतों में जीवन के लक्ष्यों की स्पष्ट व्याख्या की गयी है। समाज एवं धर्मगत जीवन के लक्ष्यों को दृष्टि में रखकर ही परामर्श के लक्ष्यों को निश्चित किया जाय, यद्यपि इसका अभिप्राय प्रतिबद्धता से

नहीं है। लेखक के विचार से जीवन के लक्ष्यों और परामर्श के लक्ष्यों में विरोध न होकर सामंजस्य होना चाहिये।

परामर्श का लक्ष्य निर्धारित करते समय तीसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि परामर्श का लक्ष्य व्यक्ति के 'समग्र व्यक्तित्व का विकास होना चाहिये। परामर्श का सम्बन्ध सम्पूण मनुष्य से हो, न कि उसके जीवन के पक्ष विशेष से। आजकल मनुष्य के व्यवहार एवं उसके जीवन के वस्तुगत अध्ययन पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जा रहा है।

फल यह होता है कि मनुष्य का जो आध्यात्मिक स्वरूप है तथा जीवन के जो ऊँचे मूल्य हैं उनकी उपेक्षा होती जाती है। यथार्थ के नाम पर अध्ययन की वस्तुनिष्टता पर अपना ध्यान केन्द्रित करने वाले परामर्शदाता का कार्य तब तक अधूरा रहेगा जब तक कि व्यक्ति को उसके समग्र परिवेश, उसकी अन्तः एवं बाह्य प्रकृति तथा आध्यात्मिक सन्दर्भों से काटकर देखता रहेगा। व्यक्ति विभिन्न व्यवहारों एवं तत्वों का योग नहीं, वह एक जटिल मिश्रण है और परामर्शदाता को इस तथ्य को अपने सम्मुख रखना चाहिये।

पश्चिम में आधुनिकता एवं अणुवाद की जो तीव्र लहर आयी थी उसका वेग अब हलका पड़ रहा है। यह अनुभव किया जाने लगा है कि मनुष्य जीवन को भौतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का सामंजस्य आवश्यक है, उसके बिना उसका सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं। आज की शिक्षा भी व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक एवं नैतिक सभी पक्षों के विकास पर अपना ध्यान केन्द्रित कर व्यक्ति के सर्वागीण विकास को अपना लक्ष्य मानकर चल रही है। परामर्श के साध्य और साधनों में भी व्यक्तित्व की यह सम्पूर्णता उतनी ही महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार परामर्श का दर्शन परामर्शदाता को व्यक्ति में जीवन मूल्यों के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित करने में सहायता प्रदान करता है। इन जीवन मूल्यों के द्वारा ही मानवमात्र के प्रति सद्भावना एंव पारस्परिक सम्मान किया जा सकता है। अतः कहा जा सकता है कि,

परामर्श का उद्देश्य व्यक्ति को जीवन के श्रेष्ठतम धरातल पर पहुँचने में सहायता करना है।

17.5 परामर्श सिद्धांत

परामर्श के कुछ सिद्धान्त हैं, जिनके द्वारा परामर्श प्रक्रिया निर्देशित होती है। यहाँ **हैन तथा मैक्लीन** द्वारा वर्णित परामर्श के आधारभूत सिद्धान्तों का विवरण प्रस्तुत है–

1–परामर्श उपबोध्य के आत्मज्ञान व स्व–निर्देशन के लिए समर्पित होता है– परामर्श का पहला सिद्धान्त है कि, उपबोध्य को उसमें छिपी योग्यताओं और क्षमताओं का ज्ञान करना चाहिए, ताकि वह स्वयं को समझ सके। इसके साथ ही उसको स्व–निर्देशन के लिए प्रेरित करना चाहिए। स्पष्ट है कि उपबोध्य को आत्मज्ञान होने पर वह अपनी समस्याओं के समाधान के लिए परामर्शदाता की सहायता पर निर्भर नहीं रहेगा।

2–परामर्श संरचित अधिगम स्थिति है– अधिगम ऐसी प्रक्रिया है जो जीवन भर चलती रहती है। लेकिन अधिगम दो रूपों में होता है–एक रूप में व्यक्ति वातावरण से स्वतन्त्र रूप में सीखता है। व्यक्ति नित नई समस्याओं का सामना करता है और उनका स्वयं समाधान करके नवीन अनुभव अर्जित करता है। दूसरे रूप में अधिगम के लिए एक व्यवस्थित व्यवस्था की रचना की जाती है। विद्यालय में शिक्षण संरचित अधिगम का उत्तम उदाहरण है।

3–पर्यावरण व स्वयं के मध्य सम्बन्ध को समझने की अन्तर्दृष्टि पैदा करना– मानव और पर्यावरण का घनिष्ठ सम्बन्ध है। मानव पर्यावरण से प्रभावित होता है और आवश्यकता पड़ने पर पर्यावरण को प्रभावित करता है। परामर्श के द्वारा उपबोध्य को उसके तथा पर्यावरण के मध्य सम्बन्ध को समझने की अन्तर्दृष्टि जाग्रत करने का प्रयास किया जाता है। इस सम्बन्ध की अनुभूति कराने का प्रयोजन यह है कि पर्यावरण की मानव के विकास में अहम् भूमिका होती है।

4–परामर्श उपबोध्य के लिए अनिवार्य नहीं होनी चाहिए– परामर्श विद्यालय में सभी छात्रों के लिए अनिवार्य न होकर स्वैच्छिक होना चाहिए। जो छात्र परामर्श की आवश्यकताा अनुभव करते हैं वे परामर्शदाता से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

5–परामर्श मुख्यतः प्रतिरोधात्मक प्रक्रिया है, न कि उपचारात्मक– यद्यपि उपबोध्य परामर्शदाता के पास समस्या पैदा होने पर उसके उपचार अर्थात् समाधान के लिए आते हैं। लेकिन यह सत्य है कि परामर्श द्वारा प्रति– रोधात्मक शक्ति का विकास करना चाहिए ताकि छात्र के समक्ष समस्या पैदा नहीं हो सके।

6– उपबोध की समस्या तथा योग्यतानुसार परामर्श विधियों में भिन्नता होनी चाहिए– परामर्शदाता को सदैव ध्यान रखना चाहिए कि सभी छात्रों की आवश्यकताएँ और समस्याएँ समान नहीं होती हैं। इसी प्रकार एक छात्र की आवश्यकताओं और समस्याओं में भी भिन्न्नता पायी जाती है। अतः आवश्यकता के अनुसार तद्नुकूल विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

7–परामर्श में सभी सहकर्मियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए– परामर्श ऐसी प्रक्रिया है जिसमें परामर्शदाता अकेले रूप में अपने कार्य में सफल नहीं हो सकता है। उसे इतना व्यवहारकुशल होना चाहिए कि अपने कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए अपने सहकर्मियों का सहयोग प्राप्त कर सके।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श के लक्ष्य के बारे में लिखिए।

.....

.....

2. परामर्श के उद्देश्य की दिशायें क्या हैं?

17.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला गया है। इसी के साथ–साथ परामर्श के उद्देश्य की दिशाओं पर प्रकाश

डालते हुये बताया गया है कि, आत्म ज्ञान, आत्म स्वीकृति, तथा सामाजिक समरसता सन्निहित होते हैं। इकाई के अंत में परामर्श के लक्ष्यों के निर्धारण के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें, बताया गया है कि परामर्श उपबोध्य के आत्मज्ञान व स्व–निर्देशन के लिए समर्पित होता है, परामर्श संरचित अधिगम की स्थिति है, पर्यावरण व स्वयं के मध्य सम्बन्ध को समझने की अर्न्तदृष्टि पैदा करना, परामर्श उपबोध्य के लिए अनिवार्य नहीं होना चाहिए, परामर्श मुख्यतः प्रतिरोधात्मक प्रक्रिया है, न कि उपचारात्मक। उपबोध की समस्या तथा योग्यतानुसार परामर्श विधियों में भिन्नता होनी चाहिए तथा परामर्श मे सभी सहकर्मियों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए, आदि महत्वपूर्ण हैं।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी तथा परामर्श के लक्ष्य एवं सिद्धान्तों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

17.7 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श के लक्ष्य–परामर्श के लक्ष्य का तात्पर्य सेवार्थी को उचित सलाह देकर उसका मार्ग दर्शन करना है जिससे वह समाज में सम्मान जनक जीवन यापन कर सके।

सामान्य नैदानिक परामर्श–यह उपबोध्य को अधिक अच्छा करने में सहायता देने अर्थात् उपबोध्य को अपने महत्व को स्वीकारने, वास्तविक 'स्व' एवं आदर्श 'स्व' के बीच के अन्तर को मिटाने में सहायता देने तथा लोगों को अपनी वैयक्तिक समस्याओं में अपेक्षाकृत स्पष्टता से विचार करने में सहायता देने से सम्बन्धित है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– परामर्श के लक्ष्य से आप क्या समझते है?

2– अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ द्वारा उल्लिखित परामर्श के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।

3– परामर्श के उद्देश्य की दिशाओं पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

4– सामाजिक समरसता से आप क्या समझते है?

5– परामर्श के लक्ष्यों का निर्धारण कैसे किया जाता है?

6– परामर्श के सिद्धान्त कौन–कौन से है?

विस्तृत

1– परामर्श के लक्ष्य से आप क्या समझते है व इनका निर्धारण कैसे किया जाता है।

2– परामर्श के उद्देश्य की दिशाओं एवं परामर्श के सिद्धान्तों पर एक निबन्ध लिखिए।

17.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज– 8–10, 67–78

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012, पेज–27, 34

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15 पेज–203–204, 210–212, 224–225

4– राबर्ट, डब्ल्यू.व्हाइट, ' दी एबनार्मल पर्सनालिटी, न्यूयार्क, दी रोनाल्ड प्रेस कम्पनी, वर्ष–1948, पेज 314

5– बोय, ए.एन. एण्ड, पिने, जी.जे. 'क्लाइन्ट सेन्टर्ड काउन्सिलिंग इन दी सेकन्डरी स्कूल, बोस्टन, हॉटन मिफिन कम्पनी, वर्ष–1963, पेज–43

6– टेलर, लीयोना, 'दी वर्क आफ दी काउन्सेलर, न्यूयार्क एप्पलेटन सेन्चुरी क्राफ्ट्स, वर्ष–1961, पेज–12

खण्ड–चतुर्थ– समाज कार्य एवं परामर्श

इकाई –18, परामर्शः पद्धति एवं चरण

18.0 इकाई का उद्देश्य

18.1 परिचय

18.2 परामर्श की पद्धति

18.3 परामर्श के चरण

18.3.1 परामर्श का प्रारम्भिक चरण

18.3.2 परामर्श का मध्य चरण

18.3.3 परामर्श का अंतिम चरण

18.3.4 परामर्श का अनुवर्ती चरण

18.4 सार–संक्षेप

18.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

18.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

18.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को परामर्श की पद्धति एवं चरण की जानकारी प्रदान करना है। इस इकाई में परामर्श की पद्धतियों एवं चरणों की व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– परामर्श की पद्धति के बारे में ज्ञानार्जन कर सकेंगे।

2– परामर्श के चरणों से अवगत हो सकेगें।

3– परामर्श के प्रारम्भिक चरण के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।

4– मौखिक संचार के लाभों की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

5– परामर्श के अंतिम चरण के बारे में जान सकेंगे।

6– परामर्श के अनुवर्ती चरण पर लिख सकेगें।

18.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में परामर्श की पद्धति एवं चरणों पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें परामर्श की पद्धतियों में, मौन धारण पद्धति, स्वीकृति पद्धति, पुनरावृत्ति पद्धति, स्पष्टीकरण पद्धति, मान्यता प्रदान करने की पद्धति, परित्याग पद्धति तथा आश्वासन पद्धतियों पर विस्तृत ब्यौरा पस्तुत किया गया है।

इसी इकाई में परामर्श के चरणों पर लिखते हुए बताया गया है कि, परामर्श को उपबोधक और उपबोध्य के मध्य व्यक्तिगत और आमने–सामने का सम्बन्ध माना जाता हैं। परामर्श की प्रक्रिया भी सुव्यवस्थित रूप में सम्पन्न होती है, इसी कारण परामर्श को चार चरणों से होकर गुजरना पड़ता है। ये चार अवस्थायें या चरण, प्रारम्भिक चरण, मध्य चरण, अंतिम चरण तथा अनुवर्ती चरण प्रमुख हैं। इस इकाई में उपरोक्त चारों चरणों की विस्तृत व्याख्या की गई है, जिससे आप लोग परामर्श के चरणों के बारे में वृहद् ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई, परामर्शः पद्धति एवं चरण आपके निजी ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी। इस प्रकार आपके ज्ञान में उपरोक्त के बारे में जानकारी हो जाने पर आप लोग सेवार्थियों की समस्याओं को आसानी से हल कर सकेगें।

18.2 परामर्श की पद्धति

परामर्श का कार्य इतना जटिल है कि इसकी प्रक्रिया के अन्तर्गत अनेक ऐसे अवसर आते हैं जहाँ एक ही प्रविधि कारगर सिद्ध नहीं होती है। अत परामर्श कार्य सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए समस्या और उपबोध्य को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त प्रविधि का प्रयोग करना पड़ता है। यहाँ कुछ प्रविधियों का वर्णन किया जा रहा है, जो परामर्श कार्य में उपबोधक के कार्य को सरल बना सकती हैं–

1–मौन धारण पद्धति– जब उपबोधक, उपबोध्य की समस्या या वार्ता को चुपचाप बिना किसी टिप्पणी के धैर्यपूर्व सुनता रहता है तो

इसे मौन धारण प्रविधि कहते हैं। इस विधि में उपबोधक बिना किसी विघ्न के उपबोध्य की समस्या को समझने का प्रयास करता है एवं उसके दृष्टिकोण को स्वीकार करता है। मौन धारण का दूसरा प्रभाव यह है कि उपबोध्य को अपने विचार तथा समस्या को विस्तार से स्पष्ट करने का अवसर प्राप्त होता है। ऐसा होने पर उपबोध्य के अचेतन में स्थित सभी कुण्ठाएँ बाहर आ जाती हैं। इस प्रविधि में उपबोधक, उपबोध्य को अधिक बोलने के लिए प्रोत्साहित करता है। यदि कभी उपबोध्य बोलना बन्द करता है तो उपबोधक कुछ बोलकर उपबोध्य को बोलने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार समस्या को अच्छी प्रकार समझने के बाद अन्त में उपबोधक अपने विचार प्रकट करता है।

2—स्वीकृति पद्धति— इस प्रविधि में उपबोधक जब उपबोध्य द्वारा विचार या दृष्टिकोण प्रकट करते समय ठीक है, अच्छा हैं आदि शब्दों का प्रयोग करके उसके विचारों को स्वीकृति प्रदान करता है तो, इसे स्वीकृति कहते हैं। स्वीकृति प्रदान करने का मुख्य उद्देश्य उपबोध्य को अपने विचार निःसंकोच रूप से प्रकट करने की प्ररेणा देना है। उपबोधक द्वारा संकेतक रूप में स्वीकृति न देने की दशा में उपबोध्य को भ्रम हो सकता है कि उपबोधक उसमें या उसकी समस्या में रुचि नहीं ले रहा है। अतः उपबोधक को संकेत रूप में अपनी स्वीकृति देते रहना चाहिए।

3—पुनरावृत्ति पद्धति — कुछ विद्वानों के अनुसार पुर्नकथन या पनुरावृत्ति और स्वीकृति में कोई भिन्नता नहीं हैं। लेकिन स्वीकृति और पुनरावृत्ति में अन्तर है। स्वीकृति में कुछ शब्दों का प्रयोग यह संकेत देने के लिए किया जाता है कि वह उपबोध्य के कथन के प्रति सजग है, जबकि पुरावृत्ति में उपबोधक, उपबोध्य के कथन को दुहराता है ताकि उसको यह विश्वास हो जाये कि उपबोधक सजग है तथा वह कथन के प्रति स्पष्ट हो जाये। अनेक बार पुनरावृत्ति का प्रयोजन उपबोध्य को यह आश्वस्त करने के लिए करता है कि वह उपबोध्य के

दृष्टिकोण को समझ रहा है। ऐसा करने से उपबोध्य के वर्णन में विस्तार होता है।

4–स्पष्टीकरण पद्धति – उपबोधक ओर उपबोध्य दोनों के लिए स्पष्टीकरण आवश्यक है। यदि उपबोध्य द्वारा कहीं कोई बात उपबोधक की समझ में नहीं आती है तो उसे उपबोध्य से उसकी बात को और स्पष्ट रूप में व्यक्ति करने के लिए कहना चाहिए। इससे समस्या को समझने में सरलता होती है। कभी–कभी उपबोधक भी उपबोध्य की बात को अपनी समझ के अनुसार स्पष्ट कर सकता है। ऐसा करने से उपबोध्य को विश्वास होगा कि उपबोधक उसके द्वरा व्यक्त तथ्यों में रुचि ले रहा है।

5–मान्यता प्रदान करने की पद्धति– उपबोध्य वार्तालाप के समय अपनी समस्या से सम्बन्धित अनेक तथ्य तथा विचार व्यक्त करता है। ऐसे समय उपबोधक को उसके तथ्यपूर्ण विचारों को बीच–बीच में मान्यता प्रदान करनी चाहिए। उपबोधक द्वारा मान्यता प्राप्त विचार उपबोध्य को आगे की योजना बनाने की प्रेरणा देते हैं।

6–सामान्य नेतृत्व पद्धति– सामान्यतः प्रबोधक को यह अनुभव होता है, कि उपबोध्य अब अपने वक्तव्य समाप्त करने वाला है तो उसे अपनी वार्ता को और आगे बढ़ाने की प्रेरणा देने के लिए इस प्रविधि का प्रयोग करना चाहिए। इस कार्य के लिए उपबोधक को वार्तालाप के समय अल्प नेतृत्व करना पड़ता है। वक्तव्य का अंश समाप्त होने पर उपबोधक पूछ सकता है कि 'तुम इस कार्य को करने की क्या योजना बना रहे हो?'

7–विश्लेषण पद्धति– इस प्रविधि में उपबोध्य द्वारा बताई गई समस्या और उससे सम्बन्धित तथ्यों का विश्लेषण उपबोधक द्वारा दिया जाता है। इस विश्लेषण में वे ही तथ्य तथा सूचनाएं सम्मिलित होनी चाहिए जो उपबोध्य द्वारा वर्णित हों। उपबोधक को तथ्यों को तोड़–मरोड़कर विश्लेषण नहीं करना चाहिए।

8– विवेचन पद्धति– विश्लेषण के बाद विवेचन आवश्यक है। विवेचना तथ्यों के विश्लेषण के बाद निष्कर्ष निकालने का महत्वपूर्ण सोपान है। उपबोधक विवेचना के बाद ऐसे निष्कर्ष निकालता है जिन निष्कर्षों तक पहुँचने में उपबोध्य अपने को असमर्थ पाता है।

9–परित्याग पद्धति– कभी–कभी उपबोधक को उपबोध्य के विचार त्रुटिपूर्ण लगते हैं। ऐसे में दोषपूर्ण विचारों का परित्याग करना उपबोधक के लिए आवश्यक हो जाता है। परित्याग का उद्देश्य उपबोध्य की विचारधारा में परिवर्तन लाना है। परित्याग के समय उपबोधक को सावधान रहना चाहिए, क्योंकि उपबोध्य इसका गलत अर्थ लेकर नाराज न हो।

10– आश्वासन पद्धति– आश्वासन, स्वीकृति से अधिक व्यापक है। उपबोध्य को निराशा से बचाने के लिए आवश्यक है कि, उपबोधक उसे आश्वस्त करता रहे कि उसकी समस्या का समाधान अवश्य होगा। ऐसा करने से उपबोधक में उसका विश्वास बढ़ेगा और वह उपबोधक से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उत्सुक रहेगा।

18.3 परामर्श के चरण

निर्देशन में परामर्श को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। परामर्श शब्द दो व्यक्तियों के मध्य परस्पर सम्बन्ध का द्योतक है। परामर्श ऐसी प्रक्रिया है जिसमें उन सभी दशाओं का समावेश होता है, जिनमें परामर्शदाता उपबोध्य की समस्या को भली–भांति समझने का प्रयास करता है। परामर्श इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए पूछताछ तथा विचार विनियम की एक अवधारणा है, जो साक्षात्तकार के रूप में सम्पन्न होती है। इसीलिए **पैपिंस्की** ने परामर्श को उपबोधक और उपबोध्य के मध्य व्यक्तिगत और आमने–सामने का सम्बन्ध माना है। परामर्श की प्रक्रिया भी सुव्यवस्थित रूप में सम्पन्न होती है। इसी कारण इसको चार अवस्थाओंमें से होकर गुजरना होता है। ये चार चरण अधोलिखित हैं–

1– प्रारम्भिक चरण

2– मध्य चरण

3– अन्तिम चरण

4– अनवुर्ती चरण

18.3.1 परामर्श का प्रारम्भिक चरण

विद्यालय में व्यक्तिगत परामर्श की स्थिति या तो कुछ मिनटों की हो सकती है, जिसमें किसी तात्कालिक और सरल प्रश्न का उत्तर खोज निकालने में सहायता दे दी जाती है या फिर ऐसी स्थिति हो सकती है, जबकि व्यक्तिगत समस्याओं को सुलझाने के लिए परामर्श की लम्बी श्रृंखला चल पड़ती है जो महीनों चलती है। अनौपचारिक परामर्श देने के अनेक अवसर परामर्शदाता को अपने छात्रों के साथ दैनिक सम्बन्धों में प्राप्त होते हैं। अधिक औपचारिक परामर्श कार्य किसी गम्भीर समस्या स्थिति के पैदा होने पर प्रारम्भ होते हैं। यहाँ औपचारिक परामर्श कार्य की प्रारम्भिक अवस्था का वर्णन प्रस्तुत है–

(1) छात्र से सम्बन्धित सूचनाओं का संग्रह– परामर्श की सफलता के लिए उपबोधक को उपबोध्य के सम्बन्ध में पृष्ठभूमि के ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि उपबोध्य के सम्बन्ध में जानकारी दोनों में आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है। उपबोध्य से सम्बन्धित तथ्य निर्देशन कार्यालय में रखे रिकॉर्ड, अध्यापकों, अभिभावकों अथवा विश्वसनीय व्यक्तियों से एकत्रित किये जा सकते हैं। यह कार्य साक्षात्कार प्रारम्भ करने से पूर्व ही उपबोधक को कर लेना चाहिए।

(2) आत्मीयता स्थापित करना– परामर्श कार्य का प्रारम्भ उपबोधक और उपबोध्य के मध्य परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित होने के साथ होना चाहिए। आत्मीयता ही उपबोध्य में उपबोधक के प्रति विश्वास पैदा करने में सहायक होती है। आत्मीयता पैदा करने के लिए उपबोधक को निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

- **सहानुभूति**—परामर्शीय साक्षात्कार में प्रारम्भ से ही प्रश्न बन्दूक की गोली की भॉति नहीं छोडना चाहिए। उपबोधक को प्रारम्भ में उपबोध्य में विश्वास पैदा करने के लिए कुछ शब्दों के माध्यम से सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए।
- **आश्वासन**—उपबोधक को चाहिए कि वह उपबोध्य को आश्वस्त करे कि उसकी समस्या का हल अवश्य होगा। उसकी घबराहट को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।
- **स्वीकृति**— उपबोधक को प्रारम्भ में उपबोध्य के कृत्यों के प्रति अपनी स्वीकृति प्रदान करने तथा उसे उत्साहित करना चाहिए ताकि वह अपनी भावनाओं को निस्संकोच प्रकट कर सके।
- **प्रश्न पूछना**— उपबोधक द्वारा उपबोध्य से कभी—कभी ऐसे प्रश्न पूछने चाहिए जिनसे उपबोध्य को अपनी समस्या पर चिन्तन करने की प्रेरणा प्राप्त हो।
- **भय**—उपबोधक द्वारा उपबोध्य को कभी—कभी धमकी देनी चाहिए कि यदि वह अपने बारे में सही सूचनाएं नहीं देता तो उसके परिणाम उसी के लिए अहितकर होंगे।
- **आश्चर्य** —कभी—कभी उपबोधक को उपबोध्य के कथन या क्रिया पर आश्चर्य प्रकट करके उसको अपने कथन या व्यवहार में सुधार करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

(3) प्रारम्भ में औपचारिक व्यवस्था पर कम ध्यान— परामर्श में उपबोधक को ध्यान रखना चाहिए कि वार्तालाप में दोनों को लगभग समान समय उपलब्ध हो। इससे उपबोध्य को बोलने का अधिक अवसर मिलेगा तथा अधिक बोलने पर ही वह अपने अन्दर छिपे भावों को प्रकट कर सकेगा।

स्पष्ट है कि परामर्श का प्रारम्भ मित्रतायुक्त वातावरण में होना चाहिए। उपबोध्य द्वारा कोई दबाव या बन्धन अनुभव नहीं होना चाहिए।

18.3.2 परामर्श का मध्य भाग या मध्य चरण

परामर्श का मध्य भाग अधिक महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इस भाग में उपबोधक समस्या के मुख्य बिन्दु पर पहुँचता है। यह परामर्श का वह भाग है जहाँ उपबोधक, उपबोध्य से सम्बन्धित अधिक से अधिक सूचनाएं एकत्रित करने का प्रयास करता है। मध्य भाग को उपयोगी बनाने हेतु उपबोधक को निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए–

- **प्रेरक प्रश्न पूछना** –उपबोधक को प्रेरक प्रश्न उपबोध्य से पूछने चाहिए। प्रेरक प्रश्न ही उपबोध्य को वार्तालाप की प्रेरणा प्रदान करते हैं। मध्य भाग में विषय से सम्बन्धित गम्भीरता आ जती है। लेकिन गम्भीर वातावरण में प्रश्न ऐसे हों जो उपबोध्य को अपने बारे में सब कुछ बताने की प्ररेणा दें।
- **निस्तब्धता का रचनात्मक उपयोग**– निस्तब्धता से आशय है–उपबोध्य द्वारा कुछ समय के लिए चुप हो जाना। ऐसे समय का उपयोग उपबोधक को सावधानी से करना चाहिए। निस्तब्धता से आशय है कि उपबोध्य के मस्तिष्क में विचारों का द्वन्द्व चल रहा है और वह सोच रहा है, अमुक तथ्य मुझे प्रकट करना चाहिए या नहीं। ऐसे समय उपबोधक को उसे चिन्तन के लिए समय देना चाहिए।
- **सीमित सूचनाएँ प्राप्त करना**– प्रायः उपबोधक का प्रयास होता है कि प्रथम परामर्श साक्षात्कार में ही अधिक से अधिक सूचनाएं एकत्रित कर लेनी चाहिए। ऐसा करना उसकी भूल है। परामर्श का कार्य एक बैठक में कभी पूरा नहीं होता है। इसके लिए उपबोध्य के साथ कई परामर्श की बैठकें आयोजित करनी पड़ती हैं।

- **उपबोध्य की भावनाओं को समझना**–परामर्श के समय उपबोध्य अनेक प्रकार की भावनाओं, चाहे वे नकारात्मक ही क्यों न हो, प्रकट करता है। उपबोधक को उसकी भावनाओं पर ध्यान देना चाहिए, उपबोध्य को समझना तथा उनकों स्वीकार करना परामर्श कार्य में सहायक होगा। उपबोधक अपनी स्वीकृति का आभास भाव–भंगिमा या हाँ शब्द के उच्चारण द्वारा करा सकता है।
- **परामर्श पर उपबोधक का नियंत्रण**– परामर्शीय साक्षात्कार के मध्य में उपबोधक को वार्तालाप पर नियंत्रण रखना चाहिए। यदि उपबोध्य को अधिक स्वच्छन्दता दी जायेगी तो उपबोधक आवश्यक सूचनाएँ एकत्रित करने में असमर्थ रहेगा। वार्तालाप में यदि उपबोध्य मुख्य बिन्दु से भटकना आरम्भ करता है तो उपबोधक को वार्तालाप के मध्य में प्रश्न पूछकर उपबोध्य को पुनः मुख्य विषय पर लाना चाहिए।

परामर्श का मध्य भाग अधिक महत्वपूर्ण होता है, अतः उपबोधक को इस अवस्था में अधिक सचेत रहने की आवश्यकता है। उसको अपने पास पैन और नोटबुक रखनी चाहिए ताकि उपबोध्य द्वारा वर्णित मुख्य सूचनाओं को लिखा जा सके। उपबोधक को अपनी स्मरण–शक्ति पर अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए।

18.3.3 परामर्श का अंतिम भाग या अंतिम चरण

परामर्श को समाप्त करने की अवस्था द्विधात्मक होती है। परामर्श को किस अवस्था पर समाप्त किया जाये, यह निर्णय लेना उपबोधक के लिए कठिन हो जाता है। कभी–कभी उपबोधक भी परामर्श में रुचि के कारण वार्तालाप में इतना तन्मय हो जाता है कि उसका समय का ध्यान ही नहीं रहता है। अतः उपबोधक को समय का ध्यान रखते हुए परामर्श कार्य समाप्त करने में कुशल होना चाहिए। परामर्श का समापन ऐसा हो

कि उपबोध्य परामर्शीय वार्तालाप से सन्तुष्टि अनुभव करे। समापन का दूसरा रूप ऐसा हो सकता है जिसमें उपबोध्य को यदि पुनः बुलाना है तो उसका आज का कार्य यहीं समाप्ति का संकेत देकर एक सप्ताह बाद पुनः मिलने का समय निश्चित कर धन्यवाद सहित विदा कर सकते हैं।

18.3.4 परामर्श का अनुवर्ती चरण

परामर्श कार्य में सदैव अनुवर्ती अध्ययन की उपेक्षा होती है। एक अधिक साक्षात्कार के बाद प्रायः परामर्श कार्य बन्द कर दिया जाता है और यह जानने का प्रयास नहीं किया जाता कि उपबोध्य परामर्श से कितना लाभान्वित हुआ है। इस अनुवर्ती क्रिया द्वारा उपबोधक अपने परामर्श कार्य का मूल्यांकन कर सकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श की पद्धति से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. परामर्श के चरणों पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

18.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में परामर्श की पद्धति एवं चरण के बारे में बताया गया है। वास्तव में परामर्श कार्य सफलता पूर्वक पूर्ण करने के लिए कुछ पद्धतियों का प्रयोग करना पड़ता है। जिनका वर्णन इस इकाई में प्रस्तुत किया गया है। परामर्श की पद्धतियों में मौनधारण पद्धति, स्वीकृति पद्धति, पुनरावृत्ति पद्धति, स्पष्टीकरण पद्धति, मान्यता प्रदान करने की पद्धति, सामान्य नेतृत्व, विश्लेषण, विवेचन, परित्याग एवं आश्वासन पद्धति प्रमुख है।

परामर्श के चरण परामर्शदाता को उपबोध्य की समस्या को भलिभांति समझने में सहायता प्रदान करते है। प्रस्तुत इकाई में परामर्श के चार चरणों पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें प्रारम्भिक, मध्य, अन्तिम तथा अनुवर्ती चरण प्रमुख है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी। प्रस्तुत इकाई आप लोगों को परामर्श की पद्धति एवं चरण के बारे में ज्ञान प्रदान कर उपयोग करने तरीकों से अवगत करायेगी।

18.5 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श की पद्धति–वास्तव में परामर्श की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है जो आसानी से पूर्ण नहीं हो सकती। अतः परामर्श की पद्धति वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सेवार्थी की समस्या को समझने आसानी होती है।

परामर्श के चरण– परामर्श ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सभी दशाओं का समावेश होता है जिनके फलस्वरूप परामर्शदाता उपबोध्य की समस्या को भलिभांति समझने का प्रयास करता है। यह प्रयास वह विभिन्न चरणों के माध्यम से करता है जिसे परामर्श कहते है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– परामर्श की पद्धति से आप क्या समझते है?

2– परामर्श के प्रारम्भिक चरण पर प्रकाश डालिये।

3– परामर्श के मध्य चरण पर टिप्पणी कीजिए।

4– परामर्श के अनुवर्ती चरण पर संक्षित टिप्पणी लिखिए।

विस्तृत

1– परामर्श की पद्धति एवं चरण पर एक निबन्ध लिखिए।

18.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज–79–94

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012, पेज–174–186

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15, पेज–228–231

खण्ड–चतुर्थ– समाज कार्य एवं परामर्श

इकाई –19, परामर्श के प्रकार

19.0 इकाई का उद्देश्य

19.1 परिचय

19.2 परामर्श के प्रकार

19.2.1 नैदानिक परामर्श

19.2.2 मनोवैज्ञानिक परामर्श

19.2.3 मनोचिकित्सकीय परामर्श

19.2.4 छात्र परामर्श

19.2.5 नियोजन परामर्श

19.2.6 वैवाहिक परामर्श

19.2.7 व्यावसायिक परामर्श

19.3 निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श

19.4 संग्राही परामर्श

19.5 परामर्श के विशिष्ट क्षेत्र

19.5.1 व्यक्तिगत परामर्श

19.5.2 विवाह–सम्बन्धी परामर्श

19.5.3 वृत्तिक परामर्श

19.5.4 मदिरा तथा मादक पदार्थों का सेवन करने वालों का परामर्श

19.6 सार–संक्षेप

19.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

19.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

19.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य परामर्श के प्रकारों पर प्रकाश डालना है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– नैदानिक परामर्श के बारे में जान सकेंगे।

2– मनोवैज्ञानिक परामर्श के बारे में लिख सकेंगे।

3– मनोचिकित्सिकीय परामर्श पर टिप्पणी लिख सकेंगे।

4– छात्र परामर्श को समझ सकेंगे।

5– नियोजन परामर्श की जानकरी कर सकेंगे।

6– वैवाहिक परामर्श से अवगत हो सकेंगे।

7– व्यवसायिक परामर्श पर प्रकाश डाल सकेंगे।

8– निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

9– परामर्श के विशेष क्षेत्रों से अवगत हो सकेंगे।

10– वृत्तिक परामर्श के बारे में जान सकेंगे।

19.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में परामर्श के प्रकारों पर प्रकाश डाला गया है। परामर्श निर्देशन का अनिवार्य एवं अपरिहार्य पक्ष है। रोजर्स ने परामर्श को व्यक्ति की मनोवृत्ति तथा व्यवहार परिवर्तन के लिए दी जाने वाली सहायता के रूप में माना है। गिलबर्ट ने इसे दो व्यक्तियों के मध्य होने वाली गतिशील प्रक्रिया माना है। मायर्स ने परामर्श को दो व्यक्तियों के मध्य होने वाले सम्बन्धों के रूप में माना है। इसमें एक व्यक्ति दूसरे की समस्या का समाधान करने में सहायता पहुँचता है।

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के प्रकारों पर प्रकाश डालते हुये विभिन्न प्रकार के परामर्श जैसे– नैदानिक परामर्श, मनोवैज्ञानिक

परामर्श, मनोचिकित्सकीय परामर्श, छात्र परामर्श, नियोजन परामर्श, वैवाहिक परामर्श एवं व्यावसायिक परामर्श के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद परामर्श के प्रकारों के बारे में आप लोगों का ज्ञानवर्द्धन हो सकेगा तथा आप लोग इन प्रकारों का उचित प्रयोग कर सकेंगे।

19.2 परामर्श के प्रकार

समस्या तथा विषयी अथवा उपबोध्य की दृष्टि से परामर्श को अनेक भागों में बाँटा जा सकता है–

(1) नैदानिक परामर्श

(2) मनोवैज्ञानिक परामर्श

(3) मनोचिकित्सकीय परामर्श

(4) छात्र परामर्श

(5) नियोजन परामर्श

(6) वैवाहिक परमार्श

(7) व्यावसायिक परामर्श

परामर्श का सम्बन्ध जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं से होता है। उसके अनेक प्रयोजन होते हैं, जिन पर हम परामर्श की प्रक्रिया के अन्तर्गत विचार कर चुके हैं। प्रयोजनों, क्षेत्रों एवं लक्ष्यों की भिन्नता के आधार पर परामर्श के विभिन्न प्रारूप विकसित हो गये हैं।

19.2.1 नैदानिक परामर्श

एच.बी. पेपिंगस्की ने नैदानिक परामर्श शब्द का प्रयोग करके यह सुझाया कि परामर्श का एक प्रारूप नैदानिक परामर्श भी है। नैदानिक परामर्श का अर्थ है –(अ) पूरी तरह से न दबे एवं न अक्षम बना देने वाले, असाधारण कार्य व्यापार सम्बन्धी (ऐन्द्रिय अथवा आंगिक के अतिरिक्त) अपसमायोजनों का निदान एवं उपचार, तथा (ब)

परामर्शदाता एवं उपबोध्य के बीच मुख्यतया व्यक्तिगत तथा आमने–सामने का सम्बन्ध।

पेपिंस्की के अनुसार नैदानिक परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य कार्य, व्यापार सम्बन्धी अपसमायोजनों से है। उसमें उपबोध्य एवं परामर्शदाता का आमने–सामने का सम्बन्ध होता है। **इंगलिश तथा इंगलिश** के अनुसार , 'नैदानिक शब्द व्यक्ति को उसकी अद्वितीय सम्पूर्णता में अध्ययन करने की विधि की ओर संकेत करता है। इसके द्वारा विशिष्ट व्यवहारों का निरीक्षण किया जा सकता है तथा विशिष्ट गुणों को निष्कर्ष के रूप में ग्रहण किया जा सकता है किन्तु लक्ष्य व्यक्ति विशेष को समझना ही (तथा सहायता करना) होता है।'

इस प्रारूप के अन्तर्गत समस्या का विश्लेषण करने एवं उसका उपचार बताने का प्रयास भी किया जाता है। नैदानिक मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति की असामान्य दशाओं तथ असामान्य व्यवहारों का निदान कर जो सुझाव दिये जाते हैं तथा उपाय बताये जाते हैं, वे नैदानिक परामर्श के अन्तर्गत आते हैं। नैदानिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान तथा व्यक्ति व्यवहार से सम्बन्धित होकर वांछित उपाचारात्मक उपाय प्रस्तुत करता है ऐसे उपबोध्य की जो बेहतर समायोजन तथा आत्मभिव्यक्ति के क्रम में कोई अवांछनीय व्यवहार या मानसिक अव्यवस्था विकसित कर लेता है। इसके अन्तर्गत निदान उपचार एवं प्रतिरोधन तथा ज्ञान के विस्तार के लिये किये जाने वाले शोध के लिये प्रशिक्षण एवं अभ्यास को ग्रहण किया जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि, नैदानिक मनोविज्ञान एवं नैदानिक परामर्श में काफी समरूपता है।

19.2.2 मनोवैज्ञानिक परामर्श

आर0 डब्ल्यू0 व्हाइट ने मनोवैज्ञानिक परामर्श शब्द का प्रयोग करते हुए लिखा है–'मनोवैज्ञानिक परामर्श का सन्दर्भ अपेक्षाकृत एक जैसे क्रियाकलापों की बहुरूपता से है। इनको विधेयात्मक ढंग की

अपेक्षा निषेधात्मक ढंग से लक्षित करना आसान है। अपनी विशिष्ट प्रक्रियाओं मुक्त साहचर्य, व्याख्या, अन्यारोपण तथा स्वप्न–विश्लेषण से मुक्त मनोविश्लेषण तक को उन क्रियाकलापों की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। वे सम्मोहन, स्वापी संश्लेषण, मनोनाटक आदि विशेष साधनों का प्रयोग नहीं करते। वे केवल उपबोध्य एवं चिकित्सक के मध्य होने वाली बातचीत पर ही निर्भर करते हैं। यह बातचीत प्रश्नोत्तर रूप में हो सकती है, इतिहास के पुनर्निर्माण अथवा वर्तमान समस्याओं पर वाद–विवाद का रूप ग्रहण कर सकती है। यह उपबोध्य द्वारा भाव–विभोर होकर किया गया स्वगत आलाप हो सकता है अथवा इसके विपरीत चिकित्सक उपबोध्य को सब कुछ कहलवाने के लिय अग्रगमन करता है। चिकित्सक उत्साहित कर सकता है तथा जानकारी दे सकता है एवं सलाह दे सकता है। यह अपेक्षाकृत ऐसे विधेयात्मक कार्य है जो चिकित्सक द्वारा किये जाते हैं और मनोवैज्ञानिक परामर्श के सामान्य अर्थ के अन्तर्गत होते हैं।'

मनोवैज्ञानिक परामर्श में परामर्शदाता एक चिकित्सक की भाँति होता है और परामर्श चिकित्सा का एक रूप होता है। सामान्य वार्तालाप के द्वारा परामर्शदाता उपबोध्य को उसकी दमित भावनाओं एवं संवेगों को अभिव्यक्त करने में सहायता करता है। इस कार्य में परार्शदाता उपबोध्य को उसे आवश्यक सूचना एवं सुझाव देता हुआ आशान्वित करता चलता है जिससे वह अबाध रूप से अपने भावों एवं समस्याओं को व्यक्त कर सके। **व्हाइट** जैसे विद्वानों के द्वारा परामर्श और चिकित्सा शब्दों को एकार्थवाची स्वीकार कर लेने के कारण कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने जिनमें **स्नाइडर** का नाम प्रमुख है, नया शब्द मनोचिकित्सा सम्बन्ध परामर्श प्रचलित कर दिया।

19.2.3 मनोचिकित्सकीय परामर्श

मनोचिकित्सकीय परामर्श की परिभाषा करते हुए **स्नाइडर** ने लिखा है–'मनोचिकत्सा वह प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, जिसमें मनोवैज्ञानिक रूप

से प्रशिक्षित व्यक्ति अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के सामाजिक अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिये शाब्दिक माध्यम से सचेत रूप में प्रयत्न करता रहता है और इसमें विषयी (उपबोध्य) सापेक्षतः अपने व्यक्तित्व के पुनर्संगठन से अवगत रहता है जिसमें से वह गुजर रहा है।

स्नाइडर की इस व्याख्या पर विचार करने पर मनोचिकित्सात्मक परामर्श के दो पहलू हमारे समाने आते हैं। प्रथमतः वह परामर्श दृष्टिकोणों के परिष्कार से सम्बन्धित है, विशेष रूप से वे दृष्टिकोण जो सामाजिक अपसमायोजन के लिये उत्तरदायी होते हैं। दूसरा पहलू यह है कि मनोचिकित्सात्मक परामर्श के दौरान उपबोध्य में जो परिवर्तन लक्षित होते हैं, उनसे वह अवगत रहता है। चिकित्सात्मक शब्द औषधि एवं इलाज के क्षेत्र का है। किन्तु जब परामर्श के सन्दर्भ में इसका प्रयोग किया जाता है तो इसका चिकित्सा सम्बन्धी मुख्यार्थ लुप्त हो जाता है और यह केवल उन क्रियाकलापों का प्रतीक माना जाता है जो उपबोध्य की कठिनाइयों के समाधान में सहायता करते हैं।

रूथ स्ट्रैंग ने मनोचिकित्सा एवं परामर्श का सम्बन्ध स्पष्ट करते हुए लिखा है– परामर्श एवं मनोचिकित्सा में काफी साम्य है। दोनों में भेद करने का यत्न करना कठिन और सम्भवतः अनुपयोगी होगा। एक सातत्य पर कौंसिली या उपबोध्य की व्यक्तित्व–रचना में परिवर्तन की विस्तृति, विश्लेषण की गहराई तथा भावात्मक अन्तर्वस्तु की मात्रा को व्यवस्थित करने पर एक प्रक्रम दूसरे में अन्तर्लिप्त हो जाता है।

रूथ स्ट्रैंग के इस कथन से यह स्पष्ट है कि परामर्श एवं मनोचिकित्सा, दोनों एक–दूसरे से मिले हुए हैं। आज यह स्वीकार किया जाने लगा है कि परामर्श में ऐसे तत्व हैं जो चिकित्सात्मक प्रकृति के हैं। परामर्श के अन्य अनके प्रकारों में महत्व दिया जाता है। सामाजिक अपसमायोजनों को दूर करने की दृष्टि से मनोचिकित्सक परामर्श की उपयोगिता असंदिग्ध है।

19.2.4 छात्र परामर्श

छात्र परामर्श का सम्बन्ध छात्रों की समस्याओं से होता है। ये समस्याएँ शैक्षिक संस्थाओं को चुनने, पाठ्यक्रमों, अध्ययन की विधियों, समायोजन तथा व्यावसायिक चयन आदि से सम्बद्ध होती हैं। नैदानिक परामर्श की भाँति ही छात्र परामर्श का सम्बन्ध छात्रों के सम्पूर्ण शैक्षिक परिवेश की समस्याओं से होता है। यह छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ग्रहण करता है। अन्तर केवल इतना है कि छात्र परामर्श में छात्रों का मूल चरित्र शैक्षिक होता है। ..... शिक्षा का प्रयोग वैयक्तिक सम्पर्क की स्थिति में सीधे व्यक्ति की आवश्यकताओं के लिये होता है। इस प्रकार छात्र परामर्श का सम्बन्ध शैक्षिक जीवन को प्रभावित करने वाली समस्याओं से होता है। इसमें शिक्षा को व्यक्तिगत सम्पर्क के माध्यम से व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रयुक्त किया जाता है।

19.2.5 नियोजन परामर्श

यह परामर्श उपबोध्य को उसकी योग्यताओं, अभिरूचियों एवं दृष्टिकोणों के अनुरूप व्यवसाय का वरण करने में सहायता देता है। दूसरे शब्दों में, उपबोध्य जिस प्रकार के कृत्य अथवा पद के अनुरूप योग्यता रखता है एवं जिससे उसे कृत्य सन्तोष मिल सकता है, उस प्रकार के कृत्य में नियोजन प्राप्त करने में नियोजन–परामर्श सहायता करता है। नियोजन परामर्श के द्वारा व्यक्ति वृत्तिक विकास के लिये परामर्श प्राप्त करता है और तदनुसार कार्य करता है। यह परामर्श सही व्यवसाय या वृत्ति अपनाने पर बल देता है। इससे व्यक्ति की शक्ति तथा समय दोनों की बचत होती है और इसके अच्छे परिणाम आते हैं।

19.2.6 वैवाहिक परामर्श

परामर्श के इस प्रकार में व्यक्ति को उपयुक्त जीवनसाथी के चुनाव के लिये राय या सहायता प्रदान की जाती है। यदि उपबोध्य शादीशुदा है तो उसको वैवाहिक जीवन से सम्बद्ध समस्याओं के समाधान का परामर्श प्रदान किया जाता है। पाश्चात्य देशों में अत्यधिक

शहरीकरण एंव औद्योगीकरण के कारण परिवारों में विघटन की गति तेज हो रही है। फलस्वरूप वहाँ पर आजकल वैवाहिक परामर्श की बड़ी माँग है। भारत में भी महानगरों की स्थिति बहुत कुछ पाश्चात्य देशों जैसी ही हो रही है और यहाँ पर भी लोग वैवाहिक परामर्श की आवश्यकता गम्भीरता से महसूस करने लगे हैं। आधुनिकीकरण और शहरीकरण की प्रक्रियाएँ जितनी तेज होंगी, पारिवारिक विघटन भी उसी अनुपात में तीव्र होगा। औद्योगिक क्षेत्रों में पारिवारिक जीवन के लिये आवश्यक सुविधाओं एवं दशाओं की कमी रहती है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में अभी ऐसी स्थिति नहीं हैं।

19.2.7 व्यावसायिक परामर्श

इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार इस प्रकार के परामर्श का सम्बन्ध उन प्रक्रियाओं से होता है जो व्यक्ति के द्वारा किसी व्यवसाय के वरण एवं उसकी तैयारी की समस्याओं पर केन्द्रित होती हैं। दूसरे शब्दों में, व्यावसायिक परामर्श व्यक्ति की उन समस्याओं को अपना केन्द्र बनाता है जो किसी व्यवसाय या जीविका के चुनाव और उसके लिए तैयारी करते समय उसके सम्मुख आती है।

परामर्श के प्रकारों के सम्बन्ध में रोजर्स तथा बैलेन के विचार– परामर्श के विभिन्न प्रकार केवल समस्याओं के उन क्षेत्रों का संकेत देते हैं जिनके लिये परामर्श की आवश्यकता पड़ती है। यह उपबोध्य द्वारा अनुभव की जाने वाली समस्याओं की प्रकृति पर आधारित होते हैं। **रोजर्स तथा वैलेन** के अनुसार परामर्शदाता को हर स्थिति में व्यक्ति उपबोध्य में रुचि लेनी चाहिये न कि केवल प्रारम्भिक समस्या में। यह मान लेने पर व्यक्तिगत समस्याओं में परामर्श प्रदान करने तथा शैक्षिक एवं व्यावसायिक कठिनाइयों में परामर्श देने में कोई मूल अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता। **रोजर्स तथा वैलेन** के इस विचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति की समस्याओं में परामर्श प्रदान करते समय उपबोध्य को एक व्यक्ति के रूप में समझना होता है तथा उपबोध्य का

व्यक्तित्व ही परामर्श का केन्द्र होता है। वैसे भी व्यक्तित्व को विभिन्न अंगों में विभाजित करके देखना कठिन एवं अनुपायोगी है।

19.3 निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श

परामर्श के जितने प्रारूपों पर विचार किया गया, वे प्रकारान्तर से परामर्श के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बद्ध हैं। वस्तुत: स्वरूपगत आधार पर परामर्श के दो ही प्रारूप किये जा सकते हैं–निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श। यह प्रारूप उपबोध्य एवं परामर्श के सम्बन्धों को निर्धारित करने के उपागमों तथा उनके महत्व के क्रम पर आधारित हैं। इन दोनों प्रारूपों पर अलग–अलग विस्तार से विचार करना वांछिनीय होगा।

निदेशात्मक परामर्श– निदेशात्मक उपबोधन में परामर्शदाता का महत्व अधिक होता है। वह उपबोध्य की समस्याओं के समाधान के लिये उपाय बताता है एवं निर्देश देता है। इस प्रकार के परामर्श में परामर्शदाता समस्या पर अधिक ध्यान देता है। निर्देशीय परामर्श में साक्षात्कार एवं प्रश्नावली पद्धति का प्रयोग किया जाता है।

विली तथा एण्ड्रयू के अनुसार निम्नलिखित अभिग्रह निर्देशीय परामर्श के औचित्य को स्थिर करते हैं–

1– अपने प्रशिक्षण, अनुभव तथा ज्ञान के आधार पर परामर्शदाता समस्या के समाधान के लिये अच्छी सलाह कर सकता है।

2– परामर्श एक बौद्धिक प्रक्रिया है।

3– अपने पूर्वाग्रहों तथा सूचनाओं के अभाव के कारण उपबोध्य समस्या का समाधान नहीं खोज पाता है।

4– समस्या के समाधान की अवस्था के माध्यम से ही परामर्श का प्रयोजन उपलब्ध होता है।

निदेशात्मक परामर्श में परामर्शदाता उपबोध्य की समस्या के समाधान में विशेष दिलचस्पी लेता है। वह विभिन्न प्राविधियों तथा उपकरणों के माध्यम से आँकड़ें संग्रहीत करता है तथा उनका विश्लेषण

करके सेवार्थी की समस्या के कारणों की खोज करता है। कारणों का निदान कर लेने पर वह समस्या के समधान के लिये निदेशात्मक परामर्श प्रदान करता है। इस प्रकार निदेशात्मक परामर्श को समस्या–केन्द्रित परामर्श भी कहा जा सकता है।

अनिदेशात्मक परामर्श–निदेशात्मक परामर्श के विरीत अनिदेशात्मक परामर्श उपबोध्य केन्द्रित होता है। इस प्रकार के परामर्श में उपबोध्य को बिना किसी प्रत्यक्ष निर्देश के आत्मोपलब्धि एवं आत्मसिद्धि तथा आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख किया जाता है।

अनिदेशीय परामर्श का प्रमुख एवं जोरदार व्याख्याता **कार्ल रोजर्स** को माना जाता है। उन्होंने परामर्श के इस प्रारूप का उपयोग शैक्षिक, व्यावसायिक तथा वैवाहिक आदि अनके समस्याओं के समाधान के लिये किया है। **रोजर्स** ने अनिदेशीय परामर्श की तीन विशेषताएँ बताई हैं–

1– **उपबोध्य–केन्द्रित सम्बन्ध–रोजर्स** ने अनिदेशत्मक परामर्श में उपबोध्य एवं परामर्शदाता के सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ऐसे परामर्श मे परामर्शदाता उपबोध्य की वैयक्तिक स्वायत्तता को सम्मान प्रदान करता है। परामर्शदाता उपबोध्य के लिये किसी निर्णय विशेष को नहीं सुझाता अर्थात् अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही करना होता है। परामर्शदाता ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है जिसमें उपबोध्य अपनी समस्या का समाधान स्वयं खोज लेता है।

2– **भावना तथा आवेग को महत्व**–अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य को अपनी भावनाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है और इससे उसकी भावनाओं एवं अभिरुचियों का सही ज्ञान प्राप्त होता है और इस प्रकार समस्या का वास्तविक हल प्राप्त करने मे सुविधा होती है। इसमें भावों की अभिव्यक्ति को महत्व दिया जाता है तथा बौद्धिक प्रक्रिया को गौण माना जाता है।

3— **उचित वातावरण**—उपबोध्य केन्द्रित होने के कारण अनिदेशीय परामर्श में उपबोध्य को भावों तथा अभिरुचियों को व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। यह तभी सम्भव है जबकि परामर्शदाता इस प्रकार का वातावरण उत्पन्न करने में सहयोग दे जिसमें प्रार्थी अपने विवेक का उपयोग निर्णय लेने के लिये कर सके तथा वह अपने को अच्छी तरह जान सके। इसमें परामर्शदाता तटस्थतापूर्वक उपबोध्य की बातों पर गौर करता है, वह कोई निर्णायक नहीं होता।

अनिदेशात्मक परामर्श के प्रमुख सिद्धान्त—

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर अनिदेशात्मक परामर्श के आधारभूत सिद्धान्तों का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता है—

1— **उपबोध्य की सत्यनिष्ठा का आदर**—अनिदेशात्मक परामर्श में उपबोध्य परामर्श में उपबोध्य की सत्यनिष्ठा एवं उसकी वैयक्तिक स्वायत्तता को पर्याप्त आदर प्रदान किया जाता है। परामर्शदाता बिना कोई निर्णय या निर्देशन दिये उपबोध्य की सहायता के लिये तत्पर रहता है। अन्तिम निर्णय उपबोध्य को ही लेना होता है। यह कहा जा सकता है कि अनिदेशीय परामर्श उपबोध्य की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता को स्वीकार करता है। उपबोध्य का इस क्षमता में विश्वास अनिदेशात्मक परामर्श का आधारभूत सिद्धान्त स्वीकार किया गया है।

2— **उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व का ध्यान**—अनिदेशीय परामर्श का दूसरा प्रमुख सिद्धान्त यह है कि उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व को अपनी दृष्टि में रखता है। इसलिये इस प्रकार के परामर्श का लक्ष्य किसी उपस्थित अथवा विशेष समस्या का समाधान प्रस्तुत करना न होकर व्यक्ति की समायोजन एवं अनुकूलन क्षमता का विकास है।

3– **उपबोध्य के विचारों की भिन्नता के प्रति सहिष्णुता एवं स्वीकृति का सिद्धान्त**–अनिदेशात्मक परामर्श के दौरान यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि उपबोध्य परामर्शदाता के विचारों से भिन्न विचार रखता हो। इसलिये वैचारिक भिन्नता के प्रति सहिष्णु होना अनिदेशात्मक परामर्श का प्रमुख एवं महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं परामर्शदाता को तटस्थ रहकर उपबोध्य में यह विश्वास उत्पन्न करना चाहिये कि वह उसकी बात को ध्यानपूर्वक सुन रहा है और मान रहा है।

4– **उपबोध्य को स्वयं को तथा अपनी शक्ति को समझने में समर्थ बनाना**– अनिदेशात्मक परामर्श का लक्ष्य उपबोध्य को अपनी शक्तियों को समझने एवं अपनी सम्भावनाओं को यथास्थिति जानने में सहयोग देना होता है। परामर्श की अवस्थाओं का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिये जिससे परामर्शदाता की निर्णय लेने की एव अनुकूलन की शक्ति का विकास हो।

19.4. संग्राही परामर्श

जो परमर्शदाता निदेशात्मक अथवा अनिदेशात्मक विचाराधाराओं से सहमत नहीं है उन्होंने परामर्श के एक अन्य प्रारूप का विकास किया है, जिसे संग्राही या समन्वित परामर्श कहा जाता है। संग्रही परामर्श में निदेशात्मक एवं अनिदेशात्मक दोनों प्रारूपों की अच्छी बातों को ग्रहण किया गया है। इस प्रकार से यह दोनों के बीच का परामर्श प्रारूप जिसे मध्यवर्गीय कहा जा सकता है।

संग्रही परामर्श की प्रकृति के अनुरूप इसमें आवश्यक होने पर तथा उपबोध्य के हित में होने पर भावात्मक अभिव्यक्ति को नियन्त्रित भी किया जाता है। इसमें परामर्शदाता पूर्णतः तटस्थ नहीं रहता। यह प्रारूप उपबोध को अनावश्यक रूप से अत्यधिक महत्व देना उचित नहीं

समझता। अवस्था के अनुरूप उपबोध्य एवं परामर्शदाता के सम्बन्धों में कुछ अधिकारगत दूरी विद्यमान रहती है।

परामर्श का संग्रही प्रारूप अभी विकसित हो रहा है और इसका निश्चित स्वरूप निर्धारित हो पाया है। व्यवहार में परामर्शदाताओं द्वारा जिन प्रविधियों का उपयोग किया जा रहा है वे संग्रही ही हैं। ये प्रविधियाँ निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक दोनों प्रकार के परामर्शों से ग्रहण की जाती हैं। वस्तुतः संग्रही परामर्श अतिवादी विचारधाराओं से हटकर परामर्श का एक सन्तुलित प्रारूप विकसित करने का एक सराहनीय प्रयत्न है। अच्छी और आवश्यक बातों का ग्रहण एवं अनावश्यक तथा कम उपयोगी बातों का परित्याग करके इससे परामर्श के सर्वोत्तम स्वरूप को प्राप्त करने का यत्न किया जाता है ।

19.5 परामर्श के विशिष्ट क्षेत्र

परामर्श, निर्देशन का अभिन्न अंग है। परामर्श में व्यक्ति को आत्मज्ञान कराकर इतना सक्षम बना दिया जाता है कि वह अपनी समस्या के समाधान का स्वयं ही प्रयास करें। परामर्श में उपबोध्य की समस्या का समाधान उपबोधक द्वारा नहीं किया जाता है। मानव जीवनं के अनेक पक्ष, जैसे– व्यक्तिगत, सामाजिक, पारिवारिक, मानसिक आदि हैं। समय के परिवर्तन के साथ इन सभी पक्षों में अनेक जटिलताओं के प्रवेश के कारण मानव को प्रतिदिन अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कुछ समस्याओं का निराकरण वह अपने अनुभवों के आधार पर कर लेता है, लेकिन कुछ समस्याएँ इतीन जटिल होती हैं जिनके समाधान के लिए उसको किसी योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति की सहायता की आवश्यकता अनुभव होती है। ऐसा व्यक्ति उपबोधक ही है जो इस कार्य के लिए प्रशिक्षित भी होता है। यहाँ उन विशेष क्षेत्रों के बारे में चर्चा आवश्यक है, जिनमें परामर्श आवश्यक है।

19.5.1. व्यक्तिगत परामर्श

मानव जीवन के कुछ पक्ष, जैसे–भावात्मक, स्वास्थ्य, धर्म, सामाजिक सामंजस्य आदि को व्यक्तिगत जीवन के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। व्यक्तिगत जीवन की समस्याएँ मानव की कार्यकुशलता को प्रभावित करती हैं जो अप्रत्यक्ष रूप में उसकी उत्पादकता को कम कर देती हैं। मानव के व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं के निराकरण के लिए दी जाने वाली सहायता व्यक्ति परामर्श कहलाती है।

मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों के आधार पर व्यक्तिगत समस्याओं को समझने और उनका वर्गीकरण करने के अनेक प्रयास किये हैं। जिस व्यक्तिगत समस्याओं का उल्लेख किया है, वे अग्रलिखित हैं–

1–स्वास्थ्य से सम्बन्धिम समस्याएँ

2–सामाजिक समस्याएँ

3–मनोवेगात्मक समस्याएँ

4–अवकाश औरा मनोरंजन सम्बन्धी समस्याएँ

5–धर्म और नैतिक मूल्यों से जुड़ी समस्याएँ

6–पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याएँ

व्यक्तिगत परामर्श में उपरोक्त समस्याओं का निराकरण करने में उपबोधक द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। ध्यान रहे, समस्या का समाधान करने योग्य उपबोध्य को परामर्श द्वारा बनाया जाता है। उपबोधक द्वारा समस्या का समाधान नहीं किया जाता है।

व्यक्तिग परामर्श द्वारा निम्नलिखित कार्य सम्पन्न होते हैं–

1– पारस्परिक सम्बन्धों को यथावत् रखने के कौशल का विकास करना।

2– मनोवेगों पर नियंत्रण रखने की कला का अभ्यास करने के लिए उपबोध्य को प्रेरित करना।

3— सामाजिक पर्यावरण के साथ सामंजस्य बनाये रखने की योग्यता का विकास करना।

4— स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहने की आदत का विकास करना।

5— व्यक्तिगत जीवन की समस्याओं को समझने, उनके कारण पता लगाने तथा उनके निराकरण में सहयोग प्रदान करना।

6— परिवार के सदस्यों के साथ मधुर सम्बन्ध बनाये रखने के कौशल का विकास करना।

7— अवकाश के समय मनोरंजन कार्यों में रुचि पैदा करने में सहायता करना।

व्यक्तिगत परामर्श के सोपान—व्यक्तिगत परामर्श चरणबद्ध रूप से होता है। इसकी प्रक्रिया में अधोलिखित सोपानों का पालन करना आवश्यक है—

प्रथम सोपान में व्यक्तिगत समस्याओं से पीड़ित व्यक्ति के साथ उपबोधक को मधुर सम्बन्ध स्थापित करने चाहिए। मित्रवत् सम्बन्ध स्थापित होने पर ही व्यक्ति का उपबोधक पर विश्वास बढ़ेगा और वह बिना कुछ छिपाये अपनी समस्याऐं उपबोधक को बतायेगा।

द्वितीय सोपान में उपबोधक व्यक्ति से सम्बन्धित तथ्य एकत्रित करेगा। ये तथ्य विद्यालय के रिकॉर्डों से या मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रयोग द्वारा एकत्रित करेगा, तो ये तथ्य व्यक्ति के व्यक्तित्व, योग्यता, रुचि आदि पर प्रकाश डाकर उपबोध्य को समझने में उपबोधक की सहायता करेंगे।

तृतीय सोपान में व्यक्ति से सम्बन्धित तथ्यों का विश्लेषण करके उसकी समस्या के समाधान के लिए उचित परामर्श दिया जाता है।

चतुर्थ सोपान में समाधान की योजना बनाने तथा योजना के क्रियान्वयन में परमर्शीय सहायता प्रदान की जाती है।

19.5.2 विवाह–सम्बन्धी परामर्श

सामाजिक परिवर्तनों की श्रृंखला में वैवाहिक सम्बन्धों में परिवर्तन भी एक ऐसा परिवर्तन है, जिसके परिणामस्वरूप भारत में विद्यमान विवाह सम्बन्धी अवधारणा शीघ्रता से लुप्त होती जा रही है। भारत में विवाह को एक पवित्र तथा स्नेहयुक्त सम्बन्ध माना जाता था। लेकिन सामाजिक और धार्मिक आधारों के समाप्त होने से आज विवाह–विच्छेदों की संख्या मे वृद्धि हो रही है। पति–पत्नी के सम्बन्धों में तनाव बढ़ रहे हैं। वे परस्पर एक–दूसरे को समझने का प्रयास नहीं करते हैं। इस तनाव रूपी ज्वाला को बढ़ाने में पुरुष का अहम् और नारी स्वतन्त्रता का आन्दोलन आग में घी की तरह काम कर रहे हैं।

वैवाहिक सम्बन्धों में कटुता का कारण, पारिवारिक संस्कारों के कम प्रभाव तथा स्नेह एवं सहानुभूति का अभाव है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि दो व्यक्ति कभी भी समान नहीं होते हैं। अतः यह आशा करना कि परिणय सूत्र में बँधने वाले दो व्यक्ति मानसिक रूझान, विचार और मूल्यों में समान होंगे, गलत है। दो भिन्न पारिवारिक वातावरण में पले हुए व्यक्तियों को सुखद वैवाहिक जीवन व्यतीत करने के लिए समायोजन हेतु कोई समझौते का आधार निर्धारित करना चाहिए। दोनों को ही एक–दूसरे की मनोवृत्ति, विचारों तथा मूल्यों को सहानुभूति के साथ समझने का प्रयास करना चाहिए।

आज आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षित स्त्रियाँ भी घर पर बन्द करने की अपेक्षा जीविकोपार्जन को अधिक महत्व देती हैं। जो पति–पत्नी आर्थोपार्जन में संलग्न होते हैं, उनमें शनैःशनैः प्यार की भावना तथा परिवार के प्रति उत्तरदायित्व का भाव समाप्त होता जाता है। यहाँ तक कि दोनों परस्पर चारित्रिक सन्देह की ज्वाला में जलने लगते हैं। समय के अभाव के कारण अल्पकाल के लिए दोनों का मिलन होता है। परिणामस्वरूप दोनों में मनोमालिन्य में वृद्धि होती है।

वैवाहिक जीवन में तनाव की स्थिति पैदा होने के कुछ कारण निम्नलिखित हैं–

1– पुरुष–प्रधान समाज में पुरुष के अहम् के फलस्वरूप स्त्रियों पर प्रभुत्व स्थापित करने की भावना।

2– शिक्षित होने पर भी पुरुष और स्त्री दोनों में मनोवेगों पर नियंत्रण रखने के कौशल का अभाव।

3– महिलाओं में जीविकोपार्जन द्वारा आत्मनिर्भर बनने की लालसा।

4– गृह–कार्य में पुरुषों की भागीदारी का अभाव।

5– शिक्षित होते हुए भी नवीन वातावरण को समझने और उसमें समायोजित होने की योग्यता का अभाव।

6– आज विवाह एक सामाजिक बन्धन नहीं है। इसको आय बढ़ाने का माध्यम बना दिया है। विवाह–विच्छेद, पति–पत्नी में से किसी के द्वारा आत्महत्या, घर में आये दिन होने वाली मारपीट आदि यह संकेत करते हैं कि वैवाहिक सम्बन्धों में सुधार के लिए परामर्श अति आवश्यक है। वैवाहिक जीवन को मधुर बनाने के उद्देश्य से निर्देशन की आवश्यकता का वर्णन **क्रो और क्रो** ने इस प्रकार किया है, ' विवाह से पूर्व और विवाहित काल में सदाचार जीवन बिताने में निर्देशन का महत्व तभी है, जबकि नवयुवकों को आध्यात्मिक मूल्यों को समझने, अपने और विरोधी लिंग के सदस्यों के प्रति स्वस्थ्य व्यवहार रखने, वैवाहिक जीवन के आनन्द के उपभोग की यथार्थ इच्छा रखने और ऐसे जीवन साथी के चुनाव करने की भी शिक्षा दी जाये तो स्वयं भी सच्चे प्रेम और उच्च आदर्शवाद से प्रेरित हो ताकि किसी दूसरे व्यक्ति को वह अपनी प्रेम ओर निष्ठा समर्पित न करे जो वास्तव में उसके जीवन साथी की सम्पत्ति हैं।'

वैवाहिक परामर्श कार्य–

वैवाहिक कष्ट की वर्तमान समस्याओं के समाधान के लिए प्रशिक्षित परामर्शदाताओं को तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है, जिससे वैवाहिक जीवन में सुधार हो सके। वैवाहिक परामर्श में उपबोधक को निम्नलिखित प्रक्रिया का प्रयोग करना चाहिए।

सर्वप्रथम दोनों का पृथक्–पृथक् साक्षात्कार करके उनके व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणों को अध्ययन करके दोनों की रुचियों, योग्यता, नमनीयता, वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने की क्षमता, मनोवेगों पर नियंत्रण रखने के कौशल आदि का पता लगाना चाहिए।

पुनः साक्षात्कार के लिए बुलाने पर दोनों से दाम्पत्य जीवन में कटुता के रूप तथा कटुता के सम्भावित कारकों का पता लगाना चाहिए। कटुता के कारणों का विश्लेषण करने के बाद निर्वचन द्वारा किसी निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास करना चाहिए।

परामर्श की अन्तिम अवस्था में दोनों को कटुता के कारण बताकर समस्या के समाधान के लिए प्रेरित करना चाहिए।

यदि दोनों में से किसी को मनोचिकित्साक के पास भेजना आवश्यक हो तो मनोचिकित्सक से सम्पर्क करने का परामर्श देना चाहिए।

अन्त में अनुगमन करके परामर्शदाता को उनके मध्य कटुता में हुए परिवर्तन का पता करके अपने परामर्श कार्य का मूल्यांकन करना चाहिए।

19.5.3 वृत्तिक परामर्श

मानव अपने तथा अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए जीविकोपार्जन करता है। जीविकोपार्जन हेतु वह किसी व्यवसाय में प्रवेश करता है। एक व्यवसाय में अनेक कृत्य होते हैं। व्यक्ति उनमें से किसी एक कृत्य में कार्य करता है। हो सकता है, उसने उस कृत्य में विशेष प्रशिक्षण प्राप्त किया हो। वैसे भी प्रत्येक कृत्य के लिए विशेष दक्षता या कौशल की आवश्यकता होती है। यह कृत्य ही, जो उसके जीविकोपार्जन

का साधन है, वृत्तिक कहलाता है। **ऑक्सफोर्ड शब्दकोश** के अनुसार, किसी कार्य के विशिष्ट क्षेत्र में कृत्यों की शृंखला वृत्ति कहलाती है, जिसमें समय के साथ उत्तरदायित्वों के भार में वृद्धि कर दी है कि अनेक माता–पिता उनसे परिचित ही नहीं हैं। आज किसी भी वृत्ति में प्रवेश के लिए शैक्षणिक योग्यता, प्रशिक्षण और व्यक्तित्व सम्बन्धी गुणों का निर्धारण किया जाता है। अतः किसी वृत्ति में प्रवेश का निर्णय लेने के बाद स्थानान्तरण के लिए आवश्यक तैयारी की आवश्यकता होती है। वृत्तिक के चयन करने, प्रवेश हेतु तैयारी करने और उसमें प्रगति करने में सहायता प्रदान करता है। निर्देश द्वारा प्रदत्त सहायता का लक्ष्य है कि व्यक्ति वृत्ति में प्रवेश के बाद सामायोजन करके अपनी शक्ति तथा उपयोगिताओं का प्रभावी उपयोग करते हुए सामाजिक एवं आर्थिक विकास में योगदान कर सके। निम्नलिखित बिन्दु वृत्तिक परामर्श की आवश्यकता को प्रकट करते हैं–

1– वृत्तिक परामर्श व्यक्ति एवं नियोक्ता दोनों के लिए आर्थिक दृष्टि से उपयोगी है। गलत तथा अरुचिकर वृत्ति में प्रवेश कने पर युवक की कार्यकुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इससे उत्पादन पर गुणात्मक तथा मात्रात्मक रूप में प्रभाव पड़ने से नियोक्ता को आर्थिक हानि होती है।

2– तकनीकी एवं वैज्ञानिक प्रगति के कारण नये व्यवसायों और उनमें नवीन कृत्यों का जन्म हो रहा है। इनकी जानकारी न होने पर गलत वृत्ति के चयन का बुरा प्रभाव उसको जीवन भर भुगतना पड़ सकता है।

3– गलत वृत्ति के चयन से व्यक्ति के व्यक्तित्व का ह्रास होता है। उसका जीवन निराशा तथ असन्तोष में बीतता है।

4– मानवीय शक्तियों का सही उपयोग करने के लिए भी वृत्ति परामर्श आवश्यक है।

वृत्तिक निर्देश की प्रक्रिया–

वृत्तिक निर्देशन की प्रक्रिया लम्बी चलती है। इसमें उपबोधक और उपबोध्य दोनों अनेक बिन्दुओं पर विचार करते हैं। अतः कह सकते हैं कि इस प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपानों का अनुपालन होता है–

प्रथम सोपान में उपबोधक उपबोध्य को उसकी विशेषताओं से परिचित होने में सहायता करता है इसमें उसको उसकी मानसिक एवं शारीरिक विशेषताओं, जैसे –रुचि, बौद्धिक लब्धि, अभियोग्यता अभिरुचि आदि सभी का ज्ञान करावाया जाता है।

द्वितीय सोपान में उपबोध्य को विभिन्न वृत्तियों का परिचय करवाया जाता है। परामर्शदाता परिचय करवाने की दृष्टि से वृत्ति से सम्बन्धित सूचनाएँ, जैसे–महत्व, कार्य का स्वरूप, कार्य की दशाएँ वांछित योग्यता, वेतन, उन्नति के अवसर, वांछित अनुभव, व्यवसाय का संगठन उपबोध्य को उपलब्ध करवाता है।

तृतीय सोपान में उन शंकाओं का समाधान किया जाता है जो उपबोध्य के मस्तिष्क में पैदा हो सकती हैं।

चतुर्थ सोपान में उपबोधक उपबोध्य की किसी निर्णय तक पहुँचने में सहायता करता है।

पंचम सोपान में निर्णय के आधार पर कार्य–योजना बनाने में उपबोधक परामर्श प्रदान करता है।

19.5.4 मदिरा तथा मादक पदार्थों का सेवन करने वालों का पमरामर्श

मदिरा तथा मादक पदार्थों का सेवन करने वाले व्यक्तियों की संख्या में निरन्तर हो रही वृद्धि, शिक्षाविदों और सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के लिए चिन्ता का विषय है। इससे भी अधिक गम्भीर स्थिति यह है कि विद्यालय और कॉलेज स्तर पर अध्ययन करने वाले छात्रों में मादक पदार्थों के सेवन की प्रवृत्ति तीव्र गति से बढ़ रही है। इस व्यसन के कारण अनेक लोग व्यक्तिगत रूप में अपना जीवन नष्ट कर परिवारों को भी नष्ट कर रहे हैं। पदार्थों के सेवन अथवा मदिरा के प्रयोग की

आदत किशोरावस्था में प्रारम्भ होती है। प्रायः माता–पिता अपने पुत्र को कितना भी बड़ा हो जाये, उसको बालक ही समझकर व्यवहार करते हैं। उनका ध्यान इस पर नहीं जाता है कि किशोरावस्था मे प्रवेश करते ही उसमें अनेक मनोसामाजिक परिवर्तन आ जाते हैं। यहाँ किशोरावास्था की कुछ विशेषताओं का उल्लेख करना आवश्यक है–

1– किशोरवास्था में शारीरिक परिवर्तन के साथ–साथ विविध मानसिक योग्यताएँ विकसित होती हैं। चिन्तन, तर्क और निर्णय–शक्ति बढ़ती है।

2– किशोर कल्पना–लोक में अधिक विचरण करते हैं।

3– संवेगात्मक पक्ष के विकसित होने से सुखात्मक मनोवेग उसे कार्य करने की प्रेरणा देते हैं, लेकिन दुःखात्मक संवेग खिन्नता और निराशा का संचार करते हैं।

4– किशोर पहले शिक्षा फिर व्यवसाय में अपनी सफलता के लिए चिन्तिन होते हैं।

5– किशोर में समूह में रहने की भावना बलवती होती है। वे मित्रों को अधिक चाहते हैं। समूह उनकी बोलचाल, वस्त्रों के प्रकार और नैतिक मूल्यों पर अधिक प्रभाव डालते हैं।

स्पष्ट है कि जिन परिवारों में किशोरों की उपरोक्त विशेषताओं की उपेक्षा होती है उनके बालक अतिशीघ्र पथभ्रष्ट होते हैं।

मदिरा तथा मादक पदार्थों के सेवन करने के कारण–

नशीले पदार्थों का सेवन एक प्रकार का व्यसन है, जिसको छोड़ना कठिन होता है। लेकिन इन पदार्थों का सेवन करने के लोग आदी क्यों हो जाते हैं? इसके कारणों पर विचार करना आवश्यक है–

1– **माता–पिता की उपेक्षा**–प्रायः आज पति–पत्नी दोनों अर्थोपार्जन में संलग्न रहते हैं। प्रातः 8 बजे से सायंकाल तक कार्यालय में रहते हैं। इस परिस्थिति में बच्चे अपने माता–पिता के सान्निध्य

एवं स्नेह से वंचित रहते हैं। विद्यालय या कॉलेज से आने पर उनको अपना समय अकेले व्यतीत करना पड़ता है।

2– **किशारोवस्था में माँगों की पूर्ति न होना**–किशोरावस्था में युवक की अनेक आकांक्षाओं में वृद्धि होती है, जैसे–मोबाइल, मोटरसाइकिल, अच्छे बस्त्र आदि की मांग होने लगती है। इनकी पूर्ति न होने पर उसमें कुण्ठा पैदा होती है, जिसके कारण वह मादक पदार्थों की ओर आकर्षित होता है।

3– **समूह में मित्रों का प्रभाव**–संगति का प्रभाव किशोर पर अधिक पड़ता है। मादक पदार्थों का सेवन करने वाले मित्रों के प्रभाव में आकर भी इनका प्रयोग प्रायः किशोर प्रारम्भ कर देत हैं।

4– **मनोवेगों पर नियंत्रण का अभाव**–किशोरावस्था में मनोवेगजनिक व्यवहार अधिक प्रबल हो जाता है। दुःख पैदा करने वाले मनोवेग कभी–कभी किशोर को मादक पदार्थों के लिए बाध्य करते हैं।

5– **शैक्षिक उपलब्धि में कमी**–उच्च शैक्षिक उपलब्धि के अभाव में भी किशोर निराश होकर मादक पदार्थों का प्रयोग करने को प्रेरित होते हैं।

6– **व्यवसाय में नियुक्ति न मिलना या गलत व्यवसाय में प्रवेश**–दोनों अवस्थाएँ हताशा पैदा कर व्यक्ति को नशीले पदार्थों के सेवन के लिये बाध्य करती हैं।

7– **असफल दाम्पत्य जीवन या प्रेम में असफलता**–दोनों स्थितियों में राहत पाने के उद्देश्य से मादक पदार्थों का सेवन व्यक्ति द्वारा किया जाता है।

मादक पदार्थों के आदी व्यक्तियों के लिए परामर्श प्रक्रिया–

मादक पदार्थों के आदी व्यक्तियों का परामर्श एक कठिन कार्य है। यह कार्य एक कुशल और अनुभवी परामर्शदाता ही कर सकता है।

इनकी परामर्श प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण करना चाहिए–

प्रथम सोपान में ऐसे व्यक्ति के साथ साक्षात्कार में उपबोध्य को उसकी क्षमताओं, योग्यताओं और मानसिक गुणों से परिचित कराकर उसे अपने बारे में सोचने के लिए बाध्य करना चाहिएं। उसके जीवनवृत्त के बारे में परामर्शदाता को पूर्व में ही सभी तथ्य संग्रहित करके उनमें से उसकी अच्छी उपलब्धियों के दृष्टान्त प्रस्तुत करने चाहिए।

द्वितीय सोपान के साक्षात्कार में उपबोध्य के मादक पदार्थों के आदी होने के कारणों का पता लगाने का प्रयास करना चाहिए। कारणों की जानकारी के लिए उपबोधक को उपबोध्य के परिवारीजनों, मित्रों तथा उसके शिक्षकों से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

तृतीय सोपान में कारणों का विश्लेषण करके निर्वचन करना चाहिए।

चतुर्थ सोपान में निष्कर्ष निकालने तथा मादक पदार्थों के उपयोग को बन्द करने की योजना बनाने में उपबोध्य की सहायता करनी चाहिए।

पंचम सोपान में उपबोधक यह समझता है कि मादक पदार्थों के सेवन का उपबोध्य पर गहरा प्रभाव है, तो ऐसे व्यक्ति को चिकित्सक के पास भेजना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. नैदानिक परामर्श का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. मनोचिकित्सकीय परामर्श का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

19.6 सार–संक्षेप

प्रयोजनों, क्षेत्रों एवं लक्ष्यों की भिन्नता के आधार पर परामर्श के विभिन्न प्रारूपों का विकास हुआ है।

एच.बी. पेपिंस्की ने नैदानिक परामर्श को परामर्श का एक प्रारूप माना है नैदानिक परामर्श का सम्बन्ध व्यक्ति के सामान्य कार्य–व्यापार सम्बन्धी अपसमायोजनों से है। इसमें उपबोध्य तथा परामर्शदाता का

अमाने–सामने का सम्बन्ध विद्यमान रहता है। **आर0 डब्ल्यू0 व्हाइट** ने मनोवैज्ञानिक परामर्श को चिकित्सा का एक प्रारूप माना है इस प्रारूप में परामर्श को चिकित्सा का एक रूप माना जाता है। किन्तु इसमें उपबोध्य तथा चिकित्सक के वार्तालाप का महत्व अधिक होता है।

परामर्श का सम्बन्ध चिकित्सा से जुडने के पश्चात् जाने पर मनोवैज्ञानिकों ने मनोचिकित्सात्मक परामर्श का विकास किय। इन मनोवैज्ञानिकों में **स्नाइडर** का नाम प्रमुख है। स्नाइडर के अनुसार, 'मनोचिकित्सा वह प्रत्यक्ष सम्बन्ध है जिसमें मनोवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति या व्यक्तियों के सामाजिक अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिए शाब्दिक माध्यम से सचेत रूप से प्रयत्न करता रहता है और जिसमें विषयी सोपक्षतः अपने व्यक्तित्व के पुनर्संगटन से अवगत रहता है, जिसमें से वह गुजर रहा है।' रूथ स्ट्रैंग ने परामर्श एवं मनोचिकित्सा में काफी समानता स्वीकार की है।

परामर्श का नैदानिक दृष्टिकोण व्यक्ति की संघटित सम्पूर्णता मानता है। मनोवैज्ञानिक परामर्श का उद्देश्य 'उपबोध्य के भावी विकास प्रक्रमों में अवरोध उत्पन्न करने वाली बाधाओं को समझना तथा व्यक्तित्व के विकास को गतिशील करने के लिए उन्हें दूर करना है।; (जे0 एम0 फॉस्टर) जहाँ तक मनोवैज्ञानिक एवं मनोचिकित्सात्मक परामर्शों के अन्तर का सम्बन्ध है, यह अन्तर परामर्शदाता एवं उपबोध्य के सम्बन्धों की प्रकृति एवं गहराई की सापेक्षता में है।

छात्र–परामर्श का सम्बन्ध छात्रों की समस्यओं से होता है। इसमें शिक्षा को व्यक्तिगत सम्पर्क के माध्यम से व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रयुक्त किया जाता है। नियोजन–परामर्श उपबोध्य की योग्यता, अभिरुचियों एवं दृष्टिकोणों के अनुरूप कृत्य के वरण में सहायता करता है। वैवाहिक परामर्श जीवन–साथी के चुनाव तथा विवाहित जीवन की समस्याओं को हल करने में सहायता करता है। आजकल तेजी से हो

रही पारिवारिक विघटन के फलस्वरूप वैवाहिक परामर्श की माँग निरन्तर बढ़ती जा रही है।

इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार, व्यावसायिक परामर्श का सम्बन्ध उन प्रक्रियाओं से होता है जो व्यक्ति के द्वारा किसी व्यवसाय के वरण एवं उसकी तैयारी की समस्याओं पर केन्द्रित होती है। साहित्य में अभी इस प्रारूप की पर्याप्त व्याख्या एवं विवरण उपलब्ध नहीं हैं।

रोजर्स तथा वैलेन के अनुसार परामर्शदाता को हर स्थिति में व्यक्ति में रुचि लेनी चाहिए, न कि केवल प्रारम्भिक समस्या में।

वस्तुतः स्वरूपगत आधार पर परामर्श के दो प्रमुख प्रारूप किये जा सकते हैं– निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक। निदेशात्मक परामर्श का महत्व अधिक होता है। यह समस्या केन्द्रित होता है। बिली तथा एण्ड्रयू के अनुसार परामर्श–व्यक्ति के प्रक्रम की बौद्धिकता तथा उपबोध्य की सीमाओं को दृष्टि में रखते हुए निदेशात्मक परामर्श उचित है।

अनिदेशात्मक परामर्श व्यक्ति–केन्द्रित होता है। कार्ल रोजर्स इस प्रारूप के प्रमुख व्याख्याता हैं। रोजर्स ने अनिदेशात्मक परामर्श की तीन विशेषताऐं मानी हैं– उपबोध्य–केन्द्रित सम्बन्ध, भावना एवं आवेग को महत्व तथा उचित वातावरण। स्नाइडर ने अनिदेशात्मक परामर्श के चार प्रमुख अभिग्रह स्वीकार किये हैं, जो उपबोध्य की समायोजन एवं सनिर्णय शक्ति पर विकास करने पर बल देते हैं। स्नाइडर के अनुसार भावात्मक संघर्ष वास्तविक समायोजन की प्रमुख बाधा है। निष्कर्षतः अनिदेशात्मक परामर्श के चार आधारभूत सिद्धान्त बताये जा सकते हैं– उपबोध्य की सत्यनिष्ठा का आधार, उपबोध्य के समग्र व्यक्तित्व का ध्यान, उपबोध्य के विचारों की भिन्नता के प्रति सहिष्णुता एवं स्वीकृति का भाव और उपबोध्य को स्वयं को तथा अपनी शक्ति को समझने में समर्थ बनाना।

निदेशात्मक और अनिदेशात्मक परामर्श का अन्तर सिद्धान्तों तथा प्रविधियों के अन्तर पर आधारित है। वस्तुतः दोनों में कोई लक्ष्यगत

भिन्नता नहीं है। अनिदेशीय परामर्श व्यक्ति की शक्ति एवं क्षमता में विश्वास करता है। जबकि निदेशाीय परामर्श मानता है कि व्यक्ति की अपनी सीमाएं होती हैं। अनिदेशात्मक परामर्श में व्यक्ति के आवेगात्मक पहलू को अत्यधिक महत्व दिया जाता है, जबकि निदेशीय परामर्श बौद्धिक पहलू का स्थान महत्वपूर्ण है। अनिदेशात्मक परामर्श व्यक्ति केन्द्रित है तथा निपदेशात्मक परामर्श विश्लेषण–प्रधान।

संग्रही परामर्श मध्यवर्गीय है। इसमें निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक दोनों प्रारूपों की अच्छी विशेषताओं को सम्मिलित किया जाता है। परामर्श के इस प्रारूप का निश्चित स्वरूप अभी स्थिर नहीं हो पाया है और विकास के क्रम में चल रहा है।

परामर्श के कुछ विशिष्ट क्षेत्र में जिनमें पहला व्यक्तिगत परामर्श का है। व्यक्तिगत परामर्श में पारस्परिक सम्बन्ध बनाये रखना, मनोवगों पर नियंत्रण, सामाजिक सामंजस्य, स्वास्थ्य के प्रति सचेत, परिवार के सदस्यों के साथ मधुर सम्बन्ध बनाये रखने सम्बन्धी कार्य होते हैं। इसमें चार सोपानों में परामर्शीय कार्य पूरे होते हैं।

वैवाहिक जीवन में भी परामर्श आवश्यक है। अनेक कारणों से वैवाहिक जीवन में कटुता पैदा हो जाती है, जिसके कारण सम्बन्ध–विच्छेद या आत्महत्या की स्थिति पैदा हो जाती है। परामर्श, कटुता के कारणों को ज्ञात करके उनको उचित परामर्श द्वारा पुनः सुखद वैवाहिक जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा देता है।

वृत्तिक क्षेत्र में विविधता के उचित वृत्ति में प्रवेश के लिए दी जाने वाली सहायता वृत्तिक परामर्श कहलाती है। मदिरा और मादक पदार्थों के सेवन की प्रवृत्ति किशोरों में अधिक फैल रही है। मादक पदार्थों के सेवन के कारणों को ज्ञात कर किशोरों को इस आदत से मुक्त कराने में परामर्श सहायक हो सकता है।

19.7 पारिभाषिक शब्दावली

नैदानिक परामर्श—नैदानिक शब्द व्यक्ति को उसकी आद्वितीय सम्पूर्णता में अध्ययन करने की विधि की ओर संकेत करता है। इसके द्वारा व्यवहारों का निरीक्षण किया जा सकता है तथा विशिष्ट गुणों को निष्कर्ष के रूप में ग्रहण किया जा सकता है।

मनोवैज्ञानिक परामर्श—इसमें परामर्श दाता एक चिकित्सक की भाँति हो सकता है और परामर्श चिकित्सा का एक रूप होता है। सामान्य वार्तालाप के द्वारा परामर्श दाता सेवार्थी को उसकी दमित भावनाओं एवं सम्वेगों को व्यक्त करने में सहायता करता है।

मनोचिकित्सकीय परामर्श—मनोचिकित्सा वह प्रत्यक्ष सम्बन्ध है, जिसमें मनोवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के सामाजिक अपसमायोजन वाले भावात्मक दृष्टिकोणों के परिष्कार के लिये शाब्दिक माध्यम से सचेत रूप में प्रयत्न करता रहता है और इसमें विषयी सापेक्षतः अपने व्यक्तित्व के पुनर्संगठन से अवगत रहता है जिसमें से वह गुजर रहा है।

अभ्यास प्रश्न—

लघु,

1— नैदानिक परामर्श से आप क्या समझते हैं?

2— मनोवैज्ञानिक परामर्श के बारे में लिखिये।

3— मनोचिकित्सिकीय परामर्श पर टिप्पणी कीजिए।

4— छात्र परामर्श को समझाइये।

5— नियोजन परामर्श के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

6— वैवाहिक परामर्श से आप क्या समझतें हैं?

7— व्यवसायिक परामर्श पर प्रकाश डालिए।

8— वृत्तिक परामर्श के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत,

1— परामर्श के प्रकारों की विवेचना कीजिए।

2– निदेशात्मक तथा अनिदेशात्मक परामर्श पर एक निबन्ध लिखिए।

3– परामर्श के विशिष्ट क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए।

19.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज, 41–50

2– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15, पेज, 264–280

3– पेपिन्सकी, एच. बी., दी सलेक्शन एण्ड यूज़ ऑफ डाइग्नोस्टिक कैटेगरिज़ इन क्लीनिकल काउन्सलिंग, पोलो आल्टो, स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, वर्ष 1948, पेज, 3

4– इन्गलिश एण्ड इन्गलिश, ए कम्प्रीहेन्सीव डिक्शनरी ऑफ साइकोलॉजिकल एण्ड साइकोएनालिटिकल टर्म्स, वर्ष 1958, पेज, 90

5– व्हाइट, आर. डब्ल्यू., दी एबनार्मल पर्सनालिटि, न्यूयार्क, रोनाल्ड प्रेस, वर्ष 1948, पेज, 320

6– ब्रेफील्ड, ए. एच., रीडिन्गस इन मॉडर्न मैथड्स ऑफ काउन्सलिंग, न्यूयार्क, एप्लेटन सेन्चूरी क्राफ्ट्स, वर्ष 1950, पेज, 25

टिप्पणी

खण्ड–चतुर्थ– समाज कार्य एवं परामर्श

इकाई –20, परामर्श के उपागम

20.0 इकाई का उद्देश्य

20.1 परिचय

20.2 परामर्श के उपागम

20.2.1 परामर्श के प्रभाववर्ती उपागम या अस्तित्ववादी उपागम

20.2.2 व्यवहारवादी उपागम या वास्तविक उपचार उपागम

20.2.3 बोधात्मक उपागम या तार्किक सांवेगिक उपचार पद्धति या कार्य सम्पादन विश्लेषण

20.2.4 व्यवस्थावादी विभिन्न दर्शनाग्राही प्रारूप उपागम

20.3 सार–संक्षेप

20.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

20.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

20.0 इकाई का उद्देश्य–

समाज कार्य के विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में परामर्श के उपागमों के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में उपागम, परामर्श को एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं। प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य परामर्श के विभिन्न उपागमों से आप लोगों को अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– परामर्श के उपागमों की चर्चा कर सकेगें।

2– परामर्श के प्रभाववर्ती उपागम को जान सकेगें।

3– परामर्श के व्यवहारवादी उपागम के बारे में लिख सकगें।

4– परामर्श के बोधात्मक उपागम के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

5– परामर्श के व्यवस्थावादी विभिन्न दर्शनग्राही प्रारूप उपागमों पर प्रकाश डाल सकेगें।

20.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई, परामर्श के उपागमों पर प्रकाश डालती है। इस इकाई में आप लोग परामर्श के उपागमों के बारे में जानकारी प्राप्त करेगें। वास्तव में उपागमों की व्याख्या प्रायः किन्हीं दृष्टिगोचर व्यापार या घटनाओं के अन्तर्निहित नियमों या दिखायी देने वाले सम्बन्धों के प्रतिपादनों के रूप में की जाती है, जिनका एक निश्चित सीमा के अन्दर परीक्षण सम्भव हो। अतः परामर्श के उपागमों के बारे में आपको जानकारी होना आवश्यक है, क्योंकि समाज कार्य व्यवसाय में इनकी महत्वपूर्ण उपायोगिता होती है। इस इकाई में उपागमों पर चर्चा करते हुए प्रभाववर्ती उपागम के बारे में बताया गया है कि, यह उपागम मूलतः अस्तित्व मानवतावादी दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है। इसमें परामर्श प्राप्त करने वाले व्यक्ति को प्रभावपूर्ण ढंग से समझने पर विशेष बल दिया जाता है। व्यवहार वादी उपागम की व्याख्या करते हुए लिखा गया है कि, इसके अन्तर्गत उपबोध्य कैसा अनुभव करता है। वहीं दूसरी तरफ यह उपागम उपबोध्य के अवलोकनीय व्यवहारों पर बल देता है। व्यवहारवादी परामर्शदाता समस्याग्रस्त व्यक्ति के लक्षणों पर अधिक ध्यान देते हैं।

इसी इकाई में बोधात्मक उपागम पर चर्चा प्रस्तुत करते हुए लिखा गया है कि, इसमें यह स्वीकार किया जाता है कि संज्ञान या बोध व्यक्ति के संवेगों व व्यवहारों के सबसे प्रबल निर्धारिक हैं। व्यक्ति जो सोचता है उसी के अनुसार अनुभव व व्यवहार करता है। इकाई के अंत में व्यवस्थावादी उपागम पर प्रकाश डाला गया है, जिसमें बताया गया है कि इसमें परामर्श के विभिन्न चरणों में संयोजित होना चाहिए। चरणों के अनुरूप इसमें परामर्श की विभिन्न अवस्थायें स्वीकार की गयी हैं। सभी अवस्थायें एक दूसरे से जुड़ी व अन्तः क्रियाशील मानी जाती हैं।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग उपागमों को समझकर परामर्श देते समय इनका उपयोग कर, समस्याग्रस्त व्यक्तियों की सहायता कर सकेगें।

20.2 परामर्श के उपागम

कार्ल रोजर्स के अनुसार – परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

कार्ल रोजर्स के ये विचार परामर्श के आधारों की ओर संकेत करते हैं, जिनका सम्बन्ध सिद्धान्तों से है।

सिद्धान्तों की व्याख्या प्रायः किन्ही दृष्टिगोचर व्यापार या घटनाओं के अन्तर्निहित नियमों अथवा दिखायी देने वाले सम्बन्धों के प्रतिपादनों के रूप में की जाती है, जिनका एक निश्चित सीमा के अन्दर परीक्षण सम्भव है। परामर्श के क्षेत्र में सैद्धान्तिक ज्ञान का विशद भण्डार है। परामर्शकर्ता के लिये इन सैद्धान्तिक आधारों का परिचय आवश्यक है। अध्ययन की सुविधा हेतु, दृष्टिकोणों के आधार पर इन्हें चार मुख्य वर्गों में रखा जा सकता है।

1– प्रभाववर्ती उपागम 2– व्यवहारवादी उपागम

3– बोधात्मक उपागम 4– व्यवस्थावादी प्रारूप उपागम

20.2.1 परामर्श के प्रभाववर्ती उपागम या अस्तित्व वादी उपागम

यह उपागम मूलतः अस्तित्ववाद–मानववादी दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है। इसमें उपबोध्य या परामर्शित किये जाने वाले व्यक्ति को प्रभावपूर्ण ढंग से समझने पर विशेष बल दिया जाता है। इसके अन्तर्गत परामर्शदाता व्यक्ति से व्यक्ति के साक्षात्कार का वातावरण निर्मित करता है। उपबोध्य को एक व्यक्ति के रूप में समझने पर, उसके बारे में जानने की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है। इस प्रकार उपागम के अन्तर्गत परामर्शदाता बाह्य वस्तुनिष्ठ परीक्षण की परिधि

लॉघकर, उपबोध्य के आन्तरिक वैषयिक संसार में प्रवेश का प्रयत्न करता है। **केम्प** (1971), **रोजर्स** (1975) **बारूथ** तथा **हूबर** (1985) जैसे विद्वान इस उपागम के प्रमुख समर्थक हैं। उनका मत है कि, मानवीय अन्तःक्रिया ही प्रभाववर्ती परामर्शदाता के लिये, ध्यान का केन्द्र है। मानवतावादी मनोविज्ञान की **शोफर** (1978) की प्रमुख मान्यताएं ही इस उपागम आधार हैं। जिन्हें संक्षेप में निम्न रूप से व्यक्त किया जा सकता है–

1– **अनुभव की विलक्षणता**– वैयक्तिक अनुभव की विलक्षणता तथा वैषयिक वास्तविकता अधिक महत्वपूर्ण है।

2– **समग्रता**– व्यक्ति को समग्र रूप से उसके वर्तमान अनुभवों के सन्दर्भों में ही जाना जा सकता है।

3– **सीमाबद्धता**– यद्यपि जैविकीय तथा पर्यावरणजनित कारक किन्हीं विशिष्ट रूपों में व्यक्ति को सीमाबद्ध कर सकते हैं फिर भी व्यक्ति को विकसित होने व अस्तित्व निर्माण की क्षमताएँ असीमित रहती हैं। जनतन्त्रीय वातावरण में विशेष तौर पर ऐसा होता है।

4– **व्यक्तित्व की अवधारणा**– चेतन तत्वों, प्रेरकों या आवश्यकताओं के रूप में न तो व्यक्ति की धारणा को सीमित किया जा सकता है और न ही इनके आधार पर उसे पूर्णतया समझना सम्भव है।

5– **आत्म परिभाषा**– मनुष्यता को किसी पदार्थ या तत्व के रूप सदैव के लिये एक–सा परिभाषित नहीं किया जा सकता है। मनुष्यता तो सदैव ही आत्म–परिभाषण की प्रक्रिया में संलग्न रहती है।

मानवतावादी मनोविज्ञान की मान्यताओं के समन्वय से जो अस्तित्ववादी परामर्श की धारणा प्रकट होती है, उसमें विभिन्न विचारकों ने भिन्न–भिन्न तथ्यों को केन्द्रीय तत्व स्वीकार किया है। **इवी** तथा **सिमेक डाउनिंग** (1989) के मतानुसार– हम जगत में है तथा हमारा कार्य इसका अर्थ समझना है। हम अपने को जगत् के साथ अपने

सम्बन्धों के आधार पर जानते हैं, विशिष्ट रूप में, लोगों के साथ अपने सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में। इस जगत के निर्माण हेतु हम स्वयं उत्तरदायी हैं। अतः परामर्शदाता का कार्य उपबोध्य के इस जगत् को समझना है। इसे समझने में समग्रता उपचार या गेस्टाल्ट थेरपी की धारण विशेष रूप में सहायक है जो कि अवगत कराती है कि व्यक्ति अनेक अन्तर्सम्बन्धित भागों से निर्मित एक संगठित अवयव है। शरीर, संवेग, विचार, संवेदनाएँ तथा प्रत्यक्षीकरण–इनमें से किसी भी भाग को समग्र व्यक्ति के सन्दर्भ के बाहर नहीं जाना जा सकता है।

इस विषय में **पर्ल** (1967) के द्वारा प्रस्तुत वर्तमान का प्रत्यय विशेष महत्व रखता है। पर्ल के अनुसार वर्तमान ऐसा भविष्य है, जो कि अभी आया नहीं है। अतः केवल वर्तमान महत्वपूर्ण है। **पर्ल** ने चिन्ता की विवेचना भी वर्तमान तथा कालान्तर के मध्य अन्तर के रूप में की है। दूसरे शब्दों, में उनके अनुसार व्यक्ति जो वर्तमान से दूर रहते हैं तथा भविष्य के बारे में जुड़े रहते हैं वे ही चिन्ता का अनुभव करते हैं। गेस्टाल्ट थैरपी या समग्र उपचार पर आधारित परामर्श में, व्यक्ति की उसी वर्तमान व भविष्य की चेतना को विश्लेषण का आधार बनाया जाता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि प्रभाववर्ती उपागम के अन्तर्गत संकलित सिद्धान्तों की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं– प्रथम, उनकी अस्तित्ववादी धारणा, द्वितीय, व्यक्ति केन्द्रित स्वरूपः तृतीय, समग्रतावादी दृष्टिकोण।

20.2.2 व्यवहारवादी उपागम या वास्तविक उपचार उपागम

प्रभाववर्ती सिद्धान्तों में जहाँ एक ओर बल इस बात पर दिया जाता है कि उपबोध्य कैसा अनुभव करता है, वहीं दूसरी ओर व्यवहारवादी उपागम उपबोध्य के अवलोकनीय व्यवहारों पर बल देते हैं। दूसरे शब्दों में, व्यवहारवादी उपबोध्य के अनुभवों की अपेक्षा उसके व्यवहारों को जानने व समझने में अधिक रुचि रखते हैं। व्यवहारवादी परामर्शदाता के लिये, भावनाओं या जागरूकता के स्तरों की अन्तृर्दष्टि

पर्याप्त नहीं है। वह परिवर्तन के लिये क्रिया या व्यवहार को शब्दों की अपेक्षा अधिक सार्थक स्वीकार करता है। व्यवहारवादी समस्याग्रस्त व्यक्ति के लक्षणों पर अधिक ध्यान देते हैं। ये समस्याएँ अधिकांशतः उपाबोध्य द्वारा अपने व्यवहार करने के ढंग पर अधिक ध्यान देते हैं। ये समस्याएँ अधिकाशतः उपबोध्य द्वारा अपने व्यवहार करने के ढंग या व्यवहार करने में असफल होने से सम्बन्धित होती हैं। इस प्रकार, व्यवहारवादी परामर्शदाता मुख्यतः क्रिया पर बल देते हैं।

व्यवहारवादी परामर्शदाता जगत् दृष्टि को कोरी स्लेट की भॉति मानते हैं। उनके अनुसार व्यक्ति अपने वातावारण के साथ प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप व्यवहारों को जन्म देता है। व्यक्तित्व का निर्माण सीखे गये इन्हीं सकारात्मक तथा नकारात्मक आदतों के प्रतिरूपों के आधार पर होता है। इस प्रकार, व्यवहारवादी परामर्श में, व्यक्ति द्वारा आत्म–निर्देशन या आत्म–वास्तवीकरण करने को कोई महत्व नहीं दिया जाताा है, उसे बहुत कुछ आनुवंशिकता, पर्यावरण तथा अधिगम की प्रक्रिया तथा प्रभावों का उत्पादन स्वीकार किया जाता है। बहुत कुछ उसके विकसित होने का आधार उसके द्वारा क्षमताओं के अर्जन को माना जाता है। अतः इसमें वास्तविकता उपचार या रियल्टी थरेपी का जोर है, जो कि उपबोध्य को उसकी वास्तविकता को समझने पर अपने वर्तमान व्यवहार के बारे में निर्णय करने को प्रोत्साहन देती है।

व्यवहारवादी सिद्धान्त की मान्यता है कि वे व्यक्ति जब उत्तरदायी रूप से व्यवहार करने में समर्थ नहीं हो पाते हैं तो वे चिन्तित रहते हैं और बहुधा अनुपयुक्त व्यवहार करते हैं। उत्तरदायित्वविहीन रूप से व्यवहार करने के कारण व्यक्तियों में आत्म पराजय का भाव जाग्रत होता है। व्यवहारवादी परामर्शदाता, उपबोध्य को उत्तरदायी रूप से व्यवहार करने के नये तरीके जानने तथा सफल होने के आत्मबोध को जाग्रत करने में सहायता करते हैं। **ग्लेसर तथा जूनिन** (1979) के

अनुसार, वास्तविकता उचार पद्धति पर आधारित इस परामर्श को समझने की दृष्टि से, निम्नलिखित मान्यताओं का ज्ञान होना आवश्यक है–

1– **दूसरों को जानना**–प्रत्येक व्यक्ति में, दूसरे व्यक्तियों को अनुभव करने, स्नेह पाने व करने तथा अपना व दूसरे का महत्व समझने की मूलभूत मनोवैज्ञानिक आवश्यकता होती है।

2– **सफलता–असफलता का बोध**– व्यक्तियों में दूसरों से अपने को अलग अनुभव करने की भी आवश्यकता होती है। अन्य शब्दों में, यह सफल या असफल होने का आत्मबोध है।

3– **उत्तरदायी व्यवहार**– परामर्श का लक्ष्य उत्तरदायी व्यवहार है। परामर्शदाता, व्यक्ति को अपनी आवश्यकता पूर्ति का ऐसा मार्ग ढूँढ़ने में सहायता करता है, जिससे कि वह दूसरों की आवश्यकता पूर्ति में अवरोध बने बिना, अपनी आवश्यकता उत्तरदायी रूप से पूर्ण कर सके।

4– **अनुत्तरदायी व्यवहार का कारण**– अनुत्तरदायी या गैर–जिम्मेदार पूर्ण व्यवहार तब उत्पन्न होता है, जबकि या तो व्यक्ति ने उत्तरदायी रूप से अपनी आवश्यकता पूर्ति के बारे में सीखा नहीं होता है अथवा वे उत्तरदायी रूप से आवश्यकता पूर्ति की क्षमता खो चुके होते हैं।

5– **समकालीन व्यवहार पर ध्यान**–चूँकि कोई भी विगत व्यवहार या भूतकाल को परिवर्तित नहीं कर सकता, अतः ध्यान समकालीन वर्तमान व्यवहार पर दिया जाता चाहिए।

6– **व्यवहार परिवर्तन**–चूँकि व्यक्ति भावनाओं, संवेगों अथवा अभिवृत्तियों की अपेक्षा व्यवहार को अधिक आसानी से नियन्त्रित कर सकते हैं। अतः परामर्श का मुख्य उद्देश्य व्यवहार–परिवर्तन ही होना चाहिए।

7– **उत्तरदायी ढंग से जुड़ाव**–चूँकि केन्द्र बिन्दु वर्तमान तथा अन्तर्वैयक्तिक प्रक्रिया परामर्श का लक्ष्य होती है, इसलिए

परामर्शदाता का उपबोध्य के साथ व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी ढंग से जुड़ना चाहिए।

8– **विकल्प उत्पन्न हेतु सहायता**– परामर्शदाता का मूल कार्य, उपबोध्य को परिवर्तन हेतु अनेक विकल्प उत्पन्न करते हेतु सहायता प्रदान करना है।

9– **सम्बद्धता**– प्रत्येक व्यक्ति सफल, उत्तरदायी तथा लोगों से सम्बद्ध होना चाहता है। यह वृद्धि बल सभी व्यक्तियों में पाया जाता है।

10– **व्यवहार क्षमता**– विशिष्ट अधिगम क्रियाओं के माध्यम से व्यक्ति में उत्तरदायी रूप में व्यवहार करने की क्षमताएँ निर्मित की जा सकती हैं।

इस प्रकार, व्यवहारवादी सिद्धान्त परामर्श में मुख्य बल वर्तमान पर देते हैं अर्थात् अभी व्यक्ति क्या कर रहा है तथा उसके सफल होने के प्रयासों की दिशा क्या है? व्यक्ति में अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने की योजना बनाने की क्षमता जाग्रत कर उसको उत्तरदायी व्यवहार चुनने में समर्थ बनाया जा सकता है।

20.2.3 बोधात्मक उपागम या कार्य सम्पादन विश्लेषण

प्रथम शताब्दी के दार्शनिक **इपिक्टेटस** का विश्वास था कि 'लोग वस्तुओं से परेशान नहीं होते हैं वरन् उनकी परेशानी का मूल कारण उनका वह अभिमत होता है जो वे उस वस्तु के विषय में रखते हैं।' परामर्श उपागम जो कि व्यक्ति के बोधात्मक उन्मेष पर केन्द्रित है इस प्रकार की जगत्–दृष्टि पर बल देते हैं। इनकी मूल धारणा 'अधिगमित भ्रमों' अथवा दोषपूर्ण विश्वासों पर आधारित है। परामर्श, मनोचिकित्सा की एक विधि के रूप में इन्हीं दूषित विश्वासों या भ्रमपूर्ण विचारों को संशोधित या निर्मूल करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

प्रभाववर्ती तथा व्यवहारवादी सिद्धान्तों से पृथक बोधात्मक सिद्धान्तों में यह स्वीकार किया जाता है कि संज्ञान या बोध व्यक्ति के

संवेगों व व्यवहारों के सबसे प्रबल निर्धारक हैं। व्यक्ति जो सोचता है उसी के अनुसार अनुभव व व्यवहार करता है। घटनाएँ या लोग किसी व्यक्ति के जीवन में उसे अनुभव करने या किसी निश्चित रूप में व्यवहार करने हेतु वस्तुतः बाध्य नहीं करते; व्यक्ति को तो स्वयं ही अपने संवेगों व व्यवहारों को बोधात्मक स्तर पर उद्वेलित करना चाहिये। अतः इस उपागम के समर्थकों का मानना है कि बाह्य घटनाएँ या कारक, प्रत्यक्ष रूप से सांवेगिक या व्यवहारजन्य प्रतिक्रियाओं की जनक या कारण नहीं होती हैं। **बारूथ तथा हूबर** (1985) ने तो विशिष्ट रूप से प्रतिपादित किया है कि व्यक्ति की आन्तरिक घटनाएँ या व्यापार सांवेगिक अथवा व्यवहारजन्य प्रतिक्रियाओं के अधिक प्रबल व प्रत्यक्ष स्त्रोत होते हैं। पूर्वोक्त धारणाओं पर आधारित, परामर्श के क्षेत्र में प्रयुक्त होने वाले सिद्धान्तों में मुख्य गणना **इलिस** के तार्किक–सांवेगिक चिकित्सा पद्धति, **माल्ट्स्बी**, के तार्किक–व्यवहार चिकित्सा पद्धति, **बेक** की बोधात्मक चिकित्सा पद्धति तथा **बारूथ व हूबर** के कार्य सम्पादन विश्लेषण आदि की है।

रेट का तार्किक–सांवेगिक चिकित्सा पद्धति एक प्रचलित व लोकप्रिय बोधात्मक उपागम है, जिसका उपयोग परामर्श के क्षेत्र में काफी समय से किया जाता रहा है। इसकी दो मुख्य मान्यताएँ हैं, प्रथम–बोध या संज्ञान मानव व्यवहार एवं संवेगों के सर्वाधिक प्रवल निर्धारक हैं। द्वितीय–अकार्यात्मक चिन्तन से ही अकार्यात्मक सांवेगिक दशा तथा व्यवहार प्रतिरूप उत्पन्न होते हैं, जिनकी विशेषताएँ अति सामान्यीकरण, अति सरलीकरण, बढ़ा–चढ़ाकर देखना, अतर्क या कुतर्कपूर्ण विश्लेषण या अवधारणाएँ होती हैं। इस प्रकार के चिन्तन का परिणाम, **इलिस** ने 'अतर्कपूर्ण विश्वास' माना है। यहाँ परामर्श का मुख्य लक्ष्य व्यक्ति को इन्हीं अतार्किक विश्वासों के परीक्षण में सहायता करना व उसमें तर्क पूर्ण ढंग से चिन्तन करने की योग्यता का विकास स्वीकार किया गया है।

बोधात्मक सिद्धान्तों की एक 'अन्य लोकप्रिय एवं प्रचलित विधा कार्य–सम्पादन विश्लेषण सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें व्यवहार की समझ इस मान्यता पर निर्भर करती है कि सभी व्यक्ति अपने पर विश्वास करना सीख सकते हैं, अपने लिये चिन्तन या विचार कर सकते हैं। अपने निर्णय ले सकते हैं तथा अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति करने में समर्थ हैं। इसके सिद्धान्तों का प्रयोग व्यवसाय, घर, स्कूल, पड़ोस सभी क्षेत्रों में सम्भव है, जहाँ भी लोगों का सम्पर्क लोगों से होता है। **टी0ए0** ने लोगों के मूल स्वभाव, उनके विकास तथा प्रकार्यों को समझने के लिये चार केन्द्र बिन्दु स्वीकार किये–जिन्हें क्रमशः संरचनात्क विश्लेषण, कार्य सम्पादन विश्लेषण, लेख विश्लेषण तथा क्रीड़ा विश्लेषण के चरणों में जाना जाता है ।

संरचनात्मक विश्लेषण व्यक्तित्व की तीन अहं दशाओं पर आधारित होता है। अभिभावकीय अहं में बाह्य स्त्रोतों से अर्जित अभिवृत्तियाँ तथा व्यवहार होते हैं। 'वयस्क अंह' में तार्किक प्रकार्यों तथा वस्तुनिष्ठ सूचनाओं का संकलन होता है, 'जबकि बाल' अंह में मुख्य आवेग समाविष्ट रहते हैं। व्यक्ति के पारस्परिक प्रकार्यों की विवेचना में अहं दशाओं का उपयोग चिन्तन अथवा अनुभव के क्षेत्र में करते हैं तो वे अभिभावकीय अंह की दशा में होते हैं। इसके विपरीत जब वे वर्तमान की वास्तविकताओं से निपट रहे होते हैं या सूचना एकत्र कर निष्पक्ष निर्णय लेने की प्रक्रिया में संलग्न होते हैं। वे वयस्क अहं की दशा में विद्यमान रहते हैं। लेकिन जब व्यक्ति व्यवहार अनुभव व चिन्तन में अपनी बाल्यावस्था की पुनरावृत्ति करता है तो वह बाल अहं दशा में विचरण करने लगता है। कार्य सम्पादन विश्लेषण का उपयोग व्यक्तियों की पारस्परिक अन्तः क्रियाओं के परीक्षण हेतु किया गया है और अन्तः क्रियाओं को तीन मूल वर्गों सहयोगी कटावूपर्ण तथा परवर्ती में विभाजित कर विभिन्न कार्य सम्पादनों का विश्लेषण एवं अध्ययन किया जाता है। लेख विश्लेषण में व्यक्ति की जीवन योजना को समझने का

प्रयास किया जाता है तथा क्रीड़ाएँ भी जीवनलेख के अंशों के रूप में आयोजित की जाती हैं। इस उपागम की सामान्य परिकल्पनाओं को **हेरिस** ने निम्न चार रूपों में दर्शाया है–

1– **मैं ठीक हूँ आप भी ठीक है**– यह एक स्वस्थ मानसिक दशा है।

2– **मैं ठीक हूँ आप ठीक नहीं हैं**– यह उस व्यक्ति की मनोस्थिति है, जो कि दूसरे को अपने दुखों काा कारण स्वीकार करता है।

3– **मैं ठीक नहीं हूँ आप ठीक हैं**– यह लोगों की सामान्य मनोस्थिति है, जबकि वे अन्यों की तुलना में अपने को शक्तिहीन अनुभव करते हैं।

4– **मैं ठीक नहीं आप भी ठीक नहीं है**– यह जीवन में निराशावादी दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति की मनोदशा है।

परामर्शदाता, इसके अन्तर्गत उपबोध्य को, उसकी नष्ट अहं दशा के पुनर्निर्माण हेतु प्रेरित करता है, समयानुकूल अहं दशा के उपयोग की प्रणाली अपनाने में सहायता करता है। तथा उसे जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने व विकसित करने की क्षमता दृढ़ करने का सम्बल देता है।

20.2.4 व्यवस्थावादी विभिन्न दर्शनाग्राही प्रारूप उपागम

वर्ष 1977 से परामर्शदाताओं में एक नई परम्परा अपने को विभिन्न दर्शनग्राही घोषित करने की आरम्भ हुई। **गेरफील्ड** तथा **कुर्ट्ज** के अनुसार ऐसे परामर्शदाताओं का प्रतिशत लगभग 65 था जो कि मुख्यतः नैदानिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत थे। सामान्यतः विभिन्न दर्शनग्राही परामर्शदाता यह मानते हैं कि कोई भी सिद्धान्त इतना विकसित नहीं है कि सभी उपबोध्यों के लिए समान रूप से उपयोगी या लाभकारक हो। इसलिए ये परामर्शदाता अभियोग्यताओं, सम्प्रत्ययों, सुझाओं, रणनीतियों इत्यादि का एक ऐसा वृहद परिप्रेक्ष्य निर्मित करना चाहते हैं जो कि उपबोध्यों की समस्या को तार्किक ढंग से समझने में सहायक सिद्ध हो सके। इस प्रकार के कुछ प्रारूप या मॉडल वर्तमान में प्रचलन में भी आ गया है, जिनमें **रॉबर्ट कार्खफ्स** का

मानव संसाधन विकास मॉडल (1969) **ब्लोचर** का विकास मॉडल (1974), **इवी** तथा **सिमेक डाउनिंग** का उद्देश्यपूर्ण परामर्श मॉडल (1980) तथा **गजदा** के बहुप्रभावी प्रशिक्षण एवं जीवन कुशलता प्रशिक्षणा मॉडल (1984) प्रमुख हैं।

व्यवस्थावादी उपागम की प्रमुख विशेषता परामर्श का विभिन्न चरणों में संयोजित होना है। चरणों के अनुरूप इस उपागम में परामर्श की विभिन्न अवस्थाएँ स्वीकार की गयी हैं। सभी अवस्थाएँ एक–दूसरे से जुड़ी व अन्तः क्रियाशील मानी जाती हैं। यही व्यवस्था–प्रारूप मूलतः उपागम का आधार है व परामर्श की एक विशिष्ट प्रविधि का जनक है। संक्षेप में, इन अवस्थाओं को इस प्रकार से जाना जा सकता है–

1–प्रथम अवस्था – समस्या अन्वेषण

2–द्वितीय अवस्था – द्विआयामी समस्या परिभाषा

3–तृतीय अवस्था – विकल्पों का अभिज्ञान करना

4– चतुर्थ अवस्था– आयोजना

5–पंचम अवस्था – क्रिया– प्रतिबद्धता

6–षष्ठ अवस्था – मूल्यांकन एवं फीडबैक

इस उपागम की प्रमुख मान्यता यह है कि व्यक्ति जीवन में एकीकरण के उत्तम स्तर की प्राप्ति हेतु सदैव संलग्न रहता है। इसलिए परामर्श की व्यवस्था व्यावहारिक होनी चाहिए जो कि एकीकरण की एक ऐसी व्यवस्था की कल्पना में सक्षम हो जिसके द्वारा समकालीन जगत् तथा उद्विकसित होने वाले व्यक्ति, दोनों के ही विषय में इस लाभदायी अभिमत का निर्माण हो सके।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श के प्रभाववर्ती उपागम या अस्तित्व वादी उपागम का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. व्यवहारवादी उपागम या वास्तविक उपचार उपागम पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

20.3 सार–संक्षेप

परामर्श के पूर्व वर्णित विभिन्न उपागमों के अपने–अपने भिन्न–भिन्न लक्ष्य तथ उद्देश्य हैं, जो कि उनकी अपनी मानव स्वभाव की धारणा के विश्लेषण पर आधारित हैं। फिर भी ये सभी उपागम, परामर्श

के क्षेत्र में सकारात्मक पारस्परिक सम्बन्धों को सामान्यतः आधार मानते हैं। अस्तित्ववादी उपागम में जहाँ उपबोध्य के साथ व्यक्तिगत एवं अन्तरंग सम्बन्ध स्थापना पर बल दिया गया है, वहीं व्यवहारवदी उपागम, शिक्षण विधियों के उपायोग में उपबोध्य को समर्थ बनाकर व्यवहार या क्रिया के वस्तुस्थितिवादी या वास्तविक योजना के अनुरूप उत्तरदायी व्यवहार करने को सार्थक मानते हैं। बोधात्मक उपागम, उपबोध्य की समझ या संज्ञान के विस्तार को ही उसकी सस्याओं के हल हेतु कारक स्वीकार करता है तथा व्यवस्थावादी विभिन्न सिद्धान्तों के एकीकृत प्रारूप को परामर्श का सर्वप्रयुक्त माध्यम बताते हैं। उपागम के परिप्रेक्ष्य जो कुछ भी हो, परामर्श की सफलता मूलतः उसके लक्ष्यों के साथ उसकी प्रक्रियओं के जुड़ने पर निर्भर है। अतः उपागमों को परिचय व परामर्श के सैद्धानितक आधारों की विवेचना, इसक ऐतिहासिक क्रम में विकास व वर्तमान स्थिति से परिचित होने की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग उपागमों को समझकर परामर्श देते समय इनका उपयोग कर, समस्याग्रस्त व्यक्तियों की सहायता कर सकेगें।

20.4 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श – परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

अस्तित्ववादी उपागम – यह उपागम मूलतः अस्तित्ववाद–मानववादी दर्शन परम्परा से उत्पन्न हुआ है। इसके अन्तर्गत परामर्शदाता व्यक्ति से व्यक्ति के साक्षात्कार का वातावरण निर्मित करता है। उपबोध्य को एक व्यक्ति के रूप में समझने पर, उसके बारे में जानने की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाता है। इस प्रकार उपागम के अन्तर्गत

परामर्शदाता बाह्य वस्तुनिष्ठ परीक्षण की परिधि लॉघकर, उपबोध्य के आन्तरिक वैषयिक संसार में प्रवेश का प्रयत्न करता है।

व्यवहारवादी उपागम – व्यवहारवादी उपबोध्य के अनुभवों की अपेक्षा उसके व्यवहारों को जानने व समझने में अधिक रुचि रखते हैं। व्यवहारवादी परामर्शदाता के लिये, भावनाओं या जागरूकता के स्तरों की अन्तृर्दष्टि पर्याप्त नहीं है। वह परिवर्तन के लिये क्रिया या व्यवहार को शब्दों की अपेक्षा अधिक सार्थक स्वीकार करता है। व्यवहारवादी समस्याग्रस्त व्यक्ति के लक्षणों पर अधिक ध्यान देते हैं।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– परामर्श के प्रभाववर्ती उपागम पर प्रकाश डालिए।

3– परामर्श के व्यवहारवादी उपागम के बारे में लिखिए।

4– परामर्श के बोधात्मक उपागम पर टिप्पडी कीजिए।

5– परामर्श के व्यवस्थावादी विभिन्न दर्शनग्राही प्रारूप उपागमों पर प्रकाश डालिए।

विस्तृत

1– परामर्श के उपागमों की चर्चा कीजिए।

2– परामर्श के किन्ही तीन उपागमों के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

20.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज, 19–40

2– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15, पेज, 216–222

टिप्पणी

खण्ड–चतुर्थ – समाज कार्य एवं परामर्श

इकाई–21, समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका

21.0 इकाई का उद्देश्य

21.1 परिचय

21.2 समाज कार्य परामर्श की अवधारणा

21.3 समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका

21.4 सार–संक्षेप

21.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

21.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

21.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य आप लोगों को समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका से अवगत कराना है। वस्तुतः प्रस्तुत इकाई की संरचना इसलिए की गई है जिससे आप लोग समाज कार्य परामर्श मे समाज कार्य की भूमिका से अवगत हो सके।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– समाज कार्य परामर्श की अवधारणा को समझ सकेगें।

2– समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका का विवेचन कर सकेंगे।

3– समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य कार्यकर्ता की भूमिका के बारे में जान सकेंगे।

20.1 परिचय

प्रिय छात्रों, प्रस्तुत इकाई 'समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका' से आप लोग समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका के बारे जान सकेगें। वास्तव में परामर्श कदाचित संस्कृति के प्रारम्भ से ही अनौपचारिक रूप से ही अस्तित्व में हैं। औपचारिक रूप से

परामर्श हेतु प्रोत्साहन मनोवैज्ञानिक सिगमण्ड फ्रायड के व्यक्तित्व के मनोविश्लेषणात्मक व्याख्या पर किए गए कार्य से प्राप्त हुआ। बीसवीं शताब्दी के शुरू में फ्रैंक पारसन्स ने विद्यालीय निर्देशन पर अपना कार्य केन्द्रित किया। उन्हें निर्देशन कार्यक्रम के पिता के नाम से भी जाना जाता है। व्यावसायिक परामर्श पर आपका कार्य निर्देशन आन्दोलन के इतिहास में एक मील का पत्थर है।

परामर्श शब्द का प्रयोग सामान्य रूप में किया जाता है और वे लोग जिन्हें परामर्श का कोई ज्ञान नहीं है, स्वयं को परामर्शदाता होने का दावा करते हैं। एक व्यावसायिक परामर्शदाता को आवश्यक रूप से परामर्श का अर्थ और कौशल का ज्ञान होना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि उसे परामर्श की मिथ्याधारणाओं और वास्तविक अर्थों का ज्ञान हो।

परामर्श वह माध्यम है जिसके द्वारा सार्थक संचार की सहायता से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की सहायता करता है। वास्तव में परामर्श हल उन्मुख वार्तालाप की श्रृंखला से निर्मित होता है। परामर्श दो व्यक्तियों द्वारा खोज की ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य समस्याओं को पहचानना और उनका हल प्राप्त करना है।

समाज कार्य परामर्श में परामर्श वास्तव में एक उपचारात्मक पद्धति है। जब समाज कार्यकर्ता किसी व्यक्ति समूह या समुदाय की समस्या का अध्ययन करता है तथा समस्या के उपयुक्त कारणों का पता लगा लेता है। उसे समाज कार्य प्रविधि में निदान के नाम से जाना जाता है। समाज कार्यकर्ता जब निदान पर पहुंचता है तब वह सेवार्थी (व्यक्ति, समूह या समुदाय) को उपचार की प्रक्रिया में परामर्श प्रदान करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 'समाज कार्य परामर्श वह प्रक्रिया है जो एक संयुक्त प्रयास है। परामर्श प्रक्रिया का सार ऐसा सम्बन्ध है जिसमें परामर्श प्राप्त करने वाला व्यक्ति स्वयं को व्यक्त करने में स्वतंत्र अनुभव करता है तथा अपने लक्ष्यों का स्पष्टीकरण प्राप्त

करता है और उन्हें प्राप्त करने में तथा कठिनाइयों को हल करने के माध्यम और विधियों में आत्मविश्वास रखता है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई क माध्यम से आप लोग समाजकार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका के बारे में जान सकेंगे।

21.2 समाज कार्य परामर्श की अवधारणा–

व्यक्ति एवं समाज एक दूसरे पर आश्रित है। जहाँ समाज ने व्यक्ति को मानवीय अस्तित्व प्रदान किया है, वहीं समाज द्वारा निर्धनता, बेकारी जैसी विभिन्न प्रकार की समस्यायें भी उत्पन्न की गयी हैं, इन समस्याओं के समाधान हेतु आदिकाल से ही प्रयास किये जाते रहे हैं। इन्हीं प्रयासों की श्रृंखला में समाज कार्य एक महत्वपूर्ण कड़ी है। समाज कार्य प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया एवं सामाजिक अनुकूलन के मार्ग में आने वाली सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से समाधान प्रस्तुत करता है। वास्तव में समाज कार्य ज्ञान एवं निपुणताओं के मिश्रण से युक्त व्यावसायिक सेवा का एक स्वरूप है जिसके कुछ अंश समाज कार्य के विशिष्ट अंश है और कुछ नहीं, जो एक ओर व्यक्ति के सामाजिक परिवेश में उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि करने में सहायता करने तथा दूसरी ओर यथासम्भव उन कठिनायों जो इस सर्वेत्तम को जिसके लिए उनमें क्षमता है, प्राप्त करने से लोगों को रोकती है, को दूर करने का प्रयास करती है।

समाज कार्य वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओं एवं मानवता वादी दर्शन का प्रयोग करते हुए मनो–सामाजिक समस्याओं से ग्रस्त लोगों को वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक स्तर पर सहायता प्रदान करने की एक क्रिया है जो उनकी इन समस्याओं को पहचानने, उन पर ध्यान केन्द्रित करने, उनके कारणों को जानने तथा इनका स्वतः समाधान करने की क्षमता को विकसित करती है तथा सामाजिक व्यवस्था की गड़बड़ियों को दूर करती हुई इसमें वांछित परिवर्तन लाती है ताकि व्यक्ति की सामाजिक क्रिया प्रभावूपर्ण हो सके, उसका

समायोजन संतोषजनक हो सके और उसे सुख तथा शान्ति का अनुभव हो सके और सामाजिक व्यवस्था में पायी जाने वाली कुरीतियों एवं प्रगति को अवरुद्ध करने वाली संस्थागत संरचनाओं को उखाड़ फेंकते हुए सभी को सामाजिक एवं आर्थिक विकास के समीचीन अवसर प्रदान किये जा सके और सामाजिक संघर्षों को कम करते हुए एकीकरण को प्रोत्साहित किया जा सके।

समाज कार्य परामर्श वास्तव में कोई अलग विधा नहीं है बल्कि समाज कार्य के प्राथमिक प्रविधियों के आधार पर परामर्श प्रदान करता है। वास्तव में समाज कार्य परामर्श की प्रक्रिया के बारे में स्पष्ट रूप से कहा जाये तो अग्रलिखित बातें सामने आती हैं–

1– समाज कार्य परामर्श एक प्रक्रिया है जो क्रियाओं का एक निरन्तर कार्यक्रम होता है। जीवन को विभिन्न महत्वपूर्ण अवस्थाओं में कभी–कभी समायोजन करना कठिन हो जाता है तब व्यावसायिक सहायता की आवश्यकता पड़ती है। अतः यह एक सहायता है जो व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा सहायता माँगने वाले व्यक्ति को दी जाती है।

2– समाज कार्य परामर्श उस व्यक्ति को दिया जाता है जो यह स्वीकार करता है कि उसे समस्या है। यदि व्यक्ति को इसके लिए बाध्य किया जाता है तो वह सहायता स्वीकार नहीं करता है। समस्या का सामना करने के लिए स्व–अभिप्रेरणा अनिवार्य है।

3– समाज कार्य परामर्श एक सहायता है। अतः मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति को दी गयी सलाह नहीं है यह दूसरों को यह बताना नहीं है कि उन्हें क्या करना चाहिए। यह लोगों को सहायता देने की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे वे सामान्य जीवन–यापन करने के लिए अपनी समस्याओं को उत्तम रूप में समझ सकें और उनका सामना कर सकें।

4— समाज कार्य परामर्श दूसरों की समस्या को हल करना नहीं है वरन् अपनी समस्या सुलझाने में सहायता करना है उन्हें यह समझाना है कि उनकी सम्पत्ति और उत्तरदायित्व यह कर सकते है। परामर्शदाता केवल ऐसा पर्यावरण उत्पन्न करता है जिसमें व्यक्ति वस्तुओं को वस्तुगत रूप में देख सकता है और जीवन का सामना करता है।

5. समाज कार्य परामर्श दूसरों का बोझ ढ़ोना नहीं है वरन् उन्हें स्वयं अपनी समस्या का सामना करने में सहायता देना है। परामर्शदाता आपको अपने दबावों का सामना करने में सहायता देता है।

6— समाज कार्य परामर्श दूसरों के लिए निर्णय लेना नहीं है। यह उन लोगों को अपने निर्णयों पर पहुंचने में सहायता देना है।

7— सेवार्थी की अपने द्वारा लिए गए निर्णयों को लागू करने मे सहायता करना। जब तक निर्णय क्रियाओं में अनुवादित न हों तो वे व्यर्थ होते हैं।

8— परामर्शदाता को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है अतः परामर्शदाता को सहायता देने के लिए औपचारिक प्रशिक्षण लेना चाहिए। अतः समाज कार्य परामर्श के लक्ष्य हैं—

(अ) व्यवहार के परिवर्तन में सुविधा प्रदान करना।

(ब) परामर्शी को उसकी समस्याओं को हल करने में सहायता देना।

(स) जीवन की समस्याओं को हल करने लिए सेवार्थी की क्षमता और प्रभावकर्ता को बढ़ाना।

(द निर्णय लेने की प्रक्रिया को बढ़ावा देना।

(य) जीवन का सामना करने के लिए अपनी क्षमताओं को विकसित करने के लिए परामर्श को सुविधा प्रदान करना और अधिकार देना।

21.3 समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका–

भारतीय सन्दर्भ में समाज कार्य विषय के रूप में 1936 से पढ़ाया जाने लगा है, जिसकी शुरूआत टाटा इंस्ट्टीयूट ऑफ सोशल सांइन्सेज द्वारा हुई। देखा जाये तो समाज कार्य विषय इग्लैण्ड और अमेरिका जैसे देशों की देन है। हमारे देश में अभी समाज कार्य विषय को उतनी महत्ता प्राप्त नहीं हुई है, जितना अन्य विषयों को प्राप्त है। समाज कार्य की छ: पद्धतियां होती है जिसमें प्राथमिक तीन पद्धतियां ही समाज कार्य परामर्श में अपनी भूमिका निभाती है। समाज कार्य की इन पद्धतियों में वैयक्तिक समाज सेवा कार्य, सामूहिक सामज कार्य तथा सामुदायिक संगठन के माध्यम से समाज कार्य परामर्श प्रदान किया जाता है। समाज कार्य की अन्य तीन पद्धतियां जैसे– समाज कल्याण प्रशासन, समाज कार्य अनुसंधान एवं समाजिक क्रिया का सहयोग समाज कार्य परामर्श में लिया जाता है। देखा जाये तो समाज कार्य अपने आप में ऐसी प्रक्रिया है जो समस्याग्रस्त व्यक्तियों की इस प्रकार सहायता करता है जिससे समस्याग्रस्त व्यक्ति स्वयं उस समस्या से लड़ने हेतु सक्षम हो जाये। वास्तविकता रूप में समाज कार्य परामर्श का भी यही उद्देश्य है।

समाज कार्य परामर्श में उपरोक्त प्राथमिक तीन प्रविधियों का वर्णन किया गया है जिनका क्रमशः उल्लेख अग्रलिखित रूप में प्रस्तुत किया जाता है–

समाज कार्य में व्यक्तिगत परामर्श–

प्रारम्भिक दिनों में परामर्श आन्दोलन स्कूल या अन्य परिपार्श्व में व्यक्तिगत परामर्श को किसी भी परामर्श कार्यक्रम का हृदय माना जाता रहा है। परामर्शदाता की अन्य सभी व्यावसायिक क्रियाओं को इस प्रकार्य की ओर अग्रसर करने वाली अति महत्वपूर्ण क्रियाएँ समझा जाता हैं परिक्षण के परिणाम, जीवनवृत्त सम्बन्धी सूचनाऐं और आत्मकथाएँ सभी सापेक्षित रूप में व्यर्थ हैं, यदि वे परामर्श प्रक्रिया को प्रभावी रूप में आगे बढ़ाने का काम प्रदान नहीं करती।

परामर्श के सेवार्थियों के लिए परामर्श की अनेक परिभाषाएँ उपलब्ध हैं। इनमें अर्थों की दृष्टि से भिन्नता हो सकती है, पर अधिकांश परिभाषाएं इस सुझाव के साथ प्रारम्भ होती हैं कि व्यक्तिगत परामर्श एक–से–एक सम्बन्ध है जिसमें प्रशिक्षित परामर्शदाता सन्निहित होता है और परामर्शी के समायोजन, विकासात्मक या निर्णय लेने की आवश्यकताओं के कुछ पक्षों पर ध्यान केन्द्रित करता है। यह प्रक्रिया एक सम्बन्धात्मक और संचार का आधार प्रदान करता है जहाँ से परमर्शी समझ परिपार्श्व में परामर्शदाता की दक्षता है जो सकारात्मक परिणाम को सम्भव बनाता हैं; परामर्शदाता का कौशल और ज्ञान उपयुक्त फ्रेमवर्क और दिशा प्रदान करता है जो कि परामर्शी की सकारात्मक परिणाम के लिए सम्भावनाओं को सम्भव करता है। अप्रशिक्षित और कौशल विहिन सहायक, अपनी सर्वोत्तम भावनाओं के उपरान्त ही व्यावसायिक परामर्शदाता के प्रकार्य की पुनरावृत्ति नहीं कर सकता।

यद्यपि परामर्श को एक सहायक सम्बन्ध के रूप में देखा जाता है, जिसमें परामर्शदाता एक सहायक होता है, यह एक ऐसा सम्बन्ध है जिसमें परामर्शी पूर्णरूप से भागदीरी करने का, सहयोग करने का और इच्छुक होने का उत्तरदायित्व लेता है। केवल तभी परामर्श सम्बन्धों और प्रक्रिया के सम्भावित लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। परामर्श अपने लक्ष्य के रूप में निम्नांकित में से कोई या सभी को रख सकता है–

- सूचना प्रदान करना
- परामर्शी को समस्या समाधान में सहायता देना
- परिवर्तन प्रारम्भ करना
- परामर्शी को अभिप्रेरणा प्रदान करना
- समर्थता प्रदान करना
- परामर्शी को शिक्षित करना।

व्यक्तिगत परामर्श का पूर्ण लक्ष्य हर व्यक्ति को सर्वोत्तत बनाने में सहायता करना है।

समाज कार्य समूह परामर्श

समूह परामर्श एक टीम का प्रकटन नहीं है अथवा इसका लक्ष्य विजयी समूह होना नहीं हैं, वरन आवश्यकताओं को पूरा करने का, उन व्यक्तिगत सदस्यों को परामर्शजन्य मूल्यों का अनुभव कराना है जो समूह का निर्माण करते है।

जिनमें निम्नाकिंत प्रमुख हैं।

1– समाज कार्य में व्यक्ति समर्थक समूह के पुनर्बलन के साथ, उनके विकासात्मक और समायोजन की आवश्यकताओं, चिन्ताओं और समस्याओं की खोज सकता है। समूह वास्तविक सामाजिक परिपार्श्व प्रदान कर सकता है जिसमें परामर्शी अपने साथियों के साथ अन्तःक्रिया कर सकता है। वह न केवल समस्या और चिन्ता की कुछ समझदारी रख सकता है जो अपने साथ समूह में लाता है, वरन् बहुत–सी अवस्थाओं में समान या उन जैसी अन्य चिन्ताओं की साझेदारी भी कर सकता हैं। परामर्श समूह सुरक्षा की वह भावना प्रदान करता है, जिसकी सदस्यों को स्वतः स्फूर्त और मुक्त अन्तःक्रिया और जोखिम उठाने के लिए आवश्यक होती है। अतः इस तथ्य की सम्भावना बढ़ जाती है कि हर सदस्य स्वयं की आवश्यकताओं को अनुभव करे, और साथियों के साथ परामर्शजन्य संसाधनों का उपयोग करे। प्रत्येक सदस्य समस्याओं की अन्य लोगों से साझेदारी कर अधिक आरामदायक अनुभव कर सकते हैं। जिन्हें उसी तरह के अनुभव हैं वे इन आवस्थाओं में परिवर्तन के लिए अधिक अभिप्रेरित हो सकते हैं।

2– समाज कार्य परामर्श, परामर्शी को अपनी स्वयं की भावनाओं और व्यवहार में अधिक अन्तःदृष्टि प्राप्त करने के अवसर प्रदान करता है–यलम ने समूह का एक सामाजिक अणुविश्व के रूप में वर्णन करते समय कहा है। "A freely interactive group, with few structural

restrictions, will in time, develop into a social microcosm of the praticipant members." उन्होने यह भी इंगित किया कि समूह परिपार्श्व में काफी समय मिल जाने पर परामर्शी स्वयं को समझना प्रारम्भ करेगा, जिसमें अनुकूलन और अंतर्वैयक्तिक व्यवहार का प्रगटन भी सन्निहित है। यलम ने यह भी कहा है कि समूह में संवेगात्मक अनुभवों को सुधारने हेतु अनेक कारक हैं, जिनमें निम्नाकिंत प्रमुख हैं।

- तीव्र संवेगों की अभिव्यक्ति में समूह का काफी समर्थन प्राप्त होता है।
- इस जोखिम को उठाने में समूह का काफी समर्थन प्राप्त होता है।
- वास्तविक परीक्षण जो रोगी को अन्य सदस्यों की संप्रतिपत्ति प्रमापीकरण की सहायता से घटना का परीक्षण करने की अनुमति प्रदान करती है।
- कुछ अंतर्वैयक्तिक भावनाओं–व्यवहार की अनुपयुक्तता की पहचान या कुछ उपेक्षित अंतर्वैयक्तिक व्यवहार की अनुपयुक्तता की पहचान होती है।
- अन्ततः अन्य लोगों से अधिक गहनता और सत्यता के साथ अन्तः क्रिया करने की योग्यता प्राप्त होती है।

परामर्श समूह के सदस्यों से अन्तः क्रिया करने से परामर्शी को अपने व्यवहार और भावनाओं में नवीन अन्तःदृष्टि प्राप्त होती है तथा उनका आत्म–प्रत्यय निर्माण भी प्रभावित होता है। क्योंकि व्यक्ति के व्यक्तिगत सामाजिक समायोजन और स्कूल तथा व्यवसाय का निर्णय लेने के प्रत्यक्षीकरण में आत्म–प्रत्यय का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है, अतः समूह परामर्श अनुभव के द्वारा नई अन्तःदृष्टि के माध्यम से आत्म–प्रत्यय में सकारात्मक परिवर्तन बहुत मूल्यावन हो सकता है।

3– समूह परामर्श, परामर्शी को अन्य लोगों के साथ सकारात्मक, प्राकृतिक सम्बन्धों को विकसित करने का अवसर प्रदान करता है। समूह

परामर्श संरचना मे जो व्यक्तिगत अन्तःक्रिया होती है वह समूह के सदस्यों को अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों के साथ प्रयोग करने और उसका प्रबन्धन करने का एक सर्वोत्तम और सतत् अवसर प्रदान करता है। यह दूसरों की आवश्यकताओं और भावनओं के प्रति संवेदनाएँ विकसित करने में भी सहायक होती है। सदस्यों को यह सीखने का अवसर भी प्रदान करता है कि उनके व्यवहार का अन्य लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है या असर होता है। अतः समूह प्रक्रिया के मध्य उनकी अंतःक्रियाओं तथा साझेदारी के अनुभवों से परामर्शी अपने पहले के व्यवहार को परिवद्धित करना सीखता है और अन्तर्वैयक्तिक कौशल के लिए नवीन और उपयुक्त व्यवहार की तलाश करता है।

4– समूह परामर्श, परामर्श को अपने और अन्य के प्रति उत्तरदायित्व सीखने का अवसर प्रदान करता है एक परामर्श समूह का सदस्य बनने का अर्थ है उत्तरदायित्व लेना, यद्यपि प्रारम्भ में परामर्शी उत्तरदायित्व उठाने की उपेक्षा करता है, लेकिन जैसे–जैसे समूह सम्बन्ध विकसित होते जाते हैं और समूह लक्ष्य निर्धारित होते जाते हैं, उसकी उपेक्षित करने की प्रवृत्ति धीरे–धीरे लुप्त होती जाती है।

समूह नेतृत्व

विभिन्न परिपार्श्व और परिस्थितियों में भिन्न विशेषता वाले नेतृत्व की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु सामान्य रूप से निम्नांकित विशेषताएँ एक प्रभावी नेतृत्व में पाई जाती है–

- नेता सदैव सत्य, खुलेपन और नैतिक व्यवहार का आचरण करता है।
- नेता समूह के सभी सदस्यों के आगत को खुलेपन से स्वीकार करता है।
- नेता की प्राथमिक रुचि सभी समय व्यक्तिगत संवृद्धि और समूह के सभी सदस्यों की भलाई में होती हैं

- नेता आदर्श मूल्यों और व्यवहार को प्रस्तुत करता है जो समूह के सदस्यों का जीवनकाल बढ़ा देता है।

समूह परामर्श आन्दोलन के एक नेता ने समूह परामर्श के लिए निम्नांकित नेतृत्व तकनीक को इंगित किया–

1. समर्थन– समर्थन देना, प्रशंसा दर्शाना।
2. प्रतिबिम्ब – भावनाओं को प्रतिबिम्बित करना।
3. स्पष्टता – अर्थों को स्पष्ट करना, विचारों के परिणाम बताना।
4. प्रश्न करना– गहरी भावनाओं को ऊपर लाना और प्रति उत्तर आमन्त्रित करना।
5. सूचना– प्रदत्तों को परीक्षण के लिए अवसर प्रदान करना, रिसोर्स व्यक्ति का कर्तव्य निभाना।
6. व्याख्या– प्रदत्तों के महत्व की व्याख्या करना, सादृश्यता का प्रयोग करना।
7. सार– पहले परामर्शी का सार पूछना, विकास को इंगित करना।

विकल्प स्टोकटन ने चार क्षेत्र में समूह नेतृत्व के प्रशिक्षण का सिंहावलोकन किया।

(अ) नीतिपरक ज्ञान (समूह परामर्श के लिए सिद्धान्तों का ज्ञान)

(ब) व्यक्तिगत नैदानिक कौशल जैसे आंकलन, अवांछित व्यवहार की व्याख्या, आत्म प्रगटन के प्रयोग की योग्यता और अन्य मानक चिकित्सकीय यत्रों का ज्ञान

(स) समूह गत्यात्मकता का ज्ञान, और

(द) स्वयं के लिए स्वस्थ व्यक्तित्व उपलब्ध करना।

कोरे और कोरे ने प्रभावी नेताओं की निम्नाकिंत व्यक्तिगत विशेषताएं इंगित की हैं–

- साहस
- आदर्श रूप में प्रस्तुत करने की इच्छा

- उपस्थिति
- साख और परिचितक
- समूह प्रगति में विश्वास
- खुलापन
- अपनी संस्कृति से अभिज्ञता होना
- आक्रमण का सामना करने में सुरक्षात्मक न होना
- व्यक्तिगत अधिकार
- ऊर्जास्विता
- नए अनुभव प्राप्त करने की इच्छा
- आत्म–अभिाा
- हास्य का भाव
- खोजात्मकता
- व्यक्तिगत प्रतिबद्धता और लगन

सामुदायिक परामर्श

समाज कार्य परामर्श में सामुदायिक परामर्श, सामुदायिक संगठन प्रविधि के माध्यम से किया जाता है जिसमें किसी समुदाय की समस्याओं को समुदाय के लोगों द्वारा ही समाप्त करने की योजना बनायी जाती है। वास्तविकता यह है कि सामुदायिक परामर्श में समुदाय के लोगों का इस प्रकार परामर्श प्रदान किया जाता है, जिससे कि वे लोग अपनी समस्याओं को स्वयं समझे एवं समस्याओं से सम्बन्धित उन संसाधनों की खोज करे जिससे समस्याओं का निदान हो सके। सामुदायिक संगठन प्रविधि में समुदाय को एक इकाई माना जाता है तथा सभी लोगों की समस्याओं को एक समस्या मान कर समाधान उन्हीं के द्वारा कराने का प्रयास किया जाता हैं।

सामुदायिक संगठन परामर्श में सामुदायिक परामर्शदाता समुदाय के लोगों को इस प्रकार प्रशिक्षित एवं परामर्शित करता है जिससे कि वे लोग स्वयं समस्याओं को हल करने के लिए तत्पर हो जाये। इस प्रक्रिया में सामुदायिक परामर्शदाता सामुदायिक नेतृत्व की खोज करता है तथा समुदाय के नेतृत्व के लिए किसी एक व्यक्ति को चिन्हित करता है। सामुदायिक नेतृत्वकर्ता का उत्तरदायित्व है कि वह समुदाय के सभी लोगों को समस्या के प्रति जागरूक करें एवं उन्हें निदान हेतु प्रस्तुत करे।

इस प्रकार, हम कह सकते है कि सामुदायिक परामर्श में सामुदायिक परामर्शकर्ता परोक्ष रूप से समुदाय के सदस्यों की सहायता करता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समाज कार्य परामर्श की अवधारणा लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

21.4 सार–संक्षेप

परामर्श के अपने–अपने भिन्न–भिन्न लक्ष्य तथ उद्देश्य हैं, जो कि उनकी अपनी मानव स्वभाव की धारणा के विश्लेषण पर आधारित हैं। फिर भी परामर्श के क्षेत्र में सकारात्मक पारस्परिक सम्बन्धों को सामान्यतः आधार मानते हैं। उपबोध्य के साथ व्यक्तिगत एवं अन्तरंग सम्बन्ध स्थापना पर बल दिया जाता है। वहीं शिक्षण विधियों के उपयोग में उपबोध्य को समर्थ बनाकर व्यवहार या क्रिया के वस्तुस्थितिवादी या वास्तविक योजना के अनुरूप उत्तरदायी व्यवहार करने को सार्थक मानते हैं। उपबोध्य की समझ या संज्ञान के विस्तार को ही उसकी समस्याओं के हल हेतु कारक स्वीकार करता है तथा व्यवस्थावादी विभिन्न सिद्धान्तों के एकीकृत प्रारूप को परामर्श का सर्वप्रयुक्त माध्यम बताते हैं। परामर्श की सफलता मूलतः उसके लक्ष्यों के साथ उसकी प्रक्रियाओं के जुड़ने पर निर्भर है। परामर्श के सैद्धान्तिक आधारों की विवेचना, इसके ऐतिहासिक क्रम में विकास व वर्तमान स्थिति से परिचित होने की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत इकाई में समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका की वृहद चर्चा की गयी जिसमें वैयक्तिक परामर्श, सामुहिक परामर्श एवं सामुदायिक परामर्श प्रमुख है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आपके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग समाज कार्य परामर्श में समाजकार्य की भूमिका को समझकर परामर्श देते समय इनका उपयोग कर, समस्याग्रस्त व्यक्तियों की सहायता कर सकेगें।

21.5 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

वैयक्तिक समाज कार्य परामर्श– वैयक्तिक समाज कार्य परामर्श का तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसमें कोई भी समाज कार्यकर्ता किसी भी सेवार्थी की समस्या का निदान कर उसे जो सुझाव प्रदान करे वहीं वैयक्तिक समाज कार्य परामर्श है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– समाज कार्य परामर्श की अवधारण स्पष्ट कीजिए।

2– समाज कार्य परामर्श में वैयक्तिक परामर्श पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

3– समाज कार्य परामर्श में सामुहिक परामर्श के बारे में टिप्पणी लिखिये।

4. सामुदायिक परामर्श की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।

विस्तृत

1– समाज कार्य परामर्श में समाज कार्य की भूमिका पर एक निबन्ध लिखिए।

21.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज, 4–7, 52, 56, 61

2– सिंह, सुरेन्द्र एवं अन्य, समाज कार्य सिद्धान्त, दर्शन एवं प्रणालियां, न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, वर्ष 1998

टिप्पणी

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड

5
मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई 22
मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान 366

इकाई 23
मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता 388

इकाई 24
मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार 404

इकाई 25
परामर्श के पूर्व तैयारी 428

इकाई 26
परिवार एवं विवाह परामर्श 456

इकाई 27
समूह परामर्श 472

इकाई 28
सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के परामर्श 494

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे	:	कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
डॉ0 दिनेश सिंह	:	डॉ0 राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल	:	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड परिचय

पंचम खण्ड – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इस खण्ड को कुल सात इकाईयों में विभक्त किया गया है। इस खण्ड की पहली इकाई मनोवैज्ञानिक परिक्षण एवं उसके उपरान्त निदान पर आधारित है। दूसरी इकाई मनोवैज्ञानिक परीक्षण के अर्थ एवं उसकी आवश्यकता पर आधारित है। इस खण्ड की तीसरी इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विभिन्न प्रकारों पर आधारित है। इस खण्ड की चौथी इकाई में परामर्श के पूर्व तैयारियों पर चर्चा की गयी है। कि कार्यकर्ता को कौन–कौन सी तैयारी एवं सावधानी बरतनी चाहिये। इस खण्ड की पाँचवी इकाई में परिवार की विशेषताओं लाभ एवं विवाह परामर्श पर विस्तृत चर्चा की गयी है। इस खण्ड की छठवी इकाई समूह परामर्श पर आधारित है। इस खण्ड की अन्तिम इकाई में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के परामर्श पर विस्तृत चर्चा की गयी है।

खण्ड–पंचम – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई–22, मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान

22.0 इकाई का उद्देश्य

22.1 परिचय

22.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण

22.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विकास

22.4 निदान की अवधारणा एवं अर्थ

22.4.1 निदानात्मक प्रक्रिया

22.4.2 निदानात्मक मनोसामाजिक प्रत्यय

22.5 निदान के प्रकार

22.6 सार–संक्षेप

22.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

22.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

22.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान के बारे में आप लोगो को ज्ञान प्रदान करना है। वस्तुतः प्रस्तुत इकाई मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान पर प्रकाश डालती है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षण के बारे में जान सकेगे।

2– मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विकास के बारे लिख सकेंगे।

3– निदान अवधारणा को समझ सकेंगे।

4– निदान के अर्थ को जान सकेंगे।

5– निदानात्मक प्रक्रिया पर प्रकाश डाल सकेंगे।

6– निदान के प्रकारों से अवगत हो सकेंगे।

7– गतिशील निदान के बारे में जान सकेंगे।

8– क्लीनिकल निदान के बारे में लिख सकेंगे।

9– कारणात्मक निदान की व्याख्या कर सकेंगे।

22.1 परिचय

निर्देशन, मानव की कमियों का पता लगाकर उनके निदान करने की प्रक्रिया है। जिस प्रकार एक चिकित्सक रोगी के ब्लड प्रेशर, शुगर, रक्त आदि की विभिन्न प्रकार की जाँच कराकर, प्राप्त परिणामों के आधार पर निदान कर उपचार करता है, उसी प्रकार निर्देशन देने के लिये परामर्शदाता, व्यक्ति पर अनेक प्रकार के परीक्षण करता हैं और प्राप्त परिणामों के आधार पर उसके विकास के किये आवश्यक परामर्श देता है।

निर्देशन, व्यक्ति को बुद्धिमत्तापूर्ण चयन एवं समायोजन के लिये दी गयी एक प्रकार की सहायता। शिक्षाविद् इसे शिक्षा का एक अविभाज्य अंग के रूप में स्वीकार करते हैं तथा शैक्षिक कार्यों में इसे महत्वपूर्ण मानते हैं। निर्देश देने से पूर्व व्यक्ति की इन योग्यताओं तथ क्षमताओं के विषय में अनेक मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय परीक्षणों का पता लगाया जाता है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति से सम्बन्धित निम्न मूलभूत पक्षों का पता लगाने पर विशेष बल दिया जाता है–

1– व्यक्ति की योग्यताएँ, अभिरुचियाँ, रुचियाँ तथा अभिवृत्तियाँ

2– व्यक्ति की मानसिक प्रवृत्तियाँ

3– व्यक्ति की अकाक्षाएँ

4– व्यक्ति की अवसरों के उपयोग की क्षमता

5– व्यक्ति का विकास

6– व्यक्ति की निर्णय शक्ति का स्तर

7– व्यक्ति की क्षमताओं का विस्तार

8– व्यक्ति की आत्म सक्षमता की सीमा

शिक्षा के क्षेत्र में निर्देशन के उपरोक्त पक्षों को केन्द्रीय महत्व, निर्देशन के स्तरों एवं विभिन्न उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रदान किया जाता है। जहाँ तक निर्देश के इन विविध पक्षों के अन्वेषण एवं मूल्यांकन की बात है, परीक्षणों का उपयोग वह आधारभूत यान्त्रिकी है, जो निर्देशन की प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक आधार प्रदान करती है। निर्देशन के क्षेत्र में, परीक्षणों का उपयोग भी उसके स्तरों एवं उद्देश्यों के अनुसार निर्धारित होता है।

प्राथमिक स्तर पर जहाँ निर्देशन के अन्तर्गत किये गये अध्ययनों एवं पीरक्षणों के आधार पर शिक्षक, निर्देशन कार्यकर्ता, स्कूल, चिकित्सा सेवा के कर्मचारी एवं स्कूल समाज सेवक, बच्चों को आरम्भिक शिक्षा के लिये आवश्यक कौशल को भली–भाँति सीखने, उसके आधार भूत तत्वों को ज्ञात करने, विद्यालय के कार्य के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित करने एवं समाज के रीति–रिवाजों के अनुसार उनको ढालने के प्रयासों के साथ उनके शारीरिक विकास, संवेगात्मक स्थिरता एवं विद्यालय में समायोजन में सहायता पहुँचाने का यत्न करते हैं, वहीं माध्यमिक विद्यालयों, पाठक्रमोतर क्रियाकलाप, प्रगति के व्यक्तिगत आलेख, घर तथा विद्यालय में सामंजस्य इत्यादि विषय प्रमुख माने जाते हैं। अतः अन्वेषणों एवं परीक्षणों की प्रकृति न केवल मानसिक विकास के अनुसार बदलती है वरन् इनका स्वरूप भी परिवर्तित होता है तथा उद्देश्यों का विस्तार होता है ।

कॉलेज तथा विश्वविद्यालय के स्तर पर, निर्देशन की प्रक्रिया घर तथा विद्यालय के अतिरिक्त समाज से भी सम्बद्ध हो जाती है, जहाँ एक ओर इसके द्वारा विद्यार्थियों को संस्थागत रूप से सुसमायोजित करने अपेक्षित विकासात्मक एवं व्यवहारपरक प्रारूपों को आत्मसात् करने हेतु प्रेरित किया जाता है वहीं दूसरी ओर भूमिका निर्वाह पर भी बल दिया जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि निर्देश का स्वरूप, उद्देश्य, प्रक्रिया एवं प्रकृति विभिन्न शैक्षिक स्तरों के अनुसार निर्धारित एवं संचालित होती

है। परीक्षणों के उपयोग के समय यह तथ्य विशेष महत्व रखता है। क्योंकि यदि परीक्षण तथा पूर्वोक्त तथ्यों के मध्य संगतता न हो तो प्राप्त जानकारी या सूचना का पूरा–पूरा लाभ उठाना सम्भव न हो सकेगा।

आशा है कि आप लोग इस इकाई को पढ़ने के बाद मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

22.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण

प्राथमिक रूप से परीक्षणों का उद्‌भव एवं विकास, सामान्य बुद्धि, विशिष्ट अभिक्षमताओं, शैक्षिक उपलब्धि, व्यावसायिक उपयुक्तता तथा अबौद्धिक व्यक्तित्व गुणों के क्षेत्र में व्यक्तिगत विभेदों के निर्धारण एवं विश्लेषण के सन्दर्भ में हुआ है। कालान्तर में, परीक्षण कार्यक्रम इतने अधिक लोकप्रिय एवं वैज्ञानिक रूप से मान्य हुए कि एक व्यक्ति के अध्ययन की अपेक्षा, इन्हें विभिन्न सामूहिक मनोवैज्ञानिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक, समाजशास्त्रीय एवं व्यावसायिक अध्ययनों हेतु अधिक उपयोगी स्वीकार किया जाने लगा। सामान्य बुद्धि तथा विशिष्ट अभिरुचियों से सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विशेष रूप से उपयोग, पूर्व प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालयी स्तर तक शैक्षिक वर्गीकरण, चयन तथा नियोजन आदि क्षेत्रों में बढ़ा है। यही कारण है कि शिक्षा से अपनी घनिष्ठ सम्बद्धता के परिणामस्वरूप निर्देशन का क्षेत्र भी, परीक्षणों के उपयोग से अछूता न रह सका है और दिन–ब–दिन इसमें परीक्षणों के उपयोग की प्रवृत्ति बढ़ रही है। आधुनिक निर्देश प्रक्रिया बहुत कुछ परीक्षण मूलक हो चली हैं। योग्यताओं, अभिरुचियों, अभिवृत्तियो, रुचियों, क्षमताओं इत्यादि के मूल्यांकन हेतु निर्देशन–कार्यकर्ता आमतौर पर परीक्षणों पर निर्भर रहने लगे हैं।

इसके साथ ही एक अन्य प्रवृत्ति भी परीक्षण व निर्देशन के क्षेत्र में दृष्टिगोचर हो रही है जिसका सम्बन्ध निर्देशन के विभिन्न स्तरों के अनुरूप है। शैक्षिक उद्देश्यों के अनुसार, अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ

प्राप्त हुई हैं। जिसका सम्बंध उपयुक्त एवं संगत परीक्षणों एवं उनकी श्रृंखलाओं के विकास से हैं। केन्द्रीय शिक्षा संस्थान दिल्ली तथा राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् नई दिल्ली जैसी अनेक सस्थाओं ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत किया है तथा भारतीय माँगों के अनुरूप परीक्षण श्रृंखलाओं का विकास कर निर्देशन को व्यावहारिक एंव उपयेागी बनाया है

निर्देशन के क्षेत्र में परीक्षणों के उपयोग के विषय में सम्यक् परिचय हेतु जहाँ विभिन्न प्रकार के परीक्षण स्वरूपों की जानकारी आवश्यक है वहीं दूसरी ओर निर्देशनकर्ता को मापन के सामान्य सिद्धान्तों एवं नियमों का भी ज्ञान जरूरी है। इस जानकारी के अभाव में परामर्शदाता अपना कार्य सफलतापूर्वक नहीं कर सकता।

22.3 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विकास

परीक्षणों का विकास मूलतः मनोविज्ञान के क्षेत्र की देन हैं, सदियों से यह मान्यता प्रचलित रही है कि व्यक्तियों के मध्य बौद्धिक तथा अन्य मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर अन्तर पाया जाता है। इन अन्तरों या विभेदों के मापन व वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन का इतिहास लगभग एक सौ वर्षों का है। **फ्रान्सिस गाल्टन** प्रथम वैज्ञानिक थे, जिन्होंने व्यक्तिगत भेदों का व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक अध्ययन किया। तदुपरान्त मनोविज्ञान में प्रयोगात्मक पद्धति के जनक **वुण्ट** के अमेरिकी शिष्य **जेम्स मैकीन कैटेल** ने इस कार्य को आगे बढ़ाया। इस परम्परा में परीक्षणों के समावेश की दृष्टि से फ्रांसीसी वैज्ञानिकों का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

फ्रांस में 19वीं सदी के प्रथमार्द्ध में मानसिक योग्यताओं के क्षेत्र में, व्यक्तिगत विभेदों की भूमिका को लेकर **जीन इस्क्यूरियोल तथा एडोओर्ड सेग्यूइन** द्वारा महत्वपूर्ण अध्ययन किये गये। परीक्षण के जनक **अल्फ्रेड बिने** को **इन तथा गाल्टन** के अध्ययनों से महत्वपूर्ण सहायता प्राप्त हुई। 1904 में बिने के सम्मुख एक ऐसी व्यावहारिक

समस्या आयी जिसके कारण वह मानसिक योग्यताओं के क्षेत्र में, व्यक्तिगत विभेदों की भूमिका के अध्ययन के योगदान के परिणामस्वरूप जगत प्रसिद्ध हो गया। तत्कालीन फ्रांसीसी शिक्षा मन्त्री ने शैक्षणिक रूप से कमजोर एवं असन्तोषजप्रद प्रगति वाले बालकों की शिक्षा हेतु उपाय सुझाने हेतु एक आयोग की नियुक्ति की थी। इस प्रकार के बालकों के सहयोग से बिने ने 1905 में अपना प्रथम बुद्धि परीक्षण निर्मित किया जो कि **बिने–साइमन स्केल** नाम से प्रसिद्ध हुआ। 1908 तथा 1911 ई0 में बिने ने इस परीक्षण का परिवर्द्धन कर तत्कालीन सामयिक मांग के और अधिक अनुरूप बनाने का प्रयत्न किया।

बिने–साइमन परीक्षण की उपयोगिता से प्रभावित होकर इसे अमेरिका में भी राष्ट्रीय उपयोग हेतु परिवर्द्धित किया गया। ऐसा ही एक परिवर्द्धन गोडार्ड तथा कुहलमैन ने 1911 में प्रकाशित किया। 1916 में स्टेण्डफोर्ड विश्वविद्यालय में लुईस, एम. टर्मन ने बिने–साइमन परीक्षण को पुनः परवर्तित किया जो कि स्टेण्डफोर्ड–बिने परीक्षण कहलाया। 1937 में यह परीक्षण माउंड ई. मेरिल की सहायता से पुनः परिवर्द्धित एवं संशोधित किया गया तथा इसका अन्तिम संशोधित संस्करण 1960 में प्रकाशित हुआ।

प्रथम महायुद्ध की भी बुद्धि तथा मानसिक परीक्षणों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सेना में सैनिकों व अफसरों के चयन की समस्या के निराकरण हेतु 1917 में आर्मी अल्फा परीक्षण का निर्माण हुआ। इस परीक्षण की प्रमुख विशेषता उसका सामूहिक परीक्षण स्वरूप था। भाषा व निरक्षरता की समस्या के समाधान हेतु कालानतर में आर्मी बीटा परीक्षण का निर्माण हुआ। द्वितीय महायुद्ध काल में विभिन्न तकनीकी व्यवसायों हेतु योग्य व्यक्तियों के चयन तथा वर्गीकरण हेतु आर्मी जनरल क्लासीफिकेशन परीक्षण की रचना हुई। सेना के लिये उपरोक्त परीक्षणों के अतिरिक्त, शैक्षिक क्षेत्र में भी नवीन बुद्धि परीक्षणों

का विकास हुआ। परिणामस्वरूप कोह ब्लाक संयोजना परीक्षण पिन्टनर पैटर्सन निष्पादन परीक्षण आदि परीक्षणों का निर्माण हुआ।

सामान्य बुद्धि परीक्षणों के निर्माण के अतिरिक्त अन्य मानसिक योग्यताओं के मापन एवं मूल्यांकन की प्रवृत्ति भी वर्तमान शताब्दी के पूर्वार्द्ध में तीव्रता के साथ विकसित हुई और अभिरुचि तथा व्यक्तित्व के क्षेत्रों में नवीन परीक्षणों एवं प्रविधियों की रचना हुई।

अभिरुचि के क्षेत्र में सर्वप्रथम परीक्षण मोटर चालकों एवं टेलीफोन ऑपरेटरों के लिये में मुन्स्टेरबर्ग ने बनाया। इसके उपरान्त यान्त्रिक योग्यता, संगीत दक्षता इत्यादि अभिरुचि परीक्षणों का निर्माण हुआ जिनमें से स्टैन्क्विस्ट सामान्य यान्त्रिक योग्यता परीक्षण, सीशोर संगीत दक्षता परीक्षण आदि परीक्षणों को विशेष प्रसिद्धि मिली। आजकल विभिन्न व्यावसायिक तथा सामान्य अभिरुचियों के परीक्षण हेतु विभिन्न परीक्षण उपलब्ध हैं जिनका निर्देश के क्षेत्र में बहुतायत से उपयोग हो रहा है।

शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देश की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के कारण भी, व्यक्तित्व मापन में रुचि का विकास हुआ और इनेक परीक्षणों का निर्माण हुआ। 1912 में चरित्र गुणों के मापन हेतु फारनैल्ट ने परीक्षण बनाया। इसके उपरान्त 1924–29 के मध्य **हार्टशार्न तथा मे** ने चरित्र शिक्षा अन्वेषण नामक परीक्षण का प्रकाशन किया। व्यक्तित्व गुणों के मापन हेतु क्रमांक मान प्रश्नावली तथा अनुसूची एवं अन्य प्रविधियों का उपयोग इसके उपरान्त आरम्भ हुआ। 1880 मे स्टैनले हाल ने व्यक्तित्व परीक्षण में प्रश्नावली विधि का उपयोग कर महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत किया। सैनिक व्यक्तित्व के मूल्यांकन हेतु वुडवर्थ 1917 में व्यक्तिगत प्रदत्त पत्रक की रचना की। इसके अतिरिक्त व्यक्तित्व अध्ययन के क्षेत्र में बर्नरिटर व्यक्तित्व अनुसूची तथ मिनीसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व अनुसूची ने विस्तृत ख्याति अर्जित की।

व्यक्तित्व के क्षेत्र में अभिवृत्तियों की भूमिका प्रदर्शित करने हेतु अभिवृत्ति–मापनियों का विकास भी 1920 के लगभग प्रारम्भ हुआ। हार्ट ने 1923 में अपना सामाजिक अभिवृत्ति एवं रुचि परीक्षण प्रकाशित किया। इसके उपरान्त थर्स्टन का अभिवृत्ति मानदण्ड, लिकर्ट अभिवृत्ति मानदण्ड तथा बोगार्डस सामाजिक दूरी माानदण्ड आदि का निर्माण हुआ।

व्यक्तित्व के अध्ययन में, उसके अस्पष्ट या अन्तर्निहित पक्षों को उजागर करने के लिये कालान्तर में साहचर्य विधि का भी व्यापक प्रयोग किया जाने लगा। यद्यपि इसका सूत्रपात 1879 में ही गाल्टन ने किया था। किन्तु 1905 में युंग के शब्द साहचर्य परीक्षण के उपरान्त यह विधि और अधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय हुई साहचर्य विधि के अन्तर्गत ही व्यक्तित्व मापन की एक अन्य प्रविधि, प्रक्षेपण विकसित हुई जो कि फ्रायड के मनोविष्लेषणवाद पर आधारित थी। प्रक्षेपण की धारणा को ही लेकर रोर्शाक ने स्याही–धब्बे के परीक्षण तथा 1935 में मरे ने चित्र–कथा परीक्षण का निर्माण किया। ये विधियाँ कालान्तर में अत्यधिक लोकप्रिय हुई व इनके आधार पर अनेक परीक्षण विकसित किये गये है।

निदेश के क्षेत्र में अपेक्षित जानकारियों एवं सूचनाओं के संकलन में परीक्षणों के विकास से महत्वपूर्ण सहायता प्राप्त हुई है। परीक्षणों के उपयोग से जहाँ निर्देश का स्वरूप एक ओर वैज्ञानिक एवं वस्तुपरक बना है, वहीं दूसरी ओर इन परीक्षणों के व्यावहारिक उपयोग से निर्देशकर्ता की क्षमता व ज्ञान में भी अतुलनीय वृद्धि हुई है। आधुनिक निर्देशन कार्यक्रमों के अन्तर्गत परीक्षण अविभाज्य अंग है। इनके माध्यम से प्राप्त जानकारी व सूचनाएँ, कार्यक्रमों की संयोजन व नियोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है

22.4 निदान की अवधारणा एवं अर्थ

निदान शब्द चिकित्साशास्त्र में अधिकांशः प्रयोग किया जाता है, जिसका तात्पर्य रोग के सम्पूर्ण ज्ञान से होता है। समाज कार्य में निदान

का अर्थ न केवल समस्या के पूर्ण ज्ञान से होता है, बल्कि सेवार्थी (व्यक्ति जो समस्या से ग्रसित है) उसके सम्बन्ध में भी पूर्ण ज्ञान से होता है। निदान सेवार्थी द्वारा प्रस्तुत समस्या की वास्तविक प्रकृति से सम्बन्धित व्यावसायिक मत है। वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी से सम्बन्ध स्थापित करके उसकी समस्या से सम्बन्धित कारकों का पता लगाकर उसकी समस्या के वास्तविक स्वरूप को निश्चित करता है। इस निदानात्मक उपकल्पना को निश्चित करना हर प्रकार से आवश्यक होता है यदि सेवार्थी की समस्या का समाधान चेतन अथवा अचेतन किसी भी प्रकार से करना है।

निदान तथा चिकित्सा एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित हैं, क्योंकि निदान चिकित्सा को निर्देशित करता है और जैसे–जैसे चिकित्सा की प्रगति होती है, निदान में परिवर्तन तथा विकास होता है। अतः चिकित्सा को पुनः निर्देशित किया जाता है। निदान का स्वरूप निश्चित करने एवं समस्या के समाधान के लिये तथ्यों के अन्वेषण की आवश्यकता होती है। परन्तु सहायता की प्रक्रिया में निदान का महत्व अन्वेषण से अधिक हो जाता है।

निदान का अर्थ–निदान के सम्बन्ध में सभी निदानात्मक सम्प्रदाय के विचारकों ने अपने–अपने मत प्रस्तुत किये हैं। परन्तु उन सभी मतों और विचारों का मूल अर्थ लगभग समान है। यहाँ पर हम हुछ विद्वानों की परिभाषाओं एवं विचारों का उल्लेख निदान शब्द को स्पष्ट करने के लिए कर रहे हैं–

रिचमण्ड मेरी (1917) – 'सामाजिक निदान, जहाँ तक सम्भव हो एक सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा सामाजिक स्थिति की एक यथार्थ परिभाषा पर पहुंचने का प्रयत्न है।'

सजफ्लोरेन्स (1950)–निदान

1– ज्ञात तथ्यों (दर्शनीय तथ मनोवैज्ञानिक तथ्य) के आधार पर संरचित एक व्याख्या है।

2– दूसरे सम्भव व्याख्याओं को ध्यान में रखते हुए यह एक व्याख्या है।

3– जब सम्बन्धित विषय भिन्न व्याख्या प्रस्तुत करता है तो इसमें परिवर्तन एवं मूल्यांकन भी सम्भव है।

आप्टेकर, हरबर्ट एच० (1955)– निदान जैसा कि निदानात्मक सम्प्रदाय ने देखा है; समस्या के कारणों की खोज है, जो सेवार्थी को कार्यकर्ता के पास सहायता के लिए लाती है।

उन्होंने आगे कहा कि समस्या के कारण मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक दोनों होते है। अतः निदान का सम्बन्ध मनोवैज्ञानिक या व्यक्तित्व के कारकों को जो सेवार्थी की समस्या से कारणात्मक सम्बन्ध रखते हैं और सामाजिक या पर्यावरणीय कारक जो इसको स्थिर रखते हैं, के ज्ञान से है।

फ्लैमेन, हेलेन हेरिस (1957)– यह एक प्रतिबिम्बित विचार है, जो समस्या समाधान कार्य को प्रारूप प्रदान करता है।

सेन्सीवरी, इरिक (1970)–निदान प्रत्यक्ष या निष्कर्षित सूचनाओं के महत्व के क्रम के अन्वेषण की एक प्रक्रिया है। यह अस्थायी रूप से संरचित की जाती है तथा सेवार्थी से सम्पर्क की सम्पूर्ण अवधि में संसोधित होती रहती है।

मेरी रिचमण्ड, जो वैयक्तिक समाज कार्य की जन्मदात्री मानी जाती हैं, ने निदान के अन्तर्गत कार्यकर्ता के तीन ममहत्वपूर्ण कार्यों का उल्लेख किया है–

1–कठिनाइयों की परिभाषा।

2–कारणात्मक कारक, तथा

3–उपलब्धियाँ तथा उत्तरदायित्व।

समाज कार्यकर्ता इस ज्ञान के आधार पर चिकित्सा पद्धति निश्चित करता है। अध्ययन प्रक्रिया में सेवार्थी की शारीरिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक कार्यात्मकता का निरीक्षण एवं परीक्षणा किया जाता है।

पर्यावरण सम्बन्धी कारकों को भी सेवार्थी की समस्या के सन्दर्भ में देखा जाता है। सेवार्थी पर्यावरण पुंज की व्याख्या के आधार पर हम कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं। इसी निष्कर्ष को निदान के नाम से जाता जाता है।

समाज कार्य में निदान एक जटिल कार्य है, क्योंकि जिस समस्या का निदान किया जाता है उसका सम्बन्ध व्यक्ति की गत्यात्मक मनोवृत्ति से होता है। व्यक्ति की अस्थिरता के कारण उसकी समस्याओं के महत्व, प्रकृति तथा कारण में भी अन्तर होता रहता है। अतः एक निश्चित कारण की खोज करना अत्यन्त दुष्कर कार्य हैं और इसकी सफलता वैयक्तिक कार्यकर्ता पर निर्भर होती है। **हैमिल्टन** के विचार से विशेषकर वैयक्तिक समाज कार्य में कार्य निदान जटिल होता है, क्योंकि इसका सम्बन्ध केवल समस्या से नहीं हैं, बल्कि व्यक्ति से है जो समस्या से ग्रसित होता है तथा जो समस्याा से प्रतिक्रिया करता है। इस अर्थ में सामाजिक निदान व्यक्ति परिस्थिति या व्यक्ति–व्यक्ति या दोनों प्रकार से घटना के कारण तथा परिणाम के चक्र हैं।

निदान एक ऐसा कार्य है जो सेवार्थी से सम्पर्क स्थापित करने के क्षण से चिकित्सा के अन्तिम चरण तक चलता रहता है। परन्तु जिस प्रकार से चिकित्सा से वास्तविक लाभ प्राप्त करने के लिए कार्यकर्ता और सेवार्थी सम्बन्ध की आवश्यकता होती है उसी प्रकार निदान की सफलता कार्यकर्ता और सेवार्थी दोनों पर निर्भर होती है। कार्यकर्ता निदान की निष्पक्षता को बनाये रखने के लिए समस्या के प्रति वस्तुगत रूख अपनाता है तथा अपनी भावनाओं को सेवार्थी की भावना से पृथक रखता है।

22.4.1 निदानात्मक प्रक्रिया

समाज कार्य में प्रत्येक सेवार्थी के विषय में वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता को निश्चित करना पड़ता है कि, किस प्रकार से उसकी समस्या को अधिकाधिक संतोष के साथ सुलझाया जा सकता है। इसके

लिए वह उपलबध सूचनाओं का अध्ययन करता है तथा अपने व्यावसायिक ज्ञान द्वारा समस्या के कारणों की खोज करता है। खोज करने के पश्चात् यह निश्चित करता है कि चिकित्सा–प्रक्रिया का क्या स्वरूप हो। इस प्रकार निदान के अन्तर्गत निम्न तीन चरण होते हैं–

1– तथ्यों का मूल्यांकन–

अ) समस्या का मूल्यांकन

ब) व्यक्तित्व का मूल्यांकन

स) सामाजिक पर्यावरण का मूल्यांकन

2– कारणान्वेषण–

अ) समस्या का रूप

ब) सामाजिक पर्यावरण का व्यक्तित्व पर प्रभाव

स) समस्या के उपचार के उपाय

3– श्रेणीकरण–

अ) समस्या के आधार पर वर्गीकरण

ब) संस्था की सेवा का महत्व

इरिक सेन्सवरी ने निदान प्रक्रिया के निम्न चरणों का उल्लेख किया है–

1– वैयक्तिक समाज कार्य में सूचना का मूख्य स्त्रोत सेवार्थी होता है। कार्यकर्ता को समस्या का ज्ञान सेवार्थी से साक्षात्कार द्वारा होता है। साक्षात्कार के माध्यम से ही वह निश्चित करता है कि सेवार्थी समस्या को किस रूप में अनुभव कर रहा है तथा उसकी समस्या क्या है। कौन सी संस्था उसकी समस्या के अनुकूल है, जिसमें संदर्भित करना है।

2– इस सूचना से कार्यकर्ता निश्चित तथ्यों तथा सेवार्थी की भावनाओं की प्रतिक्रिया की वर्णानात्मक स्वरूप संरचित करता है। वह निश्चित करता है कि कौन–कौन से कारक सेवार्थी के लिए विशेष महत्व के हैं। और कौन–कौन से उसके परिवार तथा

समूह से सम्बंधित सामान्य कारक हैं। साथ ह वही परिवार तथा समूह के प्रभाव को निश्चित करता है। वह यह भी निश्चित करता है कि समस्या क्षेत्र सीमित है और उसका प्रभाव सेवार्थी के किसी एक अंग पर पड़ रहा है अथवा सेवार्थी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व तथा जीवन क्षेत्र इससे प्रभावित हो रहा है। वह यह भी निश्चित करने का प्रयत्न करता है कि सेवार्थी की भावनाएँ समस्या के अनुरूप ही हैं अथवा उनमें अधिकता, कमी अथवा अवांछनीय तत्व विद्यमान हैं।

3– समस्या या कठिनाई का स्वरूप एवं विस्तार निश्चित हो जाने पर कार्यकर्ता निश्चित करता है कि सेवार्थी के जीवन तथा अनुभव का कौन सा क्षेत्र क्रमानुगत अन्वेषण चाहता है। इसके अन्तर्गत परिवार की संरचना, संस्था के कार्यों से आशा, शिक्षा एवं रोजगार लेखा, स्वास्थ्य, आय तथा गृह कार्य संगठन आदि क्षेत्र आते हैं। वह निश्चित करता है कि किन–किन स्त्रोतों से सम्बन्धित निदान के लिए सूचना की आवश्यकता है या दूसरी संस्थाओं को इसके लिए कितनी आवश्यकता है।

4– इस स्तर में वह उपलब्ध आँकड़ों का कार्यात्मक स्वरूप प्रदान करता है। आँकड़ों के अन्तर्गत विचार, भावनाएँ, घटनाएँ तथा प्रत्युत्त सेवार्थी का अनुभव, प्रभावूर्ण कारक तथ्य तथा प्रतिक्रिया में सम्बन्ध आदि तत्व सम्मिलित होते हैं। सारांश में, सेवार्थी की आन्तरिक एवं बाह्य तस्वीर आँकड़ों के अन्तर्गत होती है। विभिन्न कारकों की अन्तःक्रिया को निश्चित करके समस्या के विशेषा कारण को निश्चित करने का प्रयत्न किया जाता है।

5– समस्या से सम्बन्धित उपकल्पना का निर्माण किया जाता है।

6– सेवार्थी द्वारा प्राप्त विशेष सूचनाओं तथा तथ्यों के आधार पर संरचना तथा उपकल्पना में परिवर्तन तथा पुनरावलोकन किया जाता है।

22.4.2 निदानात्मक मनोसामाजिक प्रत्यय

निदानात्मक मनोसामाजिक (स्थिति में व्यक्ति) प्रत्यय के अन्तर्गत निम्न अन्तर्व्यक्तिगत निदानात्मक व्यवस्था के रूपों का वर्णन करना उचित प्रतीत होता है।

1– निदान का सम्पूर्ण व्यवस्थित स्वरूप– प्रत्येक निदान स्वयं के समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का एक व्यवस्थित स्वरूप होता है जिसमें यह निश्चित होता है कि हम किस प्रकार की समस्या को किन–किन उपायों से समाधान करने का प्रयत्न करने जा रहे हैं। इसमें सेवार्थी से सम्बन्धित आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के पर्यावरण का अवलोकन करके एक निश्चित स्वरूप प्रदान किया जाता है। समाज कार्य निदान में यह पूर्वानुमान होता है कि सेवार्थी की प्रत्येक प्रकार की समस्या का कारण सामाजिक अनुकूलन की क्षमता की कमी अथवा उसमें व्यवधान का होना है। इस कमी अथवा व्यवधान का कारण कोई न कोई सामाजिक कारक ही होता है। निदान का सम्बन्ध सम्पूर्ण वाह्य तथा आन्तरिक स्थिति से होता है क्योंकि व्यक्तित्व पर आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार की शक्तियाँ अपना प्रभाव डालती हैं और व्यक्ति इन शक्तियों के प्रति प्रत्युत्तर भी करता है। इस प्रकार सेवार्थी के सम्बन्ध को परिवार, पड़ोस तथा अन्य सामाजिक समूह के संदर्भ में देखा जाता है जो व्यक्ति की चेतन भावनाओं, इच्छाओं तथा आवश्यकताओं के माध्यम से सामाजिक परिस्थिति से सम्बन्धित होती हैं।

2– कारण परिमाण सम्बन्ध–सामाजिक घटना में कार्य–कारण में इतनी जटिलता होती है कि निश्चित रूप से किसी समस्या के कारण को निश्चित नहीं किया जा सकता है। सामाजिक निदान प्रायः वर्णनात्मक होता है और उसमें विभिन्न कारकों को अन्तर्सम्बन्धात्मक प्रभाव दर्शाया जाता है। समस्या का निश्चित कारण का स्पष्टीकरण न कर सम्भावनायें प्रकट की जाती है। इस प्रकार वैयक्तिक सेवा कार्य निदान में कारण का तात्पर्य विभिन्न कारकों के एक साथ एक स्थिति में

कार्य करने से समझा जा सकता है जो इस प्रकार से कार्य करते हैं कि उनमें कारणात्मक सम्बन्ध होता है। वैयक्तिक समाज कार्य में विश्वास किया जाता है कि समस्या की कोई भी व्याख्या अन्तिम नहीं होती है तथा कोई भी निदान पूर्ण नहीं होता है। सेवार्थी के सम्पर्क की गहनता के साथ–साथ तथा चिकित्सा पद्धति का उपयोग करते हुए निदान का स्वरूप भी बदलता जाता है।

3– **वर्गीकरण तथा निदानात्मक कथन**– पूर्ण रूप से सेवार्थी की समस्या की परिभाषा करना असम्भव होता है। यद्यपि चिकित्सा प्रारम्भ करने के लिए निदानात्मक उपकल्पना का निर्माण करना आवश्यक होता है, परन्तु उसमें काफी लोच रखी जाती है। निदानात्मक कथन समस्या के ज्ञान के साथ–साथ बदलता रहता है तथा उसमें विशेषीकरण होता रहता है। सेवार्थी अपनी समस्या लेकर संस्था के पास आता है और उस विशेष समस्या के समाधान के साधनों को प्राप्त करने की इच्छा प्रकट करता है। अतः वह स्वयं समस्या स्पष्ट करता है और उस समस्या के आधार पर ही कार्यकर्ता समस्या का वर्गीकरण करता है तथा समय–समय पर समस्या से सम्बन्धित अन्तर्दृष्टि उत्पन्न होने पर निदान का पुनरावलोकन करता है।

4– **तथ्य निष्कर्ष**– निष्कर्ष निदान का कच्चा माल होता है, परन्तु वह निदान नहीं होता है। निष्कर्ष एक समस्या से सम्बन्धित विभिन्न कारकों का विश्लेषणात्मक सार होता है, परन्तु निदान में सेवार्थी की समस्या को मनोसामाजिक अर्थ देने के लिए इन कारकों का संश्लेषण या व्याख्या की जाती है। निदानात्मक प्रक्रिया में पहले तथ्यों का संकलन कर महत्वपूर्ण प्रकरण स्पष्ट किये जाते हैं तदुपरान्त व्यवस्थित रूप प्रदान करने के लिए उनका एक अर्थ निकाला जाता है, जिसे निदान कहते हैं। परन्तु निष्कर्ष के अन्तर्गत महत्वपूर्ण तथ्य स्पष्ट किये जाते हैं।

5– सहयोजिक निदान– सामाजिक अनुकूलन में असफलता के कारण सेवार्थी कार्यकर्ता के पास आता है। इसका कारण व्यक्ति का मनोस्नायुविक व्यक्तित्व अथवा व्याधिकीय पर्यावरण होता है। सेवार्थी की एक समस्या न होकर समस्याओं का पुंज होता है। अतः कार्यकर्ता विभिन्न संस्थाओं की सहायता निदान का रूप निश्चित करने एवं उपचार करने के लिए लेता है। शारीरिक रोग की समस्या में शारीरिक या मानसिक सांवेगिक व्यवधान का निदान मनोविकार चिकित्सा करता है तथा वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता का कार्य सामाजिक निदान जो कि द्वितीयक माना जाता है, करता है। परन्तु यदि वैयक्तिक समाज कार्य को वास्तविक रूप प्रदान करना है तो कार्यकर्ता में स्वतंत्र रूप से निदान तथा उपचार करने की क्षमता तथा योग्यता का होना आवश्यक होता है। मनोसामाजिक समस्या के निदान का ज्ञान होना वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है।

22.5 निदान के प्रकार

पर्लमैन ने निदान के तीन प्रकार बताये हैं–गतिशील निदान, क्लिनिकल निदान तथा कारणात्मक निदान।

गतिशील निदान–

प्रत्येक प्रकार के वैयक्तिक समाज कार्य में सेवार्थी की वर्तमान समस्या तथा अन्य सम्बन्धित कारकों, उनके प्रभावों तथा परस्पर सम्बन्धों का ज्ञान आवश्यक होता है। इस ज्ञान को गत्यात्मक निदान कहते हैं, क्योंकि ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ निदान में भी अन्तर होता जाता है। गत्यात्मक निदान में निम्न तथ्य निश्चित किये जाते हैं–

1. समस्या क्या है?
2. मनोसामाजिक, शारीरिक या सामाजिक कारकों का इस समस्या में क्या योगदान है?
3. समस्या का व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है?
4. समाधान के क्या उपाय किये जायें?

5. सेवार्थी तथा उसकी परिस्थिति में क्या–क्या साधन उपलब्ध हैं?

6. संस्था में कौन–कौन से स्त्रोत तथा साधन हैं जिनसे समस्या का समाधान किया जा सकता है?

क्लिनिकल निदान

वास्तविक रोग को, रोग के आधार पर वर्गीकृत करने के प्रयास को क्लिनिकल निदान कहते हैं। जब तथ्यों के परीक्षण तथा अन्वेषण से यह ज्ञात हो जाता है कि सेवार्थी का व्यक्तित्व उसकी समस्या के लिए स्वयं उत्तरदायी है तो उसके व्यक्तित्व कुसमायोजन तथा व्यक्तित्व अकार्यात्मकता को मूल्यांकित किया जाता है, जिसे क्लिनिकल निदान कहते हैं। इसमें सेवार्थी के व्यक्तित्व असमायोजन के गुणों तथा व्यवहारों का वर्णन होता है।

व्यक्तित्व विघटन से सम्बन्धित व्यक्ति मनोविकार चिकित्सक के पास आता है और उसके द्वारा क्लिनिकल निदान किया जाता है। परन्तु जब कोई व्यक्ति कोई कुसमायोजन सम्बन्धी समस्या को लेकर संस्था में आता है तो क्लिनिकल निदान करना आवश्यक नहीं है और न उचित ही हैं। यह उस समय लाभकर होता है जब यह निश्चित हो जाता है कि व्यक्तित्व विकार ही सामाजिक विकार का कारण है। इस स्थिति में क्लिनिकल निदान स्पष्ट करता है कि सेवार्थी का व्यक्तित्व की क्या समस्या है, सेवार्थी की क्या आवश्यकता है तथा चिकित्सा की प्रक्रिया में सेवार्थी का कैसा व्यवहार हो सकता है। परन्तु क्लिनिकल निदान यह स्पष्ट नहीं करता है कि मनोसामाजिक स्थिति की प्रकृति क्या है या उसका सेवार्थी, संस्था, उद्देश्य से क्या सम्बन्ध है। अतः वैयक्तिक समाज कार्य में यह निदान केवल आंशिक समझा जाता है।

कारणात्मक निदान

वर्तमान समस्या के विकार तथा उससे सम्बन्धित कारणों के ज्ञान की जानकारी यह निश्चित करने में आवश्यक होती है कि, अमुक समस्या के लिए गत्यात्मक निदान हितकर है अथवा क्लिनिक निदान।

अतः समस्या के जन्म तथा कारण प्रभाव–कारण को निश्चित करना ही कारणात्मक निदान होता है। कारणात्मक निदान भी क्लिनिक निदान की भाँती एकांगी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, क्योंकि पूर्व कारकों के महत्व को इससे स्पष्ट नहीं किया जाता है। कारण–प्रभाव–कारण के आधार पर समस्या का वास्तविक निदान करना एक दुष्कर कार्य है।

सारांश में समाज कार्य में निदानात्मक प्रक्रिया तथा विकास का उद्देश्य वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता की सहायताकारी प्रवृत्ति तथा निपुणताओं की सीमा, यथार्थता तथा निर्देशन प्रदान करता है। प्रक्रिया के रूप में समस्या के स्वरूप सेवार्थी की आन्तरिक तथा वाह्य शक्तियों के कारणों को ध्यान में रखकर निश्चित करना है। विकास के रूप में इसका उद्देश्य वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता तथा सेवार्थी को समस्या समाधान की दिशा प्रदान करना है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. निदान का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

22.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं निदान के बारे में वर्णन किया गया है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण के बारे में बताया गया है इनका विकास सामान्य बुद्धि, विशिष्ठ अभिक्षमताओं, शैक्षिक उपलब्धि, व्यवसायिक उपयुक्तता तथ अबौद्धिक व्यक्तित्व गुणों के क्षेत्र में व्यक्तिगत विभेदों के निर्धारण एवं विश्लेषण के सन्दर्भ में हुआ। वास्तव में, सामान्य बुद्धि तथा अभिरुचियों से सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विशेष रूप से उपयोग, पूर्व प्रथामिक से लेकर विश्वविद्यालयीय स्तर तक शैक्षिक वर्गीकरण, चयन तथा नियोजन आदि क्षेत्रों में बढ़ा है। यही कारण है कि शिक्षा से अपनी घनिष्ठ सम्बद्धता के परीणाम स्वरूप

निर्देशन का क्षेत्र भी परीक्षणों के उपयोग से अछूता न रह सका है और दिन प्रति दिन इसमें परीक्षण के उपयोग की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

इसी इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षण के विकास के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है, जिसमें फ्रांसिस गाल्टन से लेकर मरे आदि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित किये गये मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के बारे में प्रकाश डाला गया है।

इसी इकाई में निदान की अवधारणा एवं अर्थ के बारे में प्रकाश डालते हुए लिखा गया है कि निदान प्रत्यक्ष या निष्कर्षित सूचनाओं के महत्व के क्रम के अन्वेषण की एक प्रक्रिया है। यह अस्थायी रूप से संरचित की जाती है तथा सेवार्थी की सम्पूर्ण अवधि में संशोधित होती रहती है। इसी इकाई के अन्त में निदानात्मक प्रक्रिया के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें निदानात्मक मनोसामाजिक प्रत्यय के बारे में भी लिखा गया है। तथा साथ ही साथ निदान के प्रकारों जैसे–गतिशील निदान, क्लीनिकल निदान तथा कारणात्मक निदान के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है।

22.7 पारिभाषिक शब्दावली

मनोवैज्ञानिक परीक्षण– मनोवैज्ञानिक परीक्षण से तात्पर्य उन परीक्षणों से है जिनके द्वारा सामान्य बुद्धि, विशिष्ठ अभिक्षमताओं, शैक्षिक उपलब्धि, व्यवसायिक उपलब्धता के बारे में ज्ञान प्राप्त किया जाता है।

निदान – निदान का तात्पर्य एक ऐसे कार्य से है जो सेवार्थी से सम्पर्क स्थापित करने के क्षण से चिकित्सा के अन्तिम चरण तक चलता रहता है। परन्तु जिस प्रकार चिकित्सा से वास्तविक लाभ प्राप्त करने के लिए कार्यकर्ता–सेवार्थी सम्बन्ध की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार निदान की सफलता कार्यकर्ता और सेवार्थी दोनों पर निर्भर होती है। कार्यकर्ता निदान की निष्पक्षता को बनाये रखने के लिए समस्या के प्रति वस्तुगत रूख अपनाता है तथा अपनी भावनाओं को सेवार्थी की भावना से प्रथक रखता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षण के बारे में आप क्या जानते है?

2– मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विकास के बारे लिखिये।

3– निदान की अवधारणा को समझाइये।

4– निदान के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

5– निदानात्मक प्रक्रिया पर प्रकाश डालिये।

6– निदान के प्रकारों के बारे में लिखिए।

7– गतिशील निदान से आप क्या समझते है?

8– क्लीनिकल निदान के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

9– कारणात्मक निदान की व्याख्या कीजिए।

विस्तृत

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विकास पर एक निबन्ध लिखिए।

2– निदान की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।

22.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013,

2– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15 पेज, 179–195

3– हैमिल्टन गार्डन, प्रिन्सिपल्स ऑफ सोशल केश रिकार्डिंग, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, वर्ष–1946, पेज–66

4– रिचमण्ड मेरी, सोशल डाइगनोसिस, रसेल से फाउण्डेशन, न्यूयार्क, वर्ष–1917 पेज –5

5– मिश्र, पी.डी., सामाजिक व्यक्तिक सेवा कार्य, उ0 प्र0 हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, लखनऊ, पेज–219–228

टिप्पणी

खण्ड–पांच – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई–23, मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता

23.0 इकाई का उद्देश्य

23.1 परिचय

23.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण क्यो?

23.2.1 आत्म या स्व का ज्ञान

23.2.2 व्यक्तिगत जानकारी

23.2.3 जानकारी प्राप्त करने की विधियां

23.2.4 अमानकीकृत प्रविधियां

23.2.5 मानकीकृत प्रविधियां

23.3 सार–संक्षेप

23.4 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

23.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

23.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य, मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता के बारे में आप लोगों को अवगत कराना है। वस्तुतः मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता क्यों पड़ती है?, के बारे में यह इकाई प्रकाश डालती है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– मनावैज्ञानिक परीक्षण क्यों? के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

2– आत्म या स्वयं के ज्ञान में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की भूमिका के बारे में जान सकेंगे।

3– व्यक्तिगत जानकारी हेतु मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता पर लिख सकेंगे।

4– जानकारी प्राप्त करने में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की भूमिका के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।

5– मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के मानकीकृत विधियों के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

6– मनोवैज्ञानिक परीक्षण की अमनाकीकृत परीक्षणों पर प्रकाश डाल सकेंगे

23.1 परिचय

मनोवैज्ञानिक परीक्षण वास्तव में व्यक्तित्व परीक्षण हेतु बनाये गये वे परीक्षण हैं, जिनसे व्यक्ति के व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त की जाती है। वास्तविकता तो यह है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर व्यक्ति विकास के लिए परामर्श प्रदान किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता वर्तमान के इस आपा–धापी युग में बहुत ही आवश्यक प्रतीत होता है, क्योंकि वर्तमान युग में प्रत्येक माता–पिता अपने बच्चे के भविष्य को लेकर चिंतित हैं। अतः प्रत्येक माता–पिता जानना चाहता है कि उसके बच्चे का भविष्य किस क्षेत्र में सुरक्षित हो सकता है। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति के अन्दर छुपी हुई शक्तियों एवं व्यक्तित्व को मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के द्वारा व्यक्तियों के सामने आ जाती है, जिससे उसको पता चल जाता है कि कौन सा क्षेत्र उसके लिए लाभदायक हो सकता है।

निर्देशन एवं परामर्श व्यक्ति को बुद्धिमतापूर्ण चयन एवं समायोजन के लिए दी गयी एक प्रकार की सहायता है। शिक्षाविद् इसे शिक्षा के एक अविभाज्य अंग के रूप में स्वीकार करते हैं तथा शैक्षिक कार्यों में इसे महत्वपूर्ण मानते हैं। परामर्श देने से पूर्व व्यक्ति की इन योग्यताओं तथा क्षमताओं के विषय में अनेक मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का पता लगाया जाता है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति से सम्बन्धित निम्न मूलभूत पक्षों का पता लगाने पर विशेष बल दिया जाता है–

1– व्यक्ति की योग्यताएं अभिरुचियां, रुचियां तथ अभिवृत्तियों,

2– व्यक्ति की मानसिक प्रवृत्तियों,

3– व्यक्ति की आकांक्षाएं,

4– व्यक्ति की अवसरों के उपयोग की क्षमता,

5– व्यक्ति के विकास, की दिशा

6– व्यक्ति की निर्णय की निर्णय शक्ति का स्तर,

7– व्यक्ति की क्षमताओं का विस्तार,

8– व्यक्ति की आत्म सक्षमता की सीमा।

अतः प्रस्तुत इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता के बारे में विस्तृत ज्ञान की प्राप्ति होगी जिसमें, आत्म या स्व के बारे में ज्ञान, व्यक्तित्व की जानकारी, व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त करने की मानकीकृत एवं अमानकीकृत परीक्षणों के बारे में ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

23.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण क्यों?

निर्देशन तथा परामर्श, व्यक्ति के विकास की अनिवार्यता है। व्यक्ति का विकास दूसरे के निर्देशन तथा परामर्श पर अधिक निर्भर करता है। इसके अभाव में व्यक्ति प्रगति नहीं कर सकता।

व्यक्ति–अध्ययन में व्यक्ति के विषय में सूचनायें एकत्र की जाती हैं और उस आधार पर निष्कर्ष निकालकर आवश्यक निर्देश तथा उसके क्रियान्वयन के लिये परामर्श दिया जाता है।

व्यक्ति का अध्ययन करने से व्यक्ति के विषय में अनेक सूचनायें प्राप्त होती हैं। ये सूचनायें व्यक्ति के विषय में सही तथा वस्तुनिष्ठ धारणायें बनाने में योगदान देती हैं।

रीवज एवं डे के अनुसार– विद्यार्थियों की पृष्ठभूमि तथा उनके अनुभवों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किये बिना ही उन विद्यार्थियों के विकास में निर्देशन प्रदान करने का प्रयत्न किसी असम्भव कार्य के लिये प्रयत्न करने जैसा है।

जोन्स का कथन है– किसी व्यक्ति को चयन में सहायता का आधार उसके बारे में व्यापक अध्ययन, उसकी मूलभूत आवश्यकतायें, उसके निर्णयों को प्रभावित करने वाली वास्तविक परिस्थितियों का ज्ञान हैं।

निर्देशन, शिक्षण की भॉति एक प्रकार की सेवा है जो कि एक व्यक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्ति को प्रदान की जाती है। कहा यह जाता है कि शिक्षक कक्षा में पढ़ा रहा है जबकि वह कक्षा में प्रत्येक छात्र को सीखने में मात्र सहायता करता है। इसी प्रकार परामर्शदाता, बहुधा छात्रों के समूहों में मिलता है जिसका उद्देश्य भी समूह के प्रत्येक सदस्य की सहायता करना होता है। लेकिन इस प्रकार की सहायता तब तक प्रभावपूर्ण नहीं हो सकती जब तक शिक्षण या परामर्शदाता छात्र की व्यक्तिगत समस्या, उसकी विशेषताओं या योगयताओं को भली–भॉति न जानता हो। अतः छात्र या व्यक्ति की पूर्ण समझ ही सफल निर्देशन का आधार है। यही कारण है कि निर्देशन की दृष्टि से व्यक्ति का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है।

व्यक्ति को समझने के दृष्टिकोण से, इस तथ्य का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है कि व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में किस प्रकार व्यवहार करता है। विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति व्यावहारिक अनुक्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करने का एक तरीका अवलोकन हैं। यह अवलोकन निष्कर्ष व्यक्ति के शिक्षकों से, परिवार के सदस्यों या उसके समुदाय के लोगों से बातचीत कर प्राप्त किये जा सकते हैं। लेकिन इस प्रकार के विश्लेषण में सबसे बड़ी त्रुटि, निष्कर्षों में वैयक्तिकता का समावेश है। साथ ही सामाजिक परिवर्तन के साथ व्यक्ति के जीवन में जो परिवर्तन आते हैं उनका अनुमानांकन भी अवलोकन विधि द्वारा समग्र रूप में नहीं किया जा सकता। फलतः व्यक्ति का अध्ययन करते समय निर्देश्न एव परामर्श की दृष्टि से यह आवश्यक है कि उसकी बुद्धि, अभिरुचियों, योग्यताओं, रुचियों, शैक्षिक उपलब्धियां, व्यक्ति–सम्बन्धी

लक्षण, अभिवृत्तियों, मूल्यों तथा आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटकों की ओर ध्यान दें।

23.2.1 आत्म या स्व का ज्ञान

जीवन के विभिन्न स्वरूपों का वैज्ञानिकों अवलोकन, बाह्य या वस्तुनिष्ठ सन्दर्भों तक सीमित हैं। मनुष्यों के साथ, उसके आत्मावलोकन व आत्मनिरीक्षण की क्षमता के कारण, भिन्न रूप में, एक अन्य प्रकार का अवलोकन भी सम्भव है, जिसमे व्यक्ति की 'आत्म विषयक' अवधारणा का विश्लेषण कर, उसका अवलोकन या निरीक्षण किया जाता है। इस प्रकार के अवलोकन को वैज्ञानिक 'घटनात्मक उपागम' की संज्ञा देते हैं। आत्मवलोकन के सन्दर्भ में कई अन्य समानार्थी शब्द भी प्रचलित हैं, जैसे आत्मप्रतिमा, इगो, आत्म–धारणा इत्यादि। आत्म को समझने के विचार को, निर्देशन के क्षेत्र में विशेष महत्व **काम्ब तथा स्निग रोजर्स तथा जुआर्ड** की सैद्धान्तिक प्रतिस्थापनाओं एवं शोधों के परिणामस्वरूप प्राप्त हुआ।

मुस्ताक्स ने आत्म के वास्तविक अनुभवों को समझने तथा मानव–विषयक ज्ञान के आधार के रूप में इसी शोध श्रृंखला के अन्तर्गत चौदह सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, जिनका संक्षिप्त उल्लेख निम्न प्रकार है–

1– **स्वयं को समझना**–व्यक्ति अपने को, अन्य किसी की अपेक्षा अच्छी तरह समझता या जानता है।

2– **स्वयं का विकास**–व्यक्ति ही केवल अपनी क्षमताओं के विकास में सक्षम है।

3– **वैध प्रत्यक्षीकरण**– व्यक्ति की अपनी भावनाओं, अभिवृत्तियों तथा विचारों का प्रत्यक्षीकरण किसी अन्य बाह्य नैदानिक विश्लेषण की अपेक्षा अधिक वैध एवं विश्वसनीय है।

4– **अपना दृष्टिकोण**– व्यवहार को व्यक्ति के अपने दृष्टिकोण से अच्छी तरह से समझा जा सकता है।

5– **अपने अनुसार अनुक्रिया**– व्यक्ति अपने अनुसार ही अनुक्रिया करता है।

6– **प्रत्यक्षीकरण का निर्धारण**–व्यक्ति का अपना प्रत्यक्षीकरण ही निर्धारित करता है कि वह किस प्रकार व्यवहार करेगा।

7– **कोई स्वतन्त्र अर्थ या मूल्य नहीं**–कोई स्वतन्त्र अर्थ या मूल्य नहीं– वस्तुओं या पदार्थो का अपना कोई स्वतन्त्र अर्थ या मूल्य नहीं होता जिससे कि वह व्यवहार करेगा।

8– **अपने क्षेत्र में तार्किक**–प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत अनुभवों के क्षेत्रों में तार्किक है। जब व्यक्ति को भली–भॉति नहीं समझा जाता है तो व्यक्ति अन्यों को अतार्किक प्रतीक होता है।

9– **स्वंय के विकास में सक्षम**–जब तक व्यक्ति अपने को समझता या स्वीकार करता है तभी तक वह अपनी योग्यताओं या क्षमताओं के विकास में सक्षम होता है। जब व्यक्ति अपने को समझने में असफल रहता है तो उसकी अधिकांश ऊर्जा प्रतीक्षा मात्र में व्यय होती रहती है। फलतः वह आत्म–अन्वेषण एवं आत्म–निरूपण से वंचित हो जाता है।

10– **विकास सार्वकालिक**–प्रत्येक व्यक्ति आत्म–सन्तोष की प्राप्ति तक वृद्धि या विकास की ओर प्रेरित होता है। वृद्धि या विकास की यह मांग सर्वकालिक रही है।

11– **स्व में निहित अधिगम**–व्यक्ति मुख्य रूप से केवल उन्हीं चीजों को सीखना चाहता है जिसमें उसका आत्म या स्व निहित रहता है। व्यक्ति को सृजनात्मक अधिगम के लिये कोई भी बाध्य नहीं कर सकता है। कोई भी अधिगम व्यक्ति की इच्छा के बिना सम्भव नहीं है।

12– **अनुभव ही सत्य**–अवधारणाएँ विचार, प्रतीक, घटनाएँ इत्यादि सभी को झुठलाया या तोड़–मरोड़ किया जा सकता है। लेकिन

व्यक्ति को अपने द्वारा किये गये अनुभव उसके लिये कभी असत्य नहीं हो सकते हैं।

13– **अधिगम व्यक्तिवादी क्रिया**–शिक्षण के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से हम व्यक्ति को कुछ भी सिखा नहीं सकते हैं। केवल वास्तविक सीखने को व्यक्ति के लिये सुविधाजनक बनाने मात्र में सफल हो सकते हैं। अधिगम पूर्णतया एक व्यक्तिवादी प्रक्रिया है।

14– **भयमुक्त तत्परता**–दबाव या भय के द्वारा 'आत्म' को तात्कालिक अनुक्रिया हेतु, बहुत अधिक तत्पर नहीं बनाया जा सकता। दबाव या भय के अभाव में 'आत्म' अभिव्यक्ति के लिये अधिक तत्पर एवं सक्रिय होता है।

मुस्ताक्स के उपर्युक्त सिद्धान्त निर्देशन की दृष्टि से व्यक्ति के अध्ययन के क्षेत्र में पर्याप्त महत्व रखते हैं। निर्देशन एवं परामर्श की सफलता के लिये इन्हें ध्यान में रखना आवश्यक है। लेकिन साथ ही यह जानना आवश्यक है कि व्यक्ति का आत्म या स्व कोई सिद्ध अवधारणा नहीं हैं। स्व सदैव परिवर्तनशील है, साथ ही इसमें कुछ आधारभूत स्थायित्व भी आ जाता है जिससे स्व का मूल रूप बना रहता है। स्व सदैव व्यक्ति के अनुभवों से प्रभावित होता है। स्वयं की व्यक्ति की अवधारणा या आत्म प्रतिमा के विषय में एण्डरसन ने जो विशेषताऐं बतायी हैं, उनसे भी आत्म या स्व के विचार को समझने में पर्याप्त सहायता मिलती है। इन विशेषताओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है–

1– **अपना प्रत्यक्षीकरण**–प्रत्येक व्यक्ति अपनी एक प्रतिमा या अपने विषय में एक प्रत्यक्षीकरण रखता है जो कि उसके दूसरों के प्रत्यक्षीकरण से नितान्त अलग होता है।

2– **प्रतिमा का विभाजन**–आत्म–प्रतिमा को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, जैसे भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक

3– **प्रतिमाओं की विशेषता**–ये प्रतिमाएँ न तो पूर्ण होती हैं और न ही पूरी तरह सत्य।

4– **अवचेतन मूल्य**–भौतिक तथा मनोवैज्ञानिक दोनों ही प्रतिमाओं में अनेक कारक सम्मिलित रहते हैं जिन्हें अवचेतन रूप में मूल्य प्रदान करता है।

5– **परिवेश से उत्पन्न**–मनोवैज्ञानिक प्रतिमा, प्रारम्भिक जीवन में ही बालक के परिवेशात्मक अनुभवों के परिणामस्वरूप निर्मित हो जाती है।

6– **पहले साल का महत्व**–आत्म–प्रतिमा के विकास में जीवन का प्रथम वर्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है।

7– **आत्म–प्रतिमा की संरचना**– आत्म–प्रतिमा की संरचना ही व्यक्ति के प्रतिदिन एवं प्रतिक्षण के व्यवहारों को निर्धारित करती है।

व्यक्ति के अध्ययन के सन्दर्भ में, आत्म–प्रतिमा या स्व की वह केन्द्रीय तत्व है जिसका अन्वेषण किया जाता है। इस अन्वेषण हेतु परामर्शदाता अनेक अनेक प्रविधियों का उपयोग करते हैं। ये प्रविधियाँ व्यक्ति के आत्म को समझने व व्यक्ति की स्वयं अपनी समझ के मापन की दृष्टि से विशेष महत्व रखती हैं। अब हम इन प्रविधियों पर संक्षेप में क्रमशः विचार करेंगे।

23.2.2 व्यक्तिगत जानकारी

व्यक्ति का अध्ययन करने के लिये आवश्यक जानकारी जुटाना आवश्यक है। व्यक्ति अध्ययन से ही व्यक्तिगत मार्गदर्शन एवं परामर्श दिया जाना सम्भव है। इसी के द्वारा व्यक्ति का विकास सम्भव है। प्रत्येक व्यक्ति के सम्बन्ध में निम्नलिखित जानकारी आवश्यक है। **मायर्स** ने निम्नलिखित व्यक्तिगत जानकारी को एकत्र करने पर बल दिया है–

1– **सामान्य सूचनाएँ**–इसके अन्तर्गत ऐसी सामान्य जानकारी रखी जाये जिसके द्वारा व्यक्ति तक सरलता से पहुँचा जा सके। अतः इन

उपशीर्षक के अन्तर्गत व्यक्ति का नाम, घर का पता, जन्म–स्थान एवं जन्म–तिथि का उल्लेख हो।

2– स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी– मायर्स के अनुसार वांछनीय निर्देशन एवं परामर्श के लिये व्यक्ति के शारीरिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सम्पूर्ण जानकारी को एकत्र करना चाहिये। इसके लिये आवश्यक है कि व्यक्ति यदि कभी बीमार रहा हो तो उसकी प्रमुख बीमारियों की जानकारी भी एकत्र की जाये। इसके अतिरिक्त व्यक्ति अथवा छात्र के स्वास्थ्य की जाँच की रिपोर्ट भी एकत्र की जाये जिससे कि व्यक्ति का अध्ययन सुचारू रूप से हो सके।

3– मनोवैज्ञानिक जानकारी–व्यक्ति के अध्ययन की दृष्टि में यह अपेक्षित है कि उसकी बुद्धि–लब्धि, अभिरुचियों, मूल्यों एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी मनोवैज्ञानिक जानकारी एकत्र की जाये।

4– सामाजिक पर्यावरण की जानकारी–व्यक्ति के सामाजिक पर्यावरण से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करते समय निम्नलिखित बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिये।

5– प्रथम, शैक्षिक उपलब्धि– व्यक्ति का अध्ययन को करते समय हमें उसकी शैक्षिक एवं अनेक प्रकार की उपलब्धिों की जानकारी भी प्राप्त करनी चाहिये। इस सम्बन्ध में हमें छात्र से सम्बन्धित विद्यालय में जो अभिलेख उपलब्ध हो उनको देखना चाहिये। इसी के साथ–साथ हमें यह भी देखना होगा कि छात्र किन विषयों में अधिक अंक प्राप्त करता है आर उसकी रुचि किस दिशा में है। इस प्रकार शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करते समय हमें व्यक्ति की अभिरुचियों एवं विभिन्न विषयों में रुचियों की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है।

6– द्वितीय, भावी योजना– व्यक्ति का अध्ययन करते समय यह भी आवश्यक है कि हम यह देखें कि वह किस उद्देश्य की पूर्ति के लिये शिक्षा प्राप्त कर रहा है और भविष्य में वह कौन सा कार्य करना चाहता है। दूसरे शब्दों में, हमें व्यक्ति की शैक्षिक एवं व्यावसायिक आकांक्षाओं

की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। यदि किसी व्यक्ति ने अपने भविष्य के विषय में कोई योजना नहीं बनायी है तो स्पष्ट है कि उसको ऐसा निर्देशन एवं परामर्श देना होगा जिससे कि वह अपनी भावी योजना का वांछनीय निर्धारण कर सके।

निर्देशन कार्य में व्यक्तिगत सूचनाओं का महत्व–

व्यक्ति से सम्बन्धित सूचनाओं का निर्देशन के निम्निलिखित कार्यों में उपयोग होता है–

1– व्यक्तिगत सूचनाएँ अच्छे समायोजन के लिये परामर्श देने में सहायक होती है।

2– शैक्षिक एवं व्यावसायिक चयन में सहायता का आधार, व्यक्तिगत सूचनाऐं होती है।

3– समस्यात्मक बालकों का उपचार करने में छात्र के व्यक्तिगत गुण, पारिवारिक पृष्ठभूमि की जानकारी सहायक होती है।

4– अपव्यय और अवराधन की समस्या के समाधान में भी व्यक्तिगत सूचनाओं का महत्वपूर्ण स्थान है।

5– अनुशासनहीनता के कारणों को जानने में व्यक्तिगत सूचनाएँ सहायक होती हैं।

23.2.3 जानकारी प्राप्त करने की विधियों

व्यक्ति का अध्ययन करने के लिये उसके जीवन एवं परिवेश, कार्यशील, कार्य–वातावरण, स्वभाव आदि सम्बन्धी जानकारी एकत्र करने के लिये अनेक प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है।

व्यक्ति से कुछ सूचनायें मानकीकृत उपकरणों द्वार प्राप्त होती हैं। ये सूचनायें वस्तुनिष्ठ होते हुए भी अपूर्ण होती हैं। इसलिये अमानकीकृत उपकरणों तथा विधियों से भी सूचनायें एकत्र की जाती हैं। **स्ट्रैंग** के शब्दों में–'सम्पूर्ण विद्यार्थी का अध्ययन करने के लिये अभी तक किसी ने भी एक पूर्ण विधि का निर्माण नहीं किया है। शायद उत्तम विधि वह

है जिसके द्वारा विद्यार्थी का विभिन्न परिस्थितियों में अध्ययन किया जायें।

व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी जानकारी एकत्र करने के लिये अनेक प्रकार की प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। इन प्रविधियों को दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं– अमानकीकृत एवं मानकीकृत प्रविधियां

23.2.4 अमानकीकृत प्रविधियां

व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पक्षों का अध्ययन करने के लिये जिन अमानकीकृत प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है उनमें से निम्नलिखित मुख्य हैं–

1– प्रश्नावली 2– साक्षात्कार 3– प्रेषण
4– संचयी अभिलेख 5– सामाजिकी 6– व्यक्ति अध्ययन
7– क्रम–निर्धारण 8– उपाख्यानक अभिलेख
9– आत्म–कथा

23.2.5 मानकीकृत प्रविधियां

व्यक्ति से सम्बन्धित जानकारी एकत्र करने के लिये अनेक मनोवैज्ञानिक मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। ऐसा इसलिये करते है कि इनके माध्यम से जो जानकारी प्राप्त होती है वह अधिक विश्वसनीय मानी जाती है। साथ ही मानकीकृत मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से व्यक्ति के विषय में उन बातों का भी ज्ञान होता है जो निर्देशन एवं परामर्श की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

1– सांस्कृतिक घटकों का प्रभाव – अधिकार, मानकीकृत मनोवैज्ञानिक सांस्कृतिक घटकों से प्रभावित होते हैं। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति के सांस्कृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण में भी मानकीकृत मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करना उचित है। यह सही है कि कुछ ऐसे मानकीकृत परीक्षण बनाये गये हैं जो सांस्कृतिक प्रभाव से मुक्त होते हैं। लेकिन इसके विषय में भी मतभेद हैं और इसलिये ही

हमारे देश में मानकीकृत मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रायः देश के छात्रों एवं युवकों को वांछनीय शैक्षिक निर्देशन एवं परामर्श उपलब्ध नहीं हो पाता है।

2– उद्देश्य पूर्ति– परीक्षण मुख्य रूप से तीन उद्देश्यों के लिये किये जाते हैं, ये हैं– पूर्वानुमान, भविष्य कथन, निदान और शोध। परीक्षणों का प्रयोग परीक्षणकर्ता विशिष्ट उद्देश्य के लिये, परीक्षार्थियों के भविष्य की उपयुक्तता के लिये चुनाव, आदि में करता है। हम परीक्षणों का प्रयोग छात्रों के कॉलेजों अथवा विश्वविद्यालयों के प्रवेश में व्यवसाय के लिये भविष्य कथन, आदि में करते हैं। परीक्षणों के परिणाम व्यक्ति के भविष्य के बारे में भविष्य कथन करते हैं और बताते हैं कि उसे जीवन में किस सीमा तक सफलता मिल सकती हैं।

3– विशेष परिस्थितियों में प्रयोग– परीक्षणों का निर्देशन एवं परामर्श की स्थितियों में विशेष रूप से प्रयोग किया जाता हैं, जैसे एक छात्र यदि स्कूल परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं होता है तो उसे निर्देशनदाता को सौंप दिया जाता है कि वह उसकी असफलता के कारणों का पता लगाये।

4– कई परिकल्पनाओं का निर्माण–बालक का अध्ययन करते समय निर्देशनदाता कई परिकल्पनाओं का निर्माण करता है, जैसे–उच्च अध्ययन के लिये बालक में आश्यक बौद्धिक क्षमता का कम होना, मूल (बेसिक) ज्ञान का ही अभाव होना या बालक का गलत प्रकार से अध्ययन करने के कारण अनुत्तीर्ण होना, आदि। निर्देशनदाता भविष्य में बालक की क्षमताओ का भविष्य कथन करने के लिये उस बालक पर किये गये परीक्षण के प्राप्तांक तथा उसी परिस्थिति में अन्य बालकों के प्राप्तांकों से तुलना करता है।

5– विभिन्न परिस्थितियों के प्राप्तांकों का प्रयोग–निदान के लिये निर्देशनकर्ता उसी बालक के विभिन्न परीक्षणों के प्राप्तांकों की तुलना करता है जो उसे विभिन्न परिस्थितियों में दिये जाते है। यहां पर

यह कहना आवश्यक है कि निर्देशकर्ता बालक की कठिनाइयों के कारणों को जानकर ही उसे सहायता एवं निर्देश दे सकता है। इस प्रकार परीक्षणों का प्रयोग नियंत्रित चर के रूप में, मानव व्यवहार के वर्णन तथा सम्बन्धों और व्यवहारों के अध्ययन के लिये और स्थापित परिकल्पनाओं के सत्यापन में किया जाता है।

संक्षेप में, यह कह सकते हैं कि परीक्षण व्यक्तिगत व्यवहारों का विश्लेषण करने में, वर्णन करने में, मूल्यांकन में, भविष्य कथन और निर्देशन में सहायक होते हैं तथा मानव व्यवहार एवं शिक्षा में सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. अमानकीकृत एवं मानकीकृत परीक्षण पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

23.3 सार–संक्षेप

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता क्यों पड़ती है? के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें बताया गया है कि आत्म या स्व के ज्ञान के लिए वैज्ञानिक अवलोकन एवं आत्म निरीक्षण की आवश्यकता होती है। चूंकि आत्म या स्व का ज्ञान बहुत ही कठिन है अतः मनोवैज्ञानिक परीक्षण के आधार पर इसको प्राप्त किया जा सकता है। यह भी बताया गया है कि व्यक्तिगत जानकारी प्राप्त करने के लिए मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता महत्वपूर्ण होती है। वस्तुतः देखा जाये तो मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है।

इसी इकाई के अंत में जानकारी प्राप्त करने की विधियों के बारे में वर्णन किया गया है जिसमें अमानकीकृत तथा मानकीकृत परीक्षण प्रमुख है। आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों को मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता के बारे में ज्ञान प्रदान करेगी।

23.4 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता

देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

मनोवैज्ञानिक परीक्षण– मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की जानकारी विभिन्न परीक्षणों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षण किसे कहते है?

2– मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता क्यों होती है?

3– आत्म या स्व के ज्ञान से आप क्या समझते है?

4– व्यक्तिगत जानकारी पर प्रकाश डालिये।

5– अमानकीकृत परीक्षण के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

विस्तृत

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता पर एक निबन्ध लिखिये।

2– व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त करने की विधियों का वर्णन कीजिये।

23.5 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15 पेज नं. 139–144

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012,

3– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005

टिप्पणी

खण्ड–पंचम – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई–24, मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार

24.0 इकाई का उद्देश्य

24.1 परिचय

24.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार

- 24.2.1 अभिरुचि परीक्षण
- 24.2.2 विभेदक अभिरुचि परीक्षण
- 24.2.3 सामान्य अभिरुचि परीक्षण श्रृंखला
- 24.2.4 बुद्धि परीक्षण
- 24.2.5 उपलब्धि परीक्षण
- 24.2.6 रुचि परीक्षण
- 24.2.7 व्यक्तित्व परीक्षण

24.3 प्रक्षेपण तकनीक

24.4 सार–संक्षेप

24.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

24.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

24.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रकारों पर प्रकाश डालना है। प्रस्तुत इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकारों की विस्तृत चर्चा की गयी है।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षण के बारे में लिखा सकेंगे।

2– अभिरुचि परीक्षण के बारे में जान सकेंगे।

3– विभेदक अभिरुचि परीक्षण के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4– सामान्य अभिरुचि परीक्षण श्रृंखला के बारे में लिख सकेंगे।

5– बुद्धि परीक्षण के बारे जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

6– उपलब्धि परीक्षण के बारे में प्रकाश डाल सकेंगे।

7– रुचि परीक्षण से अवगत हो सकेंगे।

8– व्यक्तित्व परीक्षण के बारे जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

9– प्रक्षेपण तकनीक के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

24.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रकारों के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है जिसमें बताया गया है कि समकालीन परामर्श कार्यक्रम में सूचनाओं के संकलन में विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग होता है, जिनमें कुछ परीक्षण ऐसे है जिनका उपयोग समस्या व सूचना को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में ऐसे ही परीक्षणों का वर्णन किया गया है जिनसे मनोवैज्ञानिक व्याख्या की जाती है। अभिरुचि परीक्षण वह परीक्षण है जो व्यक्ति की योग्यता की ओर संकेत करती है। वास्तविकता तो यह है कि व्यक्ति की अभिरुचि को जानने के लिए इस परीक्षण का उपयोग किया जाता है। अभिरुचि परीक्षण के विभिन्न प्रकारों का भी वर्णन किया गया है। इसी इकाई में बुद्धि परीक्षण, उपलब्धि परीक्षण, रुचि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, व्यक्तित्व का मापन तथा प्रक्षेपण तकनीक के बारे प्रकाश डाला गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई का पढ़ने के बाद आप लोग मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रकारों के बारे में जान सकेंगे तथा विभिन्न परीक्षणों में इसका उपयोग कर सकेंगे।

24.2 मनोवैज्ञानिक परीक्षण के प्रकार

समकालीन परामर्श कार्यक्रम में सूचनाओं के संकलन हेतु विविध प्रकार के परीक्षणों का उपयोग होता है। इन परीक्षणों का चयन, निर्देशन हेतु वांछित सूचना की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। निर्देशन हेतु, इन परीक्षणों का स्वरूप व प्राप्त सूचनाओं की

प्रकृति किस प्रकार सहायक एवं उपयोगी होती है, इस सन्दर्भ में व्यावहारिक ज्ञान हेतु, यहाँ पर कुछ प्रमुख परीक्षणों का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

24.2.1 अभिरुचि परीक्षण

अभिरुचि का अर्थ– अभिरुचि को अनेक विद्धानों ने परिभाषित किया है। **वैरन** के अनुसार 'अभिरुचि वह दशा या गुणों का रूप है, जो व्यक्ति की उस योग्यता की ओर संकेत करती है जो प्रशिक्षण के बाद ज्ञान, क्षमता या प्रतिक्रियाओं के समूह जैसे, भाषा बोलने की या संगीतोत्पादन की योग्यता सीखता है।' **ट्रेक्सलर** ने लिखा है, 'अभिरुचि वर्तमान दशा है, जो व्यक्ति की भावी क्षमताओं की ओर संकेत करती हैं।' **सुपर** ने अभिरुचि की चार विशेषताएँ लिखी हैं–

1– विशिष्टता, 2– एकात्मरचना

3– सीखने में सुविधा 4– स्थिरता

इन परिभाषाओं के विश्लेषण से अभिरुचि की निम्न विशेषताएँ प्रकट होती हैं– यह वर्तमान दशा है जो भविष्य की ओर संकेत करती है। अभिरुचि किसी कार्य को करने की योग्यता की ओर इशारा करती है। इनका निर्माण विशेष आयु स्तर पर होता है। अभिरुचि वंशानुक्रम और वातावरण से प्रभावित होती है। अभिरुचि पर शिक्षा और प्रशिक्षण का प्रभाव पड़ता है।

अभिरुचि के प्रकार – **कैले** नाम के विद्धान ने अभिरुचि के निम्न प्रकार बताये हैं–

1– मौखिक, 2– संख्यात्मक 3– स्थानिक, 4– गति, 5– सामाजिक, 6– संगीतात्मक, 7– यान्त्रिक

बिंघम ने अभिरुचि के आठ प्रकारों का उल्लेख किया है–

1– दस्तकारी के कार्य, 2– क्लर्क के कार्य, 3– कुशल व्यावसायिक कार्य, 4– शिक्षण कार्य, 5– वकालत का कार्य, 6–

इन्जीरियरिंग कार्य, 7– संगीत तथा कला, 8– डॉक्टर के व्यवसाय के लिये अभिरूचि।

अभिरुचि का मापन–अभिरुचि का मापन करने के लिये अनेक विद्वानों ने परीक्षणों का निर्माण किया है। अभिरुचि परीक्षा के बारे में **गैंरट** ने लिखा है कि 'अभिरुचि परीक्षा वे परीक्षाएँ है जिनका उपयोग संगीत और गणित में छात्र की प्रतिमा या मशीनों और उपकरणों के प्रयोग करने की कुशलता ज्ञात करने के लिये किया जाता है। '**स्किनर** ने अभिरुचि परीक्षण के बारे में लिखा है कि ये परीक्षाएँ विशिष्ट योग्यताओं की सम्भव मात्रा का मापन करने का प्रयास करती हैं'। **हल** ने लिखा है कि 'किसी व्यक्ति में किसी विशेष व्यवसाय को सीखने या विशेष कौशल में पारंगत होने की क्षमता को ज्ञात कराने के उद्देश्य से अभिरुचि परीक्षणों का निर्माण होता है।'

अभिरुचि परीक्षाओं के प्रकार–अभिरुचि परीक्षणों को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता हैं–

1– **कारक विश्लेषण प्रकार**– इन परीक्षणों द्वारा प्रधान योग्यताओं का मापन होता है। **थर्स्टन** ने सात प्रकार की प्रधान योग्यताओं का पता लगाकर कारक विश्लेषण विधि का प्रयोग किया। उसके द्वारा निर्मित परीक्षण शिकागो परीक्षण के नाम से प्रसिद्ध हुए।

2– **विभेद अभिरुचि परीक्षण**–इन परीक्षणों में अनेक उप–परीक्षण होते हैं। जिनको बैटरी कहते हैं। इनके द्वारा विभिन्न योग्यताओं का मापन होता है। डी.ए.टी. परीक्षण इसका उदाहरण है।

3– **विशिष्ट क्षेत्रों के अभिरुचि परीक्षण**–इनके द्वारा कला, संगीत, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, क्लर्की आदि विशिष्ट क्षेत्रों में प्रदर्शित योग्यता का मापन होता है।

24.2.2 विभेदक अभिरुचि परीक्षण

निर्देशन के क्षेत्र में थर्स्टन ने अपने प्राथमिक मानसिक योग्यताओं के परीक्षणों का उपयोग, इस आशा के साथ आरम्भ किया है कि व्यक्ति

की योग्यताओं के प्रतिरूप ऐसे पाठ्यक्रमों एवं व्यवसायों को निर्दिष्ट कर सकेंगे, जिनमें कि व्यक्ति अधिकाधिक सफल हो सकता है।

विभेदक अभिरुचि परीक्षण श्रृंखला का प्रकाशन 1947 में हुआ तथा मूल रूप से हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थियों के परामर्श हेतु, इसका निर्माण किया गया था। इसके अन्तर्गत समाविष्ट आठ अभिरुचि मापं, निर्देशन की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इन मापों से सम्बद्ध परीक्षण इकाइयों को निम्न उदहारणों के द्वारा सहज रूप से जाना जा सकता है–

1– **शाब्दिक तर्क**–इस परीक्षण इकाई में, दिये गये विभिन्न शाब्दिक विकल्पों में से, व्यक्ति को सादृश्यता के आधार पर तर्कणा का उपयोग करते हुए, किसी विकल्प को चुनकर वाक्य पूर्ति करनी होती है। उदाहरणस्वरूपः

यदि .....स्थिर है तो ..... गतिशील है।

रेडियो	पुलिस	लेखक	वायु
स्पीकर	मोटर	कलम	पहाड़

2– संख्यात्मक योग्यता–इन परीक्षण इकाइयों द्वारा व्यक्ति की सामान्य गणित से सम्बद्ध गणना क्षमता का मापन किया जाता है। उदाहरणस्वरूपः

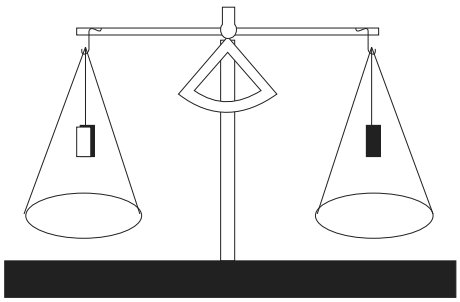
योग बताइये		उत्तर
393	(क)	7908
4658	(ख)	8608
3790	(ग)	8898
3790	(घ)	8908
67	(ङ)	इनमें से कोई भी नहीं है।

3– अमूर्त तर्क परीक्षण–इस माप से सम्बन्धित परीक्षण इकाइयाँ आमतौर पर चित्रात्मक या आकृतिमूलक होती हैं। इसके अन्तर्गत किसी

आकृति शृंखला की पूर्ति हेतु सम्भावित विकल्प व्यक्ति को निर्दिष्ट करना होता है।

4– स्थान तर्क परीक्षण–स्थान, आकार, प्रकार के मूल्यांकन एवं निर्धारित में व्यक्ति अपनी तार्किक क्षमता का उयोग करने में कितनी सफल है? इस विषय में जानकारी हेतु जिस प्रकार की आकृतिमूलक परीक्षण इकाइयों का उपयोग किया जाता है।

5– यान्त्रिक तर्क परीक्षण– सम्बद्ध इकाइयों के द्वारा व्यक्ति की यान्त्रिक समझ तथा क्षमता के मूल्यांकन का प्रयास किया जाता है। इन परीक्षण इकाइयों का रूप भी आकृतिमूलक होता है। जैसा कि डी.ए.टी. में प्रयुक्त निम्न उदाहरण से स्पष्ट है–



किस पलड़े में वजन अधिक है?

यदि दोनों में बराबर है तो अपना उत्तर शब्द द्वारा अंकित कीजिए।

24.2.3 सामान्य अभिरुचि परीक्षण शृंखला

इस परीक्षण शृंखला का विकास अमेरिका की सेवायोजन सेवा के द्वारा किया गया है तथा इस परीक्षण का उपयोग, समस्त अमेरिका में सेवायोजन निर्देशन से सम्बन्द्ध संस्थाओं द्वारा किया जाता है। इस परीक्षण शृंखला का निर्माण, व्यवसाय सम्पादन से सम्बद्ध थर्स्टन के कारकीय विश्लेषण के परिणामों के आधार पर हुआ है। वर्तमान में प्रचलित जी. ए. टी. बी. के अन्तर्गत, आठ कागज पेन्सिल का उपयोग तथा चार उपकरण परीक्षण सम्मिलित हैं जिनके द्वारा निम्न नौ कारकों से सम्बद्ध माप एकत्र किये जाते हैं।

1. **सामान्य तर्क योग्यता**—इस माप से सम्बद्ध परीक्षण तीन उपक्षेत्रों—शब्द ज्ञान, त्रिआयामी स्थान बोध तथा गणितीय योग्यता, के संयुक्त मूल्यांकन पर आधारित है।

2. **शाब्दिक अभिरुचि**—इस कारक से सम्बन्धित परीक्षण इकाइयों के द्वारा व्यक्ति के भाषा, अक्षर एवं व्याकरण ज्ञान की परीक्षा की जाती है।

3. **संख्यात्मक अभिरुचि**—इस कारक से सम्बद्ध माप व्यक्ति की गणना तथा गणितीय तर्क क्षमता का मूल्यांकन करते हैं।

4. **स्थानिक अभिरुचि**—इसमें व्यक्ति की त्रिआयामी स्थान बोध क्षमता को परखने का यत्न किया जाता है।

5. **आकार प्रत्यक्षीकरण**—इस परीक्षण में सम्बन्धित इकाइयों में व्यक्ति के विभिन्न आकार के मध्य भेद या समानता वाले आकारों कों निर्दिष्ट करना होता है। आमतौर पर ये आकार विभिन्न औजारों या दैनिक जीवन में उपयोग में लाये जाने वाले विद्युत एवं यान्त्रिक उपकरणों के होते हैं।

6. **लिपिक प्रत्यक्षीकरण**—लिपिक प्रतयक्षीकरण से सम्बन्धित परीक्षण इकाइयों में व्यक्ति को विभिन्न दिये गये नामों की तुलना करके निष्कर्ष निकालने होते हैं।

7. **गति संयोजन**—इस परीक्षण में व्यक्ति को एक सेकण्ड में दिये गये वर्गों में अधिकाधिक संख्या में पाई का चिन्ह अंकित करना होता है।

8. **अँगुली दक्षता**—इस से सम्बद्ध परीक्षण में व्यक्ति के दोनों हाथों के उपयोग की क्षमता का मापन किया जाता है। इसमें 50 छेद वाला एक खाली बोर्ड तथा दूसरा 50 डण्डियों वाला वाशर सहित भरा बोर्ड होता है। भरने की क्रिया में खाली बोर्ड के विभिन्न आकार वाले छेदों में, डण्डियों वाले बोर्ड से समरूप आकार के वाशर निकालकर शीघ्रातिशीघ्र छेदों में डालना होता है। परीक्षण

के दूसरे चरण में इस प्रकार पूर्ण किये बोर्ड में से वाशरों को निकालकर उनके सर्व नियत स्थानों पर पुनः लगाना होता हैं

9. **शारीरिक दक्षता–यह** परीक्षण भी उपरोक्त अँगुली दक्षता परीक्षण से बहुत कुछ मिलता–जुलता ही है। इसमें भी दो बोर्ड होते हैं। पहले बोर्ड में 48 खूँटियाँ होती हैं तथा बोर्ड में इतने ही छेद होते है। व्यक्ति को परीक्षण कार्य के अन्तर्गत शीघ्रातिशीघ्र खूँटियाँ एक बोर्ड से निकालकर, दूसरे बोर्ड के छिद्रों में लगानी होती हैं। परीक्षण के द्वितीय चरण में वह दूसरे बोर्ड से इन लगायी गयी खूँटियों को निकालकर उनके पूर्व स्थानों पर जल्द–से–जल्द लगाने का यत्न करता है।

सामान्य अभिरुचि परीक्षण शृंखला के लिये आमतौर पर सवा दो घण्टे का समय पर्याप्त माना जाता है। इस परीक्षण का स्वरूप एवं मूल्यांकन क्षमता इतनी व्यापक है कि कृषि, उद्योग तथा अन्य विभिन्न क्षेत्रों से सम्बद्ध हजारों व्यवसायों हेतु, व्यक्ति की अभिरुचि का पता इससे सहजता से लगाया जा सकता है। वर्तमान में यह परीक्षण अत्यन्त लोकप्रिय हुआ है तथा अमेरिका के अतिरिक्त अन्य 27 राष्ट्रों में भी, सेवायोजन निर्देशन कार्य हेतु इसका बहुलता से उपयोग किया जा रहा है।

इन उपरोक्त परीक्षणों के अतिरिक्त, निर्देशन हेतु इसका उपयोग में लाये जाने वाले और भी अनेक परीक्षण हैं, जिनकी एक संक्षिप्त सूची सुपर ने इस प्रकार से प्रस्तुत की है–

1– फ्लैनगैन अभिरुचि वर्गीकरण परीक्षण

2– गिलफोर्ड–जिमरमैन अभिरुचि सर्वेक्षण

3– होल्जिंगर–क्राउडर, एक–कारकीय परीक्षण

4– बहुल अभिरुचि परीक्षण

5– प्राथमिक मानसिक योग्यताओं का परीक्षण

निर्देशन कार्यक्रमों में उपयोग में लाये जाने वाले परीक्षणों का क्षेत्र केवल अभिरुचि मापन तक सीमित नहीं है वरन् निर्देशन हेतु अपेक्षित सूचना की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए ही व्यक्तित्व, अभिवृत्ति, अभिरुचि, रुचि, बुद्धि, मानसिक एवं शारीरिक योग्यता से सम्बद्ध विभिन्न परीक्षणों में से किन्ही उपयोगी परीक्षणों का चयन किया जाता है। निर्देशन हेतु सही सूचनाओं की प्राप्ति बहुत कुछ उपयुक्त परीक्षण के चयन एवं उसके सफल प्रयोग पर भी निर्भर है। अतः इस विषय में निर्देशनकर्ता को अत्यन्त सावधानी से निर्णय लेना चाहिए।

24.2.4 बुद्धि परीक्षण

निर्देशन में बुद्धि परीक्षणों का महत्वपूर्ण स्थान है। बुद्धि मापन के आधार पर उपबोधक शैक्षिक और व्यावसायिक नियोजन में छात्र की सहायता करने में समर्थ होता है। बुद्धि परीक्षणों का अध्ययन करने से पूर्व बुद्धि को समझना आवश्यक है।

परिभाषा—बुद्धि को सर्वप्रथम यूनानी दार्शनिकों ने परिभाषित करने का प्रसास किया। बुद्धि को परिभाषित करना एक विवादास्पद विषय रहा है। कुछ ने इसे क्षमताएं अर्जित करने की क्षमता तो कुछ ने बुद्धि को नवीन परिस्थितियों के साथ समायोजन की योग्यता के रूप में परिभाषित किया। थर्स्टन ने बुद्धि को आठ योग्यताओं का पुंज कहा, भारतीय दर्शन के अनुसार, 'उपयुक्त समय, उपयुक्त स्थान और उपयुक्त गति में सही वस्तु को देखना या उसके बारे में चिन्तन करने की जन्मजात क्षमता ही बुद्धि है।,' स्पष्ट है कि बुद्धि एक जटिल घटक है और इसके बारे में विद्वान एक मत नहीं हैं। कालान्तर में कुछ विद्वानों ने बुद्धि को स्पष्ट करने के लिये कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। यहाँ इन सिद्धान्तों का विवेचन आवश्यक है—

1— बिने का एकल सिद्धान्त— फ्रांस के विद्वान अल्फ्रेड बिने ने एकल सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उनके अनुसार बुद्धि एक मानसिक शक्ति है जो सभी मानसिक कार्यों को संचालित, संगठित और प्रभावित

करती हैं। बिने के विचारों का समर्थन अर्मन, स्टर्न ओर एविंघास नाम विद्वानों ने भी किया।

2– द्वि–तत्व सिद्धान्त–इस सिद्धान्त का प्रतिपादन ब्रिटेन के विद्वान स्पीयरमेन ने सन् 1904 में किया। इनके मतानुसार बुद्धि की रचना में दो तत्वों का योगदान होता है। ये दो तत्व–एक, सामान्य तत्व और दूसरे, अनेक विशिष्ट तत्व हैं। स्पीयरमैन के अनुसार सामान्य तत्व स्थायी होती है और समस्त मानसिक क्रियाओं को प्रभावित करता है। विशिष्ट तत्व अस्थायी होते हैं और एक समय में एक व्यक्ति में अनेक विशिष्ट तत्व विभिन्न मात्रा में पाये जाते हैं। सामान्य तत्व विशिष्ट तत्वों का सदैव प्रभावित करते रहते हैं।

3– थार्नडाइक का बहुतत्व सिद्धान्त–थार्नडाइक के मतानुसार बुद्धि अनेक तत्वों से मिलकर बनी है। उसके अनुसार बुद्धि अनेक जन्मजात योग्यताओं का मिश्रण है। उनके अनुसार बुद्धि में सामान्य तत्व जैसी कोई चीज नहीं होती है। थार्नडाइक का मत है कि बुद्धि में मुख्यतः शाब्दिक योग्यता, आंकिक योग्यता, भाषा, स्मृति, तार्किक योग्यता, स्थानिक योग्यता, भाषण योग्यता का योगदान होता है।

4– समूह तत्व सिद्धान्त–इसके प्रतिपादक थर्स्टन थे। उन्होंने कारक विश्लेषण के आधार पर बताया कि आठ तत्वों में से दो–तीन कारक मिलकर एक समूह बनाते हैं। ये समूह ही बुद्धि है। इनके अतिरिक्त बुद्धि के बारे में थामसन ने न्यादर्श सिद्धान्त, सिरिल बर्ट ने पदानुक्रमिक सिद्धान्त और गिल्फर्ड ने संक्रिया उत्पत्ति सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

बुद्धि का मापन–बुद्धि का मापन एक कठिन कार्य है। बुद्धि मापन का प्रथम प्रयास बिने ने किया। छात्रों में पाई जाने वाली अधिगम भिन्नता ने उनको मापन के लिये प्रेषित किया। वह उस मानसिक शक्ति को ज्ञात करना चाहते थे, जो भिन्नता के लिये उत्तरदायी है। उन्होंने साइमन के साथ मिलकर वर्ष 1905 में प्रथम बुद्धि परीक्षण तैयार किया जिसमें 30 प्रश्न थे। इसका प्रयोग 50 छात्रों पर किया। वर्ष 1908 और

1911 में संशोधित टेस्ट 54 प्रश्नों का तैयार किया। इस परीक्षण में 'मानसिक आयु' शब्द का प्रयोग पहली बार किया गया। बाद में 90 प्रश्नों का टेस्ट तैयार किया जो 'स्टेनफोर्ड–बिने टेस्ट' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। बाद में स्टर्न ने मानसिक आयु के स्थान पर 'बुद्धिलब्धि' शब्द का प्रयोग किया जो आज भी लोकप्रिय हैं इसकी गणना में निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग होता है।

$$\text{बुद्धिलब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

बाद में विद्वानों ने बुद्धिलब्धि के आधार पर छात्रों का वर्गीकरण अग्रलिखित रूप में प्रारम्भ किया।

बुद्धिलब्धि	**श्रेणी**
0–25	जड़
25–50	मूढ़
50–70	मूर्ख
70–90	मन्दबुद्धि
90–110	सामान्य
110–125	उच्चबुद्धि
125–140	अति उच्चबुद्धि
140 से अधिक	मेधावी

धीरे–धीरे बिने टेस्ट का अनुवाद करके अनेक देशों में इसका उपयोग लोकप्रिय हुआ।

24.25 उपलब्धि परीक्षण

व्यक्ति ने क्या सीखा या अर्जित किया इसको जानने के लिये जिन परीक्षणों का उपयोग होता है, उनको उपलब्धि परीक्षण कहते हैं। प्रायः विद्यालय में शिक्षक शिक्षण द्वारा विविध विषयों का ज्ञान छात्रों को कराते हैं या किसी प्रशिक्षण काल में प्रशिक्षण प्रशिक्षुओं को किसी कला में दक्ष बनाने का प्रशिक्षण देते हैं। अतः कुछ अन्तराल बाद यह मापन

आवश्यक है कि छात्रों ने अमुक विषय में कितना सीखा अथवा प्रशिक्षुओं ने कितनी दक्षता अर्जित की। इसका मापन करने के लिये उपलब्ध परीक्षण ही उपयुक्त प्रविधि है।

उपलब्धि परीक्षण की परिभाषा—उपलब्धि परीक्षण वैसे तो एक सामान्य परीक्षा का रूप है जो विद्यालयों में प्रतिमाह, प्रत्येक 3 माह बाद, छमाही और वार्षिक परीक्षा के रूप में होती है। कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं का ज्ञान उपलब्धि परीक्षण की अवधारणा को स्पष्ट करने में सहायक होगा। **सुपर** ने उपलब्धि परीक्षण और दक्षता परीक्षण को एक मानते हुए लिखा है, 'एक उपलब्धि या दक्षता परीक्षण 'क्या' और 'कितना' सीखा या कोई कार्य करने में अर्जित दक्षता की मात्रा निश्चित करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है।'

बिंघम ने उपलब्धि परीक्षण को परिभाषित करते हुए लिखा है, यदि विद्यालय के अन्दर या बाहर अर्जित पूर्व उपलब्धियों का निर्णय अनुभवों के प्रशिक्षण की अवधि एवं रूप के परिप्रेक्ष्य में किया जाता है तो उसे उपलब्धि परीक्षण कहते हैं।'

फ्रीमैन ने अनुसार, 'उपलब्धि परीक्षण किसी एक विषय या विषयों में व्यक्ति के द्वारा अर्जित ज्ञान, सूझ—बूझ तथा कौशल का मापन करते हैं।

उपलब्धि परीक्षण के प्रकार — उपलब्धि परीक्षणों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है—

1—शिक्षकों द्वारा निर्मित परीक्षण

2—मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण

1—शिक्षकों द्वारा निर्मित परीक्षण — शिक्षकों द्वारा निर्मित उपलब्धि परीक्षण भी दो प्रकार के होते हैं—

(अ) आत्मनिष्ठ परीक्षण

(ब) वस्तुनिष्ठ परिक्षण

आत्मनिष्ठ परिक्षण भी दो प्रकार के होते हैं–(1) मौखिक परीक्षण और (2) निबन्धात्मक परीक्षण। मौखिक परीक्षण में लिखित प्रश्नों के स्थान पर मौखिक प्रश्न पूछे जाते हैं और छात्र भी मौखिक उत्तर देता है। मौखिक परीक्षण द्वारा बालक के ज्ञान की व्यापक जाँच नहीं हो जाती है। इसमें परीक्षक को प्रश्न के कठिनाई स्तर का ज्ञान नहीं हो पाता है ।

निबन्धात्मक परीक्षण में प्रायः प्रश्नों के उत्तर लम्बे होते हैं। एक ही प्रश्न में अनेक बातों का उत्तर देना होता है। इसमें प्रश्नों की रचना सरल होती है तथा छात्रों को अपने विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता मिलती है। इस परीक्षण में छात्रों की स्मरण एवं कल्पना शक्ति का विकास होता है।

इन परीक्षणों द्वारा छात्र की योग्यता की भावनाओं का अधिक प्रभाव पड़ता है। ये परीक्षण पाठ्यक्रम की पूरी सामग्री पर आधारित न होकर केवल कुछ प्रकरणों तक सीमित रहते हैं।

वस्तुनिष्ठ परीक्षण के प्रचलन में वृद्धि हुई है। इनमें परीक्षक के प्रभाव को कम करने का प्रयास किया गया है। यह परीक्षण पूर्ण पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करता है। इसमें छोटे–छोटे प्रश्न अधिक संख्या में होते है। प्रश्न भी अनेक प्रकार के होते हैं। इन प्रश्नों का केवल एक ही उत्तर होता है। इसमें रटने की प्रवृत्ति को बल नहीं मिलता है। इसमें भाषा पर अधिकार को भी प्रोत्साहन नहीं मिलता है। इसमें अंक देने के लिये उत्तर भी परीक्षक को पूर्व में ही उपलब्ध करवा दिये जाते हैं। अब ऐसे परीक्षणों का मूल्याकन कम्प्यूटर द्वारा किया जाने लगा है।

2– मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण –ये ऐसे परीक्षण है जो वस्तुनिष्ठ होने के साथ विश्वसनीय भी होते है। भारत में अभी तक ऐसे परीक्षणों का अभाव है। निर्देश में प्रायः मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है क्योंकि निबन्धात्मक परीक्षाएँ आत्मनिष्ठ होती है।

24.2.6 रुचि परीक्षण

रुचियाँ किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की विशेषताएँ है जिनका शैक्षिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में बहुत महत्व होता है। रुचियों का शैक्षिक एवं व्यावसायिक चयन के साथ सम्बन्ध होने के कारण इनका निर्देशन के लिये ज्ञान होना आवश्यक है।

प्रश्न उठता है कि रुचि क्या है? रुचि को समझने के लिये यहाँ रुचि से सम्बन्धित कुछ परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक होगा।

रुचि की परिभाषा–बिंघम ने रुचि की परिभाषा इस प्रकार दी है–'रुचि किसी भी चुनाव में लीन होने तथा उसे चालू रखने की प्रवृत्ति है।'

स्ट्रंग के अनुसार, 'रुचि कोई पृथक मनोवैज्ञानिक इकाई नहीं है अपितु व्यवहार के अनेक पक्षों में केवल मात्र एक पक्ष है।'

रुमेल, रेमर्स और गेज ने रुचि की परिभाषा में लिखा है, 'रुचियाँ सुखद व दुखद, पसन्द व नापसन्द की भावना के व्यवहार की आकर्षक तथा विकर्षण की प्रतिछाया के रूप में होती हैं।'

ड्रेवर के अनुसार, 'रुचि किसी प्रवृत्ति का गत्यात्मक पहलू है।'

परिभाषाओं के विवेचन से रुचियों की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं–

- रुचि व्यक्तित्व का एक अंग है।
- रुचियों का योग्यताओं से सम्बन्ध होता है।
- आयु वृद्धि के साथ रुचियों में विविधिता समाप्त हो जाती है।
- रुचियाँ वंशानुक्रम और वातावरण से प्रभावित होती हैं।
- रुचि व्यवहार का एक पहलू है।
- रुचि अभियोग्यता से सम्बन्धित होती है।

रुचियों के प्रकार

सुपर ने रुचि को दो निम्नलिखित प्रकारों में विभक्त किया है–

1–व्यक्त रुचि 2– प्रदर्शित रुचि

हान तथा मेकलिन ने रुचियों के तीन प्रकार बताये हैं–

1–अभिव्यक्त रुचि 2– प्रेक्षित रुचि 3–मापित रुचि

1–अभिव्यक्त रुचियाँ–व्यक्ति जिन रुचियों को अपने शब्दों द्वारा प्रकट करता है, वे अभिव्यक्त रुचियाँ कहलाती हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से ये रुचियाँ विश्वसनीय नहीं होती है।

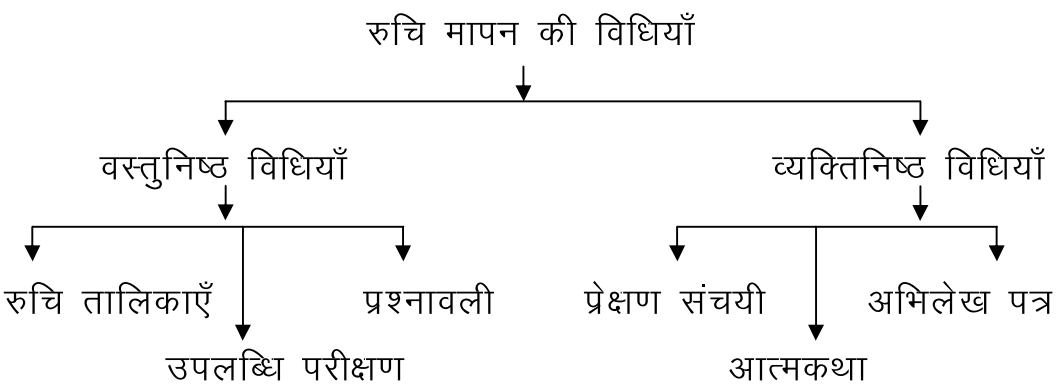
2–प्रदर्शित रुचियां–वे रुचियाँ जो व्यक्ति के व्यवहार या क्रियाओं द्वारा प्रदर्शित होती हैं, प्रदर्शित रुचि कहलाती हैं। ये अधिक विश्वसनीय होती हैं।

3–प्रेक्षित रुचि– शिक्षक या उपबोधक द्वारा प्रेक्षण से ज्ञात रुचि प्रेक्षित रुचि कहलाती है।

4–परीक्षित रुचि–परीक्षणों के द्वारा मापित रुचियाँ इसमें सम्मिलित की जाती हैं।

रुचियों का मापन

रुचि एक जटिल मनोवैज्ञानिक विषय है। रुचि के निर्धारण में इतने तत्वों का योगदान होता है कि शुद्धतापूर्वक इसका मापन एक कठिन कार्य है। रुचि के मापन में प्रयुक्त विधियाँ निम्नलिखित रेखाचित्र से स्पष्ट हैं–



वस्तुनिष्ठ विधियों में रुचि तालिकाओं का प्रयोग अधिक होता है। इसमें विभिन्न क्रियाओं से सम्बन्धित प्रश्न होते हैं। इसमें उन क्रियाओं पर चिन्ह लगाना होता है जिनको हम अत्यधिक चाहते हैं। ये भी

व्यावसायिक और गैर–व्यावसायिक प्रकार की होती हैं। अन्य विधियों का अध्ययन पूर्व में किया जा चुका है। यहाँ कुछ रुचि तालिकाओं का विवरण प्रस्तुत हैं–

1– स्ट्रांक की व्यावसायिक रुचि–परिसूची–स्ट्रांग महोदय ने स्टेनफोर्ट विश्वविद्यालय में इस परिसूची का निर्माण किया। इसमें 420 पद हैं जो विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित हैं। यह परिसूची 17 वर्ष की आयु वाले किशोरों के लिये उपयुक्त है। इसको भरने में लगभग आधा घण्टा लगता है। फलांकन स्टेंसिल द्वारा किया जाता है। फलांकन का विश्लेषण करके देखा जाता है कि परीक्षार्थी की रुचि उस व्यवसाय में लगे व्यक्ति के समकक्ष है या नहीं जो व्यवसाय में सफलतापूर्वक कार्य कर रहे हैं।

2– कूडर का अधिमान अभिलेख–इसमें 10 उपपरीक्षण हैं जो इस प्रकार हैं–बाह्य क्षेत्र की क्रियाएँ, यांत्रिक, संगणनात्मक, वैज्ञानिक, मैत्री, कलात्मक, साहित्यिक, संगीत, सामाजिक सेवा, एवं लिपिक। प्रत्येक उपपरीक्षण में प्रश्नों की संख्या अलग–अलग होती है। प्रत्येक प्रश्न या पद के साथ तीन क्रियाएँ लिखी होती हैं। इन तीन में से अधिक पसन्द को चिन्हित करना होता है।

3– हैपनर की व्यावसायिक रुचि–लब्धि–हैपनर ने चार कार्यक्षत्रों की चैक लिस्ट बनाई है। इन चार क्षेत्रों में प्रोफेशन (24), व्यापारिक व्यवसाय (24), दक्षता ट्रेड (20) और स्त्रियों के व्यवसाय (24) प्रमुख है। इसमें एक व्यक्ति एक से अधिक क्षत्रों में परीक्षा दे सकता है।

इनके अतिरिक्त और भी रुचि परीक्षण हैं, जैसे क्लीटन की व्यावसायिक रुचि तालिका, मेनसन्स का व्यावसायिक रुचि ब्लैंक, ली–थोरये प्रश्नावली, ओबरलेन व्यावसायिक रुचि जाँच आदि। भारत में वर्ष 1956 में इलाहाबाद मनोविज्ञान ब्यूरो ने सर्वप्रथम कूडर रुचि पत्र का भारतीयकरण किया झीगरन ने स्ट्रांग के परीक्षण का भारतीयकरण

किया। इस क्षेत्र में प्रो0 चटर्जी, डॉ0 पाण्डे, डॉ0 एस0पी0 कुलश्रेष्ठ, आर0 पी0 सिंह तथा डॉ0 भार्गव के नाम उल्लेखनीय हैं।

24.2.7 व्यक्तित्व परीक्षण

व्यक्तित्व एक ऐसा महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक पहलू है जिसकी शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन में अत्यधिक उपयोगी भूमिका रहती हैं। व्यक्तित्व ऐसा कारक है जिसका सम्बन्ध व्यक्ति की शैक्षिक एवं व्यवसायगत सफलता से होता है। अतः निर्देश के लिये इसका अध्ययन आवश्यक है। 'व्यक्तित्व' को वास्तविक स्वरूप से समझना एक जटिल विषय है। अतः इसको समझने के लिये कुछ परिभाषाओं पर विचार करना उपयुक्त रहेगा–

मोर्टन प्रिंस के अनुसार, 'व्यक्तित्व व्यक्ति की समस्त जैविक व जन्मजात प्रवृत्तियों, प्रेरणाओं, इच्छाओं, उद्वेग और अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।'

वुडबर्थ ने लिखा है, 'व्यक्तित्व को मानव व्यवहार के गुणात्मक रूप में परिभाषित किया जा सकता है।'

गेट्स के अनुसार, 'व्यक्तित्व से आशय गुणों के प्रारूप से है, न कि कुछ विशेषताओं की केवल मात्र सूची या विशेषताओं के संग्रह से।'

बोरिंग के अनुसार, 'वातावरण के साथ व्यक्ति का विशिष्ट या अनुरूप समायोजन ही व्यक्तित्व हैं।

वैलनटाइन ने लिखा है, 'व्यक्तित्व जन्मजात और अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।'

आलपोर्ट के अनुसार, 'व्यक्तित्व, व्यक्ति में विद्यमान मनोदैहिक व्यवस्थाओं का गत्यात्मक संगठन है, जो उसके परिवेश में उसके विलक्षण समायोजन का निर्धारक हैं।'

'व्यक्तित्व' शब्द लैटिन भाषा के 'परसोना' से उत्पन्न हुआ है। इस शब्द (परसोना) का अर्थ है– लिबास, नकाब या मुखोटा। रंगमंच पर विभिन्न पात्रों का अभिनय करने के लिय पहले मुखौटों का प्रयोग

किया जाता था। ये मुखौटे पात्रों के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करते थे। उपरोक्त परिभाषाओं से व्यक्तित्व के बारे में तीन विचारधाराएँ स्पष्ट हैं–

1– व्यक्तित्व उन सभी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक गुणों, आकांक्षाओं, अभिरुचियों तथा रुचियों का एक संगठन है, जो कि व्यक्ति की विशेषता है।

2– व्यक्तित्व, व्यक्ति के समग्र व्यवहार का प्रतिरूप एवं उसकी संरचना है।

3– व्यक्ति का जो प्रभाव दूसरों पर पड़ता है उसी के आधार पर व्यक्तित्व का अनुमान लगाया जाता है।

व्यक्तित्व का मापन–व्यक्तित्व मापन एवं मूल्यांकन के क्षेत्र में प्रयुक्त उपकरणों को उनके विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया जाता है–

1– व्यक्तित्व मापन की अणुत्मक विधियाँ– जिन विधियों के अनुसार विशिष्ट व्यवहारों के प्रति पृथक–पृथक जानकारी एकत्र कर उनके आधार पर पूरे व्यक्तित्व के विषय में निष्कर्ष निकाले जाते हैं, अणुत्मक विधियाँ कहलाती हैं।

2– व्यक्तित्व मूल्यांकन की समग्र विधियाँ– इसमें सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विषय में एक साथ जानने या सूचनाएँ एकत्रित करने का प्रयास किया जाता है।

अणुत्मक विधियां में आत्मकथा विश्लेषण, समाजनीतिक विधि, प्रेक्षण, क्रम निर्धारण, साक्षात्कार इत्यादि सम्मिलित हैं। समग्र विधियों में प्रक्षेपण तकनीकों में परीक्षण, टी. ए. टी., सी. ए. टी., शब्द साहचार्य परीक्षण आदि सम्मिलित हैं। व्यक्तित्व मापन के लिये व्यक्तित्व सूचियों का भी प्रयोग किया जाता है।

24.3 प्रक्षेपण तकनीक

प्रत्येक व्यक्ति के मन में अनेक इच्छाएँ पैदा होती हैं। इनमें से कुछ इच्छाएँ पूरी होती हैं और पूरी न होने वाली इच्छाओं का दमन होकर अचेतन मन में सुषुप्त अवस्था में विद्यमान रहती हैं। प्रक्षेपण वह तकनीक है जिसके द्वारा दमित इच्छाओं का पता लगाया जाता है। प्रक्षेपण तकनीकों के उदाहरण रोर्शा परीक्षण टी.ए.टी.सी.ए. शब्द साहचर्य परीक्षण आदि हैं।

1– **रोर्शा परीक्षण**– इस परीक्षण का निर्माण हरमान रोर्शा ने सन् 1921 में किया। वे एक स्विस मनोचिकित्सक थे। इस परीक्षण में 10 कार्ड हैं। जिनमें से 5 कार्ड काले व सफेद, दो कार्डों पर काले व लाल तथा शेष कार्डों पर रंग–बिरंगे धब्बे हैं। इन 10 कार्डों पर 1 से लेकर 10 तक के अक्षर अंकित है। सभी कार्ड अनिर्देशित हैं। इन धब्बों से किसी न किसी आकृति का बोध होता है। यह व्यक्तिगत परीक्षण है जिसमें छात्र को एक–एक कार्ड दिखाकर पूछा जाता है कि वे कार्ड पर अंकित धब्बे में क्या देखते हैं। इस परीक्षण में समय का काई बन्धन नहीं होता है। लेकिन समय, उत्तर देने का ढंग तथा प्रतिक्रिया का रिकार्ड रखा जाता है। प्रतिक्रियाऐं तीन प्रकार की होती है –(1) स्थिति (2) निर्धारण गुण (3) विषयवस्तु फलांकन के बाद उनकी व्याख्या की जाती है। इस परीक्षण द्वारा व्यक्ति की इच्छाओं, भावनाओं और आकांक्षाओं का अध्ययन किया जाता है।

2– **प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण**– इसका निर्माण मुरे और मार्गन ने सन् 1935 में व्यक्तित्व के मापन के लिये किया। इस परीक्षण में 30 चित्र हैं जिनमें से 10 पुरुषों के लिये, 10 स्त्रियों और 10 दोनों के लिये है। यह परीक्षण भी व्यक्तिगत है। समय बन्धन नहीं होने पर भी 10 कार्डों को दिखाने में एक घण्टे का समय लगता है। एक कार्ड देखने के बाद छात्र को उस चित्र पर 5 मिनट में एक कहानी लिखने को कहा जाता है। कहानी 4 बिन्दुओं पर लिखनी होती है। इन

कहानियों के विश्लेषण से छात्र की कल्पनाशक्ति, कर्मठता, आशावादिता, सामाजिकता आदि गुणों का मूल्यांकन होता है।

3– बालक अन्तर्बोध परीक्षण – इसको Children apperception Test कहते हैं। इसका निर्माण सन् 1948 में ल्थोपोल्ड बैलक ने किया था। यह परीक्षण 3 से 11 वर्ष की आयु के बच्चों के लिये है। इसमें क्रिया में संलग्न जानवरों के चित्र होते हैं। सम्पूर्ण परीक्षण में 10 चित्र हैं, जो एक–एक करके बालकों को दिखाये जाते हैं। रोर्शा की भॉति इनका फलांकन होता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1 अभिरुचि परीक्षण का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. बुद्धि परीक्षण से आप क्या समझते है तथा इसका मापन कैसे किया जाता है।

.....

.....

.....

24.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में आधुनिक निर्देशन कार्यक्रमों में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग जो सूचना एकत्रीकरण का एक प्रमुख साधन हैं, के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। निर्देशन की दृष्टि से व्यक्ति की योग्यताओं, अभिरुचियों, रुचियों, अभिवृत्तियों, मानसिक प्रवृत्तियों, आकांक्षाओं, इत्यादि का सम्यक् ज्ञान, निर्देशनकर्ता को होना आवश्यक है। इस प्रकार की जानकारी को सही–सही व वस्तुनिष्ठ रूप से प्राप्त करने में परीक्षणों का उपयोग विशेष रूप सहायक सिद्ध होता है। अतः यह स्वीकार किया जाता है कि निर्देशन में परीक्षणों का उपयोग व आधारभूत यांत्रिकी है जो निर्देशन प्रक्रिया को वस्तुनिष्ठ एवं वैज्ञानिक आधार प्रदान करती है।

निर्देशन के क्षेत्र में परीक्षणों का उपयोग सभी स्थलों पर एक–सा नहीं होता है। वरन् इसकी प्रकृति निर्देशन के स्तरों व उद्देश्यों द्वारा निर्धारित होती है। प्राथमिक कॉलेज तथा विद्यालय के स्तरों एवं व्यवसायिक निर्देशन हेतु अपनाये जाने वाले परीक्षणों के स्वरूप का निर्धारण आवश्यक जानकारी की प्रकृति व व्यक्ति के विकासक्रम को ध्यान में रखते हुए निर्देशनकर्ता द्वारा किया जाता है। निर्देशन की सफलता बहुत कुछ इस विषय में सही चयन व निर्णय पर भी निर्भर करती है।

परीक्षणों का विकास जहाँ एक ओर विभिन्न मानसिक क्षमताओं में मनोवैज्ञानिकों की स्वाभाविक रुचि के कारण हुआ वहीं दूसरी ओर वर्तमान शताब्दी के पूर्वार्द्ध में शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन की बढ़ती हुई आवश्यकताओं के कारण भी अनेक नये परीक्षणों का निर्माण हुआ है। विशेषतौर पर व्यक्तित्व मापन के क्षेत्र में परीक्षणों का निर्माण व व्यापक प्रसार निर्देशन सेवाओं के विस्तार का ही प्रतिफल है। निर्देशन के क्षेत्र में परीक्षणों के व्यापक उपयोग से निर्देशन कार्यक्रमों को जहाँ एक ओर अधिक प्रभावी बनाने में पर्याप्त सहायता मिली है, वहीं दूसरी ओर निर्देशनकर्ता की क्षमता व ज्ञान में भी इससे अतुलनीय वृद्धि हुई है। आजकल निर्देशनकर्ता अपेक्षित सूचनाओं की प्रकृति व अपने उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए अभिरुचि, रुचि, व्यक्तित्व मापन, इत्यादि से सम्बन्धित विशिष्ट परीक्षणों का उपयोग करते हैं। साथ ही निर्देशन की समस्याओं व उद्देश्यों को ध्यान रखते हुए पृथक परीक्षणों की रचना व विकास पर भी बल दिया जाता रहा है। यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि भविष्य में निर्देशन की प्रकृति और अधिक परीक्षात्मक हो जायेगी।

निर्देशन में अभिरुचि परीक्षणों का महत्वपूर्ण स्थान है। अभिरुचि वर्तमान दशा है जो भविष्य की ओर संकेत करती है। अभिरुचि मापन में विभेदक अभिरुचि परीक्षण और सामान्य अभिरुचि परीक्षण श्रृखंला का प्रयोग होता है।

बुद्धि की परिभाषा देना एक कठिन कार्य है। बुद्धि को स्पष्ट करने के लिये एकल सिद्धान्त, द्वितत्व सिद्धान्त, समूह तत्व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है। बुद्धि परीक्षाएँ अनेक प्रकार की हैं, जैसे व्यक्तिगत और सामूहिक, शक्ति और गति परीक्षा, शाब्दिक और क्रियात्मक परीक्षाएं। इनका शैक्षिक और व्यावसायिक दोनों प्रकार के निर्देशन में उपयोग होता है।

उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति के द्वारा अर्जित ज्ञान, सूझ–बूझ और कौशल का मापन करते हैं। ये दो प्रकार के शिक्षकों द्वारा निर्मित और मानकीकृत होते हैं।

रुचि परीक्षण व्यक्ति की रुचियों का मापन करते हैं। रुचि किसी प्रवृत्ति का गत्यात्मक पहलू है। रुचियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। रुचि मापन की विधियाँ वस्तुनिष्ठ और व्यक्तिनिष्ठ दो प्रकार की होती है।

व्यक्तित्व को विद्वानों ने अनेक रूपों में परिभाषित किया है। व्यक्तित्व के दो प्रकार अन्तर्मुखी और बाह्यमुखी होते हैं। व्यक्तित्व मापन की अणुत्मक विधियाँ और समग्र विधियाँ होती है। प्रक्षेपण प्रविधि में रोर्शा परीक्षण, प्रासंगिक अन्तर्बोध परीक्षण और बालक अन्तर्बोध परीक्षणों का मुख्य स्थान है। व्यक्तित्व मापन का उपयोग प्रायः सभी प्रकार के निर्देशन में होता है।

24.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभिरुचि– अभिरुचि वह दशा या गुणों का रूप है, जो व्यक्ति की उस योग्यता की ओर संकेत करती है जो प्रशिक्षण के बाद वह ज्ञान, क्षमता या प्रतिक्रियाओं के समूह जैसे, भाषा बोलने की या संगीतोत्पादन की योग्यता सीखता है।

बुद्धि – उपयुक्त समय, उपयुक्त स्थान और उपयुक्त गति में सही वस्तु को देखना या उसके बारे में चिन्तन करने की जन्मजात क्षमता ही बुद्धि है।

उपलब्धि परीक्षण–'एक उपलब्धि या दक्षता परीक्षण क्या और कितना सीखा या कोई कार्य करने में अर्जित दक्षता की मात्रा निश्चित करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है।

रुचि–रुचि कोई पृथक् मनोवैज्ञानिक इकाई नहीं है अपितु व्यवहार के अनेक पक्षों में केवल मात्र एक पक्ष है।

व्यक्तित्व– व्यक्तित्व व्यक्ति की समस्त जैविक व जन्मजात प्रवृत्तियों, प्रेरणाओं, इच्छाओं, उद्वेग और अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– अभिरुचि से आप क्या समझते है?

2– अभिरुचि के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

3– विभेदक अभिरुचि परीक्षण से आप क्या समझते है?

4– बुद्धि परीक्षण पर प्रकाश डालिये।

5– बुद्धिलब्धि से आप क्या समझते है?

6– उपलब्धि परीक्षण के बारे में लिखिए।

7– रुचि परीक्षण के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

8– व्यक्तित्व परीक्षण पर प्रकाश डालिये।

9– व्यक्तित्व के मापन से आप क्या समझते है।

10– प्रक्षेपण तकनीकी क्या है?

विस्तृत

1– मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रकारों की विवेचना कीजिए।

2– अभिरुचि, बुद्धि, रुचि एवं व्यक्तित्व परीक्षणों की विवेचना कीजिए।

24.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज,181–196

5– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005,

खण्ड–पंचम – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई–25, परामर्श के पूर्व तैयारी

25.0 इकाई का उद्देश्य

25.1 परिचय

25.2 परामर्श की तैयारी

25.3 नियुक्ति लेने का कारण

25.4 मूल्य, विश्वास और मनोवृत्ति परिवर्तन

25.5 समस्या पहचानना और खोजना।

25.6 समस्या के हल की योजना बनाना

25.7 हल का आरोपण और समापन

25.8 सार–संक्षेप

25.9 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

25.10 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

25.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य परामर्श के पूर्व तैयारी के बारे में आप लोग को अवगत कराना है कि वास्तव में परामर्श की प्रक्रिया का सर्वप्रमुख परामर्शदाता कुछ तैयारी करता है तथा उस तैयारी के आधार पर आगे बढ़ता है। इसी संदर्भ में इकाई की रचना की जा रही है।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– परामर्श की तैयारी के बारे में जान सकेगें।

2– सेवार्थी की नियुक्ति लेने के कारणों के बारे में जान सकेगें।

3– मूल्य, विश्वास और मनोवृत्ति परिवर्तन कैसे किया जाता है ? के बारे में लिख सकेगें।

4– समस्या पहचानने और खोजने के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।

5– समस्या हल की योजना बनाने के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।

6– समस्या के हल का आरोपण और समापन के बारे में लिख सकेगें।

25.1 परिचय

अनेक दृष्टियों से परामर्श प्रक्रिया परामर्शदाता और सेवार्थी के मध्य आमने–सामने का सम्पर्क स्थापित होने से पूर्व ही शुरू हो जाती है। इस पूरी अवधि में घटित हुई घटनाओं का परामर्शदाता और परामर्शी की एक–दूसरे से अपेक्षाओं और दूसरे पक्ष के बारे में प्रत्यक्षण एवं विश्वासों और विकास पर प्रभाव पड़ता हैं उत्पन्न हुई अपेक्षाएँ, प्रत्यक्षण और विश्वास आरंभिक परामर्श सम्बन्धों की संरचना और उसके विकास को तथा अंततः परामर्श के परिणाम को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। परामर्श के पूर्व की तैयारी में यह आवश्यक है कि पराशार्मदाता और सेवार्थी का एक दूसरे के विषय में पूर्व ज्ञान होना चाहिए। इसके लिए परामर्शदाता तथा सेवार्थी टेलीफोन, मेल या पत्र का सहारा लेता है तथा एक दूसरे के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। परामर्श के पूर्व तैयारी में भूमिका पत्रकों का भी महत्वपूर्ण स्थान हैं जिसके द्वारा परामर्श कार्य का परिचय, समस्याओं की स्वीकार्यता, परामर्श के सैद्धान्तिक आधार और उपागम, सम्पर्क हेतु पता इत्यादि के बारे में भूमिका पत्रकों में विवरण दिया जाता है।

परामर्श पूर्व तैयारी में प्रथम संपर्क टेलीफोन या पत्र द्वारा होता है, जबकि कुछ सेवार्थी परामर्शदाता के सम्पर्क में परामर्श कार्य हेतु नियुक्ति पत्र के माध्यम से ही सम्पर्क में आते हैं। परामर्श पूर्व तैयारी में भौतिक परिवेश भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। भौतिक परिवेश आरामदेह और स्वागत योग्य होना चाहिए। प्रकाश की व्यवस्था मद्धिम या कोमल होनी चाहिए। वार्ता स्थल पर गोपनीयता की व्यवस्था होनी चाहिए। जहाँ बाहर से शोर का प्रवेश न हो और आते जाते लोग सेवार्थी को न देख सकें। परामर्शी के आने के पूर्व तैयारी में सबसे पहले परामर्शदाता को अपने कक्ष में उपस्थित रहना चाहिए तथा रेफरल

पत्र व्यक्ति इतिहास और यदि कोई प्रश्नावली भरवायी गयी है तो उसमें दी गई सूचना का अध्ययन कर लेना चाहिए।

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई परामर्श के पूर्व की तैयारी के बारे में प्रकाश डालती है। प्रिय विद्यार्थियों, इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग परामर्श करने के पहले की सभी तैयारियों के बारे में जान सकेगें।

25.2 परामर्श की तैयारी

परामर्श में प्रारम्भिक चरण सम्भावित परामर्शी की सहायता प्राप्त करने की इच्छा या तत्परता है। उदाहरणार्थ, बहुत से लोग सिगरेट पीते हैं। यद्यपि वे जानते हैं कि धूम्रपान करना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। परन्तु तब भी वे धूम्रपान करना जारी रखते हैं। इनमें से कुछ धूम्रपान छोड़ने की इच्छा रखते हैं और अपनी इस आदत को छोड़ने के लिए सहायता प्राप्त करने को तत्पर रहते हैं। जबकि कुछ अन्य लोग इसके प्रति लापरवाह रहते हैं और छोड़ने के लिए कोई प्रयास नहीं करते। अतः परामर्श प्रक्रिया में तत्परता प्रथम चरण हैं इसी के कारण पराशर्मी, परामर्शदाता से सहायता प्राप्त करने के लिए तैयार होता है।

तत्परता को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं। इनमें प्रथम अज्ञानता है। लोग किसी प्रकार की आदत लगातार बनाए रखते हैं, बिना यह जाने कि, आदत अवांछित है। अतः वे इसे छोड़ने का प्रयास नहीं करते हैं। दूसरा मनोवैज्ञानिक संप्रत्यय जो सामान्य रूप से पाया जाता है उसे प्रतिरोध कहते हैं। लोग परिवर्तन के प्रति जन्म–जात प्रतिरोधक प्रवृत्ति के कारण उदासीन बने रहते हैं। तृतीय कारक प्रतिप्रेरणा की कमी है। एक व्यक्ति यह जानता है कि कोई आदत विशेष वांछित नहीं हैं पर उसके प्रति कुछ करने के लिए पर्याप्त रूप से अभिप्रेरित नहीं होता। उपर्युक्त वर्णित कारक तत्परता के लिए गम्भीर रूकावट होते हैं और आत्मगत या परामर्शी–केन्द्रित होते हैं इसके अतिरिक्त तत्परता में कमी परिस्थितिजन्य समस्याओं के कारण हो सकती है, जैसे सक्षम सहायता का उपलब्ध न होना। दूसरे शब्दों में

व्यक्ति परिवर्तन का इच्छुक हो सकता है, पर वह असहाय होता है, क्योंकि उसे ज्ञात नहीं होता है कि सहायता के लिए किस के पास जाए या उसके पास समय और साधनों की सहायता प्राप्त करने के लिए कमी हो। तत्परता का निर्धारण आंशिक रूप में व्यक्ति की आत्मगत भावनाओं और आंशिक रूप में परिस्थितिजन्य रुकावटों से होता है। इसमें से अधिकांश रुकावटों को प्रत्याशित परामर्शी को आवश्यक सूचना प्रदान कर दूर किया जा सकता है। अन्य कारणों के अतिरिक्त परामर्शी व्यक्ति के सम्बन्ध में त्रुटिपूर्ण धारणाएँ रख सकता है। उदाहरणर्थ, अनेक परामर्शी की एक महत्वपूर्ण सेवा परामर्शी को परामर्श के लिए तैयार करना है। अनेक ऐसे स्त्रोत हैं जो परामर्श के लिए संप्रेषित कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, एक स्कूल अध्यापक समस्या बालक को इंगित कर सकता है और उसके अभिभावकों को आवश्यक सहायता लेने के लिए कह सकता है। यदि स्कूल में मनोवैज्ञानिक या परामर्श केन्द्र है तो अध्यापक ऐसे विद्यार्थियों को वहां जाने की सलाह दे सकता है। यह एक निश्चित लाभ है। एजेन्सी पहल कर सकती हैं और सम्भावित परामर्शी से सम्पर्क स्थापित कर सकती हैं। यह प्रतिरोध और लज्जा को दूर कर सकती है और अन्ततः सम्भावित परामर्शी को परामर्श केन्द्र पर लाने में सफलता पा सकती है। यदि यह असफल होता है तो एजेन्सी विद्यार्थी के अभिभावकों से सम्पर्क कर सकती है और उन्हें हस्तक्षेप की आवश्यकता के सम्बन्ध में आश्वस्त कर सकती है। प्रयोज्यों से व्यक्तिगत रूप में और समूह में मिलकर सहायता की आवश्यकता की विवेचना ओर चर्चा करना सहायक हो सकता है। दूसरा तरीका परामर्शी को अधिक से अधिक पूर्ण सूचना प्रदान करना है। इससे परामर्शी का ध्यान अपनी समस्या की ओर आकर्षित होता है जिसके सम्बन्ध में वह प्रारम्भ में नही जानता है। परामर्शी से समायोजन प्रश्नावली भरवाना मूल्यवान हो सकता है।

प्रायः परामर्शी दो विस्तृत वर्गों में विभाजित होते हैं–

(1) पहला वर्ग उन लोगों का है जो स्वेच्छा से सहायता के लिए आते हैं। ऐसे लोग अपनी समस्या के सम्बन्ध में जानते हैं। वे असहज अनुभव करते हैं ओर अपने दुःखों से छुटकारा पाना चाहते हैं।

(2) परामर्शियों का दूसरा वर्ग वह है जो परामर्शदाता के पास स्कूल अधिकारियों द्वारा भेजे जाते हैं। इस वर्ग में वे परामर्श भी आते हैं जिन्हे अभिभावकों, नागरिक अधिकारियों या कोर्ट द्वारा भेजा जाता है। इस वर्ग के परामर्शियों को पुनः दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है, वे जो परामर्शी द्वारा स्वयं को सुधारना चाहते हैं ओर वे जो इसका प्रतिरोध करते हैं। प्रतिरोध करने वाले परामर्शी परामर्श के लिए तत्पर नहीं होते और परामर्शदाता से सहयोग नहीं करते।

पूर्व–परामर्श साक्षात्कार–परामर्शी एक बार तत्परता के स्तर पर पहुँच जाता है तब अगला चरण पूर्व–परामर्श साक्षात्कार या प्रारम्भिक साक्षात्कार होता है। पूर्व–परामर्श साक्षात्कार का बहुत सरल उद्देश्य होता है। इसका उद्देश्य परामर्शी को उसके उत्तरदायित्वों, परामर्श की सेवा की कार्य–विधि, परामर्श की आवृत्ति और परामर्श सत्र के समय तथा फीस के सम्बन्ध में अवगत कराना है। पूर्व–परामर्श साक्षात्कार का सम्बन्ध परामर्शी की व्यक्तिगत सूचना प्राप्त करना तथा ऐसी ही प्राथमिक सूचनाएं प्राप्त करना है। परामर्शदाता अपने स्तर पर प्रारम्भिक सम्पर्क स्थापित करने में दूर तक सहायक होता है। यद्यपि परामर्शदाता की प्रति आशाओं की इस स्तर पर पूर्ण रूप से चर्चा नहीं की जाती पर परामर्शी को उसका कुछ आभास कराया जाता है।

पूर्व–परामर्श साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर परामर्शदाता के साथ सर्वोत्ताम रूप में किस प्रकार आगे बढ़ेगा, की सामरिकी तैयार करता है। प्रायः पूर्व–परामर्श साक्षात्कार के पश्चात् एक दो परामर्श सत्र चलाते हैं जिनकी अवधि में परामर्शदाता, परामर्श की समस्याआं के सम्बन्ध में व्यावहारिक तस्वीर स्पष्ट करने की चेष्टा करता है। यदि परामर्शी कम बोलने वाला है तो अधिक सत्रों की आवश्यकता

हो सकती है। साथ ही साथ परामर्शदाता स्वयं को परामर्शी के सम्बन्ध में पूर्ण सम्भव सूचना, व्यक्ति के इतिहास, आत्मकथा और जीवन–चरित्र तथा अन्य स्त्रोतों से अवगत कराता है।

ब्रेमर और शोस्ट्रोम ने साक्षात्कार की अवधि में तत्परता के महत्व की विवेचना की है। इस विवेचना में परामर्शियों को अभिप्रेरित करने पर बल दिया गया है, क्योंकि एक बार बुलाने के पश्चात् परामर्शी पुनः वापिस न आए या यदि वह इस प्रकार का मुखोटा धारण कर सकता है और प्रतिरोध के अचेतन उपायों से परामर्शदाता को भ्रमित कर सकता है। परामर्शी बारम्बार सरल समस्याएँ बता सकता है, जैसे वस्तुओं को याद रखने में कठिनाई, अध्ययन कैसे किया जाए, आदि। इस तथ्य की विशिष्ट सम्भावना है कि परामर्शदाता इन समस्याओं में उलझ जाए। एक परामर्शी की तत्परता को उसके द्वारा दर्शाई गई सकारात्मक मनोवृत्तियों और उसकी स्वतः स्फूर्ती से समझ सकता है। यद्यपि परामर्शी की मुखरता और उसके विचारों और भावनाओं को व्यक्त करने की योग्यता का अर्थ यह नहीं है कि परामर्शी अपनी समस्याओं के संवेगात्मक प्रभावों को सुलझाने के लिए तैयार हो।

व्यक्तिवृत्त– परामर्श की तैयारी में परामर्शी के व्यक्तिवृत्त के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता है। **ब्रेमर और शोस्ट्रोम** के शब्दों में "A case history is a systematic collection of facts about the client's current and past life." (अर्थात एक व्यक्तिवृत सेवार्थी के वर्तमान एवं अतीत जीवन के तथ्यों का व्यवस्थित संग्रह हैं') भिन्न उन्मुखता के परामर्शदाता व्यक्तिवृत्त को विभिन्न अंशों में महत्व प्रदान करते हैं और भिन्न प्रकार की सामग्री का प्रयोग करते हैं। मनोविश्लेषण–उन्मुखता वाले परामर्शदाता बाल्यकाल के अनुभवों को महत्व देते हैं, जबकि समाज कार्य परम्पराओं में प्रशिक्षित परामर्शदाता परामर्शी के वार्ता के वातावरणात्मक परिस्थितियों पर बल देते हैं। एक व्यावसायिक परामर्शदाता स्वभावतः उन कारकों पर बल देता है जो प्रत्यक्ष रूप में

व्यवसाय चयन को प्रभावित करते हैं और शैक्षिक परामर्शदाता स्कूल के प्रासंगिक तथ्यों तथा वर्तमान शैक्षिक कार्य में परामर्श की कठिनाईयों के लिए प्रारम्भिक प्रशिक्षणकाल पर दृष्टिपात करता है।

परामर्श की प्रक्रियाएँ—परामर्शी द्वारा नियुक्ति लेने के साथ ही परामर्श प्रक्रिया गति में आ जाती है। इससे परामर्शी को वास्तविक रूप में बुलाने का कार्य होता है। परामर्शी अपने साथ अपने सम्बन्ध में, परामर्शदाता के सम्बन्ध में और परामर्श प्रत्यय के सम्बन्ध में मनोवृत्तियाँ और भावनाएँ लाता है। परामर्शी को समस्याएँ हो सकती हैं जैसे, व्यवसाय के चयन की, आत्म–स्वीकृति या स्कूल और कॉलेज द्वारा वांछित कार्य से समायोजन की समस्या, आदि समस्या जितनी सार्थक होगी, परामर्शी उतनी तीव्रता से अपनी समस्या को अनुभव करेगा। हर परामर्शी प्रथम साक्षात्कार के प्रति विलग तरह से प्रक्रिया करता है। परामर्शदाता जानता है कि अधिकांश लोग सहायता मांगने में ही कठिनाई का अनुभव नहीं करते वरन् सहायता स्वीकारने में भी कठिनाई अनुभव करते हैं। प्रायः वे परिवर्तन के परिणामों का सामना करने से झिझकते हैं। कुछ लोगों के लिए सहायता प्राप्त करने का अर्थ कुछ और होता है। कुछ लोग इसे अपनी अपर्याप्तता या असफलता की स्वीकृति के रूप में देखते हैं। कुछ लोगों की मनोवृत्ति होती है कि उन्हें सहायता की आवश्यकता नहीं है या उनकी सहायता नहीं की जा सकती। इस प्रकार की मनोवृत्ति प्रायः परामर्श में वांछित व्यक्तिगत अंतर्भाविता के भय के कारण होती है। अतः अभिप्रेरणा की उभयभाविता और सहायता प्राप्त करने का विकल्प सहायता प्राप्त करने और निषेधात्मक अभिवृत्ति के मध्य द्वन्द उत्पन्न करना है जो उसे सहायता लेने से रोकता है। सहायता लेने के निर्णय को परामर्शदाता द्वारा एक सकारात्मक चरण समझा जाता है जो अनिवार्य रूप स परामर्शी को अपने उत्तरदायित्व की स्वीकृति हैं। फ्रायड इस मनोवैज्ञानिक

उभयभाविता को हर प्रकार की भावनाओं और और क्रियाओं के लिए आधारभूत मानता है।

25.3 नियुक्ति लेने का कारण

एक औपचारिक कथन कि, परामर्शी बार–बार परामर्शदाता के पास क्यों जाता है?, परिस्थिति की प्रकृति के सम्बन्ध में बहुत कम बताता है। परामर्शी के समस्या के कुछ पहलुओं के सम्बन्ध में विस्तार से बताने के लिये अनुरोध करके परामर्शदाता, परामर्शी को उसकी समस्या के सम्बन्ध में अपने विचारों और भावनाओं को संतृप्त और संगठित करने का अवसर प्रदान करता है। इस स्तर पर परिचर्चा अनेक गुपता चिताएँ उभरकर सामने आ जाती हैं। परामर्शी यह अनुभव करता है कि समस्या, जितना वह प्रारम्भ में सोचता था उससे कहीं अधिक गम्भीर हैं। कभी–कभी यह भी पाया गया है कि सुप्त चिन्ता के साथ–साथ अनेक भावनाएँ भी सतह पर आ जाती है। यह एक बहुत महत्वपूर्ण स्थिति है जो यह इंगित करती है कि परामर्शी नियुक्ति के लिए करीब–करीब अवैयक्तिक अनुरोध से एक ऐस बिन्दु पर पहुँच जाता है जहाँ वह परामर्शदाता से समस्या के कुछ पक्षों के बार में भागीदारी करता है।

संप्रेषण – दूसरे प्रकार के परामर्शी जो परामर्शदाता के पास आते हैं, वे होते हैं जो स्वयं अपनी इच्छा से नहीं आते वरन् अन्य लोगों के सुझाव से आते हैं। यह अन्य लोग चिन्तित अभिभावक, व्यथित सम्बन्धी, परेशान मित्र, हस्तोत्साहित अध्यापक या असन्तुष्ट नियोक्ता हो सकते हैं। प्रायः परामर्शियों का बहुमत इसी वर्ग से आता है।

संप्रेषण का प्रश्न इतना सरल नहीं है जितना यह प्रतीत होता है। परामर्शदाता को अनेक महत्वपूर्ण घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित पक्षों पर ध्यान देना होता है। जैसे–

1– व्यक्ति को क्यों सम्प्रेषित किया गया है?

2– सम्प्रेषण किसके द्वारा किया गया है?

3– सम्प्रेषण किस प्रकार संरचित है?

4– परामर्शी सम्प्रेषक को किस प्रकार प्रत्यक्षीकरण करता है?, आदि।

किसी परामर्शी को किस कारण परामर्शदाता या परामर्श एजेन्सी के पास सम्प्रेषित किया गया है, अनके कारकों पर निर्भर करता है। अधिकांश सम्प्रेषक एजेन्सी या व्यक्ति के द्वारा परामर्शी को किसी क्षेत्र में असफल होने या उपयुक्त रूप से कार्य न करने के कारण होता है। अतः प्रायः परामर्शदाता पाते हैं कि उनके परामर्शी उनके पास अनासक्त मनोवृत्ति के साथ आते हैं। इस परिस्थिति में यह ज्ञात नहीं होता कि परामर्शी कोई नवीन अनुभव चाहता है। परामर्शी प्रायः कोई प्रश्न नहीं पूछता, एकाक्षर में उत्तर देता है तथा साक्षात्कार समाप्त होने पर बहुत भारमुक्त अनुभव करता है। यह सामाजिक महत्व का एक बहुत महत्वपूर्ण मुद्दा है जो उसकी मनोवृत्ति की व्याख्या करता है। हमारा समाज परामर्श द्वारा सहायता प्राप्त करने को लांछन की दृष्टि से देखता है। ऐसा इस कारण होता है कि क्योंकि अधिकांश लोग परामर्श के उद्देश्य को नहीं समझते हैं। समाज द्वारा वहिष्कार का भय सम्भावित परामर्शी को खुशी–खुशी परामर्श पाने से रोकता है।

विद्वानों का मानना है कि कभी–कभी परामर्शी को अपनी समस्या समझने के लिए उसके साथ परामर्शी को अपनी समस्या समझाने के लिए उसके साथ परामर्श के कई सत्रों की आवश्यकता पड़ती है। यह जानना भी महत्वपूर्ण है कि किसने परामर्शी को सम्प्रेषित किया है, क्योंकि इससे सम्प्रेक्षण के उद्देश्य का काफी ज्ञान प्राप्त होता है। व्यवसायी लोगों द्वारा सम्प्रेषित लोगों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती हैं। सम्प्रेषण करना सदैव उत्तरदायित्वपूर्ण होता है। सम्प्रेषण के लिए प्रभावी होने के लिए यह आवश्यक है कि परामर्शी भी उत्तदायित्व का वहन करें। प्रायः परामर्शी को यह स्पष्ट नहीं होता है कि परामर्शदाता किस प्रकार उसकी सहायता करेगा। और कभी–कभी

भ्रांतिवश वह व्यर्थ का परिश्रम करता है। अज्ञानतावश उत्पन्न भ्रातियों को परामर्शी को हानि पहुँचाए बगैर सरलता से दूर किया जा सकता है।

सम्प्रेषण की संरचना दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न है। परामर्शी को यह बात बता देना चाहिए कि उस पर कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षण प्रशासित किए जाएँगें या उससे कुछ प्रश्न पूछे जाएँगें। यद्यपि सम्प्रेषण की संरचना परामर्श के परिणाम की दृष्टि से इनती महत्वपूर्ण नहीं है, परन्तु इससे परामर्श प्रक्रिया की प्रगति में सुविधा या रुकावट हो सकती है, विशेष रूप से प्रारम्भिक स्तर पर एक परामर्शी जो परामर्शदाता के पास आता है वह उसे एक विशेषज्ञ के रूप में देखता है। अतः निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई उत्तदायित्व नहीं लेता और परामर्श सम्बन्धों में अपनी वास्तविक भूमिका अदा नहीं करता हैं।

परामर्शी सम्प्रेषक और अपने परामर्शदाता को जिस प्रकार प्रत्यक्ष करता है वह भी परामर्श प्रक्रिया में समान रूप से महत्वपूर्ण है। इसका निर्धारण व्यक्ति संरचना ओर परिस्थिति की समझ से होता हैं। यह निर्धारित करता है कि परामर्शदाता परामर्शी से क्या कहेगा और मनोवैज्ञानिक परीक्षण क्या बताएँगे। परामर्शी जितना अधिक अपरिपक्व होगा उतना ही अधिक सम्बोधन विकृति होगी।

चिन्ता– चिन्ता एक और महत्वपूर्ण करक है, जो लोगों को सहायता लेने के लिए बाध्य करती है। जब इसका ध्यानपूर्वक परीक्षण किया जाता है और जब शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्रों में या व्यक्तिगत जीवन के क्षेत्र में दो विरोधी आवश्यकताओं, अभिप्रेरणाओं या इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं जो परामर्शी को व्यावसायिक सहायता प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित करती है। जब तक परामर्शी चिन्तित अनुभव नहीं करेगा तब तक उसे परामर्शदाता की सहायता की आवश्यकता अनुभव नहीं होगी। परामर्श का सार परामर्शी को अधिकांश समस्याओं में अन्तर्निहित द्वन्द्वात्मक भावनाओं को पहचाने में सहायता करना है

और उसे स्वयं के जीवन का भाग स्वीकार कराना है जब तक परामर्श कुछ चिन्ता का अनुभव न करे तब तक परामर्श नहीं हो सकता।

एक परामर्शदाता के लिए ऐसे परामर्शी का सामना करना कोई अपवाद नहीं हैं जो यह जानता हो कि इनके साथ कुछ गलत है या कुछ अनुप्युक्त परिस्थिति है और वे परामर्श प्रक्रिया से गुजरने में असमर्थ है। उनके पास समय नहीं है या उनमें धैर्य नहीं है या वे तथ्यों का सामना करने से डरते हैं। कुछ ऐसे भी परामर्शी हैं जो मनोवैज्ञानिक रूप से दृढ़ हैं, पर वातावरण जनित कठिनाइयों के कारण चिन्ताग्रस्त हैं, जैसे नौकरी का छूट जाना या किसी प्रिय का विछोड़। किसी पदार्थ के कारण उत्पन्न चिन्ता को दूर किया जा सकता है, यदि परामर्शी अपने स्वयं के साधनों का प्रयोग करने और दृढ़ता से अपनी समस्या का सामना करें। इसके लिए आलम्बन की आवश्यकता होती है जिससे वह अपनी इच्छा की अभिव्यक्ति कर सके और आश्वस्त हो सके।

सामान्य रूप में परामर्श प्रक्रिया तीन भागों से मिलकर पूरी होती है—सहायता के लिए निवेदन, परामर्श मुख्य और सम्बन्धों का समापन। प्रथम साक्षात्कार वास्तव में परामर्शी और परामर्शदाता के मध्य वास्तविक सम्पर्क होता है। प्रायः परामर्शी, परामर्शदाता के पास सावधानीपूर्वक पहुँचता है। वह इस सम्बन्ध में अनिश्चित होता है कि क्या होने वाला है। अतः प्रथम साक्षात्कार की अवधि में अधिकांशतः जाँच—पड़ताल और यदि सम्भव हो तो समस्या को पहचानना होता है। परामर्शी या परामर्शदाता में सम्बन्ध प्रायः प्रथम साक्षात्कार के समय ही मनोवैज्ञनिक परीक्षणों का प्रकार, यदि आवश्यक हो तो अन्य सम्बन्धित विषयों की चर्चा की जाती हैं। परामर्शी को समझाया जाता है कि उसे एक पद्धति और संरचना के मध्य कार्य करना है और यह उस पर निर्भर है कि वह परामर्श का जो भी प्रयोग करना चाहे कर सकता है। उसे परिस्थिति और परामर्श प्रक्रिया की सीमाओं के सम्बन्ध में भी सूचित कर दिया

जाता है ताकि वह किसी प्रकार की भांति या झूठी आशाएँ विकसित न कर सके।

पुनः विश्वास दिलाना– पुनः विश्वास दिलाने से तात्पर्य चिन्ता का शमन करना है। अतः यह परामर्श परिस्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पुनः विश्वास दिलाना परामर्श साक्षात्कार का एक महत्वपूर्ण प्रकार्य हैं। प्रायः समर्थन और पुनः विश्वास दिलाने की आवश्यकता को संवेगात्मक द्वन्द्व की अभिव्यक्ति समझा जाता है। सहायता प्रक्रिया के अन्य पक्षों की तरह पुनः विश्वास दिलाना प्रायः संरचित होता है और सभी लागों को एक सा रूप एवं अर्थ प्रदान नहीं करता जैसा कि अन्य मनोवैज्ञानिक प्रत्ययों में होती है। पुनः विश्वास दिलाने की आवश्यकता आन्तरिक चिन्ता से उत्पन्न होती है। परामर्श सम्बन्ध जैसे–जैसे समाप्ति के निकट पहुँचता है, परामर्शी के अनुभव नए अनुभव अभिव्यक्त कर सकता है। यह तथ्य को इंगित करता है कि परामर्शी अपने भय और सन्देह पर पूरी तरह से काबू नहीं पा सका है।

विश्वास जीतना–परामर्शी–परामर्शदाता सम्बन्ध आमने–सामने के दो व्यक्तियों के मध्य के सम्बन्ध को कहते हैं, जिसमें परामर्शी को स्वयं बिना किसी झिझक, डर या आलोचना के अभिव्यक्ति करने के लिए उत्साहित किया जाता है। अतः यह आवश्यक है कि परामर्शदाता परामर्शी का विश्वास जीते। ऐसा करने की कोई निश्चित विधि या तकनीक नहीं हैं पर एक व्यवसायी परामर्शदाता को चित्रवत् सम्बन्ध स्थापित करने और अपने परामर्शी का विश्वास जीतने में कोई कठिनाई नहीं होती है। इससे समरसता स्थापित करने में सहायता मिलती है जो परामर्श–परामर्शदाता सम्बन्धों का सार है। यह सम्भव है कि परामर्शदाता, परामर्शी की चापलूसी करे और उसे अपने विचारों को स्वयं से भागीदारी करने के लिए उकसाए। परामर्शी द्वारा अविश्वास को परामर्श परिस्थिति की वास्तविकता के रूप में स्वीकार करना चाहिए। इसका कोई विश्वास न करना परामर्शदाता को परामर्शी के अविश्वास

को कार्य के वास्तविकता के रूप में देखना चाहिए। विश्वास की कमी असुरक्षित व्यक्ति को इंगित करती है। ऐसे परामर्शी प्रायः मौन धारण कर लेते हैं, और अपने आप को सर्वोत्तम मानते हैं। अपनी मनोवृत्ति को बनाए रखते हैं। इनको चेन्ज करना कठिन होता है परन्तु यह परामर्शदाता का कर्तव्य है कि इन सभी सीमाओं के होते हुए भी परामर्शी की सहायता करें।

परामर्शी–परामर्शदाता सम्बन्ध– परामर्शदाता और परामर्शी के मध्य स्थापित सम्बन्ध परामर्श प्रक्रिया की जड़ है। ऐसे अवसर देखने को मिलते हैं कि परामर्शी और परामर्शदाता की मनोवृत्तियाँ सम्बन्धों को प्रभावित करती हैं। इन सम्बन्धों के माध्यम से परामर्शदाता उन महत्वपूर्ण विचारों और भावनाओं को निकलवाता और पहचानता है जो परामर्शी के व्यवहार का निर्धारण करता है। यह परामर्शी को इन विचारों और भावनाओं को पहचानने में सहायता करता है। यह सम्बन्धों की गुणवत्ता का निर्धारण करता है तथा परामर्श प्रक्रिया की उन्नति को प्रभावित करता है। सम्बन्धों का परामर्श अति महत्वपूर्ण है। यह एक सृजनात्मक एजेन्ट का कार्य करता है। अधिकांश परामर्शी प्रभावी अंतर्वैयक्तिक सम्बन्ध नहीं रखते। अतः वे सामंजस्य और आत्म–सन्तुष्टि वाला समायोजन रखने के योग्य नहीं होते है। परामर्शीदाता, परामर्शी को प्रभावित अंतर्वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता प्रदान करता है और अवास्तविक आकांक्षाओं से मुक्त रखता है। इस भूमिका में परामर्शदाता अध्यापक की भूमिका अदा करता है।

परामर्शदाता और परामर्शी के सम्बन्ध अद्वितीय होते हैं। क्योंकि दो व्यक्ति एक से नहीं होते। अतः सामान्य प्रकार के सम्बन्ध रखना सम्भव नहीं है। परमर्शदाता और परामर्शी की मनोवृत्तियाँ, विश्वास, पसन्द ना पसन्द, दैहिक विशेषताएँ, घर और सामाजिक पृष्टभूमि इन सम्बन्धों को अद्वितीय बनाने वाले कारक हैं।

जहाँ तक संज्ञानात्मक, वैज्ञानिक और जातिगत पक्ष का प्रश्न है यह सम्बन्ध वस्तुगत होते हैं। यह सम्बन्ध उस सीमा तक आत्मगत हैं जिस सीमा तक सम्बन्धों में गर्माहट और मनोवैज्ञानिक निकटता सन्निहित है जो परामर्शी और उसकी समस्या में गहन रुचि उत्पन्न करती हैं। गहन रुचि का यह पक्ष परिपक्वता की भावना पर निर्भर करता है। जिसका अर्थ है कि परामर्शी विश्वास करता है कि परामर्शदाता उसे समझता है और इस भावना से समर्थन प्राप्त करता है। यह भी असामान्य नहीं है कि कुछ परामर्शियों को परामर्शदाता से सम्बन्ध रखना एक खतरा नजर आता है। वह इन सम्बन्धों को दूसरे व्यक्ति के सम्मुख खोलना या आत्मसमर्पण करना समझते हैं। वे चिन्तित अनुभव करते हैं, जब कि अपनी समस्या के बारे में ज्ञान होना चाहिए और परामर्शी का परामर्शदाता पर विश्वास। उदाहरणार्थ परामर्शदाता परामर्शी की भावात्मक अभिव्यक्ति में रुचि लिए बिना भौतिक स्तर पर अनुक्रिया कर सकता है। वह परामर्शी के प्रति प्रतिक्रिया, उसकी गुणों की पसन्द और नापसन्द को उपेक्षित कर सकता है। परामर्शी की संवेगात्मक स्थिति को ध्यान में रखकर वह अधिक गहरे स्तर पर प्रतिक्रिया कर सकता है। परामर्शी की संवेगात्मक स्थिति के प्रति अनुक्रिया क अस्तित्ववादी परामर्श में अधिक ध्यान पा सकता है।

अस्तित्व मूलतः दो प्रकार के होते हैं—स्वयं—स्वयं और स्वयं—अन्य encounter अर्थात सामना। प्रथम प्रकार में व्यक्ति को प्रयोज्य और विषयी दोनों रूप में समझना चाहिए। दूसरे लोगों से encounter में भाव, मित्रता, तद्नुभूति और जिजीविषा सन्निहित होता है। सभी प्रकार के मानवीय सम्बन्धों में उक्त चार प्रकार के संवेगात्मक सम्बन्धों पर बल दिया जाता है। इस प्रकार के सम्बन्धों में परामर्शदाता संवेगात्मक रूप से सन्निहित हो जाता है और परामर्शी को उसी प्रकार सन्निहित करता है। इसकी पृष्ठभूमि में मुख्य उद्देश्य और गहन रुचि परामर्शी को तिरस्कार और चिन्ता की निषेधात्मक भावनाओं से उभारना होता है।

परामर्श सम्बन्धों का दूसरा आयाम संज्ञानात्मक–क्रियात्मक होता है। संज्ञानात्मक पक्ष का सम्बन्ध सूचनाओं का आदान–प्रदान और विभिन्न क्रिया के प्रगति (कोर्सेज) के निहितार्थ होता हैं, क्रियात्मक तत्व भावनाओं की अभिव्यिक्ति को इंगित करते हैं। परामर्शदाता को परामर्शी की समस्या को तार्किक रूप में समझाने की आवश्यकता होती है साथ ही परामर्शदाता यह अनुभव करता है कि बिना ज्ञान के क्रिया का कोई मूल्य नहीं हैं। अतः संज्ञानात्मक और क्रियात्मक पक्ष के मध्य सन्तुलन बनाए रखना चाहिए।

अस्पष्टता– जब उद्दीपक की परिस्थिति अस्पष्ट हो और विभिन्न प्रयोज्यों से भिन्न अनुक्रियाएं जाग्रत करे, तो इस परिस्थिति को अस्पष्ट परिस्थिति कहते हैं। बोर्डिन चिकित्सकीय निहितार्थ के लिए अस्पष्टता के महत्व पर बल देते हैं। आपके अनुसार अनेक रूप में परामर्श सम्बन्ध परामर्शी को धुंधले और अस्पष्ट प्रतीत होते हैं। परामर्शदाता सामान्यतः परिस्थिति को संरचित करता है। परामर्शी द्वारा मांगे गए स्पष्टीकरण के अंश बहुत महत्व के होते हैं। अस्पष्टता प्रक्षेपण की आज्ञा प्रदान करती है जो एक बहुत महत्वपूर्ण रक्षा युक्ति हैं। परामर्शी अस्पष्ट परामर्श परिस्थिति में अपनी भावनाओं का प्रक्षेपण सरलता से करता है। भावनाओं के प्रक्षेपण की प्रक्रिया का चिकित्सकीय मूल्य बहुत अधिक है। तब भी बहुत अधिक अस्पष्टता एक अन्य कारण से भी महत्वपूर्ण हैं। यह अन्यारोपण प्रदान करता है जो कि एक महत्वपूर्ण मनोविश्लेषणात्मक सम्प्रत्य है। अन्यारोपण, प्यार–घृणा के भावात्मक सम्बन्धों का अचेतन स्थानान्तरण है। परामर्शदाता को सम्बन्धों की अस्पष्टता संवेगात्मक दूरी की समस्या को समझने में सहायक होती है। अधिक अस्पष्टता परामर्शी को अस्पष्ट परिस्थिति में डाल सकता है और वह नहीं जानता कि परिस्थिति कितनी अनुज्ञात्मक या वर्जनाहीन है ओर वह परामर्शदाता के कितने निकट जा सकती है।

उत्तरदायित्व—परामर्श सम्बन्धों की एक अन्य विशेषता उत्तरदायित्व है। परामर्श के परिणाम का कितना उत्तरदायित्व परमर्शदाता का है? परामर्श की व्यथा में परामर्शदाता कितना भागीदारी करता है? परामर्शदाताओं में इस व्याख्या पर मतभेद है कि उत्तरदायित्व के सन्दर्भ में वे परामर्शी से क्या आशा करते हैं? यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि कोई भी परामर्शदाता परामर्शी के लिए लक्ष्य का निर्धारित नहीं करेगा। परामर्शदाता केवल अच्छा परामर्श देने का उत्तरदायित्व लेना स्वीकार कर सकता है। परामर्शी से जितना उत्तरदायित्व निर्वाह करने के लिए कहा जाए या परामर्शदाता उसमें भागीदारी करने का इच्छुक हो, यह अनेक विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है; जैसे परामर्शी की आयु, योग्यता, पृष्ठभूमि और समस्या का प्रकार। यह कहना पर्याप्त होगा कि विभिन्न कारकों को ध्यान में रखते हुए परस्पर उत्तरदायित्व निर्वाह करना अधिक उत्तम होता है।

परामर्श—सामग्री और प्रक्रिया—जैसा कि हम पहले वर्णन करते आएँ हैं कि परामर्श एक जटिल प्रकार्य है जिसका उद्देश्य परामर्शी का दृष्टिकोण में परिवर्तन करना है। इसमें परामर्शी के परिवर्तन का अर्थ है गहन चिन्ता, दर्द और व्यस्था से आत्म—समझ, आत्म—आश्वस्त और चिन्ता तथा कुसमायोजन में महत्वपूर्ण कमी का होना है। यह परिवर्तन परामर्श द्वारा प्राप्त किया जाता है जो वस्तुतः परामर्शदाता और परामर्शी के मध्य सम्बन्ध हैं यह एक—और—एक का सम्बन्ध है जिसमें व्यक्ति को सहायता की आवश्यकता है। स्वेच्छा से एक व्यावसायिक सक्षम व्यक्ति से जो उसकी पीड़ा को सहायक सम्बन्धों के माध्यम से दूर कर सकता है, सहायता माँगता है। यह सम्बन्ध अनेक कारकों से स्थापित होते हैं; जैसे समरसता, तद्नुभूति, समझ स्वीकारता और इन सबसे ऊपर कटिबद्धता।

भौतिक परिवेश— परामर्श एक इष्टतम परिस्थिति में ही हो सकता है जिसमें भौतिक परिवेश सन्निहित है। भौतिक परिवेश जिसमें

परामर्श दिया जाता है। वह बाह्य व्यवधान से मुक्त होना चाहिए। कमरा साधारण परन्तु सुरुचिपूर्ण ढंग से व्यवस्थित होना चाहिए जिससे गर्मजोशी की भावना प्राप्त हो, जो आरामदायक हो जिसमें प्रकाश ऐसा हो जो न अधिक चमकदार हो और न ही बहुत मन्द हो तथा जिसमें पर्याप्त वायु का प्रवाह हों। प्रायः यह मान लिया जाता है कि भौतिक परिवेश ठीक ही होगा लेकिन कभी–कभी इसकी उपेक्षा होती है जो परामर्श में गम्भीर व्यवधान उत्पन्न करती है।

एकान्तता–सभी व्यावसायिक सम्बन्धों का सार एकान्तता है और परामर्श इसका अपवाद नहीं हैं। यह एकान्तता केवल भौतिक ही नहीं वरन् मनोवैज्ञानिक भी होनी चाहिए। एकान्तता का प्रश्न बहुत संवदेनशील है जो कि परामर्श साक्षात्कार की रिकॉर्डिंग से जुड़ा हुआ है। इस सम्बन्ध में काफी विवाद है कि परामर्शी की अनुक्रियाओं का रिकॉर्ड रखा जाना चाहिए या नहीं। एक दृष्टिकोण यह है कि रिकॉर्डिंग का प्रयास परामर्शी की प्रक्रिया में व्यवधान करेगा और अवरोधित करेगा। इस सम्बन्ध में विचार यह भी है कि रिकॉर्डिंग का विचार परामर्शी पर खराब प्रभाव डालेगा। जो रिकॉर्डिंग के पक्ष में है उनका मानना है कि यह आवश्यक है। उनका तर्क है कि परामर्शदाता के पास सामग्री होनी चाहिए, ताकि वह जो कुछ परामर्शी ने कहा है उसे भली प्रकार समझने के लिए जब चाहे उसे पढ़ सके और जितनी बार चाहे उसे देख सके। बिना इसके परामर्शदाता को स्मृति पर निर्भर रहने के लिए बाध्य होना पड़ेगा जो अधिक विश्वसनीय नहीं है। स्मृति पर बहुत अधिक निर्भरता अवांछित है। इसके अतिरिक्त यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि स्वस्थ समरसता स्थापित हो गयी है और परामर्शी को रिकॉर्डिंग का उद्देश्य बता और समझा दिया गया है तो उसे अपनी अनुक्रियाएँ देने में कोई हिचकिचाहट और झिझक नहीं होगी। इन लोगों का यह भी तर्क है कि चिकित्सा जगत में ऐसे अनेक रिकॉर्ड रखे जाते हैं और मरीज को कोई आपत्ति नहीं होती। इसी प्रकार परामर्श में भी

परामर्शी को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। पर दोनों प्रकार की एक व्यवस्था में महत्वपूर्ण अन्तर है। परामर्श शुद्ध रूप में मनोवैज्ञानिक है और इसकी तुलना चिकित्सकीय व्यवस्था से नहीं की जा सकती, यद्यपि दोनों में एकान्तता महत्वपूर्ण है।

25.4 मूल्य, विश्वास और मनोवृत्ति परिवर्तन

परामर्श एक–और–एक का सम्बन्ध है जिसमें परामर्शदाता परामर्शी को मित्रवत् और गर्म वातावरण प्रदान करता है ताकि वह अपनी समस्या कह सके और उपयुक्त हल पर ध्यान दें। इस सूक्ष्म सम्बन्ध में यह सुझाया जाता है कि परामर्शदाता परामर्शी की मनोवृत्ति, मूल्यों और विश्वासों को परिवर्धित कर ले। यह एक बहुत ही संवेदनशील मुददा है। लेकिन यह आशा की जाती है कि परामर्शदाता वस्तुगत मनोवृत्ति अपनाएगा और अपनी आत्मगत मनोवृत्ति, से अपने व्यवसाई सम्बन्धों को प्रभावित नहीं होने देगा। परामर्शदाता से यह आशा नहीं की जाती कि वह परामर्शी के विश्वासों की आलोचना करें या उसके प्रति अपनी बेरुखी दर्शाए। इस प्रकार की मनोवृत्ति की किसी भी सुसंस्कृत व्यक्ति से आशा नहीं की जाती तो फिर परामर्शदाता से कैसे। अतः यह कोई गम्भीर समस्या नहीं है। परन्तु यहॉ परामर्शी के विश्वासों को परिवर्धित करने की एक जटिल समस्या है। क्या परामर्शदाता को इस दिशा में कुछ करना चाहिए? क्या परामर्शदाता द्वारा पराशर्मी के विश्वासों के परिवर्तन को प्रभावित करने और उसमें हस्तक्षेप करना न्यासंगत है? यह बहुत ही संवेदनशील विषय है। उदाहरणार्थ, परामर्शी के त्रुटिपूर्ण विश्वासों और अंधविश्वासों के सम्बंध में क्या परामर्शदाता को तटस्थ रहना उचित है? यदि परामर्शदाता, परामर्श के गलत और झूठे विश्वासों को परिवर्धित करता है तो वह न्यायसंगत और पूर्ण रूप से अपने अधिकार क्षेत्र में हैं। लेकिन जब इन विश्वासों का सम्बन्ध जीवन के प्राथमिक दर्शन या समाज की अनिवार्य संस्कृत या परामर्शी के धर्म से हो तब परामर्शदाता को तटस्थता की

मनोवृत्ति अपनानी चाहिए। **मूल्य उन्मुखता**—अगला प्रश्न परामर्शी की मूल्य उन्मुखता या मूल्य पद्धति से सम्बन्धित हैं। **स्प्रेंगर** के अनुसार लोगों की मुख्य मूल्य उन्मुखता, सैद्धान्तिक, आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और कलात्मक होती है। अधिकांश परिस्थितियों में पराशर्मी मूल्यों के द्वन्द्व में फँसा हुआ होता है। इस पृष्ठभूमि के विपरीत परामर्शीदाता को क्या करना चाहिए? परामर्शदाता द्वारा परामर्शी पर अपनी मूल्य पद्धति थोपने का तो प्रश्न ही नहीं उठता पर जब मूल्य द्वन्द हो तब परामर्शदाता को स्पष्टीकरण द्वारा मुद्दे को हल करना चाहिए, उसे परामर्शी की दुविधा दूर करने ओर बिना किसी हिचक के सहायता प्रदान करनी चाहिए।

स्वीकृति—रोजर्स स्वीकृति क सिद्धान्त को बहुत अधिक महत्व प्रदान करता है। परामर्शी सम्बन्धों की प्रकृति को परामर्शी के अप्रतिबंधित एक व्यक्ति के आत्म—अर्थ के सम्बन्ध में परामर्शदाता के इस सिद्धान्त के द्वारा परिभाषित किया गया है। हम कभी—कभी प्रतिबंधित स्वीकृति देते हैं जिससे कोई भी सम्बनध बच नहीं सकता। परामर्श सम्बन्ध भी एक प्रकार का सामाजिक सम्बन्ध है जिसे 'परामर्शदाता और परामर्शी' के बीच के सम्बन्ध की संज्ञा दी जा सकती है। परामर्शदाता—परामर्शी सम्बन्ध वह समबन्ध है जिसमें स्वीकृति अप्रतिबन्धित होती है। पूर्ण स्वीकृति में संख्यात्मक या निर्णयात्मक मनोवृत्ति सन्निहित नहीं होती। परन्तु इसका सम्बन्ध परामर्शी के कष्टों को दूर करने से होता है। परामर्श परिस्थिति स्वीकृति का अर्थ, को शब्दों, मुखाकृति और भावभंगिमा तथा परामर्शदाता और परामर्शी के अनुभव जो कि वे एक—दूसरे से अप्रतिबन्धित रूप से जुड़े हुए हैं, से होता है। इन अर्थों में स्वीकृति परामर्श परिस्थिति का सार है।

समझ—एक व्यक्ति की प्राथमिक आवश्यकताओं में से एक आवश्यकताा उसको समझने की है। यह व्यक्ति की गहनतम् भावनाओं को स्पर्श करती है। यह लोगों द्वारा समझना, प्यार किया जाना, पसन्द

किया जाना और स्वीकृत किया जाना है। 'समझ न पाना' का अर्थ है विलग और अकेला छोड़ देना। सामाजिक स्थितियों में औरों को समझना तथा साथ ही स्वयं को भी समझना सभी आयु वर्ग के लोगों की मुख्य अभिरुचि होती हैं। समझना वस्तुतः अन्य लोगों की मनोवृत्तियों, अर्थों और भावनाओं का प्रत्यक्षीकरण है। समझना, स्पष्ट रूप यह जानना है कि क्या समझना है'–एक व्यक्ति, वस्तु, घटना, विचार या संसार। परामर्श की परिस्थिति में समझ के दो लक्ष्यार्थ होते हैं। प्रथम, यह परामर्शी को अपने स्वयं के सम्बन्ध समझ और परिस्थिति या पर्यावरण के सम्बन्ध में और दूसरा, परामर्शदाता को परामर्शी की स्थिति या परिस्थिति की समझ। परामर्शदाता, परामर्शी की भावनाओं को समझने के योग्य होता है और परिणामस्वरूप परामर्शदाता, परामर्शी के विचारों के तरीके को अनुसरण करने में भी योग्य होता है। **जेन्डलिन** ने 'समझ' के कुछ कारकों को 'समझ' को अनुभव करने में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताओं के की पहचान की है, जैसे–

1– एक ऐसा अनुभव करना जो, विचारने या शब्दों में व्यक्त करने की अपेक्षा अधिक महसूस किया जाता है।

2– एक ऐसा अनुभव करना जो तत्काल वर्तमान में प्रतित होता है।

3– एक ऐसा अनुभव जो स्वयं के प्रत्यक्षीकरणों, पसन्द और नापसन्दों में व्यक्त होता है।

4– एक ऐसा अनुभव करना जो संप्रत्ययीकरण निर्देशित करता है।

5– एक ऐसा अनुभव करना जो आन्तरिक रूप से सार्थक होता है।

उपर्युक्त वर्गीकरण समझ के विभिन्न स्तरों को सुझाता है। प्रथम का सम्बन्ध व्यक्ति वस्तु या घटना आदि के ज्ञान से हैं। द्वितीय स्तर का सम्बन्ध शाब्दिक या क्रियात्मक समझ से हैं। तीसरे का सम्बन्ध अपने स्वयं के प्रत्यक्षीकरणों, अनुभवों, पसन्द और नापसन्दों से है। चतुर्थ का सम्बन्ध आत्म समझ से है और यह आन्तरिक या बाह्य प्रत्यक्षीकरण की सहायता या उसके बिना भी हो सकती है।

25.5 समस्याा पहचानना और खोजना।

एक बार पर्याप्त सम्बन्ध स्थापित हो जाय तब परामर्शी गहन चर्चा करने के लिए अधिक तैयार होगा और उनके तथ्यों की खोज करने के लिए भी अधिक तैयार होगा। इस स्तर पर परामर्शी को अधिक उत्तदायित्व उठाने के तत्पर होना चाहिए क्योंकि यह उससे सम्बन्धित है और इसी कारण यह परामर्शियों का अधिक उत्तरदायित्व है कि वह अपनी समस्या के विस्तार को परामर्शदाता को बताए और परामर्शदाता द्वारा पूछे गये प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दें ताकि परामर्शदाता को अधिकतम सहायता प्राप्त हो सके।

इस अवस्था में परामर्शदाता अपने तन्मयता वाले व्यवहार को बनाए रखता है और अपना विशेष ध्यान संचार कौशल जैसे– स्पष्टीकरण, प्रत्यक्षीकरण, चैकिंग और प्रतिपुष्टि पर देता है। परामर्शदाता द्वारा प्रश्न इस प्रकार प्रस्तुत किये जाते हैं कि परामर्शी के समस्या सम्बन्धित तथ्यों की खोज बनी रहे। ऐसे प्रश्न जो परामर्शी को चुनौती दें, उसे शर्मसार करें या डराएँ, उनसे बचना चाहिए। परामर्शदाता जितनी अधिक उपयोगी सूचना अथवा प्रश्न रखेगा, उतना ही वह परामर्शी की आवश्यकताओं एवं उसके ही उत्तर का उतना ही मूल्यांकन कर सकेगा। अतः परामर्शदाता के लिए यह आवश्यक है कि वह सूचना के विभिन्न क्षेत्रों को पहचाने और उन्हें खोजे। **गिब्सन और मिशेल** ने वांछित सूचना को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया है– समय आयाम, भावना, आयाम और संज्ञानात्मक आयाम। इनमें से हर शीर्षक के उपसंघ निम्नांकित पंक्तियों में इंगित किए गए हैं–

1– समय आयाम– इसमें परामर्शी के गति का आभास मिलता है, विशेष रूप से वे जो उसके अनुभवों को निरन्तर प्रभावित रहते हैं। वर्तमान आयाम में व्यक्ति कितनी अच्छी तरह प्रकार्य कर रहा है, विशेष रूप से वे अनुभव जिन्होंने परामर्शी को वर्तमान में परामर्श के लिए

प्रेरित किया है। भावी समय आयाम में भविष्य की आशाएँ, योजनाएँ, लक्ष्य इत्यादि शामिल होती हैं।

2– भावना आयाम–इसमें परामर्शी समस्याओं को कैसे हल करता है, नित्य–प्रति के निर्णयों में तार्किकता का किस प्रकार प्रयोग करता है और समस्याओं के समाधान में अधिगम के कितनी तत्परता की क्षमता दर्शाता हैं।

3– संज्ञानात्मक आयाम– इसमें परामर्शी अपनी समस्याओं को किस प्रकार संज्ञान में लेता हैं और उसमें तार्किकता एवं तत्परता को बनाये रखता है।

इस बिन्दु पर कुछ परामर्शदाता समस्या पहचानने के लिए आंकलन तकनीक का प्रयोग करते है, जैसे–मानकीकृत परीक्षण। समस्या की विभिन्न उप–समस्याओं को भी इंगित किया जाता है। इस स्तर पर परामर्शदाता अधिक से अधिक प्रासंगिता प्रदत्त वातावरण तैयार करता है और उन्हें समाकलित कर परामर्शी की एक पूर्ण तस्वीर तैयार करता है। परामर्शदाता इन प्रत्यक्षीकरणों को परामर्शी से भी साझेदारी करता है। इस स्तर पर परामर्शदाता और परामर्शी दोनों का लक्ष्य समस्या को देखना और समान शाखाओं में बाँटना होता है। इस स्तर पर परामर्शदाता का लक्ष्य परामर्शी को ऐसी आत्म–समझ विकास में सहायता पहुँचाना होता है कि वह परिवर्तन और क्रिया की आवश्यकता को पहचान सके।

परामर्श प्रक्रिया का यह व्यस्तम स्तर है। यह वह स्तर हैं जहाँ वास्तविक कार्य सम्पन्न होता है, विशेष रूप से विशद् खोज की आवश्यकता चलती रहती है। जो परामर्श प्रकिया के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्वीकार की जाती है। इसमें परामर्शी की समझ को बढ़ावा देने के लिए सुवधिाजनक परिस्थितियाँ लगातार बनी रहती हैं। यद्यपि समस्या–हल की क्रियाओं का इस स्तर पर प्रारम्भ होने की सम्भावना

रहती है, पर इन क्रियाओं को लागू करने का मुख्य चरण तृतीय स्तर पर उठाया जाता है।

गिब्सन और मिशेल ने समस्या की पहचान और खोज के लिए निम्नांकित चरण इंगित किए हैं–

1– **समस्या की परिभाषा**– परामर्शदाता परामर्शी के सहयोग से समस्या का विशिष्ट और वस्तुगत रूप में वर्णन प्राप्त करने की चेष्टा करता है। समस्या के सम्बन्ध में परामर्शदाता और परामर्शी की समझ में एकरूपता हो, यह महत्वपूर्ण है। समस्या की परिभाषा में वांछित यथार्थता के अतिरिक्त यह महत्वपूर्ण है कि उसके भाग या योगदान देने वाले कारक और वर्तमान में तथा बाद में परामर्शी के लिए समस्या की गहनता को भी इंगित किया जाऐ।

2– **समस्या की खोज**–समस्या को पूरी तरह समझने के लिए जिस प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता है उसकी पृष्ठभूमि का संकलन इसी बिन्दु पर कर लिया जाता है। किस प्रकार की सूचना कब वांछित है इसका निश्चय हो जाता है तत्पश्चात् परामर्शदाता और परामर्शी को यह निश्चय करना होता हैं कि यह सूचना कैसे एकत्र की जाएगी तथा इसके लिए कौन से मनोवैज्ञानिक परीक्षण उपयुक्त होगें। यद्यपि न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रशासन किया जाए या नहीं, इस सम्बन्ध में परामर्शी की राय भी महत्वपूर्ण है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा तथ्य एकत्र करना कितना भी आवश्यक क्यों न हो, पर परामर्शी की इच्छा के बगैर इनका प्रयोग सारा परामर्श कार्य को प्रभावित करेगा। परामर्शदाता कुछ पस्थितियों में पूर्ण case study (वैयक्तिक अध्ययन) प्राप्त करना पसन्द कर सकता है। पर यह निर्णय परिस्थिति की गम्भीरता पर निर्भर करता है। तथा परामर्शदाता और परामर्शी के पास इसके लिए कितना समय है इस पर भी निर्भर करता है।

3– **सूचना को समाकलित करना**– इस चरण पर यह महत्वपूर्ण है कि जो सूचना संकलित की गई है उसे व्यवस्थित और समाकलित कर

परामर्शी और उसकी समस्या का एक सार्थक पार्श्वचित्र तैयार कर लिया जाए । इस स्तर पर यह भी उपयुक्त होगा कि वांछित परिवर्तनों की खोज भी प्रारम्भ की जाए और इन परिवर्तनों में आने वाली रुकावटों को जान लिया जाए। इस स्तर पर परामर्श प्रक्रिया को इस प्रकार संकुचित कर लिया जाए ताकि प्रक्रिया को जल्दी से निपटाया जा सके।

25.6 समस्या के हल की योजना बनाना

इस स्तर पर प्रभावी लक्ष्य निर्धारण परामर्श क्रिया का महत्वपूर्ण अंग बन जाता है। यहॉ यह जनना महत्वपूर्ण है कि लक्ष्य निर्धारण में त्रुटि से परामर्शी परामर्श प्रक्रिया में अपना विश्वास खो सकता है। इस स्तर पर पुनः कुछ चरण एक क्रम में सुझाए जा सकते हैं जिनके द्वारा हम सन्निहित प्रक्रिया को देख सकते हैं –

1. **समस्या को परिभाषित करना** –यह महत्वपूर्ण है कि परामर्शदाता और परामर्शी समस्या को एक ही परिप्रेक्ष्य में देखें और उसके सुधार के लिए समान समझ रखें।

2. **सभी सम्भव हलों को पहचानना और सूचीबद्ध करना** – इस बिन्दु की सभी सम्भावनाओं पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है। परामर्शदाता और परामर्शी दोनों इसमें सकिय भाग लेते हैं। समस्या हल सम्बंधित जितनी सम्भावनाएँ परामर्शी के मस्तिष्क में आएँ उन्हें सूचीबद्ध करने का उसे अवसर प्रदान करना चाहिए। यदि कोई हल छूट गया है तो परामर्शदाता, परामर्शी को सुझा सकता है, ''क्या तुमने इसके सम्बन्धों में सोचा?'' समस्या के हलों को सूचीबद्ध करते समय किसी भी हल को छोड़ना नहीं चाहिये चाहे वह लागू करने में असम्भव ही क्यों न प्रतीत हो। उन सम्भवानाओं को जिन्हें किसी कारण छोड़ दिया गया है उन पर अगले चरण में ध्यान दिया जा सकता है।

3– **प्रस्तावित हलों के परिणामों की खोज करना**– यहाँ परामर्शदाता, परामर्शी को सुझाए गए हल को लागू करने की प्रक्रिया को पहचानने के लिए उत्साहित करेगा और कभी–कभी सुझाव भी देगा।

ऐसा करने में यह ध्यान रखना होगा कि कुछ प्रक्रियाओं को लागू करना असम्भव प्रतीत होता है या बहुत जटिल होता है।कुछ प्रकियायें समस्याएँ पैदा कर सकती हैं। अतः प्रत्येक प्रकिया के सम्भावित परिणाम पर गम्भीरता से विचार करना लेना चाहिए।

4– हलों की प्राथमिकता निश्चित करना–तृतीय चरण के पश्चात् पुनः परामर्शी, परामर्शदाता के उत्साहित करने के साथ हलों की प्राथमिकता का निर्धारण करेगा। समस्या के सर्वोत्तम हल को चयन करने का निर्णय ले लेने पर, परामर्शी को उसमें भागीदार बनाने हेतु उसे सम्पूर्णता से तैयार करना होगा।

इस योजना के आगे विकास में, परामर्शदाता यह अनुभव कर सकता है कि परामर्शी, प्रायः उतनी शीघ्रता से मूल अन्तःदृष्टि, परिणाम और सम्भावनाओं पर नहीं पहुँच रहा है जितना कि परामर्शदाता चाहता है। इस स्थिति में, परामर्शी को सुविधा प्रदान करने के लिए परामर्शीदाता पुनरावृत्ति की तकनीक का प्रयोग कर सकता है और अन्ततः प्रोत्साहन तकनीक का भी प्रयोग कर सकता है।

25.7 हल का आरोपण और समापन

इस अन्तिम अवस्था में परामर्श एवं परामर्शदाता के उत्तरदायित्व स्पष्ट है। परामर्शी का उत्तरदायित्व निर्धारित हल का आरोपण करना या पालन करना होता है और परामर्शदाता का उत्तरदायित्व समापन बिन्दु का निर्धारित करना। प्रथम, परामर्शदाता का उत्तरदायित्व परामर्शी को निर्धारित समस्या हल पर कार्य करने के लिए परामर्श देना है उसके बाद परामर्शी को यह भी बताना है कि पूर्व में दिये गये सुझाव एवं परामर्शों का अक्षरशः यदि वह पालन करेगा तो निशिचित ही वह समस्या से झुटकारा प्राप्त कर लेगा।

अंततः जब परामर्श–दाता को स्पष्ट हो जाता है कि उसके द्वारा दिये गये सुझावों एवं परामर्शों का परामर्शी उचित अनुपालन कर अपनी समस्या से छुटकारा प्राप्त कर रहा हैं तो वह परामर्शी को स्पष्ट निर्देश

देता है कि अब आप मुझसे केवल आवश्यकता पड़ने पर ही सम्पर्क करेंगे। क्योंकि आप अब पूरी तरह से स्वस्थ्य है। इस प्रक्रिया को समापन कहा जाता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श की तैयारी के बारे में लिखिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. समस्या पहचानना और खोजने पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

25.8 सार–संक्षेप

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में परामर्श की पूर्व तैयारी के बारे में लिखा गया है जिसमें बताया गया है कि पमरार्श देने से पहले कौन–कौन से तैयारी महत्वपूर्ण होती है। परामर्श की तैयारी में तत्परता प्रारम्भिक चरण है जो सहायता प्राप्त करने की इच्छा को दर्शाती है। द्वितीय अवस्था में पूर्व परामर्श साक्षात्कार आता हैं जिसका उद्देश्य परामर्शी को उसके उत्तरदायित्वों, परामर्श की सेवा कार्यविधि, परामर्श की आवृत्ति और परामर्श के सत्र के समय तथा फीस के सम्बन्ध में अवगत कराना है।

प्रस्तुत इकाई में ही परामर्श की प्रक्रिया तथा नियुक्ति लेने के कारणों जैसे सम्प्रेषण, चिन्ता, प्रथम साक्षात्कार, पुनः विश्वास दिलाना, विश्वास जीतना, परामर्श सम्बन्ध, अस्पष्टता, उत्तरदायित्व, परामर्श सामग्री और प्रक्रिया भौतिक परिवेश एवं एकान्तता के बारे में वृहद् वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसी इकाई में मूल्य, विश्वास और मनोवृत्ति परिवर्तन, मूल्य उन्मुक्ता, स्वीकृति, समझ तथा समस्या पहचाना और खोजना तथा समस्या के हल की योजना बनाना, के बारे में भी चर्चा की गयी है ।

आशा हैं कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी और आप लोग परामर्श देने से पूर्व विभिन्न प्रकार की तैयारियों से अवगत हो सकेगे।

25.9 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

तत्परता– तत्परता से तात्पर्य पराशर्मी की सहायता प्राप्त करने की इच्छा है।

पूर्व परामर्श साक्षात्कार– पूर्व परामर्श साक्षात्कार किसी भी परामर्शी को इसलिए प्रदान किया जाता है कि वह परामर्श में किन–किन वस्तुओं की आवश्यकता होती है, के बारे में जान सकेंगे।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– तत्परता से आप क्या समझते है?

2– नियुक्ति लेने के कारणों की व्याख्या कीजिए।

3– परामर्श सम्बन्ध पर टिप्पणी लिखिये।

4– अस्पष्टता की व्याख्या कीजिए।

6– मूल्य विश्वास और मनोवृत्ति के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

7– समस्या पहचानने और खोजने से आप क्या समझते है?

8– समस्या के हल की योजना बनाने पर टिप्पणी लिखिये।

विस्तृत

1– परामर्श की तैयारी पर एक निबन्ध लिखिये।

2 नियुक्ति लेने के कारणों पर प्रकाश डालिये।

25.10 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज 80–93

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012

3– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005

4– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15

खण्ड–पंचम– मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई –26, परिवार एवं विवाह परामर्श

26.0 इकाई का उद्देश्य

26.1 परिचय

26.2 परिवार परामर्श

26.3 विवाह परामर्श

26.3.1 विवाह पूर्व परामर्श

26.3.2 संरचना

26.4 सार–संक्षेप

26.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

26.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

26.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– परिवार परामर्श के बारे में जान सकेंगे।

2– विवाह परामर्श पर टिप्पणी लिख सकेगे।

3– विवाह पूर्व परामर्श के बारे में जान सकेगे।

4– विवाह परामर्श की संरचना क बारे में प्रकाश डाल सकेंगे।

26.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थीयों, प्रस्तुत इकाई में परिवार एवं विवाह परामर्श के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें बताया गया है कि परिवार परामर्श एवं विवाह परामर्श क्या होता है। वर्तमान युग में जहाँ एक तरफ औद्योगीकरण एवं शहरीकरण ने अपना स्थान वृहद् रूप में स्थापित कर लिया है वहीं इन कारणों के फलस्वरूप पारिवारिक विघटन शुरू हो गये है। औद्योगिक युग के कारण जहां जीवन शैली में वृहद् परिवर्तन आया है वहीं पर परिवार टूटने एवं बिखरने लगे हैं। वर्तमान समय में परिवार

की संकल्पना में संयुक्त परिवार एकल परिवारों में विभाजित होने लगे हैं। इसी हेतु वर्तमान समय में पारिवारिक परामर्श की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। इसी तथ्य को ध्यान रखते हुए प्रस्तुत इकाई में परिवार परामर्श के बारे में वर्णन किया जा रहा है।

प्रस्तुत इकाई में ही विवाह परामर्श के बारे में प्रकाश डाला गया है, जिसमें बताया गया है कि व्यक्ति के जीवन में विवाह एक महत्वपूर्ण घटना है। इसके अनेक आयाम व प्रकार्य होते हैं। इस्लाम को छोड़कर, अधिकांश धर्मों में विवाह एक संस्कार होता है, सामाजिक संविदा नहीं। प्राचीन समाज जैसे–जापानी, चाईना और भारतीय समाज उच्च कोटि के परम्परावादी वैवाहिक प्रत्यय को मानते हैं। इन समाजों में विवाह केवल दो व्यक्तियों की सहमति मात्र नहीं हैं। वरन् यह एक ऐसी घटना हैं जिसमें परिवार और समुदाय सन्निहित होते हैं। अतः साथी के चयन में व्यक्ति की पसन्द का प्रश्न सीमित है। परिवार की सहमति तथा अनुमोदन और परिवार में नए सदस्य की ग्राह्यता अभीष्ट हैं तीव्र औद्योगीकरण और शहरीकरण के तनावों के साथ, विवाह का यह परम्परावादी विचार कि विवाह दो व्यक्तियों के मध्य एक पवित्र बन्धन है जो जन्म–जन्मान्तर का एक ऐसा बन्धन है जिसे तोड़ा नहीं जा सकता, को स्वीकार करना काफी कठिन है। पाश्चात्य समाजों, कदाचित् ऐतिहासिक कारणों व स्वतन्त्र मनोवृत्ति जो अब तक विद्यमान है जहाँ तक विवाह का सम्बन्ध है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस इकाई में विवाह परामर्श के बारे में प्रकाश डाला गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में विस्तृत वृद्धि करायेगी। जिससे आप लोग परिवार एवं विवाह परामर्श के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

26.2 परिवार परामर्श

परिवार एक ऐसी इकाई है जहाँ व्यक्ति को बहुत अधिक सन्तोष मिलता है, यहीं बालक के व्यक्तित्व का विकास होता है। केवल परिवार

ही ऐसी संस्था है, जहाँ स्त्री और पुरुष अपनी शारिरिक और मानसिक इच्छाओं की पूर्ति करते हैं, जहाँ बच्चों का लालन–पालन किया जाता है, उन्हें शिक्षा प्रदान की जाती है और यहाँ इसके सदस्य रहने का और भोजन–वस्त्र प्राप्त करते हैं। जब कोई सदस्य अस्वस्थ्य हो जाता है या परिवार की कोई–स्त्री–सदस्या गर्भवती होती है तो ऐसे समय में परिवार इन सदस्यों की देखभाल करता है। परिवार में प्रेम और स्नेह का साम्राज्य रहता है। पारिवारिक जीवन का अपना महत्व है और यह इस संस्था से अलग नहीं प्राप्त हो सकता। अतएव सदस्यों के लिए परिवार के स्वयं के मूल्यों एवं महत्ता के लिए यह आवश्यक है कि पारिवारिक जीवन की रक्षा करने के साथ ही साथ इसको सुपुष्ट बनाया जाए। वे सामाजिक संस्थाएं जो पारिवारिक कल्याण की सेवाएं प्रदान करती हैं उनका उद्देश्य स्वस्थ पारिवारिक जीवन को बनाए रखना है। पारिवारिक वैयक्तिक कार्य का प्रयोजन यह है कि वह परिवार में रहने वाले सदस्य में उसकी उन अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करें जिससे उनका जीवन सन्तोषपद्र होने के साथ ही साथ समाज के लिए भी उपयोगी हो सके।

आधुनिक परिवार की समस्याएं

इसमें सन्देह नहीं कि जब से परिवार नाम की संस्था का उदय हुआ तभी से कुछ परिवार ऐसे अवश्य थे जिनके सदस्यों के आपसी सम्बन्ध ठीक नहीं थे। यह संघर्ष या तो पति–पत्नी में थे या माता–पिता और बच्चों में। परन्तु संयुक्त परिवार की प्रथा के फलस्वरूप बच्चों का पालन–पोषण हो जाता था और धार्मिक नियन्त्रण के कारण पति–पत्नी के बीच सम्बन्ध विच्छेद भी बहुत कम होते थे। परन्तु कुछ सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों के कारण आज के परिवार में संघर्ष और मनमुटाव कुछ अधिक हो गया है। पारिवारिक जीवन में जो कठिनाइयाँ आती हैं उनके बहुत से स्वरूप हैं–

1– पति और पत्नी या बच्चों का स्वभाव और आदतें मेल न खाती हों अथवा उनमें संवेगात्मक अस्थिरता हो।

2– दूसरी यह भी हो सकता है कि घर का प्रबन्ध ठीक न हो या आय कम हो इस कारण धनाभाव हो या बेरोजगारी, बीमारी, आकस्मिक दुर्घटना, तलाक या इसी प्रकार के अन्य कारण परिवार के लिए समस्या बन सकते हैं।

3– तीसरे समूह में बच्चों से सम्बन्धित समस्याएं हो सकती है। समस्याएं जब और अधिक बढ़ जाती हैं तो बच्चों के प्रति उदासीनता और अत्याचार परिवार में होने लगता है। जिसके फलस्वरूप बच्चों में अपराध की प्रवृत्ति बढ़ने लगती है और आगे चलकर वे अपने आपको सन्तुलित नहीं रख पाते।

4– चौथे समूह में वे समस्याएँ होती हैं जिनका जन्म उस समय होता है जब माँ और बाप दोनों अपने–अपने काम पर जाते हो, तो समस्या यह होती है कि बच्चों का घर पर देखभाल कैसे हो।

यह पारिवारिक एवं वैयक्तिक समस्याएँ कई कारणों एव तत्वों के मेल से उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं का प्रायः प्रत्येक सदस्य पर प्रभाव पड़ता है। समस्याओं को जन्म देने में सामाजिक, आर्थिक एवं भावनात्मक कारणों का हाथ हो सकता है। ऐसे समय में जब परिवार में बहुत सी समस्याएँ हों तो उनका हल ढूँढने का अच्छा उपाय यही है कि परिवार के सदस्यों को समस्याओं के कारण ढूँढने में सहायता की जाए। फिर परिवार के वातावरण अर्थात् सदस्यों के व्यवहार में कुछ आवश्यक परिवर्तन किए जाए और यदि आवश्यक हो तो परिवार की आर्थिक स्थिति या तो सुदृढ़ करने में सहायता की जाए या कुशल गृह–प्रबन्ध और विवेकशील व्यय का विचार समझाया जाए, तो बड़ी सीमा तक पारिवारिक समस्याएँ समाप्त या हल हो सकती है।

परिवार परामर्श में समाज कार्यकर्त्ता के कार्य–

वैयक्तिक समाज कार्य (सोशल केस वर्क) का अच्छा ज्ञान रखने वाला समाज कार्यकर्त्ता परिवार में सम्बन्धों को सुधारने में अच्छी दक्षता रखता है। मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा तथा अन्य प्राकृतिक अथवा भौतिक शास्त्रों के ज्ञान की सहातया से समाज कार्यकर्ता यह जान लेता है कि समस्याओं का क्या कारण हो सकता है और उन समस्याओं को दूर करने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं। यद्यपि, यह ठीक ही है कि परिवार की समस्याएँ सुलझाने में केवल समाज कार्य की समक्ष नहीं हैं अपितु मनोचिकित्सक; चिकित्सक; परिचारिका और समाज–कल्याण के विशेषज्ञों का भी बराबर का हिस्सा है। लेकिन तो भी परिवार की समस्याएँ सुलझाने में वैयक्तिक समाज कार्य (सोशल केस वर्क) का अपना अलग और महत्वपूर्ण स्थान है।

विदेशों में परिवार की समस्याएँ सुलझाने के लिए सरकारी और गैरसरकारी दोनों प्रकार की संस्थाओं की सेवाएँ प्राप्त हैं। सरकारी संस्थाओं में पारिवारिक वैयक्तिक कार्य (फेमिली केस वर्क) का उस समय बहुधा प्रयोग होता है जब परिवार को अथवा निराश्रित माँ को सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त करनी होती है। गैर सरकारी संस्थाएं भावनात्मक गड़बड़ी को दूर करने और व्यक्तिगत समस्याओं को दूर करने में सहायता करती है। "इन संस्थाओं के माध्यम से वैयक्तिक समाज कार्य समस्याओं के विवेचन और उनके हल निकालने में सलाह मशविरा देता है। यह सलाह, हो सकता है, कि परिवार के आय–व्यय से सम्बन्धित हो या कुशल गृह प्रबन्ध से भी अपना सम्बन्ध रख सकती है। यह भी सम्भव है कि स्वास्थ्य और शिक्षा से सम्बन्धित विषयों पर भी संस्थाओं को कुछ सलाह देनी पड़े। यदि परिवार आर्थिक कठिनाइयों से घिरा है तो यह संस्थाएँ व्यावसायिक सलाह या रोजगार के अवसर बताकर समस्याएँ समाप्त करने में सहायता कर सकती हैं। कभी–कभी पारिवारिक केस वर्क को विवाह से पहले अपनी सलाह तब देनी पड़ती

है जब समाज–कार्यकर्ता के पास युवा स्त्री पुरूष अपने विवाह के सम्बन्ध में बातचीत करने आते हैं अथवा उनके माता–पिता इस सम्बन्ध में समाज–कार्यकर्ता से सम्पर्क स्थापित करते हैं। केस वर्कर या वैयक्तिक अथवा कार्यकर्ता से उस समय भी सम्बन्ध स्थापित करते हैं, जब पति और पत्नी के वैवाहिक सम्बन्धों में कुछ कठिनाई होने लगती हैं। ऐसे समय में समाज–कार्यकर्ता दोनों को समस्याएँ सुलझाने तथा एक दूसरे को समझने और सहायता करने के लिए प्रोत्साहित करता है जिसके कारण प्रायः तनाव कुछ कम हो जाता है और एक समय आता है जब पति–पत्नी और बच्चों के मध्य परिवार का वातावरण फिर स्वस्थ और ठीक होकर सभी को सन्तोष प्रदान करता है।" यदि कोई गैर सरकारी संस्था परिवार को आर्थिक सहायता प्रदान करने में असमर्थ है तो ऐसे परिवारों को वे संस्थाएँ आर्थिक सहायता के हेतु सरकारी संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करने में मदद करती हैं।

26.3 विवाह परामर्श

विवाह परामर्श वस्तुतः एक बहुत विस्तृत क्षेत्र है जिसके तीन महत्वपूर्ण आयाम है, यथा विवाह पूर्व परामर्श, उत्तम वैवाहिक सामन्जस्य के लिए परामर्श और विवाह टूटने से बचाने के लिए परामर्श।

भारतीय समाज के परम्परावादी होने के कारण, यहाँ वैवाहिक परामर्श ने इतना महत्व प्राप्त नहीं किया है। बुनियादी रूप में वैवाहिक परामर्श व्यक्तिगत परामर्श से भिन्न नहीं है। व्यक्तिगत परामर्श में परामर्शी व्यक्तिगत सेवार्थी होता हैं। विवाह परामर्श में सेवार्थी विवाह जोड़े में से कोई सदस्य नहीं होता वरन् विवाह सम्बन्ध स्वयं में सेवार्थी होता है। परामर्श इस विवाह सम्बन्ध को समझने और उसे सही मार्ग पर लाने में सहायता करता है। विवाह परामर्श को एक आपदा/अथवा आपात हस्तक्षेप के रूप में देखा जाता है। यदि पूर्ववर्ती बलधारी घटनाओं को समझ लिया गया है तो स्वयं आपात के प्रभाव का पूर्वाभास लगाने के लिए कुछ किया जा सकता है। पहले रक्षात्मक पक्ष

पर ध्यान दिया जाना चाहिए, जबकि हस्तक्षेप सरलता से बाद में किया जा सकता है।

विवाह सम्बन्धों में आपात स्थिति किसी तृतीय पक्ष के हस्तक्षेप के कारण आती है। यदि यह तृतीय पक्ष भावात्मक सम्बन्ध रखता है तो इनके कारण संवेगात्मक विक्षोभ हो सकता है जो आपात स्थिति उत्पत्ति करता है। अन्य कारक जिससे विवाह को संकट हो सकता है वह परिवार संरचना में परिवर्तन है। आपात का तृतीय कारण परिवार में बीमारी भी हो सकती है। एक अन्य कारण पारिवारिक गहन पसन्द और नापसन्द तथा वैवाहिक के जोड़े के विश्वासों और जीवन–शैली में भिन्नताएँ जो कि हाल ही में बाह्य कारकों के कारण उत्पन्न हुए हैं, से भी तनाव उत्पन्न हो सकता है। इसके अतिरिक्त आर्थिक स्थिति और कार्य परिस्थियों मे में परिवर्तन हो सकते हैं। इस प्रकार के दृढ़ कारक परिवार में दबाव, खिंचवा और तनाव उत्पन्न कर सकते हैं।

व्यक्ति के जीवन में विवाह एक महत्वपूर्ण घटना होती है। इसके अनेक आयाम और प्रकार्य होते हैं। इस्लाम को छोड़कर, अधिकांश धर्मों में विवाह एक संस्कार होता है, सामाजिक संविदा नहीं। प्राचीन समाज जैसे–जापानी, चाईना और भारतीय समाज उच्च कोटि के परम्परावादी वैवाहिक प्रत्यय को मानते हैं। इन समाजों में विवाह केवल दो व्यक्तियों की सहमति मात्र नहीं हैं। वरन् यह एक ऐसी घटना हैं जिसमें परिवार और समुदाय सन्निहित होते हैं। अतः साथी के चयन में व्यक्ति की पसन्द का प्रश्न सीमित है। परिवार की सहमति तथा अनुमोदन और परिवार में नए सदस्य की ग्राह्यता अभीष्ट हैं तीव्र औद्योगीकरण और शहरीकरण के तनावों के साथ, विवाह का यह परम्परावादी विचार कि विवाह दो व्यक्तियों के मध्य एक पवित्र बन्धन है जो जन्म–जन्मान्तर का एक ऐसा बन्धन है जिसे तोड़ा नहीं जा सकता, को स्वीकार करना काफी कठिन है। पाश्चात्य समाजों, कदाचित् ऐतिहासिक कारणों व स्वतन्त्र मनोवृत्ति जो अब तक विद्यमान है जहाँ तक विवाह का सम्बन्ध

है। राज्य के कानून के शासनादेश के कारण विवाह को अपराम्परावादी बना दिया है। शादी के धर्म–निरपेक्ष विचारों के प्रचार ने इन विचारों को हवा दी कि विवाह दो व्यक्तियों के मध्य सुविधा का मामला है और यदि एक पक्ष उससे बाहर आना चाहता है तो उसे ऐसा करने की स्वतन्त्रता है। इस तर्क ने सामाजिक विधान को प्रायः सभी देशों में कुछ विशेष परिस्थितियों में तलाक लेने की अनुमति प्रदान की। विवाह और तलाक के दोनों मुद्दे सामाजिक और घरेलू जीवन में महामारी की तरह फैल गए हैं।

अमेरिकन समाज ने अनेक नई परम्पराएँ और रिवाज बनाए जिनमें से एक वैवाहिक परामर्श से सम्बन्धित है। यह dating की संस्था है। एक अद्वितीय प्रयोग है जो अमेरिकन समाज का चरित्र बन गई। Dating एक सामाजिक अनुमोदित और सामान्य प्रथा है। युवा लड़के और लड़कियाँ स्वयं विवाह करने से पूर्व अनेक बार एक–दूसरे से मिलते हैं ताकि वे एक–दूसरे को अच्छी तरह समझ सकें। प्रायः dating को सामाजिक सफलता और सामाजिक ग्राह्यता भी समझा जाता है। वैवाहिक परामर्श अमेरिकन समाज में प्रसन्न विवाह प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण सहायता सेवा माना जाता है।

वर्तमान समय में अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि परामर्श एक सतत् प्रक्रिया है जो dating के समय से प्रारम्भ होती है, विवाह के समय से तलाक से पूर्व के तनाव तक प्रगति करती है। विवाह परामर्शदाता को विवाह के उद्देश्यों और उसके दर्शन से भली प्रकार परिचित होना चाहिए। लोग विवाह प्रसन्नता साथ और प्यार के लिए करते हैं। वैवाहिक सम्बन्धों के अन्य पक्ष प्राकृतिक रूप से समावेश कर जाते हैं। एक खुले समाज में जहाँ व्यक्ति अपना साथी चयन कररने के लिए स्वतन्त्र होते हैं वहाँ विवाह एक–दूसरे का आदर और समझ का सम्बन्ध होता है। लोग धन, पद या साथी के व्यक्तित्व के आकर्षण के कारण विवाह करते हैं। आकर्षण के पक्ष को सामान्यता प्यार की संज्ञा दी

जाती है। इस स्तर पर परामर्शदाता को एक–दूसरे को समझने में सहायता प्रदान करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है ताकि वे बाह्य आकर्षण से अति उद्वेलित न हों। हर एक को एक–दूसरे को उसी रूप में स्वीकार करना चाहिए जैसा वह है तथा इसमें संवेगों की भूमिका नहीं होनी चाहिए।

विवाह के दूसरे पक्ष का सम्बन्ध अनुरूपता से है। शादी के दोनों पक्षों की मनोवृत्तियाँ, रुचियाँ, संस्कृति, पसन्द–नापसन्द, मूल्यों की पद्धति आदि समान होनी चाहिए। काम की सन्तुष्टि के दृष्टिकोण से आयु भी महत्वपूर्ण है। यह एक दैहिक सत्य है कि प्रारम्भिक वयस्क अवस्था में काम भावना अपनी चरम सीमा पर होती है। जैसे–जैसे व्यक्ति की आयु बढ़ती जाती है यह भावना कम आधिपत्य वाली होती जाती है। वैवाहिक परामर्शदाता काम की भूमिका को उपेक्षित नहीं कर सकता। काम वह माध्यम है जिसमें व्यक्ति अपनी संवेदनाओं के माध्यम से उत्तेजना और सन्तुष्टि प्राप्त करता है। किसी भी विवाह के काम के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता है। विवाह में परामर्शदाता को जब वह वैवाहिक परामर्श में सन्निहित हो तो यह तथ्य सदैव स्मरण रखना चाहिए।

अधिकांश विवाह, अनेक समस्याओं जो अयोग्यता तद्नुभूति की कमी, संचार तथा अन्य विशिष्ट समस्याओं जिसमें व्यक्तित्व समायोजन और अन्य सामाजिक आर्थिक स्थितियाँ जैसे–धन, सामाजिक जीवन, और पद सम्मिलित है, के कारण कठिनाई में आ जाते हैं।

26.3.1 विवाह पूर्व परामर्श

विवाह पूर्व परामर्श साथी चयन की एक महत्वपूर्ण स्थिति है। यह वस्तुतः दो व्यक्तियों के साथ आने की प्रक्रिया है जो एक–दूसरे को बचपन से जानते हो या एक–दूसरे से किसी तरह सम्बन्धित हों या जो एक–दूसरे के सम्बन्ध में सहकर्मी के रूप में या सहपाठी के रूप में हों। यह सभी अवसर बताते हैं कि वैवाहिक सम्बन्धों में साथी एक–दूसरे से

बिल्कुल अन्जान नहीं होते और, यद्यपि यह कि भारतीय समाज में अधिकांश विवाह माता–पिता द्वारा निश्चित होते हैं। भारतीय समाज और सामाजिक मानक वहाँ dating की आज्ञा नहीं दते हैं। अतः इनका उपचार भिन्न प्रकार से किये जाने की आवश्यकता होती है। पाश्चात्य समाजों में विवाह की सफलता या असफलता के लिए विवाह पूर्व परामर्श एक बहुत महत्वपूर्ण अवस्था मानी जाती है। dating और इसी प्रकार की अन्य सामाजिक रूप में मान्य पम्पराएँ एक–दूसरे के मिलने की अनुशंसा करती हैं। उनका उद्देश्य एक–दूसरे को समझने से होता है ताकि दोनों की पसन्द और स्नेह का विकास हो सके। पर ऐसा भी होता है कि अनेक ऐसे सम्बन्ध अचानक समाप्त हो जाते हैं और अन्य काफी लम्बी अवधि तक चलने के पश्चात् समाप्ति के कगार पर खड़े हो जाते हैं। विवाहपूर्ण परामर्श ऐसी स्थितियों से उन्हें बचाता है। परामर्शदाता उन्हें एक–दूसरे को पूर्ण रूप से समझने में सहायता प्रदान करता है। क्योंकि यह प्रसन्न वैवाहिक जीवन के लिए आवश्यक है। ऐसे अफेयर्स जो शारीरिक आकर्षण और कामवासना की सन्तुष्टि के कारण होते हैं वे अधिक दिन तक नहीं चलते। एक साथी का चयन करना और वैवाहिक सम्बन्ध बनाना आज का औद्योगीकरण और नगरीकरण समाजों में बहुत महत्वपूर्ण समस्या है, जहाँ हर व्यक्ति जीवन–यापन के लिए कार्य करता है। आज नारी स्वतन्त्रता की पृष्ठभूमि में कैरियर ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया है। पुरुष प्रधानता का प्रत्यय अब स्त्रियों द्वारा स्थानापन्न होता जा रहा हैं जिसमें अनेक समस्याएँ उठ रही हैं।

साथियों में आपसी समझ की कमी के कारण विवाह में समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं और सम्बन्धों में खटास आ रही है। यह समस्या कदाचित् ही उत्पन्न हो यदि जोड़े एक–दूसरे के प्रति तद्नुभूति रखते हैं। यह कदाचित् विवाह को सफल बनाने का निश्चित माध्यम है। तद्नुभूति को उत्पन्न करना पति–पत्नी के सम्बन्धों को स्थाई बनाने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है।

खिचाव और तनाव में वैवाहिक समस्याएँ संचार की कमी या त्रुटिपूर्ण संचार के कारण उत्पन्न होती हैं। इन्हें गलत सूचनाएँ, गलत धारणाएँ उत्पन्न करती हैं और एक प्रकार से संचार रिक्तता भी समस्याओं का कारण बनती हैं।

सामाजिक आर्थिक कारक जो विवाह को प्रसन्न या कष्ट कारक बनाते हैं वे है वित्तीय कारक, सामाजिक जीवन, धार्मिक और अन्य मूल्य।

वित्तीय–वित्तीय कारक अनेक अन्तर्वैयक्तिक तनाव उत्पन्न कर सकते हैं जैसे कि यह अनेक आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के महत्वपूर्ण माध्यम हैं। खराब आर्थिक स्थितियाँ गम्भीर समायोजन की समस्याएँ उत्पन्न कर सकती हैं।

सामाजिक जीवन–नगरीय और महानगरीय स्थितियों में समाजीकरण के काफी अवसर जीवन में विद्यमान रहते हैं। व्यक्ति के अपने क्लब और परिषद् होते हैं।

धार्मिक और अन्य मूल्य–अधिकांश समाज धार्मिक मूल्यों पर बहुत महत्व देता हैं। जब एक साथी अपना धर्म परिवर्तित करता है तब दूसरा साथी विवाह तोड़ने के लिए स्वतन्त्र होता है।

रिश्तेदार और आश्रित– परिवार के सदस्यों द्वारा व्यवधान जैसे– ससुरालियोंद्वारा व्यवधान विवाह को समाप्त करा सकता है।

व्यावृतिक मांग–कार्यकारी युगल को साथ रहने का बहुत कम समय मिल पाता है और वे संचार की कमी के कारण व्यथित अनुभव कर सकते हैं। व्यक्तिगत क्रियाओं की खोज में वे सफल विवाह में गम्भीर रुकावटें उत्पन्न कर सकते हैं।

सर्वाधिक गम्भीर समस्या सेक्स द्वन्द के केन्द्र में चहुँ ओर मंडराती हैं विवाह परामर्शदाता को बुद्धिमत्तापूर्ण निहित मनोवैज्ञानिक समस्याओं को जो सफल विवाह में रुकावटें डालते हैं, को deal (सुलझाना) करना चाहिए। पत्नी के द्वारा ठंडापन और पति की

नपुंसकता सर्वाधिक सामान्य कारक है जो विवाह को समाप्त करा देते हैं या साथी को विक्षिप्त बना देते हैं। ठण्डापन या नपुंसकता दैहिक या मनोवैज्ञानिक कारणों या दोनों के कारण हो सकते हैं। परामर्शदाता को उन समस्याओं का ज्ञान होना चाहिए, जिसके कारण वैवाहिक युगल का कामुक जीवन निष्क्रीय हो सकता है।

26.3.2 संरचना

वैवाहिक परामर्श बहुत ही संवदेनशील प्रक्रिया है और इसको बहुत सावधानी से विभिन्न परामर्शियों के साथ करना चाहिए। इसके लिए कोई निश्चित उपागम नहीं है। इसकी प्रथम आवश्यकता यह है कि परामर्शदाता को स्पष्ट रूप से अपनी भूमिका और उत्तरदायित्व समझना चाहिए। उदाहरणार्थ, उसे समझना चाहिए कि वह मध्यस्थ नहीं हैं। उससे यह आशा नहीं की जाती कि वह बताए कि कौन सही है या गलत है। उसकी भूमिका दोनों पक्षों को सहायता देने तक ही समिति होनी चाहिए और उन्हें स्वयं एक–दूसरे को साथ बैठकर समझने का अवसर देना चाहिए। कभी–कभी वे अपनी गलती या कमजोरी को पहचानने से मना कर देते हैं। परामर्शी को अप्रत्यक्ष रूप से उनकी कमियों को ढूँढने में सहायता करनी चाहिए। परामर्शदाता को अपना कौशल अति सावधानी से प्रयोग करना चाहिए और कदाचित परामर्शी–केन्द्रित उपागम या अनिर्देशित उपागम सर्वाधिक उपयुक्त होता है।

परिस्थिति की संरचना में परामर्शदाता परिस्थिति के मैकेनिक्स उलझाव–सुलझाव से सम्बन्ध रखता है। संरचना का सम्बन्ध प्रायः परामर्श के समय उसकी अवधि और परामर्शी के उत्तरदायित्व आदि से होता हैं। एक महत्वपूर्ण तथ्य जो परामर्शी को समझना चाहिए वह यह है कि परामर्शदाता उसे हल प्रदान करने के लिए नहीं है वह केवल एक उन्मुखता की भावना प्रदान कर परामर्श के द्वारा एक विश्वास की स्थिति उत्पन्न करेगा तथा समस्या को समझने में एक प्रतिभागी होगा।

वैवाहिक परामर्श अन्य परामर्शों की भाँति ऐच्छिक है। परामर्शी स्वयं सहायता माँगता है और परामर्शी तभी सहायता देता है जब उससे यह मांगी जाती हैं।

संरचना मे दूसरा मुद्दा फीस का है। फीस के सम्बन्ध में परामर्शी और परामर्शदाता को स्वयं निश्चित करना होता है। परामर्श का समय और अवधि भी पारस्परिक सहमति से निश्चित की जानी चाहिए। परामर्शदाता को परामर्शी को समय का महत्व समझाना चाहिए और उसे बताना चाहिए कि यह मनोरंजन का समय न होकर एक संजीदा समय हैं।

परामर्श एक व्यावसायिक सेवा है, इसके अपने नैतिक नियम हैं। अतः परामर्शी के विश्वास का आदर किया जाना चाहिए। परामर्शदाता को परामर्शी का विश्वास जीतना चाहिए और उससे समरसता स्थापित करनी चाहिए। परामर्शी स्वयं सूचना प्रदान नहीं करता, परामर्शदाता को कौशल पूर्वक उससे सूचना निकलवानी चाहिए। दूसरा बहुत आधारभूत और महत्वपूर्ण वैवाहिक परामर्श का पक्ष संप्रेषण है। भौतिक और सेक्स सम्बन्धी मामलों में परामर्शी को विशेषण के पास भेजना चाहिए। स्वास्थ्य से सम्बन्धी समस्याएँ भी हो सकती हैं। अतः परामर्शदाता को उसे चिकित्सक के पास राय प्राप्त करने हेतु भेजना करना चाहिए। कुछ अवस्थाओं में मनोचिकत्सक के पास भेजना भी आवश्यक हो जाता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परिवार परामर्श का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. विवाह परामर्श पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

26.4 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में परिवार परामर्श एवं विवाह परामर्श के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है, जिसमें बताया गया है कि परिवार परामर्श वह प्रक्रिया है जिसमें बिखरे एवं टूटे परिवारों के सदस्यों की एक साथ कांउसलिंग की जाती है तथा उनके बीच उत्पन्न मतभेदों को उजागर कर उनके मध्य पुनः सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। इसी इकाई में विवाह परामर्श के बारे बताया गया है कि विवाह दो आत्माओं का मेल है, जबकि विवाह के बारे में मुस्लिम समुदायों में एक समझौता माना जाता है। वास्तविकता तो यह है कि विवाह से पूर्व यदि वैवाहिक जोड़े की मनोभावनायें एक दूसरे के प्रति सकारात्मक हो तो

वह विवाह बहुत ही सुखद स्थिति को प्राप्त करेगा। लेकिन आज के वर्तमान युग में जहां एक ओर जीवन यापन के लिए संसाधनों को जुटाने में व्यक्ति संलग्न रहता है। वही विवाह जैसी संस्था को बचाने में भी लगा रहता है। यह स्थिति तब दुखद पूर्ण हो जाती है जब वैवाहिक जीवन में पति–पत्नी के मध्य सामन्जस्य स्थापित न हो। वास्तव में यदि विवाह से पूर्व परामर्श प्राप्त कर लिया जाये तो वैवाहिक समस्यायें उत्पन्न न होंगी। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई में विवाह परामर्श के बारे में वर्णन किया गया है, जिसमें विवाह पूर्व परामर्श एवं विवाह परामर्श की संरचना के बारे में प्रकाश डाला गया है।

26.5 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

परिवार परामर्श– परिवार परामर्श वह प्रक्रिया है जिसमें बिखरे एवं टूटे परिवारों के सदस्यों की एक साथ कांउसलिंग की जाती है तथा उनके बीच उत्पन्न मतभेदों को उजागर कर उनके मध्य पुनः सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

विवाह परामर्श– विवाह परामर्श वह प्रक्रिया है जिसमें विवाह से पूर्व वैवाहिक जोड़े को परामर्श प्रदान किया जाता है जिसमें एक दूसरे की मनोभावनाओं को समझने एवं एक दूसरे का आदर करने के बारे में परामर्श दिया जाता है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– परिवार परामर्श से आप क्या समझते है?

2– परिवार परामर्श की आवश्यकता पर टिप्पणी लिखिये।

3– विवाह परामर्श से आप क्या समझते है?

4– विवाह पूर्व परामर्श पर टिप्पणी लिखिये।

5– विवाह परामर्श की संरचना पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

विस्तृत

1– परिवार परामर्श के बारे में लिखते हुये पारिवारिक परामर्श केन्द्रों की भूमिका का वर्णन कीजिए।

2– विवाह परामर्श पर एक निबन्ध लिखिये।

26.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज– 111–115

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15

खण्ड–पांच – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई–27, समूह परामर्श

27.0 इकाई का उद्देश्य

27.1 परिचय

27.2 समूह परामर्श की सैद्धान्तिक उन्मुखता

27.3 समूह परामर्श का मूल्य

27.4 समूह के सदस्यों का चयन

27.5 समूह नेतृत्व

27.6 समूह की भूमिका और लक्ष्य की पहचान

27.7 सार–संक्षेप

27.8 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

27.9 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

27.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें–

1– समूह परामर्श के बारे में जान सकेंगे।

2– समूह परामर्श की सैद्धान्तिक उन्मुखता के बारे में लिख सकेंगे।

3– समूह परामर्श के मूल्यों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

4– समूह के सदस्यों के चयन के बारे में जान सकेंगे।

5– समूह नेतृत्व पर टिप्पणी लिख सकेंगे।

6– समूह की भूमिका और लक्ष्य की पहचान कैसे होती है, के बारे अपने विचार प्रस्तुत कर सकेंगे।

27.1 परिचय

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में समूह परामर्श के बारे में प्रकाश डाला गया है। वास्तव में व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है जिसकी आवश्यकताओं की पूर्ति केवल वह स्वयं नहीं कर सकता है। अतः व्यक्ति

अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समूह का निर्माण करता है जिससे उसके व समूह के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से हो जाती है। यदि व्यक्ति सूमह में रहता है तो वहां पर कुछ सामूहिक समस्यायें भी उत्पन्न होती है जिनको आसानी से यदि दूर न की जा सके तो विशेषज्ञों की सहायता लेनी पड़ती है। इसी परिप्रेक्ष्य में समूह परामर्श की संकल्पना प्रस्तुत की गयी है। **विलियम जेम्स** ही नहीं वरन् अन्य अनेक विद्वानों ने बार–बार मानवीय सम्बन्धों के महत्व को उनकी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति तथा अनेक विकास और सामायोजन को प्रभावित करने वाला बताया है। इसमें से अधिकांश सम्बन्ध समूह स्थितियों में विकसित और अनुरक्षित होते हैं। अधिकांश लोगों के लिए उनकी नैत्यिक समायोजन की समस्याएँ और विकास की आवश्यकताओं का उद्‌गम समूह परिपार्श्व में होता है। समूह में सामाजिक कौशल के विकास में रुचि प्राथमिक स्तर पर ही बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है तथा सभी आयु के वयस्कों में सकारात्मक समूह–सम्बन्ध और संचार कौशल को बढ़ावा दिया जाता है।

परामर्श एक सुविधात्मक विज्ञान के रूप में सहायता प्रदान करने वाले सम्बन्धों पर आधारित है, जो कि मानवीय सम्बन्ध आधारित होता है। क्योंकि अधिकांश मानवीय सम्बन्ध समूह में ही अनुभव किए जाते हैं। समूह बहुत से लोगों को सकारात्मक विकास और समायोजन के अनुभव प्रदान करते हैं। अतः अग्रांकित खण्ड में समूह परामर्श के मूल्य और इसको किस प्रकार प्राप्त किया जाता है पर चर्चा की गई है।

27.2 समूह परामर्श की सैद्धान्तिक उन्मुखता

व्यक्तिगत परामर्श की तरह ही समूह परामर्श भी एक अच्छे सैद्धान्तिक धरातल पर आधारित होता है। अतः हम समूह परामर्श को उसके सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य में देखेंगे।

जब समूह को मनोविश्लेषणात्मक उन्मुख परामर्शता द्वारा परामर्श दिया जाता है, तब परामर्शदाता परामर्शी के अचेतन को मुक्त करने के लिए अन्यारोपण और अवरोधों की व्याख्या करता है। विश्लेषण का केन्द्र व्यक्ति का व्यवहार ओर समस्त समूह का व्यवहार रहता है।

व्यक्ति या समूह परिपार्श्व के नेता जब किसी सीमा तक समूह प्रक्रिया में प्रत्यक्ष और सक्रिय रहते हैं तब समूह के सदस्य स्वयं यह निश्चिय कर सकते हैं कि उन्हें क्या करना है? समूह परिपार्श्व में जब सदस्य अपनी क्षमता को विकसित करना चाहते हैं तब ये सदस्यों को स्वयं का परीक्षण, विकास आत्मसम्मान और सामाजिक अन्तक्रिया को सुधारने के सुरक्षित अवसर प्रदान करता है।

परामर्शी केन्द्रित परामर्शदाता सदैव से समूह–परामर्श में सक्रिय रुचि रखते हैं। **कार्ल रोजर्स** समूह परामर्श के सम्बन्ध में अपने विचारों के विकास के लिए मानवीय व्यवहार के सम्बन्ध में स्वयं के विश्वासों को अपने चिकित्सापरक समूह के निरीक्षणों से जोड़ता था, जिन्हें कि वह अपने मूल समूह पर आरोपित करता था। परामर्शी–केन्द्रित उपागम मानता है कि लोगों में स्वयं को सुधारने और संवृद्धि की प्राकृतिक–प्रवृत्ति होती है। समूह–परामर्श एक ऐसा पर्यावरण प्रदान कर सकता है कि जिसमें सदस्य अपनी भावनाओं को व्यक्त करने में सुरक्षित अनुभव करते हैं और अन्ततः अपने जीवन को सुधार सकते हैं। समूह नेता भी आदर्श व्यवहार प्रस्तुत करता है जो सकारात्मक पर्यावरण और समूह प्रक्रिया में योगदान देता है।

व्यवहारवादी परामर्शदाता समूह परिपार्श्व में व्यवहारात्मक अर्थों में सदस्यों की समस्याओं को पहचानने में व्यवस्थित रूप से आगे बढ़ते हैं। सदस्यों के लिए व्यवहारात्मक लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं और परामर्शदाता, परामर्शी जो व्यवहार पाना चाहता है उसे पुनर्बलित करता है।

समूह परामर्श में, वातावरण नहीं वरन् तार्किक संवेगात्मक चिकित्सक व्यवहार परिवर्तन को बढ़ावा देने में मुख्य होता है। यह कार्य वह तर्क, अनुनय भूमिका निर्वाह आदि द्वारा करता है। परामर्शदाता संज्ञानात्मक और तार्किक व्यवहार परिवर्तन प्राप्त करना चाहता है। समूह में सदस्य, अतार्किक, संवेगात्मक चालक व्यवहार को पहचानने में एक–दूसरे की सहायता करते हैं।

वास्तविकता उन्मुख–समूह के परामर्शदाता समूह के सदस्यों को उपयुक्त व्यवहार को ग्रहण करने और वास्तविक चयन के लिए उनके प्रति एक अध्यापक के रूप में कार्य करते हैं।

संक्रमणात्मक विश्लेषण–समूह परिपार्श्व में व्यक्ति के परामर्श की एक प्रक्रिया है, टी.ए. जिसका उददेश्य समूह स्थापित करने में प्रथम चरण समूह सदस्यों को Ego Stages को पहचानने का प्रशिक्षण देना है।

गेस्टाल्ट परामर्शदाता लोगों को युग्मित या जोडने पर ध्यान देता है। परामर्शदाता–परामर्शी की अन्तः क्रिया के साथ 'getting it all togeher' इसकी मुख्य प्रक्रिया है।

संकलनवादी परामर्शदाता समूह परामर्श के परिपार्श्व में विभिन्न परामर्शियों, अन्तःक्रियाओं और समस्याओं के लिए भिन्न सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्यों का प्रयोग करते हैं।

27.3 समूह परामर्श के मूल्य

समूह परामर्श टीम का खेल नहीं हैं। इसका लक्ष्य विजयी समूह भी होना नहीं हैं, वरन् आवश्यकताओं को पूरा करने का, उन व्यक्तिगत सदस्यों को मूल्यों का अनुभव प्रदान कराना जो समूह का निर्माण करते हैं, का लक्ष्य प्राप्त करना हैं, ये मूल्य निम्नांकित हैं–

1–व्यक्ति समर्थक समूह के पुनर्बलन के साथ, उनके विकासात्मक और समायोजन की आवश्यकताएँ, चिन्ता और समस्याओं को खोज सकता है। समूह वास्तविक सामाजिक परिपार्श्व प्रदान कर सकता है जिसमें परामर्शी अपने सार्थियों के साथ अन्तःक्रिया कर सकता है जो न

केवल समस्या और चिन्ता की कुछ समझदारी रख सकता है जो परामर्शी अपने साथ समूह में लाता है, वरन बहुत–सी अवस्थाओं में समान या उस जैसी चिन्ताओं की साझेदारी भी कर सकता है। परामर्श समूह सुरक्षा की वह भावना प्रदान करता है, जिसकी सदस्यों को स्वतः स्फूर्त और मुक्त अन्तः–क्रिया और जोखिम उठाने के लिए आवश्यकता होती है। इतः इस तथ्य की सम्भावना बढ़ जाती है कि हर सदस्य की आवश्यकता को अनुभव किया जाता है और साथियों के संसाधनों का उपयोग किया जाता है। वे समस्याओं की अन्य लोगों से साझेदारी कर अधिक आरामदायक अनुभव करते हैं, जिनके उसी तरह के अनुभव हैं। वे अवस्थाओं में परिवर्तन के लिए अधिक अभिप्रेरित भी हो सकते हैं।

2– समूह परामर्श, परामर्शी को अपनी स्वयं की भावनाओं और व्यवहार में अधिक अन्तःदृष्टि प्राप्त करने के अवसर प्रदान करता है। **यलोम** ने समूह का एक सामाजिक अणुविश्व के रूप में वर्णन करते समय कहा है।, "A freely interactive group, with few structural restrictions, will in time, develop into a social microcosm of the participant members." अर्थात 'एक स्वतंत्र अन्योन्य कियात्मक समूह, कुछ संरचनात्मक निर्वधन के साथ, समय के चलते, सहभागी सदस्यों का एक सामाजिक लघु ब्रहांड के रूप में विकसित हो जायेगा। आपने यह भी इंगित किया कि समूह परिपार्श्व में काफी समय मिल जाने पर परामर्शी 'स्वयं में होना' प्रारम्भ करेगा, जिसमें अनुकूलन और अंतर्वैयक्तिक व्यवहार का प्रगटन भी सन्निहित हैं। **यलोम** ने यह भी कहा है कि समूह में संवेदात्मक अनुभवों को सुधारने में अनेक कारक हैं जिनमें निम्नांकित सम्मिलित हैं–

तीव्र संवेगों की अभिव्यक्ति जो अंतर्वैयक्तिकता निर्देशित है और जो परामर्शी के भाग पर जोखिम उठाने का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस जोखिम को उठाने में समूह का काफी समर्थन प्राप्त होता है।

वास्तविक परीक्षण जो रोगी को अन्य सदस्यों की संप्रतिपत्ति प्रमापीकरण की सहायता से घटना का परीक्षण करने की अनुमति प्रदान करती है।

कुछ अंतर्वैयक्तिक भावनाओं–व्यवहार की अनुपयुक्तता की पहचान या कुछ उपेक्षित अंतर्वैयक्तिक व्यवहार की अनुपयुक्तता की पहचान करना।

अन्ततः अन्य लोगों से अधिक गहनता और सत्यता के साथ अन्तःक्रिया करने की योग्यता को सुविधा प्रदान करना।

परामर्श समूह के सदस्यों से अन्तःक्रिया करने से परामर्शी को अपने व्यवहार और भावनाओं में नवीन अन्तःदृष्टि प्राप्त होती है तथा उनका आत्म–प्रत्यय निर्माण भी प्रभावित होता है। क्योंकि व्यक्ति के व्यक्तिगत सामाजिक समायोजन और स्कूल तथा व्यवसाय का निर्णय लेने के प्रत्यक्षीकरण में आत्म–प्रत्यय (self-concept) का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है, अतः समूह परामर्श अनुभव के द्वारा नई अन्तःदृष्टि के माध्यम से आत्म–प्रत्यय में सकारात्मक परिवर्तन बहुत मूल्यवान हो सकता है।

3–समूह परामर्श, परामर्शी को अन्य लोगों के साथ सकारात्मक, प्राकृतिक सम्बन्धों को विकसित करने का अवसर प्रदान करता है। समूह परामर्श संरचना में जो वैयक्तिक अन्तःक्रिया होती है वह समूह के सदस्यों को अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों के साथ प्रयोग करने और उसका प्रबन्धन करने का एक सर्वोत्तम और सतत् अवसर प्रदान करता है। यह दूसरों की आवश्यकताओं और भावनाओं के प्रति संवेदनाएँ विकसित करने में भी सहायक होती हैं। सदस्यों को यह सीखने का अवसर भी प्रदान करता है कि उनके व्यवहार का अन्य लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है या असर होता है। अतः समूह प्रक्रिया के माध्यम और उनकी अंतःक्रियाओं तथा साझेदारी के अनुभवों से परामर्शी अपने पहले के व्यवहार को परिवर्द्धित करना सीखता है और अन्तर्वैयक्तिक कौशल के लिए नवीन और उपयुक्त व्यवहार की तलाश करता है।

4–समूह परामर्श, परामर्शी को अपने और अन्य के प्रति उत्तरदायित्व सीखने का अवसर प्रदान करता है। एक परामर्श समूह का सदस्य बनने का अर्थ है उत्तरदायित्व लेना। यद्यपि प्रारम्भ में परामर्शी उत्तरदायित्व उठाने को उपेक्षित करता है और उसे समूह अन्तःक्रिया का उत्तरदायित्व मानता है। लेकिन जैसे–जैसे समूह सम्बन्ध विकसित होते हैं और समूह लक्ष्य निर्धारित हो जाते हैं, यह उपेक्षित करने की प्रवृत्ति लुप्त हो जाती है।

27.4 समूह के सदस्यों का चयन

परामर्श समूह का निर्माण, सामाजिक समूह के निर्माण की तरह नहीं होता है। व्यावसायिक रूप में सदस्यों का चयन करते समय आवश्यकता के अनुसार एक कसौटी निर्धारित करनी चाहिए। समूह के लिए सदस्यों को चयन करने की एक विधि वस्तुगत (objective) प्रदत्त संकलित करना है जो कि परामर्श समूह के निर्माण में विशिष्ट आवश्यकता का मूल्यांकन करने में सहायक हो सकती है।

आवश्यकता का आंकलन महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह समूह के सदस्यों की वर्तमान आवश्यकताओं को इंगित करता है। नियमित रूप से ऐसा न करने पर परामर्शदाता प्रासंगिक सहायता प्रदान नहीं कर सकता। वह ऐसी सहायता प्रदान करेगा जिसकी आवश्यकता नहीं है।

आवश्यकता आंकलन के औपचारिक और अनौपचारिक तरीके हैं। स्कूल परिपार्श्व में हम अनौपचारिक रूप से अभिभावकों, अध्यापकों और प्रशासकों से पूछ सकते हैं कि समूह की आवश्यकताएँ क्या हैं? या उन्हें किस सम्बन्ध में परामर्श देने की आवश्यकता है? इस प्रकार के प्रदत्त संकलन की एक औपचारिक विधि, एक सर्वेक्षण प्रश्नावली तैयार करना है जिसके द्वारा वर्तमान आवश्यकताओं की स्थिति का अधिक सही आंकलन हो सकता है। इसके द्वारा योजना बनाने और भविष्य में समूह के मूल्यांकन के लिए अधिक गहरी सूचनाएँ (in-depth information) प्राप्त हो सकती हैं।

बहुत–से समूह विशेषज्ञों का मानना है कि समूह का सर्वोत्तम सदस्य वह होता है जो स्वयं समूह में आना चाहता है। समूह परामर्श वैकल्पिक होना चाहिए। इसमें सदस्यों पर समूह में आने की बाध्यता नहीं होनी चाहिए। चयन हर परामर्शी के अधिकार की रक्षा का अवसर प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त यदि परामर्श स्वयं परामर्श समूह में आने का निश्चय करता है तो वह परामर्श के लिए अभिप्रेरणा में बढ़ोत्तरी करता है।

Corey (2000) के अनुसार, छटनी (screening) एक द्विआयामी प्रक्रिया है। अतः सम्भावित सदस्यों के पास यह पूछने का अवसर होना चाहिए कि समूह उनके लिए उपयुक्त है या नहीं। समूह नेता को सम्भावित सदस्यों को उनकी भागीदारी उपयुक्त है या नहीं के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

सम्भावित समूह के सदस्यों के चयन में, परामर्शदाता और सम्भावित सदस्यों दोनों को शामिल होना चाहिए। यह महत्वपूर्ण है कि दोनों यह निर्णय लें कि व्यक्ति सकारात्मक रूप से वांछित परामर्श परिणाम के लिए तैयार है।

कुछ अवस्थाओं में सम्भावित सदस्य अन्य लोगों से संचार करने की योग्यता नहीं रखते या उनमें दूसरे की सहायता करने की योग्यता नहीं होती। स्वभाव की दृष्टि से भी हर कोई समूह सदस्य के लिए उयुक्त नहीं होता। संक्षेप में, एक व्यक्ति में विशिष्ट योग्यता या अभिवृत्ति होनी चाहिए यदि उसे समूह अनुभव से लाभ उठाना है या उसमें योगदान देना है। परामर्शदाता द्वारा अनेक प्रक्रियाएँ समूह निर्माण के लिए अपनाई जा सकती हैं, पर परामर्शी को एक बार प्रक्रिया में भाग लेने के लिए आमंत्रित करना जिससे परामर्शदाता हर एक से परिचित हो सके और उनकी चिन्ताओं को समझ सके, सर्वोत्तम उपाय है। हम इस तथ्य पर अधिक बल नहीं दे सकते कि परामर्शी अपने भागीदारी के

निर्णय से सन्तुष्ट और आरामदायक है। क्योंकि समूह के लिए उपयुक्त सदस्य का चयन समूह की सम्भावित सफलता का केन्द्र–बिन्दु है।

सम्भावित समूह सदस्यों को छाँटने की प्रक्रिया के समय निम्नांकित पर ध्यान देना चाहिए –

उन नियमों को इंगित करना जिनका पालन समूह के सदस्यों से करने की आशा की जाती है। इनमें शामिल यह बिन्दु हैं –

(a) समूह के सभी सदस्यों को अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त करने का अधिकार,

(b) यह सुझाव कि कोई भी व्यक्तिगत दृष्टिकोण अमहत्वपूर्ण नहीं है, और

(c) पूर्ण गोपनीयता की आवश्यकता।

(d) परामर्श समूह कैसे विकसित होगा और कार्य करेगा का वर्णन करना। विशेष ध्यान इस तथ्य पर दिया जाना चाहिए कि व्यक्तिगत समूह सदस्य, समूह अनुभवों से कैसे लाभ उठा सकता है।

(e) समूह की पूर्ण अवधि में सत्यता और खुलेपन पर बल देना।

(f) यह बताना कि समूह का उद्देश्य सदस्यों की सहायता करना और अंतर्वैयक्तिक सम्बन्ध कौशल को बढ़ाना है, पर निराशा और कुंठा की सम्भावना है, परन्तु इनको व्यक्तिगत संवृद्धि (growth) के रूप में देखना चाहिए।

(g) समूह चिकित्सा की अवधि की नियमावली (guidelines) की चर्चा करनी चाहिए।

समूह निर्माण में दूसरा बिन्दु जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए वह समूह का आकार है। सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए समूह का आकार क्या होना चाहिए? Yalon (2005) अपने अनुभव और नैदानिक साहित्य के आधार पर बताते हैं कि –

आदर्श परामर्शी समूह में सात या आठ सदस्य होने चाहिए, पर पाँच से दस सदस्य तक स्वीकार किए जा सकते हैं। समूह में सदस्यों की संख्या की निम्नतम संख्या क्या हो इसका निर्धारण इस तथ्य से होता है कि समूह के अन्तःक्रियात्मक समूह बनने के लिए कितने व्यक्तियों के जमावड़े की आवश्यकता होगी। जब समूह का आकार तीन या चार सदस्यों तक कम हो जाता है, तो प्रायः वह एक समूह की तरह कार्य करना बंद कर देता है, ऐसी स्थिति में सदस्यों में अन्तःक्रिया समाप्त हो जाती है और परामर्शदाता प्रायः समूह में व्यक्तिगत परामर्श में व्यस्त हो जाता है। जब समूह के आकार के साथ समझौता कर लिया जाता है, तब समूह के बहुत से लाभ, विशेष रूप से बड़े समूह में विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया करने से किसी की अन्तःक्रिया को विश्लेषित करने का अवसर समाप्त हो जाता है, इसके अतिरिक्त छोटे समूह निष्क्रिय हो जाते हैं और प्रायः नकारात्मक समूह साख विकसित कर लेते हैं।

परामर्श समूह की उच्चतम सीमा का निर्धारण पूर्ण रूप से आर्थिक सिद्धान्तों से होता है। समूह का आकार बढ़ने के साथ–साथ किसी व्यक्ति की समस्या पर कार्य करने का उपलब्ध समय कम हो जाता है।

निश्चित रूप से यह जानना उपयुक्त होगा कि समूह का आकार बढ़ने के साथ, छोटे समूह में विद्यमान घनिष्ठ और आराम समाप्त हो जाता है। समूह में सदस्यों की संख्या, मीटिंग का समय उसके निश्चय की कठिनाइयाँ उत्पन्न करती है। बड़ा समूह प्रायः कम व्यक्तिगत होता है और अपनी प्रक्रियाओं में अधिक मैकेनिकल अर्थात यंत्रवत, होता है। बड़े समूह में इस तथ्य की सम्भावना भी रहती है कुछ सदस्य उपेक्षित रह जाएँ और उनकी आवश्यकता की सन्तुष्टि न हो।

इसी प्रकार बहुत छोटे समूह में निकटता और भावनाओं की सुरक्षा के होते हुए भी मानवीय अनुभव, दृष्टिकोण और मूल्यवान संसाधनों की कमी रहती है जो पाँच या आठ लोगों के समूह में पाई जाती है।

27.5 समूह नेतृत्व

विभिन्न परिपार्श्व और परिस्थितियों में, भिन्न विशेषता वाले नेतृत्व की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु सामान्य रूप से निम्नांकित विशेषताएँ एक प्रभावी नेतृत्व में पाई जाती है–

- नेता सदैव सत्य, खुलेपन और नैतिक व्यवहार और आचरण करता है।
- नेता समूह के सभी सदस्यों के आगत (input) को खुलेपन से स्वीकार करता है।
- नेता की प्राथमिक रूचि सभी समय व्यक्तिगत संवृद्धि और समूह के सभी सदस्यों की भलाई में होती है।
- नेता आदर्श मूल्यों और व्यवहार को प्रस्तुत करता है जो समूह के सदस्यों का जीवनकाल बढ़ा देता है।

Helen Driver (1958) समूह परामर्श आन्दोलन का एक नेता, ने समूह परामर्श के लिए निम्नांकित नेतृत्व तकनीक को इंगित किया –

1. **समर्थन** (Support) – समर्थन देना, प्रशंसा दर्शाना।
2. **प्रतिबिम्ब** (Reflection) – भावनाओं को प्रतिबिम्बित करना।
3. **स्पष्टता** (Clarification) – अर्थों को स्पष्ट करना, विचारों के परिणाम बताना।
4. **प्रश्न करना** (Questioning) – गहरी भावनाओं को ऊपर लाना और प्रति उत्तर आमन्त्रित करना।
5. **सूचना** (Information) – प्रदत्तों को परीक्षण के लिए प्रदान करना, रिसोर्स व्यक्ति का कर्त्तव्य निभाना, पढ़ाना।
6. **व्याख्या** (Interpretation) – प्रदत्तों के महत्व की व्याख्या करना, सादृश्यता का प्रयोग करना।
7. **सार** (Summary) – पहले परामर्शी का सार पूछना, विकास को इंगित करना, विकल्प बताना।

स्टोकटन ने चार क्षेत्र में समूह नेतृत्व के प्रशिक्षण का सिंहावलोकन किया–

1. नीतिपरक ज्ञान (समूह परामर्श के लिए सिद्धान्तों का ज्ञान)
2. व्यक्तिगत नैदानिक कौशल जैसे आंकलन, अवाचिक व्यवहार की व्याख्या, आत्म प्रगटन के प्रयोग की योग्यता और अन्य मानक चिकित्सीय यंत्रों का ज्ञान,
3. समूह गत्यात्मकता का ज्ञान और,
4. स्वयं के लिए स्वस्थ व्यक्तित्व उपलब्ध करना।

कोरे और कोरे ने प्रभावी नेताओं की निम्नलिखित व्यक्तिगत विशेषताएँ इंगित की हैं–

- साहस
- आदर्श रूप में प्रस्तुत
- उपस्थिति
- साख और परिचितक
- समूह प्रगति में विश्वास
- सुलापन
- अपनी संस्कृति से अभिज्ञता होना
- आक्रमण का सामना करने में सुरक्षा न होना
- व्यक्तिगत अधिकार
- ऊर्जास्विता
- नए अनुभव प्राप्त करने की इच्छा
- आत्म
- हास्य का भाव
- खोजात्मकता
- व्यक्तिगत प्रतिबद्धता और लगन

उपर्युक्त सुझावों का परीक्षण, समूह परामर्शदाता का संरचना, आचरण और समूह सत्र के सामान्य परिचालन के लिए उत्तरदायित्व इंगित करता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि एक सचेत समूह नेता कभी भी समूह की क्रियाओं में शामिल नहीं होता सिवाय व्यावसायिक तैयारी के। समूह परामर्श गहन संवेगात्माक व्यवधानों की अपेक्षा साहचार्यात्मक कारकों पर बल देना हैं। परामर्शदाता की मनोवैज्ञानिक समझ और समूह गत्यात्मकता का कौशल, समूह परामर्श स्तर पर उसको व्यक्तिगत विशेषता के रूप में वांछित है। समूह परामर्श जिसका केन्द्र विशिष्ट और संकुचित होता है, जैसे परिवार सम्बन्ध, मानवीय यौनाचार तथा दुरूपयोग। अतः परामर्श नेता में उपरोक्त विषयों का ज्ञान वांछित होता है। समूह नेता को समूह के मूल्यों को पहचानना चाहिए और यह निर्धारित करना चाहिए कि इन्हें सर्वोत्तम रूप में समूह प्रक्रिया में कैसे समाहित किया जाये। इसके अतिरिक्त जब समूह प्रक्रिया को कौशलपूर्ण विधि से नेता द्वारा किया जाता है तब सदस्यों को अपने विश्वासों को सुरक्षित वातावरण में परीक्षित करने का अवसर प्राप्त होता है तथा विरोधी दृष्टिकोण से सीखने का अवसर प्राप्त होता है। समूह के सदस्य नेता से अपनी सामाजिक अन्तः क्रिया को सुधारने के लिए सहायता प्राप्त कर सकते हैं।

समूह प्रक्रिया

समूह परामर्श की प्रक्रिया काफी कुछ व्यक्तिगत परामर्श की प्रक्रिया के समान ही होती हैं। दोनों प्रक्रियाओं में तार्किक क्रम मात्र का अन्तर होता है।

सूमूह की स्थापना– समूह का प्रारम्भिक समय समूह के सदस्यों को समूह की संरचना और प्रक्रिया से अवगत कराने में जाता है। इस काल में सदस्यों को व्यावहारिक प्रश्नों जैसे मीटिंग की आवृत्ति, समूह की अवधि और समूह मीटिंग के समय की लम्बाई आदि से उन्मुख किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रारम्भिक सत्र का सम्बन्धों की शुरूआत और

भागीदारों में खुले संचार के लिए प्रयोग किया जाता है। परामर्शदाता सत्र का प्रारम्भ, समूह के उद्देश्यों और प्रक्रिया को स्पष्ट करने से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देने के लिए कर सकता हैं। समूह समय की स्थापना, समूह में सार्थक भागीदारी और सकरारात्मक समूह वातावरण स्थापित करने के लिए भी किया जा सकता है।

समूह परामर्शदाता को यह स्मरण रखना चाहिए कि प्रारम्भिक समूह सत्र में सामान्यतः समूह से अनिश्चितता, चिन्ता और अजीबपने के मिश्रण का वातावरण होता हैं। यह असामान्य नहीं है कि समूह सदस्यों में एक–दूसरे के प्रति अपरिचितता और प्रक्रिया तथा आशाओं के सम्बन्ध में अनिश्चिता हो।

समूह स्थापना की प्रारम्भिक अवस्था में नेता को समूह के सदस्यों को उनके प्रश्नों और चिन्ताओं की चर्चा करने के लिए काफी समय प्रदान करना चाहिए। इस स्तर परामर्शदाता जो छाप छोड़ता है वह सफल प्रक्रिया के लिए अति महत्वपूर्ण होती हैं।

27.6 समूह की भूमिका और लक्ष्य की पहचान

जब समूह स्थापना के लिए उपयुक्त वातावरण स्थापित हो जाए और वार्ता करने के लिए सुविधाजनक हो तो द्वितीय स्तरः पहचान की ओर अग्रसर होते हैं। इस स्तर पर समूह की पहचान खुलती है, व्यक्तियों की भूमिकाओं की पहचान होती है तथा व्यक्तिगत और समूह लक्ष्य निर्धारित होते हैं। यह सब एक साथ विभिन्न गति से होता है। समूह लक्ष्य को प्रक्रियात्मक बनाना भी महत्वपूर्ण होता है।

हम में से अधिकांश लोग अपनी नित्यप्रति के क्रियाकलापों में व्यर्थ के कार्य करते रहते हैं जो अनिर्देशित लक्ष्यविहीन तथा दिशाहीन होते हैं। जो लोग समूह के साथ प्रायः कार्य करते हैं चाहे वह अध्यापन में हो या किसी अन्य क्षेत्र में वह ऐसे प्रश्न के उत्तर का अनुमान सरलता से लगा सकता है– 'आज तुम अपना समय कैस व्यतीत करना

चाहोगे?' ऐसे प्रश्न के उत्तर में काफी समय किसी निश्चय पर पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाएगा।

लक्ष्य निर्धारण अन्य क्रियाओं की भॉति समूह परामर्श के लिए भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। समूह परामर्श में लक्ष्य का निर्धारण प्रारम्भ में करने से परिणाम की ओर सार्थक प्रक्रिया की ओर अग्रसर हाना सुविधाजनक होगा। इन लक्ष्यों का निर्धारण परामर्शदाता और समूह सदस्यों का साझा उत्तरदायित्व होता है। लक्ष्यों को सरलताा से पहचाना जा सकता है और लागू किया जा सकता है। यदि उन्हें व्यवहारात्मक सन्दर्भो में निर्दिष्ट किया जाए। इन्हें ऐसे उद्देश्यों के रूप में कथित करना चाहिए जो न केवल मापन योग्य हो वरन् जिन्हें प्राप्त भी किया जा सके और निरीक्षात्मक भी हो। इस प्रक्रिया में यह भी महत्वपूर्ण है कि समूह के सदस्यों में हर व्यक्ति के उप–लक्ष्य भी निर्धारित हो और उन्हें पूरा भी किया जाए।

परामर्शदाता को इस स्तर पर सम्भावित द्वन्द या झगड़ों जो समूह विकास के इस स्तर पर उत्पन्न हो सकता है, का अभिज्ञान होना चाहिए। येलए ने इस स्तर को 'The Confict, dominnace, rebellion stage' कहकर पुकारा है। आप लिखते हैं–

" ..... the group shift from preoccupation with acceptance, approval, commitment, structure and meaning to a preoccupation with dominnace, control and power, the conflict characteristic of this phase is among members or between members and the leader. Each member attempts to establish his or her preferred amount of initiative and power. Gradually a control hierarchy, a social pecking order, emerges."

यह द्वितीय स्तर जिसे प्रायः सामना करने, द्वन्द और खुली आक्रमता के स्तर के नाम से जाना जाता है। जैसे–जैसे सदस्य व्यवहार के नए प्रारूपों का प्रयास और समूह लक्ष्य के लिए नए उपागमों को अपनाते हैं उनके प्रत्यक्षीकरण और व्यक्तिगत सदस्यों द्वारा सुझाए

गए हलों में विभेदता सामान्य व्यवहार के प्रसार से लेकर सक्रिय और खुले आमने–सामने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस स्तर पर परामर्शदाता को चर्चा को प्रासंगिक बनाए रखना चाहिए और लोगों को व्यक्तिगत मूल्यों और साख पर आक्रमण करने से रोकना चाहिए।

इस स्तर पर परामर्शदाता को मौन या चुप्पी को समूह सहमति का प्रतीक नहीं समझना चाहिए, वरन् परामर्शदाता को सजग रहना चाहिए कि चुप्पी कदाचित् समूह सदस्यों द्वारा विरोध का संकेत हो सकती है। इस स्तर पर सभी समूह सदस्य समान मात्रा में द्वन्द की गहनता का अनुभव नहीं करेंगे। युवा परामर्शियों के समूह में जैसे हाईस्कूल के विद्यार्थी परामर्शदाता को अधिकारी के रूप में देखेंगे और अपने द्वन्द, संशय का क्रोध की अभिव्यक्ति रोकेंगे।

जब द्वन्द और आमने–सामने की स्थिति उत्पन्न होती है तो एक संयुक्त समूह उभरकर सामने आता है। इसका परिणाम खुलेपन से संचार और समूह क्रिया में सहमति होती है। प्रारम्भिक कार्य स्तर सदस्यों की स्थिरता चाहते है जिससे समूह उपचार में सम्भावित चिकित्सापरक सम्भाविता विकसित हो सकें, सदस्यों का खोना इस कार्य को कठिन बना देता है।

उत्पादकता– इस स्तर पर समूह और व्यक्तिगत सदस्य के लक्ष्यों के दर्शनायुक्त प्रगति पर बल रहता है। इस प्रक्रिया में समूह का हर सदस्य को तलाशता और समझ प्राप्त करता है और हर सदस्य इस समझ को समन्वित करने की अपनी व्यक्तिगत योजना का विकास करता है। इस स्तर के तीन उपस्तर होते हैं–

1–आँकलन

2–समझ

3–योजना बनाना

समूह संरचना कार्यकारी होती है।

समूह परामर्श में उत्पादकता प्रायः सफल समस्या समाधान में अनुवादित होती है। समूह परामर्श इस कारण प्रायः परिवर्तन की प्रक्रिया बन जाती है।

इस सम्बन्ध में समूह परामर्शदाता को–

(क) यह निर्धारित करना चाहिए कि समूह कहाँ है।

(ख) यह पहचानना चाहिए कि समूह कहाँ जाना चाहता है और क्या प्राप्त करना चाहता हैं।

(ग) सबसे उपयुक्त प्रक्रिया को इंगित करना चाहिए ताकि जहाँ समूह हैं वहाँ से जहाँ वह जाना चाहता है, उसमें उसकी सहायता की जा सके और,

(घ) चयनित प्रक्रिया को वांछित लक्ष्य प्राप्त करने के लिए लागू करना चाहिए। यहाँ पुनः सहमति को होना महत्वपूर्ण है, अतः सभी सन्निहित लोगों की भागीदारी होनी चाहिए। तभी यह कार्य हो पाएगा।

यद्यपि समूह समारिकी का चयन समूह के द्वारा चयन किया जाता है, पर यह महत्वपूर्ण है कि सभी सदस्यों के लिए उसका अर्थ हो, व्यक्ति की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के सन्दर्भ में परामर्शदाता को यह ज्ञात होना चाहिए कि प्रगति तभी होती है जब वह दृष्टिगत हो। यह अधिक उपयुक्त है कि जब समूह यह न समझ पाए कि क्या हो रहा है, तब उसे तब तक रोक देना चाहिए जब तक समझ विकसित न हो जाए। कभी–कभी जब सदस्य यह नहीं समझ पाते कि वे किस प्रकार योगदान करें तब अनिश्चितता उत्पन्न हो जाती है। कभी–कभी वे अनुभव करते हैं कि वे कुछ भी योगदान करने लायक नहीं हैं। परन्तु पूर्व में स्थापित सम्बन्धों और पूर्व में स्थापित समूह वातावरण के कारण समूह इन कठिनाईयों पर विजय पा सकता है और उत्पादकता प्राप्त कर सकता है।

इस स्तर का सफलतापूर्वक समापन तब किया जा सकता है जब सभी सम्भव हलों का परीक्षण कर लिया गया हो और उनके परिणामों को भलीभॉति समझ लिया जाये। यह हल व्यावहारिक और प्राप्य योग्य होने चाहिए तथा हल का अन्तिम चयन पर्याप्त चर्चा के उपरान्त ही अपनाना चाहिए। इस स्तर पर सदस्यों ने स्वयं को और स्वयं से सम्बन्धित समस्या को भली प्रकार समझ लिया है और उपयुक्त एक्शन के लिए वे तैयार है। अतः वे अगले स्तर पर जाने के लिए तैयार है।

अनुभव करना – जब समूह के सदस्य अपने गत व्यवहार की अनुपयुक्ता को पहचान लेते हैं और चयनित हल को या नए व्यवहार को लागू करते हैं तब वे अपने व्यक्तिगत लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रगति करते हैं। इस समय व्यक्तिगत सदस्य अपने निर्णय पर कार्य करने का उत्तरदायित्व ले लेते हैं। परामर्शदाता व्यक्तिगत अनुभव और लक्ष्य प्राप्ति की भागीदारी बाहर और भीतर के लोगों से करने के लिए प्रोत्साहित करता है। यद्यपि नए व्यवहार के साथ सामान्य सफलता पर्याप्त मात्रा में पुनर्बलन प्रदान करती हैं, जिससे परामर्शी नए व्यवहार को बनाए रखता है पर कुछ लोगों के लिए समूह से बाहर के कुछ महत्वपूर्ण लोग नए व्यवहार या परिवर्तन को बनाए रखने में सहायक होते हैं। उदाहरणार्थ, स्कूल परिपार्श्व में परामर्शदाता, अभिभावकों और अध्यापकों से इस सामरिकी को लगाने में सहायता करें।

समाप्ति– परामर्श समूह की प्रकृति, जिसमें अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों, खुलेपन के साथ संचार, विश्वास और समर्थन जिसके साथ समूह का विकास होता है, सदस्य अनिश्चितकाल के लिए अपनी सदस्यता बनाए रखना चाहते हैं। अतः यह बहुत महत्वपूर्ण है कि प्रारम्भ में ही परामर्शदाता समूह के अस्थाई प्रकृति पर बल दे और निश्चित समय सीमा निर्धारित कर दे। समूह को परामर्शदाता द्वारा समूह की समाप्ति के सम्बन्ध में याद दिलाते रहना चाहिए। इसका यह अर्थ नहीं है कि परामर्शदाता अकेला समूह समाप्ति का निर्णय लेने के लिए

उत्तरदायी है। यद्यपि परामर्शदाता उत्तरदायित्व लेता है, पर समाप्ति का निर्णय परामर्शदाता और समूह के सदस्य मिलकर लेते हैं।

परामर्श के अन्य स्तरों की भांति समूह की समाप्ति के लिए भी परामर्शदाता के कौशल और योजना की आवश्यकताा होती है। समाप्ति उस समय सर्वाधिक उपयुक्त होती है जब समूह लक्ष्य और व्यक्तिगत सदस्यों का लक्ष्य प्राप्त कर लिया गया हो और अधिगम किया गया हो या नवीन व्यवहार का पालन समूह के बाहर भी किया जाए। विरोधी परिस्थितियों में भी समूह की समाप्ति तब की जाती है जब समूह को निरन्तर बनाए रखना अनोत्पादित और हानिकारक हो।

सदस्यों को किसी भी समय समूह से निष्कासित किया जा सकता है। जो सदस्य समूह के अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न करें या दूसरे सदस्यों के लिए गम्भीर रूप में हानिकारक हों, इस प्रकार के सदस्यों को व्यक्तिगत परामर्श के द्वारा अधिक प्रभावी रूप में सहायता दी जा सकती है। ऐसे समय में निष्कासित सदस्यों से पुनः मिलने की इच्छा परामर्शदाता इंगित कर सकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. समूह परामर्श की सैद्धान्तिक उन्मुखता का अर्थ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. समूह परामर्श के मूल्य पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

27.7 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में समूह परामर्श के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है जिसमें बताया गया है कि जब समूह को मनोविश्लेषणात्मक उन्मुख परामर्शदाता द्वारा परामर्श दिया जाता है तब परामर्शदाता सेवार्थी एक अचेतन को मुक्त करने के लिए अन्यारोपण और अवरोध हो, की व्यख्या करता है। विश्लेषण का केन्द्र व्यक्ति का व्यवहार और समस्त समूह का व्यवहार रहता है। **कार्ल रोजर्स** समूह परामर्श के सम्बन्ध में अपने विचारों के विकास के लिए मानवीय व्यवहार के सम्बन्ध में स्वयं के विश्वासों को अपने चिकित्सापरक समूह के निरीक्षणों से जोड़ता था, जिन्हें कि वह अपने मूल समूह पर आरोपित करता था। परामर्शी–केन्द्रित उपागम मानता है कि लोगों में स्वयं को सुधारने और संवृद्धि की प्राकृतिक–प्रवृत्ति होती है। समूह–परामर्श एक ऐसा पर्यावरण प्रदान कर सकता है कि जिसमें सदस्य अपनी भावनाओं को व्यक्ति

करने में सुरक्षित अनुभव करते हैं और अन्ततः अपने जीवन को सुधार सकते हैं।

समूह परामर्श में, वातावरण नहीं वरन् तार्किक संवेगात्मक चिकित्सक व्यवहार परिवर्तन को बढ़ावा देने में मुख्य होता है। यह कार्य वह तर्क, अनुनय भूमिका निर्वाह आदि द्वारा करता है। परामर्शदाता संज्ञानात्मक और तार्किक व्यवहार परिवर्तन प्राप्त करना चाहता है। समूह में सदस्य, अतार्किक, संवेगात्मक चालक व्यवहार को पहचानने में एक–दूसरे की सहायता करते हैं।

प्रस्तुत इकाई में समूह परामर्श के मूल्यों की व्याख्या की गयी है तथा समूह के सदस्यों का चयन किस प्रकार किया जाये के बारे में भी बताया गया है। इकाई के अंत में समूह नेतृत्व एवं समूह भूमिका एवं लक्ष्य की पहचान पर प्रकाश डाला गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में वृद्धि करायेगी जिससे आप समूह परामर्श के बारे में जान सकेंगे।

27.8 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

समूह परामर्श– समूह परामर्श में, वातावरण नहीं वरन् तार्किक संवेगात्मक चिकित्सक व्यवहार परिवर्तन को बढ़ावा देने में मुख्य होता है। यह कार्य वह तर्क, अनुनय भूमिका निर्वाह आदि द्वारा करता है। परामर्शदाता संज्ञानात्मक और तार्किक व्यवहार परिवर्तन प्राप्त करना चाहता है। समूह में सदस्य, अतार्किक, संवेगात्मक चालक व्यवहार को पहचानने में एक–दूसरे की सहायता करते हैं।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– समूह परामर्श से आप क्या समझते है?

2– समूह परामर्श के सैद्धान्तिक उन्मुखता के बारे में लिखिये।

3– समूह परामर्श मूल्य से आप क्या समझते है?

4– समूह परामर्श में सदस्यों के चयन पर टिप्पणी लिखिये।

5– समूह नेतृत्व क्या है?

6– समूह भूमिका और लक्ष्य की पहचान से आप क्या समझते है?

7– समूह उत्पादकता से आप क्या समझते है?

विस्तृत

1– समूह परामर्श पर एक निबन्ध लिखिये।

2– समूह परामर्श का मूल्य, समूह सदस्यों का चयन एवं समूह नेतृत्व पर टिप्पणी लिखिये।

27.9 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज 51–61

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012

3– सिंह, अरूण कुमार, समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोती लाल बनारसी दास दिल्ली वर्ष–2005

4– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15

खण्ड – पंचमः – मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं परामर्श

इकाई –28, सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में परामर्श

28.0 इकाई का उद्देश्य

28.1 परिचय

28.2 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में पमरार्श : कुछ परिभाषायें

28.3 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर की योजना में वर्तमान रूचियाँ

28.4 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कार्य संसार की परिवर्तित प्रकृति

28.5 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर विकास के सिद्धांत और निर्णय लेना

28.6 सार संक्षेप

28.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न,

28.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

28.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में परामर्श किस प्रकार किया जाता है, के बारे में प्रकाश डाला गया है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– व्यावसायिक निर्देशन एवं कैरियर विकास की परिभाषाओं से अवगत हो सकेगे।

2– सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर की योजनाओं में वर्तमान रुचियों पर प्रकाश डाल सकेगे।

3– सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के कार्य संसार की परिवर्तित प्रकृति के बारे में जान सकेंगे।

4– सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में परामर्श हेतु अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों के बारें में लिख सकेंगे।

5– व्यावसायिक विकास की अवस्थाओं से परिचित हो सकेंगे।

6– व्यक्तित्व सिद्धान्त पर प्रकाश डाल सकेंगे।

7– परामर्शदाताओं के निहितार्थ कैरियर सिद्धान्त की व्याख्या कर सकेंगे।

28.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई में सरकार एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श की प्रक्रिया किस प्रकार अपनाई जाती है, के बारे में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। मनोविज्ञान का अधिकांश सैद्धान्तिक और इंद्रियानुभाविक योगदान जिसे विशिष्ट रूप से परामर्श मनोविज्ञान के साथ पहचाना जाता है मुख्यतः जीवनवृत्ति मनोविज्ञान के क्षेत्र में आता है। वस्तुतः डाक्टरल मनोविज्ञान प्रशिक्षण कार्यक्रम, जीवनवृत्त विकास में प्रशिक्षण और जीवनवृत्त परामर्श कदाचित् ही परामर्श मनोविज्ञान कार्यक्रमों के बाहर पाए जाते हैं।

जीवनवृत्ति विकास की ओर केवल परामर्श मनोवैज्ञानिक ही ध्यान नहीं देते वरन् इस क्षेत्र में विभिन्न विषयों जैसे नैदानिक मनोविज्ञान और औद्योगिक तथा संगठनात्मक मनोविज्ञान का भी मुख्य योगदान है। इसके अतिरिक्त कैरियर मनोविज्ञान अन्तर–संकाय सम्बन्धों में समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के साथ प्रवेश करता है। समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र भी 'कार्य–संसार' की उन्हीं समस्याओं का अध्ययन करता है, जो कैरियर मनोविज्ञान करता है, पर अपनी स्वयं की विशिष्ट रीतिविधान उपागम के साथ।

इन विषयों से कैरियर मनोविज्ञान का मुख्य अन्तर, इसके द्वारा 'सामान्य विकास' पर मुख्यतः ध्यान केन्द्रित करना है। **पार्सन्स** के द्वारा चलाए गए व्यावसायिक आन्दोलन के समय से इस क्षेत्र में शोध का

मुख्य आकर्षण यह ज्ञात करना था कि व्यक्ति व्यावसायिक चयन किस प्रकार और किन आधारों पर करता है।

प्रस्तुत इकाई में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में परामर्श से सम्बन्धित परिभाषाओं का वर्णन किया गया है एवं कैरियर की योजनाओं में वर्तमान रुचियों पर भी प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कार्य संसार की परिवर्तित प्रकृति एवं वृत्तिक विकास के सिद्धान्तों के बारे में चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई आप लोगों के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेंगी, जिससे आप लोग सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में होने वाले परामर्श से परिचित हो सकेंगे।

28.2 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में परामर्शः कुछ परिभाषायें

सर्वप्रथम हमें कुछ पदों को स्पष्ट कर लेना चाहिए–व्यावसायिक चयन, व्यावसायिक निर्देशन, व्यावसायिक मनोविज्ञान, कैरियर विकास, कैरियर मनोविज्ञान, कैरियर परामर्श, शैक्षिक विकास और शैक्षिक परामर्श।

व्यावसायिक चयन – प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी व्यवसाय को ग्रहण करते या नहीं करते हैं, यह एक व्यावहारिक पद है। इस चयन का चयन करने के पूर्ववर्तियों, सम्बंधित और परिणामों का अध्ययन करना कैरियर मनोविज्ञान के साहित्य का मुख्य भाग रहा है। व्यावसायिक चयन और व्यावृति चयन अनिवार्य रूप से एक–दूसरे के लिए प्रयोग किए जाने वाले पद हैं। समाजशास्त्रीय और अर्थशास्त्रीय व्यावृत्ति शब्द का प्रयोग पसन्द करते हैं जबकि मनोवैज्ञानिक व्यावसायिक शब्द का प्रयोग पसन्द करते हैं।

व्यावसायिक निर्देशन – यह वह प्रक्रिया है जो व्यक्तियों को उपयुक्त और बुद्धिपूर्ण व्यवसाय चयन करने के लिए उनके मूल्यांकन और वांछित तर्क के आधार पर सहायता देने के लिए विकसित की जाती हैं। **क्राईट्स** ने व्यावसायिक मनोविज्ञान को व्यावसायिक व्यवहार

और विकास के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया है। व्यावसायिक व्यवहार में व्यक्ति द्वारा व्यावृत्ति के चयन और उससे समायोजित करने के लिए की गई समस्त अनुक्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है। व्यावसायिक विकास को एक कन्सट्रक्ट समझा जा सकता है जो समय के साथ व्यावसायिक व्यवहार में होने वाले परिवर्तन के आधार पर अनुमानित किया जाता है।

कैरियर विकास – कैरियर परामर्श और **कैरियर मनोविज्ञान** जैसे पदों का विकास व्यावसायिक मनोविज्ञान के सिद्धान्तों और शोधों के आधार पर 1950 और 1960 में हुआ। इन दशाब्दियों में अधिकांश शोध विकासात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यवसाय चयन और विकास को समझने के लिए किए गए, यह देखकर कि एक व्यक्ति अपने जीवनकाल में अनेक व्यवसायों में संलग्न रहता है। सुपर ने कैरियर के पद का प्रयोग एक व्यक्ति द्वारा अपने पूरे जीवनकाल में एक विद्यार्थी के रूप में व्यय वर्षों और सेवानिवृत्ति के वर्षों में साधारण मुख्य स्थितियों के क्रम को वर्णित करने के लिए किया। कैरियर कार्य सम्बन्धी सभी भूमिकाओं को इंगित करता है, जैसे–विद्यार्थी, कार्यकर्त्ता तथा सेवानिवृत्ति, साथ ही व्यावसायिक, पारिवारिक और सामुदायिक प्रासंगिक क्रियाओं को। अतः कैरियर जीवनकाल में व्यावसायिक व्यवहार और विकासात्मक प्रक्रिया के सन्दर्भ में प्रयोग किए जाने वाला पसंदीदा विश्लेषण है।

28.3 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर की योजना में वर्तमान रूचियाँ

कैरियर योजना में वर्तमान उच्च कोटि की रुचि का प्रारम्भ तब हुआ जब Sidney Marland (1971) ने अपने भाषण में 'अब कैरियर शिक्षा' का तर्क पेश किया। कैरियर निर्देशन और परामर्श योजनाओं में निरन्तर रुचि Parkins के ''व्यावसायिक एक्ट'' (1984) में प्रतिबिम्बित होती है। इस एक्ट के अन्तर्गत ऐसे अभिकल्प तैयार करना आवश्यक था जिसके द्वारा लोगों की आत्म–आंकलन, कैरियर योजना, कैरियर निर्णय लेना,

रोजगार प्राप्त करने की कुशलता को विकसित किया जा सके। बाद में एक अन्य एक्ट के द्वारा विद्यार्थियों को स्कूल में वह सिखाया गया जिसकी आवश्यकता उन्हें व्यवसाय में सफल होने के लिए वांछित हो।

परामर्श की बढ़ती हुई आवश्यकता 1980 और 1990 में कैरियर सम्बन्धी समस्याओं में प्रतिबिम्बित होती है। युवकों की बेरोजगारी, कम रोजगार, मध्य–जीवनकाल में कैरियर परिवर्तन, कार्य स्थलों पर विभेदात्मक व्यवहार आदि समाज के मुख्य मुद्दे थे। सभी आयु वर्ग के लिए कैरियर परामर्श केन्द्रों की स्थापना तथा स्त्रियों के कैरियर केन्द्रों में प्रतिबिम्बित होती है।

कैरियर विकास का ध्यान–केन्द्र भी परिवर्तित हुआ। 1940, 1950, 1960 और 1970 के प्रारम्भ में मुख्य केन्द्र stage सिद्धान्तों पर था, जिसमें व्यक्ति खोजता था, निर्णय लेता था, तैयारी करता था और प्रारम्भिक युवावस्था में एक कैरियर अपना लेता था तथा अवकाश ग्रहण करने तक उसी में बना रहता था। वर्तमान दशाब्दी में कैरियर विकास का प्रत्यय पूरे जीवनकाल के लिए होता है। आज की और प्रक्षेपित कार्य स्थल की माँग तथा व्यक्ति की जीवन पर्यन्त कार्य क्षमता ने कैरियर के नवीन परिवर्तियों को जन्म दिया है, जिसमें कर्मचारी के विभिन्न कार्यों का अनुभव और सम्बन्धित शैक्षिक योग्यता सम्मिलित हैं। एक व्यक्ति का कैरियर विकास निरन्तर चलते रहने वाला प्रत्यय है अतः परामर्श और सहायता प्रदान करने वाले कार्यक्रम भी सभी आयु वर्ग, प्रारम्भिक स्कूल के बालकों से लेकर वृद्धावस्था तक उपलब्ध होनी चाहिए।

28.4 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कार्य–संसार की परिवर्तित प्रकृति

उन समस्त कारकों के अतिरिक्त जिन्होंने परामर्श शिक्षा आन्दोलन की आवश्यकता को दर्शाया अथवा परम्परागत कैरियर और कार्य के प्रत्ययों में महत्वपूर्ण परिवर्तनों ने अन्य आवश्यकताओं को भी

उभारा का वर्णन आवश्यक है। इन परिवर्तनों के प्रतीकात्मक रूप में निम्नांकित का उल्लेख भी किया जा सकता है–

1. अब जीवनकाल में एक कैरियर नहीं रहता। हमारे पूर्वज और यहाँ तक कि हमारे अभिभावक भी एक कैरियर में जाने के पश्चात् पूरे जीवनकाल में उसी में बने रहते थे। 1990 के उत्तरार्ध में तथा 21वीं शताब्दी के प्रारम्भ में यह पाया गया कि लोग तीन से सात विभिन्न महत्वपूर्ण कैरियर में अपने पूरे जीवनकाल में रहते हैं। हम आज जिस युग में रह रहे हैं उसमें तीव्र गति से होने वाले तकनीकी परिवर्तन और विकास 'हम किसी कार्य को कैसे और क्या करते' को एक रात में ही प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त अस्थाई कर्मचारी रखने की प्रवृत्ति कर्मचारियों के कैरियर को अस्थाईत्व प्रदान किया है। अस्थाई कर्मचारियों को इसकी मुख्य हानि यह हुई है कि उनके कार्य की सुरक्षा नहीं रही है और उन्हें स्वास्थ्य बीमा और पेंशन का लाभ भी प्राप्त नहीं होता, जो भूतकाल के कर्मचारियों की प्रतिआशाओं से महत्वपूर्ण रूप से भिन्न है। परामर्शदाताओं द्वारा निरन्तर यह स्मरण कराया जाता है कि इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप ऐसे युवाओं की संख्या बढ़ रही है जिन्हें अपनी इच्छा से या आवश्यकता के कारण अपने पूरे कार्य–जीवन में कैरियर निर्णय लेने पड़ते हैं।

2. द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् कार्य–स्थलों पर स्त्रियों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है। वे कहाँ कार्य कर रही हैं, की भावना में भी परिवर्तन हुआ है। वर्तमान पीढ़ी ने अनेक बाधाओं को अब दूर कर दिया है जो भूतकाल में स्त्रियों के कार्य करने पर थीं। पहले कुछ कार्य केवल लिंग विशेष के लिए थे। उदाहरणार्थ पूर्व में स्त्रियों के लिए इंजीनियरिंग, हवाई जहाज पायलट, टैक्सी ड्राइवर या ट्रक ड्राईवर जैसे कार्य नहीं थे। उपर्युक्त कार्यों के क्षेत्र पर पुरुषों का एकाधिकार था पर अब इन कार्यों में स्त्रियाँ भी कैरियर बनाने लगी हैं।

वर्तमान शताब्दी के प्रथम अर्धभाग में यह माना जा रहा है या आशा की जा रही है कि स्त्रियों की संख्या कार्य–स्थलों पर पुरुषों के समान होगी। साथ ही वह अनकहा प्रतिबन्ध कि स्त्रियों को अधिशासी पदों पर या निरीक्षणात्मक पदों पर नियुक्त नहीं किया जा सकता, पर अब यह प्रतिबन्ध हट गया है और स्त्रियों को इन पदों पर नियुक्त किया जाने लगा है। इन पदों पर कार्य करते हुए स्त्रियों ने अपनी सामर्थ्य और कौशल को दर्शाया है तथा सिद्ध किया है कि वे कितनी कार्यकुशल हैं।

इसमें कोई शंका नहीं कि प्रगति हुई है और होती रहेगी पर अब भी लिंग, प्रजाति या सामाजिक आर्थिक स्थिति स्तर को उपेक्षित करते हुए सभी को कैरियर अवसर समान रूप से प्रदान किए जाएँ, करना अभी बाकी है और इसके लिए प्रयास किया जाना है। यह स्थिति परामर्शदाताओं और परामर्श व्यवसाय के लिए मुख्य चुनौती है।

3. बाजार स्थान का वैश्वीकरण – आज व्यापार और उद्योगों का सम्पूर्ण संसार में तीव्रता से विस्तार हो रहा है। आज अन्तर्राष्ट्रीय मर्जर बहुत सामान्य हो गया है क्योंकि अब कोर्पोरेशन अधिक प्रतिस्पर्धी और लाभदायक हो रहे हैं। आज अमेरिकी कर्मचारी दक्षिणी अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशिया में अपना काम देख रहे हैं। अपने काम के साथ जब अमेरिका के नागरिकों को अपना देश छोड़ने का अवसर प्रदान किया जाता है, तब अन्य देशों के नागरिकों की भांति बहुत कम इस अवसर को स्वीकार करते हैं। यह प्रवृत्ति निश्चित रूप से बनी रहेगी और समय के साथ बढ़ेगी भी। इस तथ्य के बहुत कम साक्ष्य उपलब्ध हैं कि अमेरिकी नागरिक अन्य देशों में कार्य करने के लिए तैयार होंगे।

4. आज यहाँ–कल कहाँ! – अब वर्तमान के आधार पर भविष्य के सम्बन्ध में पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता। पहले के समय में जो लोग अपने भविष्य को सुरक्षित करना चाहते थे वे वर्तमान के ज्ञान के आधार पर भविष्य के लिए अनेक तैयारियाँ करते थे। इस कारक ने कर्मचारियों की स्थिति को प्रभावित किया है और यदि असम्भव नही ंतो

बहुत मुश्किल बना दिया है कि वर्तमान और गत अनुभवों के आधार पर भविष्य का पूर्वानुमान उपयुक्त रूप से लगाया जा सकता है।

वास्तव में आज 20वीं शताब्दी के पारिवारिक व्यापार की बात अब इतिहास बनती जा रही है। आज 'बिग बाजार' और मॉल्स का युग आ गया है। आज कर्मचारी दूर बैठे स्वामियों के लिए कार्य करते हैं। 'कॉल सेन्टर्स' इसके उदाहरण हैं। आज कर्मचारी भारत में एक ऐसी कम्पनी के लिए काम करता है जो अमेरिका या जापान में स्थित है। आधुनिक समाज में तीव्र गति से होते इस परिवर्तन के आधार पर यह कहना असम्भव है कि भविष्य, वर्तमान के समान ही होगा।

5. आज व्यक्ति स्वयं के भाग्य का निर्धारक नहीं है – आज के इस जटिल समाज में जिसमें अनेक अन्तःक्रियात्मक शक्तियाँ और अनगिनत परिवर्ती व्यक्ति के भाग्य को प्रभावित करती है, अधिकांश व्यक्तियों का स्वयं पर कोई नियन्त्रण नहीं है। लोग प्रायः उन कारकों से अनभिज्ञ हैं जो उनके जीवन को आकृति प्रदान करते हैं, यद्यपि वे अपने भविष्य की योजना बना सकते हैं और विकल्पों के सम्बन्ध में सोच सकते हैं। आज राष्ट्रीय कर्मचारी बाजार को वैश्विक बाजार से स्थानापन्न कर दिया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा ने कर्मचारियों के लिए, वेतन तथा अन्य लाभों, कार्य स्थाईत्व तथा व्यवसाय के स्थान के सन्दर्भ में गम्भीर मुद्दे प्रस्तुत किए हैं। इन परिवर्तनों के कारण अस्थाई कर्मचारियों की नियुक्तियों में बढ़ोत्तरी हुई है तथा संक्रमणशील कर्मचारी शक्ति भौगोलिक रूप में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में गतिमान हुई है। इनके तथा अन्य कारकों के कारण लोगों का अपने कैरियर पर नियन्त्रण घटा है, अतः प्रशिक्षित परामर्शदाताओं की आवश्यकता बढ़ी है।

28.5 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर विकास के सिद्धान्त और निर्णय लेना

युवकों और वयस्कों को उनके कैरियर विकास में सहायता देने के लिए परामर्शदाताओं और सहायक व्यवसाइयों को विकास के

सिद्धान्तों का ज्ञान आवश्यक है क्योंकि अनेक विषय सक्रिय रूप से अनेक कैरियर प्रश्नों की खोज में संलग्न है (शिक्षा, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र आदि) अतः अनेक सिद्धान्तों का विकास हुआ है। इनमें से कुछ मुख्य सिद्धान्तों का वर्णन हम आगे की पंक्तियों में करेंगे। प्रस्तुत इकाई में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों में कैरियर विकास के लिए विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों की सहायता ली जाती है जिससे व्यक्तियों के व्यक्तित्व के बारे में जानकारी आसानी से प्राप्त की जा सके। वास्तव में, इन संगठनों में कार्यरत व्यक्तियों की समस्याओं का जबतक पता नहीं लगाया जाता तब तक उन्हें उचित मार्ग दर्शन या परामर्श प्रदान करना गलत होगा। अतः इसी इकाई में संगठनों में परामर्श के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

शीलगुण–कारक सिद्धान्त

प्रारम्भिक सिद्धान्त जो कैरियर परामर्श और विकास के सम्बन्ध में विकसित हुआ वह शीलगुण–कारक सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है। यह नाम इस मान्यता पर आधारित है कि व्यक्ति के शीलगुणों का आंकलन वस्तुगत मापों के द्वारा प्राप्त कर और इन शीलगुणों का उन शीलगुणों से मिलान कर जो किसी कैरियर क्षेत्र में सफल निष्पादन के लिए आवश्यक है, परामर्शदाता को परामर्शी को वस्तुगत सहायता प्रदान करने के लिए सक्षम बनाएगा। यह शीलगुण उपागम पार्सन्स के व्यावसायिक निर्देशन के प्रत्यय पर आधारित है जो उसने अपनी पुस्तक "Choosing a Vocation" (1909) में वर्णित किए हैं। इसमें Parsons ने व्यक्ति के कैरियर निर्णय लेने को सुविधाजनक बनाने के लिए तीन चरण सुझाएँ हैं। सार रूप में यह चरण निम्नांकित थे–

1. व्यक्ति को स्वयं की, उसकी योग्यताओं, रूचियों, अभिवृत्तियों आदि की स्पष्ट वस्तुगत समझ।
2. एक विशिष्ट कैरियर की विशेषताएँ और आवश्यकताओं का ज्ञान।

3. सफल कैरियर योजना के लिए उपयुक्त 1 और 2 के मध्य सम्बन्धों और आरोपणों को पहचानना।

शीलगुण उपागम कैरियर के सम्बन्ध में निर्णय लेने का कदाचित् कैरियर परामर्श के लिए प्राचीनतम और सबसे अधिक स्थाई उपागम है।

विकासात्मक सिद्धान्त

कैरियर योजना के लिए प्रासंगिक विकासात्मक सिद्धान्त कैरियर विकास को व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के रूप में देखते हैं। इसके अतिरिक्त विकासात्मक सिद्धान्तवादी कैरियर विकास को एक प्रक्रिया के रूप में देखते हैं जो जीवन–पर्यन्त चलती रहती है। इसके परिणामस्वरूप अधिकांश विकासात्मक सिद्धान्त विकास के उन स्तरों पर ध्यान देते हैं जो आयु से सम्बन्धित हैं। इस सम्बन्ध में वर्तमान पीढ़ी वयस्क और वृद्ध वयस्कों पर अनुसंधान में रुचि लेने लगी हैं। जिन्जबर्ग, एक्सिलरेड और हरमा (Ginzberg, Axelrad and Herma, 1951) उन प्रारम्भिक शोधकर्त्ताओं में हैं जिन्होंने व्यावृत्ति चयन को विकासात्मक परिप्रेक्ष्य में देखा। Ginzberg के परिवर्धित सिद्धान्त पारिवारिक आय और परिस्थितियों, अभिभावकों की मनोवृत्ति और मूल्यों, कार्य संसार के अवसरों और मूल्य उन्मुखता के कारण उत्पन्न सीमाओं पर भी काफी बल दिया है। इन सिद्धान्तों में प्रारम्भिक स्कूल के वर्गों का महत्व बाद की कैरियर योजना पर प्रभाव दर्शाया गया है।

विकासात्मक कैरियर शोधकर्त्ताओं और लेखकों में सर्वाधिक प्रभावशाली कदाचित् Donald E Super थे। सिद्धान्त के विकास में Super (1957) ने व्यावसायिक परिपक्वता की भूमिका पर अधिक बल दिया है। Super के सिद्धान्त के मुख्य प्रत्यय थे–

;पद्ध व्यावसायिक स्तर,

(ii) यदि एक विशेष स्तर को सफलतापूर्वक प्राप्त कर लिया है तो विकासात्मक कार्य को प्राप्त करना है,

(iii) कैरियर पहचान के विकास में आत्म–प्रत्यय का आरोपण,

(iv) कैरियर परिपक्वता का विकास, और

(v) कैरियर प्रारूप।

एक अन्य लोकप्रिय विकासात्मक सिद्धान्त हेपिंग हस्ट का विकासात्मक सिद्धान्त है। Havinghurst (1967) ने व्यावसायिक विकास को जीवन–पर्यन्त की प्रक्रिया माना है जिसकी छः अवस्थाएँ बाल्यकाल से वृद्धावस्था तक होती हैं। हर अवस्था के विशेष कार्य होते हैं जिन्हें व्यक्ति को प्रसन्नता और सफलता प्राप्त करने के लिए कार्य करना होता है। विकास की इन अवस्थाओं को सारणी–1 में रेखांकित किया गया है।

सारणी–1 : व्यावसायिक विकास

व्यवसायिक विकास की अवस्थाएँ	आयु
1. कर्मचारी से पहचान माता–पिता तथ अन्य महत्वपूर्ण लोग। कार्य करने का प्रत्यय अहं–आदर्श का अनिवार्य भाग बन जाता है।	5–10
2. उद्योग की मूल आदतों को प्राप्त करना एक कार्य को पूरा करने के लिए समय ऊर्जा का संगठन सीखने हेतु करना। स्कूल कार्य तथा कार्य को खेल से पहले करना सीखना।	10–15
3. व्यावृत का चयन करना और उसकी तैयारी करना। व्यावृत चयन के आधार पर अनुभव प्राप्त करना तथा आर्थिक स्वतन्त्रता के लिए आशवस्त होना	
4. एक उत्पादक व्यक्ति बनना अपने कार्य के कौशल में निपुणता प्राप्त करना। अपने व्यावृत में ऊपर उठना अर्थात् उन्नति करना।	15–40
5. एक उत्पादक समाज को बनाए रखना इस स्थिति में व्यक्तिगत पक्ष की अपेक्षा सामाजिक पक्ष की ओर ध्यान लगना प्रारम्भ हो जाता है। व्यक्ति या	40–70

व्यक्तियों को 3 और 4 पर स्थापित करने पर ध्यान देता है।

6. एक उत्तरदायित्व पूर्ण और उत्पादक जीवन का ध्यान 70 +

एक अन्य सिद्धान्त एरिकसन (E. H. Erickson) द्वारा विकसित किया गया है। एरिकसन ने आठ मनोवैज्ञानिक अवस्थाओं को इंगित किया है। इनमें से हर विकासात्मक अवस्था पर संकट रहता है जिसे हल किया जाना चाहिए। व्यक्तियों की प्रतिक्रिया पर निर्भर करता है कि हर संकट के साथ एक द्वन्द सन्निहित होता है जिसे सकारात्मक या नकारात्मक रूप में हल किया जाना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्थाओं में सफलता प्राप्त करने पर व्यक्ति भावी संकट को हल करने की योग्यता रखता है। इस प्रकार, अवस्थाओं में अन्तर–निर्भरता उत्पन्न होती है। परन्तु यह आवश्यक है कि मनोवैज्ञानिक संकट का अवांछनीय हल व्यक्ति के भावी जीवन में कठिनाइयाँ प्रस्तुत होने पर सन्तोषप्रद हल के रूप में परिवर्तित कर ली जाएँ। व्यक्ति के कैरियर विकास और बाद में समायोजन के लिए व्यक्तिगत, सॉस्कृतिक, संज्ञानात्मक और सामाजिक–संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति का महत्व है। Erickson की अवस्थाओं को सारणी 2 में दर्शाया गया है।–

सारणी–2

एरिकसन की व्यक्तिगत और सामाजिक विकास की अवस्थायें

अनुमानतः		मनोवैज्ञानिक संकट	महत्वपूर्ण सम्बन्ध	मनोवैज्ञानिक महत्व
1	जन्म से 18 माह	विश्वास बनाम अविश्वास	मातृत्व	प्राप्त करना और एवज में देना
2	18 माह से 3 वर्ष	स्वायत्तता बनाम संशय	अभिभावक व्यक्ति	पकड़े रखना जाने देना
3	3 से 6 वर्ष	पहल करना बनाम अपराध बोध	परिवार	खेलना

4	6 से 12 वर्ष	उद्योग बनाम हीनता	पड़ोस, स्कूल	मिलकर चीजे बनाना
5	12 से 18 वर्ष	पहचान बनाम भ्रमिक उलझन	साथी समूह और नेतृत्व	मिलकर चीजें बनाना
6	18 से व्यस्क	घनिष्ठता बनाम विलगता	मित्रता में साथी लिंग, प्रतिस्पर्धा, सहयोग	हारना और स्वयं को अन्य में पाना
7	मध्य वयस्क आयु	सामान्यता बनाम आत्म उन्मुखता	विभाजित श्रम और भागीदारी से घर चलाना	परवाह करना
8	उत्तर वयस्क काल	समग्रता बनाम निराशा	मानववाद	स्वयं का अस्तित्व

व्यक्तित्व सिद्धान्त

व्यक्तित्व सिद्धान्त व्यावसायिक तरजीह को व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति के रूप में देखती है। व्यक्तित्व सिद्धान्तों का प्रतिनिधित्व वर्तमान में एक लोकप्रिय उपागम हॉलैन्ड (Holland, 1966, 1973, 1985) का व्यक्तित्व सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त व्यक्तित्व प्रकार की मुख्य मान्यताओं और निर्धारकों पर तथा विभिन्न परिणामों और व्यावसायिक चयन से उनके सम्बन्धों पर आधारित है। दूसरे शब्दों में, लोग स्वयं की अभिव्यक्ति, अपने मूल्यों और रुचियों और इस प्रकार अपने व्यावसायिक चयन अर्थात् अपने कार्य वातावरण के द्वारा करते हैं।

Holland (1985) के सिद्धान्त को समझने और उसके आरोपण का केन्द्र छः विभिन्न प्रकार के व्यक्तित्वों और पर्यावरण के वर्णन द्वारा

समझा जा सकता है। इनमें से हर एक अंग्रेजी के छः अक्षरों से प्रारम्भ होता है– (R-I-A-S-E-C)

(i) R : Realistic type
(ii) I : Investigative type
(iii) A : Artistic type
(iv) S : Social type
(v) E : Enterprising type
(vi) C : Conventional type

यथार्थवादी प्रकार (Realistic type)–वे लोग जो निश्चित क्रमबद्धता और वस्तुओं, उपकरणों और मशीनों के हस्तचालन को पसन्द करते हैं ऐसे लोग शैक्षिक और उपचारात्मक क्रियाओं को पसन्द नहीं करते।

खोजात्मक प्रकार (Investigative type)–इस प्रकार के लोग भौतिक, दैहिक और सांस्कृतिक प्रत्ययों के निरीक्षणात्मक, नियमबद्ध और प्रतीकात्मक खोज को पसन्द करते हैं।

कलात्मक प्रकार (Artistic type)–ऐसे लोग अस्पष्ट, स्वतन्त्र और अनियमित क्रियाओं को पसन्द करते हैं। ये लोग भौतिक, शाब्दिक और मानवीय सामग्री का हस्तचालन कलात्मक वस्तुओं को उत्पन्न करने के लिये करते हैं। ये लोग वैज्ञानिक पद्धति जो नियमबद्ध और क्रमिक होती है को पसन्द नहीं करते।

सामाजिक प्रकार (Social type)–ऐसे लोग अन्य लोगों को सूचित करने, प्रशिक्षित करने, विकसित करने या ज्ञान प्रदान करने के लिए हस्तचालन करते हैं।

उद्यमी प्रकार (Enterprising type)–ऐसे लोग संगठनात्मक लाभ या आर्थिक लाभ के लिए लोगों का हस्तचालन करते हैं। ये लोग निरीक्षणात्मक, प्रतीकात्मक और नियमित क्रियाओं को पसन्द नहीं करते हैं।

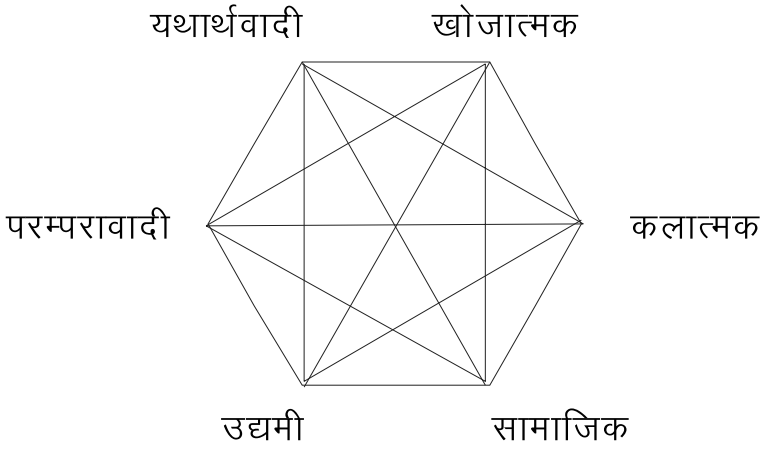
परम्परावादी प्रकार (Conventional type)–ऐसे लोग लेखा–जोखा रखना, प्रदत्तों को भावस्थित करना तथा लिखित सामग्री को व्यवस्थित करना पसन्द करते हैं।

विभिन्न प्रकार के लोगों के लिए जो व्यावृत्ति उपयुक्त होते हैं वे हैं–

(1)यथार्थवादी–आर्किटेक्ट, एयर नियन्त्रक, (2) खोजात्मक – अर्थशास्त्री, जीवशास्त्री, (3) कलात्मक – सम्पादक, फोटोग्राफर, (4) सामाजिक – एथेलेटिक कोच, मंत्री, (5) उद्यमी–सेल्स एजेन्ट, टी. वी. उदघोषक और (6) परम्परावादी–लेखाकार, रिसेप्शनिस्ट।

सांख्यिकी विश्लेषक Holland एक षट्कोण (Hexagon) विकसित करने में सफल हुए (चित्र–1)। इस प्रारूप से ज्ञात होता है कि यथार्थवादी, खोजात्मक, परम्परावादी और सामाजिक प्रकार के अधिक निकट होते हैं। अनिवार्यतः इन छः प्रकार के व्यक्तित्व की और पर्यावरण की परिभाषा के अनुसार इनके मध्य सम्बन्ध बहुत महत्वपूर्ण हैं। Holland के अनुसार इनमें समरूपता, संगति और विभेदीकरण बहुत महत्वपूर्ण है। समरूपता व्यक्तित्व प्रकार और वातावरण जिसमें वह कार्य करता है, के प्रकार का सम्बन्ध मात्र है। एक व्यक्ति जो कलात्मक प्रकार का है, यदि वह कलात्मक प्रकार के वातावरण में कार्य करता है, तो उसके प्रकार और वातावरण में पूर्ण समरूपता है। पर यदि कलात्मक व्यक्ति परम्परावादी वातावरण में कार्य करता है, तो यह असमरूपता है। संगति यह इंगित करती है कि एक व्यक्ति की रूचियाँ दूसरे व्यक्ति की रूचियों के कितने समान है। एक व्यक्ति को जो मुख्यतः यथार्थवादी रुचियाँ रखता है और साथ ही दृढ़ सामाजिक रुचियाँ रखता है वह उस व्यक्ति से कम संगत है जिसकी गहन रुचियाँ यथार्थवादी और खोजात्मक है। पुनः हम षट्कोण में प्रकारों की निकटता पर दृष्टिपात करेंगे। इससे यह ज्ञात होता है कि संगति का सिद्धान्त बताता है कि वे व्यक्ति जिनकी रुचियों में संगतता है उनके सम्बन्ध में यह पूर्वकथन

करना अधिक सरल है कि वे किस व्यवसाय में सफलता और संतोष प्राप्त करेंगे। इसी प्रकार विभेदीकरण का प्रत्यय है, अर्थात् स्पष्ट रूप से इन छः मानपियों में से किसी में अन्य की अपेक्षा उच्च अंक प्राप्त करना, यह इंगित करता है कि अधिक विभेदक लोगों के सम्बन्ध में यह कथन करना सरल होगा कि वे किस व्यवसाय का चयन करेंगे और उसमें बने रहेंगे। इसके विपरीत जो लोग विभेदीकृत नहीं हैं उनके कैरियर चयन के सम्बन्ध में पूर्व कथन नहीं किया जा सकता।



(चित्र–1)

सार रूप में Holland (1985) के सिद्धान्त में व्यक्तित्व की विशेषताओं के छः वर्गों का और उनसे सम्बन्धित कार्य पर्यावरण का वर्णन किया गया है। हॉलैण्ड ने अपने सिद्धान्त पर आधारित एक लोकप्रिय आंकलन यंत्र विकसित किया, जो "The Self-directed search, accomapanied by an occupational finder" के नाम से जाना जाता है। हॉलैण्ड ने कभी यह नहीं सुझाया कि उसके द्वारा बताये गये व्यक्तित्व प्रकार एक–दूसरे से स्वतन्त्र है जैसा कि Occupational finder में दिया हुआ है। दिये गये छः प्रकार के व्यक्तित्व में से किसी में फिट होना एक व्यक्ति के लिए बहुत ही कम सम्भव है। परामर्शदाताओं को हॉलैण्ड द्वारा सुझाया "Person-environment" किट का प्रयोग बालकों, विद्यार्थियों और उन वृद्ध व्यक्तियों के साथ करना चाहिए जो अपना कैरियर बदलना चाहते हैं।

सामाजिक अधिगम सिद्धान्त– सामाजिक अधिगम सिद्धान्त जॉन क्रमबोल्ट्ज और निकोलस तथा उनके सहयोगियों के प्रयास का परिणाम है। आप लोगों ने बन्दूरा के कैरियर निर्णय लेने के व्यवहारात्मक सिद्धान्त का अनुपाल करने के लिए किया था। 1996 में मिशेल और क्रमबोल्ट्स ने अपने पूर्व के सामाजिक अधिगम सिद्धान्त उपागम को लोगों के सुझाव के अनुसार कैरियर परामर्श का अधिगम सिद्धान्त के नाम से सम्बोधित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति का कैरियर विकास और निर्णय चार कारकों से प्रभावित होता है। ये कारक हैं–

1–आनुवांशिकी अक्षयनिधि और विशेषता कौशल।

2–पर्यावरण स्थितियाँ और घटनाएँ।

3–अधिगम अनुभव।

4–कृत्य उपागम कौशल।

वयस्कों के कैरियर परामर्श के सिल समग्रता सिद्धान्त–

इस सिद्धान्त का कथन वयस्क के विभिन्न जीवन–स्तरों पर कैरियर विकास को समझने के लिए एक फ्रैमवर्क के रूप में किया गया। यह सिद्धान्त समन्वित जीवन योजना का एक प्रारूप है– जो–

1– सामाजिक सन्दर्भ को व्यक्ति, परिवारों शिक्षा और कार्य से जोड़ता है।

2– यह प्राथमिक आवश्यकताओं, भूमिकाओं और लक्ष्यों को पहचानने जीवन–पर्यन्त की प्रक्रिया है और उन्हें स्वयं, कार्य, परिवार और समुदाय से समन्वित करता है।

3– समन्वित और सम्बन्ध उन्मुख है तथा इसे व्यक्ति को अधिक सन्तुष्ट, अर्थ, सम्पूर्णता और समुदाय की भावना प्राप्त करने में सहायता प्रदान करने के लिए अभिकल्पित किया गया है ।

4– किसी के जीवन की दिशा, दूसरों को अधिकार देने, परिवर्तन को व्यवस्थित और वृहद समुदाय के लिए योगदान करने तथा सामान्य भलाई को स्वरूप देने का माध्यम है।

इसके अतिरिक्त यह सिद्धान्त जीवन कार्यों के छः महत्वपूर्ण थीम्स के चहुँ ओर विकसित हुआ है जिनका वयस्क को 21 वीं सदी में पालन करना चाहिए। हैनसन ने इन कार्यों को निम्नांकित रूप से वर्णित किया हैं–

1– एक कार्य ढूंढना जिसे परिवर्तनशील, वैश्विक सन्दर्भ में करने की आवश्यकता हो।

2– अपने जीवन का ताना–बाना एक सार्थक सम्पूर्णता में बुनना।

3– कार्य और परिवार को जोड़ना।

4– बहुवाद और अन्यावर्तकी का आदर करना।

5– व्यक्तिगत लेन–देन ओर संगठनात्मक परिवर्तन को व्यवस्थित करना।

6– जीवन उद्देश्य और आध्यात्मिकता को खोजना।

सामाजिक सिद्धान्त–

पिछले अनेक दशकों से मनोवैज्ञानिकों को स्पष्ट कर्मचारियों के व्यावसायिक समायोजन के लिए परिप्रेक्ष्य से इसका अध्ययन करना अन्तर्सकांय आवश्यक है। इस खण्ड में हम समाजशास्त्रीय प्रत्ययों का उल्लेख करेंगे जो कैरियर चयन को समझने के लिए मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य के पूरक का कार्य करते हैं।

समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिक–दोनों ने ही योग्यता की भूमिका पर कैरियर मनोविज्ञान में स्थान केन्द्रित किया है और यह ज्ञात करने की चेष्ठा की है कि क्या हमारा समाज वास्तव में योग्यता को वह कारक मानती है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार उन्नति करता है। समाजशास्त्रियों ने इस प्रश्न पर काफी प्रदत्त एकत्र किए और उनके परिणाम इसके विपरीत प्राप्त हुए है। Osipow और Hotchkiss and borrow का मानना है कि समाज, आर्थिक स्थिति, लिंग और प्रजाति का इस बात पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है कि कोई व्यक्ति क्या चयन करेगा और किस स्थिति में आय अर्जित करेगा, चाहे उनका योग्यता स्तर

समान हो। इसके अतिरिक्त संयोगिक कारक कानून चयन का कारण बनते है जो आवेग या अनायास संवेगात्मक अनुक्रिया जिनमें अचेतन शक्ति व्यक्ति के व्यवहार और व्यावृत निर्धारिण करते प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थ, सोचिए कि एक व्यक्ति जो आवेग में एक अच्छी खासी नौकरी को छोड़कर समाज सेवा के कार्य में लग जाता है। अतः घटना या दुर्घटना सिद्धान्त कहता है कि, लोग इस प्रकार का निर्णय ले सकते हैं, जो अप्रत्याशित और अदुष्य या अनायास परिस्थितियों के कारण हो सकता है। अतः ऐसे लोगों की पसन्द में निर्णायक कारकों का निश्चित मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है।

अनेक वर्षो में बहुत से समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों ने यह विचार व्यक्त किए है कि संयोग और भाग्य लोगों के जीवन को परिवर्तित कर देते हैं। समाजशास्त्री यह भी मानते हैं कि परिवार, स्कूल, सामजिक वर्ग, समुदाय और साथी समूह आदि भी व्यक्तियों को गंभीर रूप से प्रभावित करते है।

आर्थिक सिद्धान्त–

आर्थिक सिद्धान्त कैरियर चयन में आर्थिक कारकों के महत्व को इंगित करते है। इनमें से मुख्य कृत्यों की उपलब्धता अैर उन कार्यों के लिए योग्य कर्मचारियों की उपलब्धता है। इसके अतिरिक्त अनेक अध्ययनों ने यह इंगित किया है कि एक मुख्य कारक यह होता है, कि मुझे किस प्रकार का कार्य मिल सकता है? इन सभी अवस्थाओं में महत्व इस तथ्य को दिया जाता है कि इस कार्य से कम से कम स्वयं की और परिवार की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। कार्य सुरक्षा भी चयन में एक महत्वपर्ण मुद्दा रहता है।

परामर्शदाताओं के निहितार्थ कैरियर सिद्धान्त–

अब तक वर्णित सिद्धान्तों पर एक दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि शीलगुण–कारक सिद्धान्त उपागम कैरियर चयन में व्यक्ति की योग्यताओं और रुचियों को महत्व देता है। व्यक्तित्व सिद्धान्त कैरियर

निर्णय और व्यक्तित्व शीलगुण के मध्य सम्बन्धों का सुझाव देता है, जैसे– आत्म–प्रत्यय, विकासात्मक सिद्धान्त कैरियर के लिए निर्णय लेने में मानवीय विकास और परिपक्वता को महत्व देते हैं। सामाजिक अधिगम सिद्धान्त, वंशानुक्रम, विशेष योग्यताओं, पर्यावरण, अधिगम, अनुभव और कार्य करने के कौशल को महत्व देता है। अति महत्वपूर्ण, समाजशास्त्रीय सिद्धान्त विशेष बल व्यक्ति के कैरियर निर्णय में संयोग की भूमिका पर देते है। अर्थशास्त्रीय सिद्धान्त कैरियर चयनों में अधिक कारणों को महत्व देते हैं। मूल्य सिद्धान्त व्यक्ति के मूल्यों और उनके समाज के मूल्यों में विश्वास करते हैं और कैरियर लक्ष्यों में उनके महत्व को स्वीकार करते है।

ये सिद्धान्त हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचाते है कि निर्णय लेने में कैरियर विकास एक प्रक्रिया है। व्यक्ति कैरियर विकास और निर्णय लेने की अवधि में अनेक स्तरों से गुजरता है। व्यक्ति हर स्तर पर कुछ कार्य अवश्य पूरे करता है और व्यक्तित्व शीलगुणों और मूल्यों का सम्बन्ध कैरियर निर्णय से होता है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण की सीमाएं हमारे उन कैरियर को सीमित कर देती है जिनकी हम आकांक्षा रखते हैं।

इन सिद्धान्तों की विशेषताएँ कैरियर विकास या समायोजन की आवश्यकताओं वाले पराशर्मी के लिए कुछ निहितार्थ होती है। जैसेः

1– परामर्शदाता को मानवीय विकास की विशेषताएँ और प्रक्रियाओं को अवश्य समझना चाहिए, जिसमें अधिगम के लिए इच्छा और विकास के स्तर विशेष पर कार्य विशेष को सफलता पूर्वक पूरा करना भी सम्मिलित है।

2– मानव की प्राथमिक आवश्यकताओं और व्यक्ति की विशेष आवश्यकताओं तथा कैरियर विकास और निर्णय लेने तथा उनके सम्बन्धों की समझ परामर्शदाता को अवश्य होनी चाहिए।

3– परामर्शदाता को व्यक्ति के शीलगुणों और विशषताओं का मूल्यांकन और व्याख्या करने में सक्षम होना चाहिए तथा इन मूल्यांकनों को विभिन्न प्रकार के परामर्शियों और उनकी आवश्यकताओं पर आरोपित करना चाहिए।

4– परामर्शदाता के द्वारा परामर्शी को अज्ञात या संयोगिक कारकों को पहचानने में सहायता होनी चाहिए तथा कुछ मौकों पर कैरियर योजना को परिवर्तित भी करना चाहिए।

5– इस आर्थिक वैश्विक और उच्च तकनीकी युग में लोगों के कार्य और जीवन में होने वाले तीव्र परिवर्तनों को परामर्शदाता को अवश्य पहचानना चाहिए तथा इन सिद्धान्तों का निरन्तर परीक्षण और परिवर्तन करते रहना चाहिए।

परामर्शदाता को स्वयं यह जानना चाहिए और अपने परामर्शीयों को भी यह पहचान में सहायता करनी चाहिए कि कार्य का, कार्य के संसार का आज अस्तित्व नहीं है। बार–बार कैरियर परिवर्तित करना, पर्यावरण में परिवर्तन जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय रोजगार की सम्भावानाएँ भी सन्निहित है तथा अस्थाई कर्मचारियों की संख्या में बढ़ोत्तरी आज के कार्य–स्थलों की वास्तविक सम्भावनाएँ है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श सम्बन्धित कुछ परिभाषाओं को लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में कार्य संसार की परिवर्तित प्रकृति पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

28.6 सार संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श की प्रक्रिया पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें विभिन्न प्रकार की परिभाषाओं का भी समावेश किया गया है। व्यावसायिक निर्देशन के बारे में लिखिते

हुए बताया गया है कि यह वह प्रक्रिया है जो व्यक्तियों को उपयुक्त और बुद्धि परक व्यवसाय चयन करने के लिए उनके मूल्यांकन और वांछित तर्क के आधार पर सहायता देने के लिए विकसित की जाती है। इसी इकाई में सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में कैरियर की योजना में वर्तमान रुचियों एवं कार्य संसार परिवर्तित प्रकृति के बारे में वृहद प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श हेतु अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों जैसे शीलगुण कारक सिद्धान्त, विकासात्मक सिद्धान्त, व्यक्तित्व सिद्धान्त, सामाजिक अधिगम सिद्धान्त समग्रता सिद्धान्त, सामजिक सिद्धान्त एवं आर्थिक सिद्धान्तों की व्याख्या की गई है।

प्रस्तुत इकाई के अंत में परामर्शदाताओं के निहितार्थ कैरियर सिद्धान्त लिखते हुए बताया गया है कि इसके द्वारा परामर्शियों को पहचाने में सहायता प्राप्त होती है। परामर्शी बार–बार कैरियर परिवर्तित क्यों करता है, के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ लेने के बाद आप लोग सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श की प्रक्रिया के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सके होंगे।

28.7 पारिभाषिक शब्दावली

व्यावसायिक निर्देशन – वह प्रक्रिया है जो व्यक्तियों को उपयुक्त और बुद्धिपूर्ण व्यवसाय चयन करने के लिए उनके मूल्यांकन और वांछित तर्क के आधार पर सहायता देने के लिए विकसित की जाती हैं।

कैरियर विकास – सुपर ने कैरियर के पद का प्रयोग एक व्यक्ति द्वारा अपने पूरे जीवनकाल में एक विद्यार्थी के रूप में व्यय वर्षों और सेवानिवृत्ति के वर्षों में साधारण मुख्य स्थियों के क्रम को वर्णित करने के लिए किया। कैरियर कार्य सम्बन्धी सभी भूमिकाओं को इंगित

करता है, जैसे–विद्यार्थी, कार्यकर्त्ता तथा सेवानिवृत्ति, साथ ही व्यावसायिक, पारिवारिक और सामुदायिक प्रासंगिक क्रियायें।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– व्यावसायिक निर्देशन एवं कैरियर विकास की परिभाषाओं को स्पष्ट कीजिए।

2– सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में कैरियर की योजनाओं में वर्तमान रुचियों पर प्रकाश डालिये।

3– व्यावसायिक विकास की अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।

4– व्यक्तित्व सिद्धान्त पर प्रकाश डालिये।

5– परामर्शदाताओं के निहितार्थ कैरियर सिद्धान्त की व्याख्या कीजिये।

विस्तृत

1– सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों के कार्य संसार की परिवर्तित प्रकृति के बारे में लिखिए।

2– सरकारी एवं गैरसरकारी संगठनों में परामर्श हेतु अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों के बारें में अपना मत प्रस्तुत कीजिए।

28.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013, पेज 95–110

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

MSW - 113
संचार एवं परामर्श

खण्ड

6

परामर्शदाता की समस्यायें एवं आधुनिक आयाम

इकाई 29
परामर्शदाताओं की समकालीन समस्यायें 522

इकाई 30
परामर्श के आधुनिक आयाम 533

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रो0 एम0पी0 दुबे	:	कुलपति–अध्यक्ष

विशेषज्ञ समिति

डॉ0 एम0 एन0 सिंह	:	पूर्व निदेशक समाज–विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 ए0एन0 सिंह	:	विभागाध्यक्ष, समाजकार्य विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 एस0 त्रिपाठी	:	अवकाश प्राप्त, समाज शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 अरविन्द जोशी	:	समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ.प्र. राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

परिमापक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सम्पादक

प्रो0 ए0 बी0 सिंह	:	अवकाश प्राप्त, समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लेखक

डॉ0 राजेश कुशवाहा	:	डॉ0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
डॉ0 विनय मिश्रा	:	डॉ0 राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद

समन्वयक

डॉ0 अलका वर्मा	:	समाज कार्य विभाग, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रकाशक

प्रो0 (डॉ0) जी0एस0 शुक्ल	:	कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध करायी गयी है विश्वविद्यालय इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य–सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

खण्ड परिचय

छः खण्ड – परामर्शदाता की समस्यायें एवं आधुनिक आयाम

संचार एवं परामर्श विषय के इस भाग को दो इकाईयों में विभक्त किया गया है। पहली इकाई परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं पर आधारित है। इस इकाई में परामर्शदाताओं को परामर्श के दौरान आने वाली विभिन्न समस्याओं एवं चुनौतियों के सम्बन्ध में चर्चा की गयी है। इस खण्ड की दूसरी इकाई परामर्श के आधुनिक आयाम पर आधारित है इसमें परामर्श के नवीन तकनीकि एवं उसकी विशेषताओं एवं लाभों के विषय में विस्तृत चर्चा की गयी है।

खण्ड–छः– परामर्शदाता की समस्याये एवं आधुनिक आयाम

इकाई –29, परामर्शदाताओं की समकालीन समस्यायें

29.0 इकाई का उद्देश्य

29.1 परिचय

29.2 परामर्शदाताओं की समकालीन समस्यायें

29.3 परामर्श सेवाओं की स्थिति में सुधार लाने के उपाय

29.4 सार–संक्षेप

29.5 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

29.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

29.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई में परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं के बारे में वर्णन किया गया है। जिसमें बताया गया है कि परामर्शदाताओं को परामर्श देते समय किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– परामर्शदाताओं की समकलीन समस्याओं पर प्रकाश डाल सकेंगे।

2– परामर्श सेवाओं की स्थिति में सुधार लाने के उपायों के बारे लिख सकेंगे।

29.1 परिचय

प्रस्तुत इकाई परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं पर आधारित है। वास्तव में देखा जाए तो परामर्श की प्रक्रिया हमारे देश बहुत आज भी पुरानी नहीं है। जहाँ एक तरफ मनोसामाजिक समस्याओं को लोग दैवीय प्रकोप मानते है वही दूसरी तरफ इन समस्याओं से छूटकारे के लिए वे लोग झाड़–फूक की सहायता लेते है। वास्तव में देखा जाए तो परामर्श लेने के लिए लोग हमारे देश में बहुत ही कम

होते है और जहाँ उत्सुकता उत्पन्न भी होती है वहीं पर संसाधनों के अभाव में वे लोग परामर्शदाताओं के पास तक नहीं पहुँचते।

हमारे देश की व्यवस्था में परामर्शदाताओं के सामने बहुत सी समस्यायें आती है जिनका निदान होना आवश्यक है। यदि परामर्शदाता ही समस्या ग्रस्त हो जायेंगा तो वह परामर्श किस प्रकार प्रदान करेंगा।

इन्हीं समस्याओं को ध्यान रखते हुए प्रस्तुत इकाई की रचना की गयी है जिसके माध्यम से परामर्शदाताओं की समस्याओं की पहचान की जा सके एवं उनके समाधान के लिए प्रयास किया जा सके।

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।

29.2 परामर्शदाताओं की समकालीन समस्यायें

यद्यपि भारत में परामर्श कार्य का श्रीगणेश हो चुका है, किन्तु इसकी प्रगति अत्यन्त अपर्याप्त एवं धीमी है। परामर्श का जो थोड़ा बहुत कार्य हो रहा है उसे भी दोषमुक्त नहीं कहा जा सकता। इसका कारण परामर्श के मार्ग में आने वाली वे अनेक समस्याएँ हैं जिनकी चर्चा नीचे की गयी है–

1– **शिक्षकों का रुढ़िवादी रूख**– हमारे देश में शिक्षा के क्षेत्र में जो लोग प्रवेश करते हैं उनमें से अधिकांश जीवन के अन्य क्षेत्रों के अवसर से वंचित लोग होते हैं। बहुत कम लोग इस प्रकार के होते हैं, जिनकी शिक्षण के क्षेत्र में अपनी रुचि एवं झुकाव होते हैं। परिणामतः कोई भी नवीन एवं रचनात्मक कार्य सौंपे जाने पर वे उसमें अपना उत्साह प्रदर्शित नहीं करते। उनके अध्ययन का ढंग भी (बावजूद प्रशिक्षण के) प्रायः परम्परागत ही रहता है। शिक्षकों के इस रूढ़िवादी रूख के कारण परामर्श कार्य गतिशील नहीं हो पाता।

2– **साधनों का अभाव**–आर्थिक सुविधाओं एवं साधनों की दृष्टि से शिक्षा को हमारे देश में सर्वदा एक उपेक्षित श्रेणी में रखा गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे देश में विकसित देशों जैसी आर्थिक

समृद्धि नहीं हैं, किन्तु जो भी साधन उपलब्ध हैं उनका उचित उपयोग न किये जाने के कारण शिक्षा और परामर्श जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र पिछड़ जाते हैं और तत्सम्बन्धी अधिकांश योजनाएँ मात्र कागजी रिपोर्ट तक रह जाती हैं।

3– विद्यलायों में छात्रों की बढ़ती हुई संख्या– हमारे देश में जनसंख्या की समस्या प्रगति के सभी स्तरों को प्रभावित करती है। विद्यालयों में छात्रों की संख्या उनमें उपलब्ध शैक्षिक सुविधाओं आदि को देखते हुए काफी अधिक होती है। एक कक्षा में इतने अधिक छात्र होते हें कि अध्यापक–छात्र का व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने में कठिनाई होती है और ऐसी स्थिति में वैयक्तिक परामर्श कार्य कठिन हो जाता है।

4– शिक्षकों पर कार्यभार की अधिकता– परामर्श का प्रारम्भिक दायित्व शिक्षक पर होता है किन्तु हमारे देश में कक्षाओं में छात्रों की बहुत अधिक संख्या, रजिस्टर अभिलेख, कापियों को जाँचने सम्बन्धी कार्य, परीक्षा सम्बन्धी कार्य एवं अनेक गौण कार्यों की अधिकता के कारण शिक्षकों पर कार्यभार अधिक रहता है। परिणामतः परामर्श सम्बन्धी दायित्व का निर्वाह करना उनके लिये कठिन हो जाता है।

5– दोषपूर्ण शिक्षा–प्रणाली एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का अभाव– स्वतन्त्रता के लगभग 70 वर्ष बाद भी हमारे देश की शिक्षा प्रणाली बहुत कुछ पाश्चात्य देशों के अनुकरण पर चल रही है। हमारे देश की परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुसार उसमें अपेक्षित परिवर्तन नहीं हो सके हैं। परामर्श का कार्य तभी सफल हो सकता है जब छात्रों की प्रतिभा एवं रुचि के अनुकूल व्यावसायिक एवं बहुमुखी पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाये तथा विषयों के स्वरूप का निर्धारण उसी प्रकार किया जाये।

6– परामर्श के विभिन्न अभिकरणों के बीच तालमेल का अभाव–परामर्श के विभिन्न अभिकरणों के बीच समुचित तालमेल

स्थापित करने की ओर ध्यान नहीं दिया गया है। परामर्श की जो थोड़ी–बहुत सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं, तालमेल के अभाव में उनका उपयोग नहीं हो पाता। घर, विद्यालय, मनोचिकित्सा एवं राज्य निर्देशन ब्यूरो आदि अनेक परामर्श अभिकरणों के कार्यों में सहयोग एवं आदान–प्रदान के अभाव में परामर्श की समुचित प्रगति सम्भव नहीं हो पाती हैं।

7– परामर्श के क्षेत्र में मानदण्डों एवं परम्पराओं का अभाव– जैसा कि हम जानते हैं, हमारे देश में परामर्श के क्षेत्र में अभी तक बहुत कम कार्य हो पाया है, जिसके कारण देशगत आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों के सन्दर्भ में परामर्श के व्यवस्थित मानदण्ड एवं परम्पराएँ नहीं बन सकी हैं। इन मानदण्डों एवं निश्चित स्वरूपों के अभाव में परामर्श कार्यकर्ता दिशाहीनता का अनुभव करते हैं।

8– व्यावसायिक सूचना के संग्रह एवं विश्लेषण के लिये संगठित व्यवस्था का अभाव– परामर्श कार्य में व्यावसायिक सूचना के महत्व से हम परिचित ही हैं। व्यावसायिक सूचना व्यावसायिक परामर्श की आधारशिला है। परामर्श कर्मचारी एवं परामर्श के इच्छुक व्यक्तियों को समुचित एवं व्यवस्थित व्यावसायिक सूचनाओं के सुलभ न होने के कारण परामर्श का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता। हमारे देश में सूचनाओं के इकट्ठा करने एवं विश्लेषण करने की व्यापक एवं संगठित व्यवस्था अभी तक नहीं स्थापित हो सकी है जिसके कारण व्यावसायिक परामर्श कार्य अधूरा एवं प्रभावहीन रह जाता है।

9– परामर्श के क्षेत्र में शोध–कार्य की कमी– नई परिस्थितियों से जन्म लेने वाली अनेक नई समस्याओं का समाधान प्राप्त करने में शोध–कार्य बड़ा उपयोगी होता है। पुराने एवं परम्परागत हल अनुपयुक्त प्रतीत होने लगते हैं। शोध–कार्य के द्वारा विभिन्न नये तथ्य एवं अनुभव प्रकाश में आते हैं। दुर्भाग्य की बात है कि परामर्श जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र

में हमारे विश्वविद्यालयों में शोध–कार्य नगण्य रहा है। फलस्वरूप, परामर्श प्रक्रम को देशकाल के अनुरूप ढालने में कठिनाई आती है।

10– मानक परीक्षणों का अभाव–परामर्श कार्य के लिये मूल्यांकन की अनेक विधियों का सहारा लेना पड़ता है। अभिरुचि, योग्यता एवं उपलब्धियों आदि के मूल्यांकन के लिये हमारे देश में मानक परीक्षणों का नितान्त अभाव है। इस क्षेत्र में योग्य व्यक्तियों द्वारा शोध कार्य किये जाने एवं कठिन परिश्रम से ही उपयुक्त परीक्षण मालाओं का निर्माण किया जा सकता है। खेद की बात है कि इस क्षेत्र में बहुत ही सीमित कार्य हो रहा है जिसके कारण परामर्श का कार्य सुचारू रूप से नहीं हो पा रहा है।

11– देश में बेरोजगारी की स्थिति एवं अवसरों का अभाव– व्यावसायिक परामर्श का आदर्श रूप यह है कि व्यक्ति की योग्यता, अभिरुचि एवं उपलब्धियों को दृष्टि में रखकर उसके अनुकूल व्यवसाय में प्रवेश प्राप्त करने में सहायता की जाये, किन्तु हमारे देश में रोजगार हेतु प्राप्त अवसरों की तुलना में शिक्षित एवं अशिक्षित बेरोजगारों की संख्या बहुत बड़ी है। इस असन्तुलन के कारण व्यावसायिक परामर्श का लक्ष्य पूरा नहीं हो पाता और व्यक्ति न चाहते हुए भी व्यवसाय या रोजगार में प्रवेश ले लेते हैं। अतः उपयुक्त रोजगार एवं अवसरों का अभाव परामर्श के मार्ग की यह गम्भीर समस्या है।

12– लोगों के जीवन–यापन के स्तरों में असमानता– अमीर और गरीब के बीच बढ़ती हुई खाई भी निर्देशन के कार्य बाधक है परामर्श का लक्ष्य कि 'सभी को शिक्षा' देश में जीवन–यापन के स्तरों असमानता के कारण प्राप्त नहीं हो पा रहा है। सिद्धान्तः शिक्षा संस्थायें स्थानीय संगठनों द्वारा जनकल्याण की दृष्टि से चलाये जाते हैं। परन्तु व्यवहारिकता में इन विद्यालयों की स्थिति साधन और शैक्षिक सुविधाओं की दृष्टि से अत्यन्त हीन होती है। इसके अतिरिक्त, यह भी सच्चाई है कि अधिकांश गरीब व्यक्तियों के बच्चे परिवार के लिये कुछ कमाने के

कार्य में लग जाते हैं और वे विद्यालय भी नहीं जा पाते। दूसरी ओर सम्पन्न परिवारों के बच्चों की शिक्षा पर एक बहुत बड़ी धनराशि खर्च की जाती है। ये अंग्रेजी माध्यम के पब्लिक स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करते हैं और शिक्षा समाप्त कर अच्छी सरकारी नौकरियाँ हथियाने के योग्य बन जाते हैं। परामर्श के कार्य में तब तक तेजी एवं उपयुक्तता लाना कठिन है जब तक शिक्षा व्यवस्था में एकरूपता नहीं आ पाती। हमारे देश में परामर्श के क्षेत्र में यह भी एक महत्वपूर्ण समस्या है।

29.3 परामर्श सेवाओं की स्थिति में सुधार लाने के उपाय

हमने इससे पूर्व भारत में परामर्श की समस्याओं पर विचार किया। देश की परिस्थितियों एवं साधनों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इन समस्याओं का समाधान खोजना भी आवश्यक है। इस सम्बन्ध में शिक्षा आयोग (1964–66) के निर्देशन एवं परामर्श सम्बन्धी सुझाव, के पृष्ठिभूमि में कुछ महत्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। उपायों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता हैं– जो निम्नलिखित प्रस्तुत किये जा रहे हैं:

1– **परामर्श के प्रति जागरूकता** – अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को निर्देशनाभिमुख बनाया जाये। शिक्षकों में परामर्श सम्बन्धी दृष्टि विकसित की जाये।

2– **व्यावसायिक मार्गदर्शन की आवश्यकता**– छात्रों को माध्यमिक शिक्षा पूरी करने से पूर्व व्यावसायिक मार्गदर्शन की व्यवस्था की जाये। माध्यमिक स्तर के बाद अनेक छात्र अध्ययन छोड़ देते हैं एवं व्यवसाय की तलाश में प्रवृत्त होते हैं।

3– **परामर्श अवबोध विकसित करना** – समाज एवं विद्यालय के लोगों के लिये परामर्श सम्बन्धी समझ विकसित करने के उद्देश्य से निर्देशन कार्यक्रमों का संगठन किया जाये।

4– **विस्तृत पाठ्यक्रम एवं शोध**– विश्वविद्यालय में परामर्श सम्बन्धी विशेष विस्तृत पाठ्यक्रम एवं शोधकार्य प्रारम्भ किया जाये। हमारे देश में परामर्श के प्रशिक्षित कार्यकत्ताओं का अत्यन्त अभाव है।

अतः विश्वविद्यालय अथवा प्रशिक्षण कॉलेजों में परामर्श कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाये।

5– **विद्यालय पाठ्यक्रम में कैरियर सम्बंधी विषयों को स्थान**– परामर्श के ठोस कार्य के लिये विद्यालयों के पाठ्यक्रम में व्यावसायिक सूचना को एक व्यवस्थित एवं पारदर्शी विषय के रूप में प्रस्तुत किया जाये।

6– **परामर्श–अभिकरणों में सामंजस्य**– परामर्श के विभिन्न अभिकरणों में समुचित तालमेल लाने के लिये परामर्श का व्यापक संगठन स्थापित किया जाये तथा अन्य अभिकरणों को उससे सम्बद्ध किया जाये।

7– **साधन जुटाना**– शासन को परामर्श के महत्व तथा आवश्यकता को गम्भीरता से अनुभव करना चाहिये तथा आवश्यक साधन एवं सुविधाएँ जुटाने में सहायता करनी चाहिये।

इस प्रकार भारत में परामर्श की समुचित प्रगति के लिये अनेक कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। परामर्श की समस्याओं को दृष्टि में रखकर, देश में परामर्श कार्य की समुचित योजना तैयार की जानी चाहिये। साधनों एवं सुविधाओं का अभाव, कार्यकर्त्ताओं की सीमित संख्या एवं अन्य समस्याओं के होते हुए भी निराश होने की आवश्यकता नहीं हैं, अपितु परामर्श के महत्व को देखते हुए अपनी परिस्थितियों में जो भी अच्छे–से अच्छा कार्य हो, उसे किया जा सकता है। उसके लिये हमारे .....

परामर्श में विवादित प्रश्न – विश्व में परामर्श की सर्वाधिक लोकप्रियता संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप के कुछ देशों में पायी जाती हैं। वहाँ के लोगों ने परामर्श के महत्व तथा उपयोगिता को समझा है। लेकिन हमारे देश में जातिवाद, लोगों की झूठी शान, अशिक्षा, रुढ़िवादिता, सामाजिक दम्भ, परम्पराएँ, समाज में स्त्रियों की हीन दशा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव, आदि ऐसे कारक हैं जिन्होंने

देश में परामर्श कार्यक्रम के विस्तार तथा सफल होने में अवरोध खड़े किये हैं। आज की स्थिति यह है कि परामर्श आन्दोलन भारत में उतना सफल नहीं हो पा रहा है जितना कि उसे आवश्यकता है। परामर्श के प्रचार व प्रसार के समय से ही देश में ऐसे कुछ विचारणीय प्रश्न उठते रहते हैं जिनके कारण परामर्श आन्दोलन में आशाजनक प्रगति नहीं हो पा रही है। ये विचारणीय प्रश्न निम्नलिखित है:

1– परामर्श को शिक्षा के किस स्तर से प्रारम्भ किया जाये?

2– परामर्श के तात्कालिक और अन्तिम उद्देश्य क्या होने चाहिये?

3– क्या परामर्श का कार्य व्यवसाय के चयन में अधिक बल देना मात्र है?

4– क्या परामर्श सम्बंधित विषयों का अध्यापन आशाजनक विकास की ओर अग्रसार है?

5– विदेशी परीक्षणों के परिणाम क्या विश्वसनीय होते है और उन्हें अपने देश में क्या पूर्णतया व्यवहारिक बनाये जा सकते हैं?

6– कुछ शब्दों का प्रयोग जैसे निर्देशन और परामर्श, परामर्श कार्यकता और उपबोधक, निर्देशन और कर्मचारी प्रेरणाजनक सेवाओं को एक ही अर्थ के रूप में प्रयोग करना क्या उचित है?

7– परामर्श एवं निर्देशन पाठ्यक्रमों के अध्यापन कार्य के दौरान में छात्र मूल्यांकन की उपयुक्त विधियॉ क्या हो सकती है?

8– परामर्श एवं निर्देशन पाठ्यक्रमों में अध्ययनरत छात्रों को व्यवहारिक क्षेत्रीय प्रशिक्षण दिलाने हेतु उपयुक्त संगठन क्या उपलब्ध हैं?

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं के बारे में लिखिये।

2. परामर्श सेवाओं की स्थिति में सुधार लाने के उपाय लिखिए।

29.4 सार–संक्षेप

परामर्श के क्षेत्र में हमारा देश विकसित देशों की तुलना में काफी पीछे हैं। स्थिति में सुधार लोने के लिये 1953 के माध्यम शिक्षा–आयोग ने कुछ महत्वपूर्ण सुझाब प्रस्तुत किये। इनमें से कुछ सुझावों पर सरकार द्वारा अमल भी किया गया।

1964 में डॉ० दौलतसिंह कोठारी की अध्यक्षता में जिस शिक्षा–आयोग की स्थापना की गयी उसने निर्देशन के सभी पक्षों को शामिल करते हुए निर्देशन एवं परामर्श के विकास का एक व्यापक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। आयोग ने बताया कि निर्दशन एवं परामर्श का क्षेत्र व्यापक है, वह समायोजन तक ही अपने को सीमित नहीं रखता, अपितु बालक के विकास में भी सहायता करता है।

आयोग के विचार में निर्देशन एवं परामर्श का प्रारम्भ स्तर से ही होना चाहिये। इस हेतु निर्देशन–सेवा का सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण में सम्मिलित किया जाना चाहिये। बालकों के लिये ऐसा साहित्य सभी क्षेत्रीय भाषाओं में तैयार किया जाये, जो उन्हें व्यवसाय की ओर उन्तुख करें। माध्यमिक स्तर पर किशोर बालकों की समस्याओं एवं उनकी योग्यता के विकास पर निर्देशक को ध्यान देना चाहिये। मुदालियर कमीशन की सिफारिशों को ध्यान में रखकर तृतीय पंचवर्षीय योजना में निर्देशन–कार्यक्रम को केन्द्र द्वारा परिचालित किया गया। माध्यमिक स्तर पर निर्देशन के विस्तार के लिये आयोग ने निर्देशन कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने का सुझाव दिया। इसके अतिरिक्त आयोग ने कुछ अन्य सामान्य प्रस्ताव भी पेश किये थे जिनमें निर्देशन के विभिन्न अभिकरणों के कार्यों में तालमेल स्थापित करने, उन्हें द्वैधता से बचाने, परामर्श–सम्बन्धी साहित्य तैयार करने, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का विकास करने एवं परामर्श–सम्बन्धी शोधकार्य प्रारम्भ करने, इत्यादि पर बल प्रदान किया था।

29.5 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्शदाताओं की समस्यायें– परामर्शदाताओं की समस्याओं से तात्पर्य उस परिस्थितियों से है जो परामर्शदाताओं को उचित रूप कार्य करने में बाधा उत्पन्न करती हैं।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– शिक्षकों को रूढ़िवादी रूख, साधनोंका अभाव एवं विद्यालयों में बढ़ती हुई छात्रों की संख्या पर टिप्पणी लिखिए।

2– परामर्शदाताओं की किन्ही पांच समस्याओं का उल्लेख कीजिए।

3– परामर्श सेवाओं की सिथति में सुधार लाने के किन्ही पांच उपायों का वर्णन कीजिए।

विस्तृत

1– परामर्शदाताओं की समकालीन समस्याओं पर एक निबन्ध लिखिए।

2– भारत में परामर्श सेवाओं की स्थिति में सुधार लाने के उपायों की चर्चा कीजिए।

29.6 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15, पेज 380–381

खण्ड–छः– परामर्शदाता की समस्यायें एवं आधुनिक आयाम

इकाई –30, परामर्श के आधुनिक आयाम

30.0 इकाई का उद्देश्य

30.1 परिचय

30.2 भारत में परामर्श की आवश्यकताओं और उपलब्ध सेवाओं का स्वरूप

30.3 परामर्श के आधुनिक आयाम

30.4 परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्रविधियां

30.5 स्वास्थ्य एवं मनोपचार की योग पद्धति

30.6 सार–संक्षेप

30.7 पारिभाषिक शब्दावली

अभ्यास प्रश्न– लघु, विस्तृत

30.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

30.0 इकाई का उद्देश्य–

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के आधुनिक आयामों पर प्रकाश डाला गया है जिसमें बताया गया है कि परामर्श के कौन–कौन से आयाम होते है। प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग अग्रलिखित के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे–

1– भारत में परामर्श की आवश्यकताओं एवं उपलब्ध सेवाओं के स्वरूप की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2– परामर्श के आधुनिक आयाम पर प्रकाश डाल सकेंगे।

3– परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्रविधियों की जानकारी कर सकेंगे।

4– स्वाथ्य एवं मनोपचार की योग पद्धति के बारे में लिख सकेंगे।

30.1 परिचय

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व, मानसिक विकार एवं उसके लिए उपयुक्त परामर्श मनोपचार पद्धति को उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक तथा आर्थिक संदर्भों से अलग रखकर उपयुक्त ढंग से नहीं समझा जा सकता है। व्यक्ति के संदर्भ में संज्ञानात्मक सृष्टि की रचना में महत्वपूर्ण योगदान होता है। व्यक्ति के संदर्भों के अनुरूप ही उसका जीवन दर्शन विकसित होता है। जीवन और परिवेश में घटित होने वाली घटनाओं को व्यक्ति अपने जीवन दर्शन एवं दृष्टिकोण के अनुरूप अर्थ प्रदान करता है। व्यक्ति की आशाओं, अभिलाषाओं एवं जीवन में व्याप्त द्वन्दों को व्यक्ति के जीवन दर्शन के साथ घनिष्ट सम्बन्ध होता है। विभिन्न व्यक्तियों के लिए जीवन में घटित होने वाली घटनाओं को व्यक्ति अपने जीवन दर्शन एवं दृष्टिकोण के अनुरूप अर्थ प्रदान करता है। व्यक्ति की आशाओं, अभिलाषाओं एवं जीवन में व्याप्त द्वन्दों का व्यक्ति के जीवन दर्शन के साथ घनिष्ट सम्बन्ध होता है। विभिन्न व्यक्तियों के लिए जीवन में घटित होने वाली घटनाओं के निजी अर्थ होते है जो उसके संदर्भो द्वारा प्रभावित रहते हैं। परामर्शन की विविध प्रणालियाँ व्यक्ति के संज्ञान को पुनर्गठित करने का लक्ष्य रखती हैं। स्वभाविक रूप से संज्ञानात्मक संगठन को समझने एवं पुर्नगठित करने के लिए उसके संदर्भ को ध्यान में रखा जाना चाहिए। भारत एक व्यापक रूप में फैला हआ भूक्षेत्र होने के अतिरिक्त प्राचीन संस्कृति, धर्मपरायणता, धार्मिक विश्वासों की विविधता, लम्बे इतिहास, विकास की झलक के साथ सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक पिछड़ेपन के प्रभाव का चित्र प्रस्तुत करता है। परामर्शन कार्यक्रम के गठन और परामर्श प्रविधि के चयन में इन कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

भारतीय संदर्भ में परामर्श के तीन उद्देश्य हो सकते हैं– प्रथम, यह विचार करना कि, भारत में लोगों की समस्याओं के प्रमुख रूप, उनकी आवृत्ति और परामर्शन सम्बन्ध आवश्यकताओं का रूप कैसा है?

यह भी विचारणीय है कि, लोगों की परामर्शन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपलब्ध सेवाओं का स्वरूप कैसा है? दूसरा विचारणीय विषय यह है कि, भारतीय जीवन दर्शन, जीवन शैली, परिवेशीय संदर्भ में पाश्चात्य, आधुनिक, वैज्ञानिक चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में विकसित परामर्श उपागम और उनकी प्रविधियाँ किस सीमा तक उपयोगी हैं? परामर्श मनोविज्ञान की आधुनिक प्रविधियाँ जिनका विकास पाश्चात्य सभ्यता के संदर्भों में किया गया है, जिनकी वैधता और उपयोगिता के सम्बन्ध में अमेरिका और यूरोपीय देशों में सम्पन्न किये गये शोध अध्ययनों द्वारा साक्ष्य प्राप्त हुए हैं, भारतीय संदर्भ में यथावत उपयेागी सिद्ध नहीं हो सकते हैं। भारतीय संदर्भ में उक्त उपागमों एवं उनकी प्रविधियों को सतर्कतापूर्वक प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इस इकाई का तीसरा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न भारतीय संदर्भों में विकसित वैकल्पिक प्रणालियों के बारे में विचार करना है। भारतीय चिंतन और कष्ट निवारण की पद्धतियों का पुराना इतिहास है। सभी पद्धतियों की उपयोगिता निर्विवाद नहीं हो सकती है किन्तु अनेक पद्धतियों के महत्व और उपयोगिता को आज समूचे विश्व में स्वीकार किया जा रहा है।

30.2 भारत में परामर्श की आवश्यकताओं और उपलब्ध सेवाओं का स्वरूप

परामर्श सम्बन्धी आवश्यकताओं को (1) शैक्षिक, व्यावसायिक, उपव्यावसायिक निर्देश से जुड़ी आवश्यकताओं, (2) विशिष्ट मनोविकारों, तथा (3) अन्य विशिष्ट आवश्यकताओं के रूप में देखा जा सकता है।

अनेक दशकों से निर्देशन एवं परामर्श का संप्रत्यय और प्रविशियों के अस्तित्व में होने के बाद भी भारतीय विद्यालयों में निर्देशन एवं परामर्श सेवाएँ अंगीकृत नहीं हो पायी हैं। इस उपेक्षा का मूल्य शिक्षा की गुणवत्ता के अतिरिक्त बच्चों, किशोरों और नवयुवकों में आचरण, व्यवहार और मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के रूप में देखा जा

सकता है। विद्यालयों, शिक्षा क्षेत्र के प्रबंधकों/प्रशासकों का ध्यान संख्यात्मक पक्ष पर केन्द्रित होने के कारण, संसाधनों के अभाव एवं आर्थिक दृष्अि से लाभ–हानि या लागत–लाभ के रूप में मूल्यांकन किये जाने के कारण परामर्श की इस रूप में उपयोगिता महानगरीय, धनिक वर्ग के संचालित विद्यालयों तक ही सीमित रह जाती है।

भारतीय जनसमूह में मनस्ताप, मनोविक्षिप्तता और मनोदैहिक समस्याओं के घटनाक्रम के बारे में अनेक सर्वेक्षण अध्ययनों द्वारा जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं। मनोदैहिक समस्याओं में वृद्धि के संकेत प्राप्त हो रहे हैं। कुछ परामर्शदाताओं का मानना है कि प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और चिकित्सालयों के बहिरंग विभाग में उपचार के लिए आने वाले या दवा की दुकानों का क्रय करने वाले पीड़ित व्यक्तियों में से बहुसंख्यक (आँकड़े 16 से 35 प्रतिशत तक फैले हुए हैं) लोगों को किसी प्रकार की दवा की आवश्यकता नहीं होती है। भारत जैसे विकासशील देशों में मनोवैज्ञानिक समस्याओं की दैहिक पीड़ा के रूप में अभिव्यक्ति एक सामान्य विशेषता हैं। प्रमुख समस्याएँ दर्द, पेट, सीना, सिर चकराना, कमचोरी, थकान, अनिद्रा, भूख की कमी और सेक्स सम्बन्धी कमजोरी आदि के रूप में पायी जाती है। गृहणियों में ऐसी समस्याएँ अधिक पायी जाती हैं। जैसे लोगों की पीड़ा को प्रकार्यात्मक पीड़ा कहा जाता है।

हिस्टीरिया जो कि पश्चिम में अब कदाचित ही देखा जाता है, की घटना अभी भी भारत के कुल रोगियों में 10 से 15 प्रतिशत तक पायी जाती हैं। मनस्ताप के अन्य रूपों में चिन्ता मनस्ताप, मनोग्रस्तता – बाध्यता प्रमुख हैं।

कुछ संस्कृति विशिष्ट संलक्षणों का वर्णन देखा गया है जिनमें धातु, कोरों और झिनझिनी प्रमुख हैं। सिंह ने पुरुष नपुंसकता की शिकायत वाले व्यक्तियों में से 62 प्रतिशत में 'धातु' की हानि की शिकायत पायी। यह बताने पर भी कि वीर्य हानि समस्या नहीं है व्यक्ति

को प्रायः लाभ नहीं हो पाता है। नन्दी एवं अन्य ने झिनझिनी' की घटना का वर्णन किया है जिसमें व्यक्ति में अचानक गूंगापन, पक्षघात, असहायता, भय से बेहोश होने जैसी समस्याएँ प्रकट होती हैं। इन 'झिनझिनी' को लोग प्रायः बुरी आत्माओं का प्रभाव मानते हुऐ पाये गये हैं। चौधरी एवं अन्य ने 'कोरो' संलक्षण का अध्ययन किया जिसमें शिश्न स्तम्भन शिश्न सिकुड़ने, महिलाओं में लेबिया या स्तन सिकुड़ने और उसके कारण अंततः मृत्यु हो जाने की आशंका पायी जाती है। इस घटना की शिकायत आसाम और बंगाल के क्षेत्रों में पायी गई।

मेहता एवं अन्य ने तमिलनाडु में प्रति 100 व्यक्तियों में 14.1 घटना मनोविक्षिप्तता की पायी जबकि पदमावती एवं अन्य के अध्ययन में प्रति 1000 की जनसंख्या में 2.49 मनोविदलिता तथा मनोविक्षिप्तता 5.6 प्रति 1000 की दर से पायी गयी। पंजाब में प्रति 1000 भवात्मक विकास 49.1 में पाया गया।

महिलाओं, गरीब लोगों, ग्रामीण और गन्दी बस्तियों में रहने वालों में इन समस्याओं की आवृत्ति अधिक पायी गयी है।

युवकों में मनोविकार अधिक पाया जाताा है किन्तु बच्चों में संवेदनशीलता, ध्यान आकृष्ट करने एवं सक्रियता की समस्या और चारित्रिक समस्याएँ देखी जाती हैं। महानगरों में जहाँ बच्चों परे शिक्षा सम्बन्धी अच्छे परिणाम हेतु दबाव डाला जाता है और माता–पिताा समुचित समय देने की स्थिति में नहीं होते हैं। वहाँ बच्चों में ADHD के अतिरिक्त तनाव की दैहिक पीड़ा के रूप में अभिव्यक्ति अधिक पायी जाती है। वृद्धजनों में भावात्मक समस्याएँ पायी गयी हैं। वृद्ध लोगों का जनसंख्या में अनुपात बढ़ रहा है तथा छोटे परिवारों की कल्पना में वृद्धि के साथ–साथ वृद्धजनों की उपेक्षा की घटनाएँ बढ़ रही हैं।

उपर्युक्त विशिष्ट समस्याओं के अतिरिक्त औषधि व्यसन, मद्यपान, प्रजनन स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ (HIV/AIDS) किशोर एवं युवकों के मध्य परामर्शन अपने नये आयाम के रूप में प्रकट हो रही हैं। पारस्परिक

होने के बावजूद युवकों में आधुनिकता, यौनिक स्वच्छन्दता एवं भौतिकवादी प्रतिस्पर्धा में वृद्धि देखी जा सकती हैं। जिसके फलस्वरूप अनेक प्रकार की चिन्ताएँ, भय, तनाव, पारिवारिक जीवन में कलह, विवाह विच्छेद जैसी समस्याओं के घटनाक्रम में वृद्धि का अनुभव किया जा रहा है।

भारतीय समाज में पुत्र वरीयता और पुत्री उपेक्षा जैसी समस्या सर्वत्र देखी जा सकती है। इस विभेद के कारण मादा भ्रूण हत्या, कन्या हत्या और दहेज हत्या की शिकायत सभी जगहों पर सुनी जाती है। 2001 की जनगणना में 0–5 आयु वर्ग में बालिकाओं की संख्या में (विशेषकर उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, दिल्ली राज्यों में) बहुत कमी आ गयी है। यह समस्या आने वाले 10–15 वर्षों में अनेक नयी व्यवहार सम्बन्धी समस्याओं, नारी असुरक्षा, युवकों का विवाह न हो पाना, अनुचित यौन सम्बन्धों में वृद्धि के रूप में प्रकट हो सकती है। बालिकाओं के लिए घर भी पूर्णतः सुरक्षित नहीं रह गया है, ऐसी शिकायतें समाचार पत्रों निरन्तर में देखी जा रही हैं।

यद्यपि मनोविकृतियाँ एवं समाज मनोवैज्ञानिक व्यवहारात्मक समस्याएँ विविध रूपों में विभिन्न आयु वर्गों एवं सामाजिक/सामुदायिक वर्गों के व्यापक रूप में प्रकट होती हुई प्रायी गयी हैं किन्तु इनके समाधान के लिए न तो लोगों में आवश्यक जागरूकता देखी जाती है और न ही वांछित परामर्शन सेवाओं की उपलब्धता ही पायी जाती है। मालविका कपूर 2002 ने सूचनाओं के अभाव में या लांछना के आधार पर मानसिक समस्याओं के प्रति स्थापित अभिवृत्तियों में परिवर्तन की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए सामुदायिक स्तर पर यथार्थवादी, मानवीय एवं सहिष्णुतापूर्ण ऐसी अभिवृत्तियों को विकसित किये जाने की आवश्यकता पर बल दिया हैं जिसमें समस्याग्रस्त व्यक्तियों/मनोरोगियों तथा उनके परिवार द्वारा अनुभव की जा रही समस्या की तीव्रता का ध्यान रखा गया हो। गुप्ता एवं अन्य के अध्ययन द्वारा ज्ञात हुआ कि

सामान्य चिकित्सा की दृष्टि में मानसिक समस्याओं को आनुवांशिक तथा तनाव की दशा में सामान्य व्यक्तियों में भी प्रकट हो सकने वाला बताया गया किन्तु समाज में इनके प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति का अभाव पाया गया है।

मानसिक समस्याओं के बारे में उपयुक्त दृष्टिकोण आवश्यक है किन्तु यह अपने आप में पर्याप्त नहीं हो सकता है। मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता, किन्तु उपलब्धता का अभाव परामर्शदाताओं एवं मनोवैज्ञानिकों द्वारा अनुभव किया जा रहा है। मेहता जोसेफ एवं वर्जीस ने प्राथमिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को (अ) मनोरोगों के परिहार के लिए शिक्षित करने एवं मानसिक स्वास्थ्य के आधारों को मजबूत करने (ब) मनोवैज्ञानिक समस्याओं की पहचान करने (स) समप्रण के मानदण्डों को समझने की क्षमता और (द) एक संसाधन के रूप में कार्य कर सकने योग्य बनाने के लिए प्रशिक्षित किये जाने की आवश्यकता को रेखांकित किया है। नारायण रेड्डी एवं अन्य ने मानसिक स्वास्थ्य सेवा पदान करने के लिए मुख्य चिकित्सालयों के चतुर्दिक क्लीनिक स्थापित भी किये। कुल मिलाकर भारत में मनोरोगियों की बड़ी संख्या के अनुपात में मनोचिकित्सकों का अभाव है। इसलिए नारायण रेड्डी, चन्नावसन्ना ओर श्रीनिवासमूर्ति ने स्वास्थ्य–व्यवस्था से जुड़े लोगों को प्रशिक्षित करने की आवश्यकता पर बल दिया हैं। मालविका कपूर ने आम लोगों एवं अध्यापकों को इस दृष्टि से प्रशिक्षित करने पर बल दिया है। वस्तुतः भारत में मनोचिकित्सकीय सेवाओं का अभाव है। मनोविज्ञान के अध्यापकों एवं विद्यार्थियों का विशेष उत्तरदायित्व है कि वे मानिसक विकृतियों से बचाव और मानसिक स्वास्थ्य के विकास के लिए अपनी समझ का उपयोग करें इतने बड़े अल्प–शिक्षित, अल्प–विकसित राष्ट्र में हमें बहुत कुछ अपने स्तर से करने की आवश्यकता है। राय एवं अन्य ने प्राथमिक विद्यालय के स्तर पर अध्यापकों को प्रेरित करके अध्यापकों में बच्चा को सुनने की प्रवृत्ति अपनाने के लिए विगत बारह वर्षो से कार्य

किया है। इस उपागम द्वारा सभी बच्चों के लिए न्यूनतम अल्पतम मानसिक स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराये जाने के लिए प्रस्तुत किया गया है। इस मॉडल के दो मुख्य तत्व हैं – (1) सक्रियातापूर्वक एवं रुचिपूर्वक बच्चों को सुनना तथा अनुचित अवधारणाओं को चुनौती देना, एवं (2) बच्चों में स्वयं के प्रति तथा परिवेश के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करना। ऐसा करने के लिए उपलब्ध संसाधन का अच्छा उपयोग किया जाना चाहिए। यह अनुभव किया गया है कि आज के एकाकी परिवारों में ऐसे लोगों का अभाव है जिनके साथ बच्चे बातचीत कर सके, उन्हें अपना समय दे सके। ऐसे बच्चों को विद्यालय प्रांगण में अध्यापक या अन्य श्रोताओं की आवश्यकता होती है। राय ने यह विचार व्यक्त किया है कि यदि विद्यालयों तथा सेवानिवृत्ति व्यक्तियों के मध्य सहयोग स्थापित किया जाय तो बच्चों एवं वृद्धों को सांवेगिक अभिव्यक्ति प्राप्त होने के अतिरिक्त समाज की अनेक समस्याओं के समाधान में भी सहायता की प्राप्ति हो सकती है।

30.3 परामर्श के आधुनिक आयाम

मनोवश्लेषणात्मक उपागम के विकास के लिए पिछले लगभग 100 वर्षो में अनगिनत उपागमों एवं प्रक्रियाओं का विकास हुआ है। व्यक्ति की समस्याओं और उसके समाधान में संज्ञानात्मक संरचनाओं एवं शैलियों के महत्व को अनेक उपागमों में स्वीकार किया जाता है तथा व्यक्ति की संज्ञानात्मक शैलियों, रुढ़ियों, पूर्वाग्रहों, अपेक्षाओं, जीवन शैली, मूल्यों आदि का व्यक्ति की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्वीकार किया जाता है। इसलिए अनेक परामर्शदाताओं को पश्चिमी संदर्भो में विकसित उपागमों और उनकी प्रविधियों की भारतीय संदर्भ में वैधता एवं उपयोगिता पर संदेह है, किन्तु प्रभु और शामसुन्दर ने भारतीय क्लायंट सेवार्थियों के लिए तथा मनोचिकित्सकीय प्रशिक्षण के लिए पाश्चात्य उपागमों की उपयोगिता का पक्ष लेते हुए बताया है कि संक्रमणशील समाज के आधुनिक वर्ग के लिए, जहाँ मिश्रित मूल्य

एवं व्यवहार का प्रचलन है, वे विशेष रूप में उपयेागी है। यद्यपि अग्रवाल यह विचार प्रकट करते हैं कि परामर्शी और परामर्शदाता की पृष्ठभूमि में अन्तर के कारण लाभ प्राप्ति में कठिनाई आती है किन्तु हॉच का कथन है कि दोनों परामर्शी एवं परामर्शदाता के बीच प्रकट अन्तराल मात्र एक भ्रम है। हॉच ने परामर्शियों एवं परामर्शदाताओं क्लायंट के मध्य अनेक समानताओं के आधार पर यह विचार प्रकट किया है कि वस्तुतः दोनों के मध्य सांस्कृतिक सहभागिता के अनेक स्थित आधार होते हैं।

मालविका कपूर का विचार है कि मनोचिकित्सकीय शोध को मनोचिकित्सकीय प्रक्रिया के सभी पक्षों– क्लायंट, परामर्शदाता, प्रविधियों और परिस्थितियों, पर ध्यान देना चाहिए। किसी संदर्भ विशेष के लिए उपयुक्त प्रविधियों का अन्वेषण किया जाना महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है किन्तु हमें यह सतर्कता भी बरतनी होगी कि देशज सम्प्रत्ययों एवं प्रविधियों के नाम पर अनुचित, अनुपयुक्त, अवैज्ञानिक प्रविधियाँ स्थापित न हो जाये तथा कोई उपयुक्त प्रविधि मात्र इस कारण से नकार न दी जाय कि उसका विकास दूसरे सांस्कृतिक संदर्भों में हुआ है। अधिक उपयुक्त यह होगा कि शोध कार्य में तीव्रता लाकर वैज्ञानिक रूप में वैध सिद्ध हुई विधियों में आवश्यकतानुसार अनुकूलन एवं परिमार्जन के तत्व सम्मिलित किये जाएँ।

30.4 परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्राविधियां

मनोविकारों, व्यवहारगत समस्याओं एवं जीवन में प्रायः घटित होने वाली सामान्य समस्याओं के समाधान के लिए; तथा मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक, नैतिक स्वास्थ्य के विकास हेतु अर्थात् व्यक्ति के समग्र/सर्वांगीण स्वास्थ्य के विकास के लिए समूची दुनिया में आज वैकल्पिक पद्धतियों की खोज की जा रही है। मनोपचार की प्रचलित पद्धतियों की अनेक सीमाएँ हैं। भारत में अनेक प्रविधियाँ प्रचलित रहीं हैं जिनमें से अनेक रूढ़िवादी, अतार्किक, असंगत, अनुपयुक्त एवं लाभ

की दृष्टि से अत्यन्त संदिग्ध प्रतीत होती है किन्तु इनमें से कुछ, प्रणालियों के महत्व एवं उपयोगिता के वैज्ञानिक साक्ष्य प्राप्त होने के पश्चात उनकी स्वीकृति सर्वत्र देखी जा सकती है। भारतीय संदर्भ में विकसित उक्त वैकल्पिक प्रणालियाँ आज अत्यन्त प्रचलित प्रविधियों की श्रेणी में सम्मिलित हो गयी हैं। स्वास्थ्य के प्रति भारतीय दृष्टिकोणों का उद्देश्य सदैव ही समग्रवादी या सर्वांगवादी रहा हैं। भारतीय उपागमों का बाल रोग के उपचार के साथ–साथ व्यक्ति के सम्पूर्ण स्वास्थ्य के विकास पर भी ध्यान होता रहा है। इसलिए ही भारतीय पद्धतियों मुख्यतः प्राचीन है किन्तु इसमें कुछ नवीन आयाम जोड़ने के प्रयास भी समय–समय पर होते रहे हैं। मंत्र–तंत्र, वैदिक, बौद्ध और जैन उपागम भारतीय मनोविज्ञान एवं उपचार/मनोपचार की चार प्रमुख परम्पराएँ है। ये सभी उपागम लगभग 2500 वर्षो से भी अधिक प्राचीन है। आधुनिक युग में चैतन्य महाप्रभु, रामकृष्ण परमहंश, विवेकानन्द और महर्षि महेशयोगी के द्वारा आध्यात्मिक/आधिभौतिक परिध्यान की प्रणाली विकसित की गयी है। मंत्र–तंत्र प्रणाली आज भी प्रचलन में है किन्तु वैज्ञानिक प्रमाण के अभाव में यहाँ वर्णन योग्य नहीं है। वैदिक उपागम क अन्तर्गत योग की विविध प्रणालियाँ सम्मिलित है। बौद्ध उपागम की मुख्य पद्धति विपश्यना के नाम से जानी जाती है। यहाँ पर मुख्यतः योग पद्धितियों तथा आधिभौतिक परिध्यान की पद्धतियों का वर्णन प्रस्तुत है, क्योंकि उनकी लोकप्रियता में वृद्धि आयी है। विपश्यना पद्धति का भी प्रभाव क्षेत्र विस्तृत हो रहा है अतः इस पद्धति का परिचय वांछित हो जाता है। समस्त भारतीय मनोपचार पद्धतियों का परिचय प्राप्त करने के लिए सिंह द्वारा लिखी गयी पुस्तक उपयोग सिद्ध हो सकती है। सिंह ने 16 श्रेणियों के अन्तर्गत आने वाली 36 प्रणालियों का वर्णन किया है।

30.5 स्वास्थ्य एवं मनोपचार की योग पद्धति

योग पद्धति के तत्वों के महत्व का समुचित मूल्यांकन करने के लिए वैदिक दर्शन में निहित इसके आधारों का परिचय प्राप्त किया

जाना उपयोगी होगा। वैदिक साहित्य के चार मूलग्रंथ है– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अर्थवेद, जिनमें आत्मज्ञान एवं सांसरिक उपलब्धियों की प्रविधियों का वर्णन किया गया है। अथर्ववेद का ही एक उपवेद आयुर्वेद है जो व्याधियों का वर्गीकरण एवं उपचार साधन का वर्णन प्रस्तुत करता है। वेदों के अतिरिक्त उपनिषद, ब्राह्मण, आरण्यक प्रमुख वैदिक साहित्य हैं। इनके द्वारा धर्म दर्शन, जीवन दर्शन, स्वस्थ जीवन की पद्धति, व्याधियों के परिहार/निरोधन एवं उपचार की प्रविधियों का परिचय प्राप्त होता है। स्वास्थ्य, व्याधि निरोधन एवं उपचार में आत्मज्ञान का महत्व हैं।

आत्मज्ञान के दो प्रकार होते है–निर्गुण एवं सगुण। वेदान्तियों के अनुसार आत्मज्ञान र्निगुण एवं सगुण दोनों ही रूप में होता है। तार्किक आत्मा को सगुण मानते है तथा सांख्य दर्शन के अनुयायी इसे निर्गण मानते है। ऋषि कपिल ने र्निगुण आत्म ज्ञान को प्रकाशित किया। वेद की तुलना में यह ज्ञान उपनिषद् में अधिक स्पष्ट रूपसे देखा जाता है। महाभारत के टीकाकारों के अनुसार'जो महान ज्ञान महान व्यक्तियों में, वेदों के भीतर तथा योगशास्त्रों में देखा जाता है और पुराण में भी विविध रूपों में पाया जाता है वह सांख्य से आया है।' (स्वामी हरिहरानन्द आरण्य, 1980) स्वामी हरिहरानन्द लिखते हैं कि पहले कर्मकाण्ड का उद्भव हुआ, बाद में सगुण आत्मज्ञान और उसके बाद सांख्यीय निर्गुण पुरुष ज्ञान प्रकट हुआ। महर्षि पञ्चशिखा ने कपिल के उपदेशों का अवलम्बन करके जिस सांख्यसूत्र का प्रर्णन किया वह अब अंशमात्र ही उपलब्ध है। कपिल ने निर्गुण पुरुष विद्या तथा कैवल्य प्रापक योग का प्रवर्तन किया है।

भारत में धर्म के दो भेद है, प्रवृत्ति धर्म और निवृत्ति धर्म या मोक्ष धर्म। निवृत्ति धर्म का भारत में ही आविष्कार हुआ। प्रवृत्ति धर्म इस संसार में सर्वत्र पाया जाता है। जिस धर्म से इहलोक और परलोक में सर्वाधिक सुख लाभ होता है उसे प्रवृत्ति धर्म कहते हैं। निवृत्ति धर्म द्वारा

निर्वाण और शान्ति लाभ प्राप्त होता है। निवृत्ति धर्म के दो सम्प्रदाय है; आर्ष और अनार्ष। आर्ष सम्प्रदाय में सांख्य और वेदांत तथा अनार्ष सम्प्रदाय में बौद्ध और जैन आदि की गणना की जाती है। प्रवृत्ति धर्म में

(i) ईश्वर या महापुरुष की अर्चना तथा

(ii) दान, परोपकार, मैत्री आदि सम्मिलित है। निवृत्ति धर्म का मत है कि सम्यक् दर्शन द्वारा जन्म परम्परा या संसार की निवृत्ति होती है; और सम्यक् योग तथा सम्यक् वैराग्य, सम्यक् दर्शन या प्रज्ञा के कारण हैं सांख्य का साधन रूप योग है। काम, क्रोध, भय, निद्रा और श्वास का दमन करके ध्यान–मग्न होना सांख्य योग का साधन है। स्वामी हरिहरान्नद आरण्य लिखते है कि सांख्य 'मोक्ष धर्म का तत्वकाण्ड है तथा योग साधनाकाण्ड है।

सांख्य दर्शन के अनुसार व्यक्ति एक आत्म मनोदैहिक इकाई है जिसके तीन तल है– दैहिक, मानसिक; और आत्मिक। इस आत्म मनोदैहिक इकाई के दैहिक तल पर तीन गुण–वायु, पित्त, कफ होते है; मानसिक तल पर तीन गुण–सत्व, रज और तम; एवं आत्मिक तल निर्गुण होता है। दैहिक और मानसिक तल पर व्याप्त गुणों के संतुलन से स्वास्थ्य और असंतुलन से रोग की उत्पत्ति होती है।

सांख्य दर्शन के अनुसार मुनष्य के दो पक्ष– पुरुष (आत्मा) और प्रकृति (चित्त एवं देह) होते हैं। चित्त आर्थात् मानस प्रकृति का सूक्ष्म रूप है और देह इस प्रकृति का स्थूल रूप है।

चित्त अर्थात् मनस् का तात्पर्य बुद्धि, अहंकार और मन के समुच्चय से है, चित्त के त्रिगुणात्मक स्वरूप के कारण चित्त वृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं अर्थात् व्यक्ति को अहंकार होता है, उसे 'मैं' और 'मेरा' का बोध होता है तथा मन की चंचलता के कारण व्यक्ति विभिन्न प्रकार से उलझनों में लिप्त होता है। आत्मा (पुरुष) निर्गुण, निर्विकार द्रष्टा हैं किन्तु चित्त के साथ सम्बन्ध के कारण उसकी दृष्टि भी तदनुरूप हो जाती है। पुरुष (आत्मा) और प्रकृति (चित्त एवं देह) के मध्य इस

तादात्म्य के कारण दुःख होता है; रोग की उत्पत्ति होती है; समग्र स्वास्थ्य की स्थापना में बाधा आती है। दुःख दूर करने क लिए पुरुष और प्रकृति के मध्य के तादाम्त्य को दूर किया जाना आवश्यक है। जब पुरुष त्रिगुणों के बन्धनों से मुक्त होकर कैवल्स अवस्था को प्राप्त करता है, त्रिगुणातीत हो जाता है तब मोक्ष या निर्वाण की प्राप्ति होती है। चित्त वृत्तियों के निरोधन के लिए महर्षि पातंजलि ने योग प्रणाली का विकास किया।

योग क्या है और क्या नहीं है इसे संक्षेप में लिखते हुए हरिहरानन्द आरण्य कहते हैंः अभ्यास और वैराग्यपूर्वक चित्तवृत्ति का निरोध करना ही यथार्थ मोक्षप्रापक योग है। चित्रवृत्ति–निरोध का अर्थ है मन में एक ही ज्ञान को उदित रखकर अन्य सभी ज्ञानों का निरोध (सम्प्रज्ञात) अर्थात् व्यावहारिक ज्ञानों का (निद्राज्ञान का भी) निरोध (असम्प्रज्ञात)। अभ्यास का अर्थ है पुनः चेष्टा करना। अतएव बार–बार चेष्टा या इच्छापूर्वक जो चित्त वृत्ति निरोध है वही योग है।

चेष्टा न करके अथवा स्वतः व इच्छा के अनाधीन रूप से यदि कदाचित् चित्त स्वब्धभाव हो भी जाए तो उसको योग नहीं कहा जा सकता है। हरिरहानन्द आरण्य पुनः लिखते हैं– एक ही ज्ञान को स्थिर रखकर अन्य को रूद्ध करना रूप योग का तारतम्य है, जब एक तान भाव से कुछ काल तक एक ही ज्ञान वृत्ति स्थिर रखी जा सकती है तब उसे ध्यान रूप योगांग कहते है और जब यही एकान्तता इतनी प्रगाढ़ होती है कि और सबकुछ भूलकर यहाँ तक कि अपने को भी भूलकर केवल ध्येय विषय में चित्र को स्थिर रखा जाता है, तब तादृश स्वेच्छाधीन स्थैर्य को समाधि कहते है।

सांख्ययोग विशुद्ध न्याय एवं मिथ्याकल्पना–शून्य तथा अन्य विश्वासहीन आन्वीक्षिकी की प्रणाली हैं सांख्योग के वस्तुतः सभी अधिकारी नहीं है। जिनकी बुद्धि ऐसी है कि मोक्ष धर्म के मूल्पर्यन्त ग्रहण करने में कहीं पर भी अन्धविश्वास की सहायता नहीं लेनी पड़ती

है तथा जिनकी मोक्ष ऐसी न्यायनिष्ठ है कि न्यायानुसार जो सिद्ध होगा उसी में निश्चितमति होकर कर्तव्यमार्ग पर बढ़ने को तैयार होते है, कर्तव्यमार्ग में चलने के लिए जिन्हें भय, लोभ अथवा अन्धविश्वास से प्रयोजन नहीं होता, जिसके हृदय स्वभाव से ही अहिंसा, सत्य आदि विशुद्धशील के पक्षपाती है, वे ही सांख्ययोग के अधिकारी हैं।

योग के विभिन्न प्रकार पाये गये हैं। जिनका संक्षिप्त वर्गीकरण यहाँ प्रस्तुत हैं

1– ईश्वरवादी–

(अ) मनावैज्ञानिक पद्धतियाँ–

1. राजयोग (ध्यान, धारणा, आसन, समाधि, आदि का उपयोग)
2. ज्ञान योग (संज्ञान का उपयोग)
3. भक्तियोग (भावों का उपयोग)
4. कर्मयोग (संकल्प–संकाय का उपयोग)

(ब) मनोदैहिक पद्धतियाँ–

1. मंत्र योग (ध्वनि का उपयोग)
2. तंत्र योग (मानसिक एवं भौतिक बह्माण्ड तत्वों का उपयोग)
3. लय योग (ब्रह्माण्डीय स्व के साथ योग के लिए मनोदैहिक रूप में आत्मसातीकरण)

2– अनीश्वरवादी (अ) जैन पश्चर्या, (ब) बौद्ध साधना

महर्षि पातंजलि ने योग के आठ अंगों को विशद् व्याख्या के साथ प्रस्तुत किया है। इसलिए इस प्रणाली को अष्टांग योग कहते है। इसका संक्षिप्त वर्णन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

योग–सूत्र की 'अष्ठांग–योग' प्रणाली

योग का तात्पर्य है कि व्यक्ति के चित्त और ब्रह्माण्डीय चित्त के सर्वाच्च मिलन का एकीकरण हो जाये। यह, यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि योग पद्धति के आठ अंग हैं।

1. **यम**—यम का उद्देश्य शरीर, वाणी और मन का नियंत्रण है। यम के पांच ब्रत रूप हैं—

अहिंसा— किसी भी जीवन को किसी प्रकार से (मन, वचन और देह से) कोई आघात न पहुंचनाः

सत्य— मन तथा वाणी में यथार्थता का होना वैसा ही बोलना जैसा कि देखा है और वैसी ही स्मृति का होना जैसा कि देखा, सुना या कल्पना किया,

अस्तेय— किसी दूसरे की वस्तुओं को चुराने, चोरी के लिए बात करने, यहाँ तक कि ऐसी इच्छा से बचना,

ब्रह्मचर्य — संवेदी सुखानुभूति, विशेषतया यौनिक सुखानुभूति के अन्वेषण (मन, वाणी, या शरीर किसी भी स्तर पर) से बचना;

अपरिग्रह— अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं से अधिक मात्रा में सामग्रियों का संग्रह न करना।

2. **नियम**— नियम के अन्तर्गत उच्चतर श्रेणी की सिद्धियों के लिए व्यक्तित्व को अभिप्रेरित करने वाले कुछ सिद्धान्त सम्मिलित हैं। नियमों के पाँच प्रकार हैं—

शौच— इसका उद्देश्य शरीर, मन और परिवेश को स्वच्छ रखना है; मन की आन्तरिक स्वच्छता/शुद्धता की प्राप्ति सहानुभूति, मैत्री, प्रसन्नता, विरक्ति आदि से आती है; भोजन की शुद्धता से शरीरर की शुद्धता बढ़ती है। मल—मूल का त्याग बाह्य शौच एवं करुणा, दया, ममता, क्षमा आदि गुणों का विकास अभ्यांतर शौच कहलाता है।

संतोष— संतोष का तात्पर्य सहज ढंग से कर्त्तव्य—पालन द्वारा प्राप्त फल से संतुष्ट होना है; योगी सुख—दुख, लाभ—हानि, सम्मान—अपमान, सफलता—विफलता, सहानुभूति—आक्रोश को समान रूप में स्वीकार करता है।

तप– तप द्वारा आत्म–नियंत्रण में वृद्धि होती है। अभ्यास द्वारा स्वधर्म पालन में प्राप्त होने वाले कष्ट, ताप, शक्ति आदि के लिए सहनशीलता में अभ्यास द्वारा वृद्धि आती है।

स्वाध्याय– स्वाध्याय का अर्थ है धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन द्वारा बुद्धि एवं उच्च मानसिक क्षमताओं का विकास; जीवन का निरीक्षण एवं अध्ययन।

ईश्वर प्राणीधान– ईश्वर प्राणीधान का अर्थ है ईश्वर को सदैव स्मरण करना तथा सब कुछ ईश्वर को समर्पित कर देना।

3. **आसन**– आसन व्यक्ति के दृढ़तापूर्वक किन्तु पूर्णतः शिथिलता के साथ (सुखपूर्वक) विभिन्न मुद्राओं में बैठने से है जिसका उद्देश्य मन की शान्ति एवं शरीर के अंगों का चुस्त–दुरुस्त एवं नियंत्रित करना होता है। योग–सूत्र में अनेक प्रकार के आसनों (मुद्राओं) का वर्णन किया गया है। दुर्भाग्यवश इसके अनेक विकृत रूप भी आजकल योगासन के नाम से प्रचारित है तथा यह भ्रान्ति फैली हुई देखी जा सकती है कि कतिपय आसनों को ही योग का सम्पूर्ण पर्याय समझ लिया जाता है।

4. **प्राणायाम**– वायु का श्वासरूप जो अभ्यांतर गति एवं प्रश्वासरूप जो बहिर्गति है उनका विच्छेद ही प्राणायाम होता है; अर्थात श्वासगति तथा प्रश्वासगित का रोध करना ही प्राणायाम है। इसके तीन भेद होते हैं : बाह्यवृत्तिक, आभ्यंतर वृत्तिक एवं स्तम्भ वृत्तिक। प्राणायाम की सिद्धि यम, नियम एवं आसन की सिद्धि के उपरान्त करने से ही लाभकारी होती है। अस्थिर चित्त का प्राणायाम योगांग नहीं होता है। प्राणायाम हेतु शरीर की स्पन्दनहीनता तथा मन की एक विषयता महत्त्वपूर्ण होती है। अतः सर्वप्रथम आसन के साथ एकाग्रता का अभ्यास करना आवश्यक बताया गया है।

हरिहरानन्द लिखते हैं : श्वास लेकर प्रश्वास का गतिविच्छेद करना एक प्रकार का प्राणायाम है जबकि प्रश्वास करके श्वास का गतिविच्छेद करना दूसरे प्रकार का प्राणायाम होता है। श्वास–प्रश्वास का प्रयत्न न कर कुछ पूरित या कुछ रेचित अवस्था में ऐसा बोध होता है मानो समग्र शरीर का वायु सूखा जा रहा है। स्तम्भवृत्ति द्वारा श्वास–प्रश्वास एक साथ रूद्ध होते हैं अर्थात् प्रयत्नपूर्वक वायु को बाहर निकालकर विधारणपूर्वक गतिविच्छेद नहीं करना पड़ता है; अथवा इसी रीति से आभ्यन्तर में वायु प्रवेश कराकर विधारणपूर्वक गतिविच्छेद नहीं करना पड़ता है। अभ्यास के अनुरूप उक्त कृत्तियाँ दीर्घ एवं सूक्ष्म होती हैं। चिरकाल तक अभ्यस्त होकर जब बाह्य और आभ्यन्तर वृत्तियाँ अतिसूक्ष्म होती है तब उनका आक्षेप या अतिक्रमपूर्वक जो स्तम्भवृत्ति आती है वह चतुर्थ प्राणायाम (स्तम्भवृत्ति का अतिसूक्ष्म रूप) होता है।

5. **प्रत्याहार**– 'स्व–विषय के साथ असंयुक्त होने पर इन्द्रियों का जो चित्तस्वरूपानुकार होता है वही प्रत्याहार है अर्थात् चित्तनिरोध होने पर निरूद्ध चित्त के समान उसके साथ इन्द्रियगण का विरुद्ध होना प्रत्याहार होता है। इस प्रक्रिया के अभ्यास द्वारा चित्त लौकिक कारकों के प्रभाव से मुक्त होकर अपने ध्येय (उद्देश्य) पर केन्द्रित हो पाता है। प्रत्याहार साधन के दो प्रधान उपाय हैं–(i) वाह्य विषय पर ध्यान न देना और (ii) मानस भाव लेकर रहना। अभ्यासपूर्व इन्द्रियजन्य ही प्रत्याहार कहा जाता है। मिर्गी अथवा सम्मोहन में होने वाला इन्द्रिय रोध प्रत्याहार नहीं कहा जा सकता है।

योग के ऊपर वर्णित पाँच अंगों को योग का बहिरंग साधन बताया गया है तथा अधोवर्णित तीन अंगों को अंतरंग साधन कहा गया है।

6. **धारणा**– धारणा का अर्थ होता है चित्त (मन) का किसी एक सर्वोच्च बिन्दु पर ठहरना या केन्द्रित होना। यह बिन्दु बाहरी हो सकता है या आंतरिक अंग या कोई बिम्ब हो सकता है। यह क्रिया समाधि की तैयारी की अवस्था होती है। धारणा प्रधानतः द्विविध होती है–तत्त्वज्ञान धारणा तथा वैषयिक धारणा।

7. **ध्यान**– किसी ध्येय वस्तु की ओर चित्त का केन्द्रित होना तथा उस दिशा में विचार का अविरल प्रवाह ध्यान कहा जाता है। ध्यान की अवस्था में मस्तिष्क में एक ही जैसी अनेक तरंगें उतनी तीव्र गति से प्रवाहित होती है कि एक तरंग के शान्त होने से पूर्व ही दूसरी तरंग का प्रवाह आरंभ हो जाता है। इस प्रकार पूर्ण निरंतरता बनी रहती है। इसे स्पष्ट करते हुए हरिहरानन्द ने उदाहरण दिया है कि धारणा में जो प्रत्यय है वह पानी की बूंद की धारा के समान है और ध्यान में जो प्रत्यय है वह मानो तेल की, शहद की धारा के समान एकतान है।

8. **समाधि**– समाधि योग की अंतिम अवस्था है। जब ध्यान में ध्येय के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं रह जाता है, चित्त शून्य हो जाता है, आत्मा–मुक्त हो जाती है तब उसे समाधि कहते हैं। ध्यान के चरम उत्कर्ष का नाम ही समाधि है; यह चित्तस्थैर्य की सर्वोत्तम अवस्था है। ऐसा ध्यान जिसमें आत्मविस्मृति हो जाये समाधि कहा जाता है। ध्यान करते करते जब हम आत्मविस्मृत हो जाते हैं, जब केवल ध्येय विषय परामसत्ता ही स्मृति में शेष रह जाती है, जब अपनी सत्ता विस्मृत हो जाती है, जब हमें ध्येय से स्वयं के पृथक होने का ज्ञानगोचर नहीं होता है, ध्येय विषय पर ऐसे चित्तस्थैर्य को समाधि कहते हैं।

योग के आठ अंगों द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्त्व का सम्यक् विकास होता है। उसे अपने यथार्थ स्वरूप का अनुभव होता है। पुरुष (आत्मा) और प्रकृति (चित्त एवं देह) का तादात्म्य भंग होता

है, पुरुष चित्तवृत्ति के प्रभाव से मुक्त होता है जिसके फलस्वरूप दु:ख (विकार) के कारण का उन्मूलन होता है और सुख (स्वास्थ्य) की दशा विकसित होती है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणी : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तरों का मिलान पाठ्य सामग्री से कीजिए।

1. परामर्श के आधुनिक आयाम पर टिप्पणी लिखिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्रविधियों पर प्रकाश डालिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

30.6 सार–संक्षेप

प्रस्तुत इकाई में परामर्श के आधुनिक आयामों की चर्चा की गयी है जिसमें बताया गया है कि परामर्श के तीन उद्देश्य होते है। **प्रथम,** यह विचार करना कि भारत में लोगों की समस्याओं के प्रमुख रूप, उनकी आवृत्ति और परामर्शन सम्बन्धित आवश्यकताओं का रूप कैसा है। लोगों की परामर्श की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपलब्ध सेवाओं का स्वरूप कैसा है। **दूसरा** विचारणीय विषय यह है कि भारतीय जीवन दर्शन, जीवन शैली, परिवेशीय संदर्भ में पाश्चात्य, आधुनिक, वैज्ञानिक चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में विकसित परामर्श उपागम और उनकी प्रविधियाँ किस सीमा तक उपयोगी हैं। इस इकाई का **तीसरा** और सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रश्न भारतीय संदर्भों में विकसित वैकल्पिक प्रणालियों के बारे में विचार करना है। भारतीय चिंतन और कष्ट निवारण की पद्धतियों का पुराना इतिहास है। सभी पद्धतियों की उपयोगिता निर्विवाद नहीं हो सकती है किन्तु अनेक पद्धतियों के महत्व और उपयोगिता को आज समूचे विश्व में स्वीकार किया जा रहा है।

इसी इकाई में भारत में परामर्श की आवश्यकताओं और उपलब्ध सेवाओं के स्वरूप, परामर्श के आधुनिक आयाम, परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्राविधियों एवं स्वास्थ्य एवं मनोउपार की योग पद्धति पर वृहद चर्चा प्रस्तुत की गयी है।

इसी इकाई के अन्त में योग सूत्र की अष्टांग योग प्रणाली के आठ अंग जैसे यम, नियम, आसन, प्रणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधी पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है।

आशा है कि प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग परामर्श के आधुनिक आयामों के बारे जानकारी प्राप्त कर चुके होंगे।

30.7 पारिभाषिक शब्दावली

परामर्श–परामर्श एक निर्धारित रूप से संरचित स्वीकृत सम्बन्ध हैं, जो परामर्श प्रार्थी को पर्याप्त मात्रा में स्वयं के समझने में

सहायता देता है, जिससे वह अपने नवीन ज्ञान के परिप्रेक्ष्य में ठोस कदम उठा सके।'

प्राणायाम–वायु का श्वांस रूप को अभ्यान्तर गति एवं प्रश्वांस रूप जो बहिर्गति है उनका विच्छेद ही प्राणायाम होता है।

प्रत्याहार–स्व विषय के साथ असंयुक्त होने पर इन्द्रियों का का जो चित्तस्वरूपानुकार होता है वही प्रत्याहार है।

अभ्यास प्रश्न–

लघु,

1– भारत में परामर्श की आवश्यकताओं पर प्रकाश डालिये।

2– भारत में परामर्श हेतु उपलब्ध सेवाओं के स्वरूप की चर्चा कीजिए

3– परामर्श के आधुनिक आयाम क्या है?

4– परामर्श एवं मनोपचार की भारतीय प्रविधि की चर्चा कीजिए।

विस्तृत

1– भारतीय सन्दर्भ में परामर्श की आवश्यकताओं और उपलब्ध सेवाओं के स्वरूपों पर निबन्ध लिखिए।

2– परामर्श के आधुनिक आयाम पर विस्तृत प्रकाश डालिये।

30.8 संदर्भ–ग्रन्थ सूची

1– आस्थाना, विपिन, परामर्श और निर्देशन, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2013

2– राय, अमरनाथ एवं अस्थाना, मधु, आधुनिक परामर्शन मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली वर्ष–2012, पेज 511–521

3– उपाध्याय, डॉ० राधाबल्लभ एवं जायसवाल, डॉ० सीताराम, शिक्षा में निर्देशन एवं परामर्श की भूमिका, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, वर्ष–2014–15